चौमासा

वर्ष-32 संयुक्तांक-98-99
जुलाई-अक्टूबर 2015
नवम्बर-फरवरी 2016

प्रधान सम्पादक
वन्दना पाण्डेय

सम्पादक
अशोक मिश्र

आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, भोपाल का प्रकाशन

ISSN 2249-5479
© स्वत्वाधिकार सुरक्षित

सम्पर्क
आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्
मध्यप्रदेश जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स
भोपाल-462002
फोन/ फैक्स : 0755-2661948, 2661640
E-mail : mplokkala@rediffmail.com,
mptribalmuseum@gmail.com
web. : www.mptribalmuseum.com

मूल्य
एक प्रति बीस रूपये
वार्षिक सदस्यता - पचास रूपये
आजीवन सदस्यता - पन्द्रह सौ रूपये
चौमासा का वार्षिक शुल्क अनुषंग पुस्तिका के साथ सौ रूपये

प्रचार/प्रसार
प्रवीण गावण्डे - (मो. 9827351093)

शब्दांकन
आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्

मुद्रण
मध्यप्रदेश माध्यम, भोपाल

- चौमासा में प्रकाशित सामग्री लेखकों के अपने कार्य और विचार हैं। आवश्यक नहीं कि अकादमी उससे सहमत हो।
- पत्रिका और प्रकाशन से संबंधित समस्त विवादों का न्यायालयीन कार्यक्षेत्र भोपाल रहेगा।

निदेशक, आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्- भोपाल मुद्रक, प्रकाशक द्वारा मध्यप्रदेश माध्यम, भोपाल से मुद्रित कराकर आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स- भोपाल से प्रकाशित।

सम्पादक-अशोक मिश्र

इस अंक में

विवाह संस्कार एवं रीतियाँ / डॉ. महेन्द्र भानावत / 7
पूर्वांचल में विवाह संस्कार / प्रो. हरिश्चन्द्र मिश्र / 27
बज्जिकांचल के वैवाहिक लोकाचार / डॉ. ब्रजनन्दन वर्मा / 53
बुन्देली के वैवाहिक लोकाचार / डॉ. (श्रीमती) गायत्री वाजपेयी / 61
बिआव के नेंगचार/ डॉ. हरिविष्णु अवस्थी / 75
बुन्देली वैवाहिक लोकाचार / डॉ. रामस्वरूप ढेंगुला / 82
छत्तीसगढ़ में वैवाहिक परम्पराएँ और लोकाचार / उर्मिला शुक्ल / 86
छत्तीसगढ़ के विवाह गीत / डॉ. अश्विनी केशरवानी / 94
विवाह पर लाखीणो चूड़ो लाख को / डॉ. कहानी भानावत / 108
निमाड़ी वैवाहिक परम्पराएँ / श्रीमती हेमलता उपाध्याय / 112
विवाह के कुकड़ा और साँजुली गीत / डॉ. सुमन चौरे / 146
बघेलखण्ड में विवाह संस्कार / डॉ. निशा जैन / 152
मालवा में वैवाहिक लोकाचार / राधाकृष्ण बावनिया / 159
मालवा की सांस्कृतिक बयार /डॉ. शशि निगम / 173
मराठी विवाह गीत / डॉ. मालती शर्मा / 185
पारम्परिक वैवाहिक परम्पराएँ / डॉ. वी. के. शर्मा / 191
भिलाला जनजाति में विवाह / डॉ. गजेन्द्र आर्य /195
भीली विवाह / डॉ. (श्रीमती) गुलाब सोलंकी / 202
बारेला विवाह / प्रो. (श्रीमती) वीणा बरडे / 205
गोण्डी विवाह संस्कार / डॉ. शरीफ मोहम्मद / 207
गोण्ड वैवाहिक परम्पराएँ एवं लोकाचार / डॉ. प्रभा पहारिया / 215
कोरकू विवाह : परंपरा और अनुष्ठान / डॉ. धर्मेन्द्र पारे / 219
बैगा जनजाति में वैवाहिक संस्कार / डॉ.विजय चौरसिया / 223

विवाह की भारतीय परम्पराएँ एवं उसकी रीतियाँ स्थानीय सामान्य से भेदों के साथ लगभग एक ही तरह से व्यवहार में हैं। वंश, परिवार और समाज के लिए यह आवश्यक और सुव्यवस्थित परम्परा है। विवाह के संस्कार मूलत: हमें प्रत्येक सम्बन्ध के प्रति प्रगाढ़ता से जीने के लिए प्रेरित करते हैं। हम उसे जल, मिट्टी, लकड़ी, घास, बाँस आदि के विवाह संस्कार में उपयोग से समझ सकते हैं।

सभी लोक समाजों में 'लावा परछन' की परम्परा है, जो सप्तपदी के दौरान भाई द्वारा सम्पन्न की जाती है। 'लावा' धान को भूनकर तैयार किया जाता है। जैसा कि आप सभी जानते ही है कि धान का पहले रोपा तैयार किया जाता है, फिर उस रोपे को दूसरे खेत में लगाया जाता है, जहाँ उसका वास्तविक विकास होता है। बेटी रोपे की तरह अपने पिता के घर में है- अब वह दूसरे कुल गोत्र में अपने वास्तविक एवं सर्वांगीण विकास के लिए रोपित की जा रही है। सात फेरों में शायद हमारी परम्परा का यही प्रतीकार्थ हो।

परछने अथवा पड़छने की अन्य परम्पराएँ भी हैं, जिनमें क्रमश: सूपा, मथानी, लोढ़ा (प्रस्तर सिला का बाटने वाला भाग), मूसल और कलश हैं। पारम्परिक रूप से लोक समाजों में किया जा रहा कोई भी व्यवहार और आचरण निष्प्रयोजन नहीं हो सकता। हमें उनके प्रतीकार्थ को जानने का प्रयत्न करना चाहिए। प्राय: हम इन लोक आचरणों को बिना समझे आचरित करने वालों अथवा एक-दूसरे छोर पर उसके इंकार करने वालों को ही जानते हैं। एक अर्थ में दोनों ही चरित्रों में कोई गुणात्मक भेद नहीं है। परिणाम में परम्पराएँ निष्प्राण सी होती जा रही हैं, उन्हें पुनर्जीवन की आवश्यकता है।

जब तक हम नये समाज की भाषा और उसकी जरूरतों की तरह परम्पराओं की पुनर्व्याख्या अथवा पुनर्पाठ कर उसे नवीन ऊर्जा नहीं प्रदान करते, तब तक हम उत्तरोत्तर क्षीण होते अपने पूर्वजों के ज्ञान को संरक्षित नहीं कर सकते। यह बहुत आवश्यक है कि उन्हें हर समय में 'रिचार्ज' किया जाय। आचार्यों और अध्येताओं को समकालीन भाषिक सामर्थ्य में उसके प्रतीकार्थ और देशज अनुभव को संरक्षित करने की गूढ़ विधि को पुनर्व्याख्यायित करना होगी।

वैवाहिक जीवन में प्रवेश कर रहे नव-युगल को सार्थक और निरर्थक का भेद कर लेने के लिए 'सूपा', श्रेष्ठ एवं अश्रेष्ठ के लिए 'मथानी', स्थिरता और अस्थिरता के लिए 'लोढ़ा', शुद्ध और अशुद्ध के लिए 'मूसल' तथा रस और नीरस के लिए 'कलश' के पड़छने के लोक व्यवहार से जीवन अनुभव के सार को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को सौंपने की तरह उपयोग किया। जीवन की चुनौतियों में ये सभी उपकरण तत्समय लोक व्यवहार का भाग थे और सभी का इनसे रोज का परिचय रहा है। नव-युगल की आँख के सम्मुख ले-जाकर संभवत: अब से ऐसा आचरण करने की माँग समाज द्वारा जीवन को निष्कंटक जीने के लिए की गई है।

चौमासा का यह अंक संयुक्तांक प्रकाशित किया जा रहा है। अकादमी को सिंहस्थ-2016 में अनेक दायित्वों का निर्वहन करना है, जिसके कारण ऐसा हुआ है। आशा है चौमासा के सुधी पाठक और लेखक इसके लिए क्षमा करेंगे।

- अशोक मिश्र

विवाह संस्कार एवं रीतियाँ

डॉ. महेन्द्र भानावत

मर्यादित, सुखद, सम्पन्न एवं सुव्यवस्थित जीवन जीने के लिए उसे सोलह संस्कारों में विभक्त किया गया है। इनमें जन्म, विवाह और मृत्यु संस्कार तो अति ही महत्त्वपूर्ण हैं। विवाह गृहस्थ जीवन के लिए आवश्यक माना गया है। इसी से जीवन की पूर्णता मानी गई है और इसी में रहकर मानव धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

विवाह जीवन का अटूट बंधन है। नर-नारी के मिलन से ही कुटुम्ब-परिवार-समाज की संकल्पना सार्थक होती है। विवाह विधेय कहा गया है जिसका कुल, शील, विद्या, धन, शरीर, वय एवं व्यक्तित्व समान हो। जैसे गाड़ी दो पहियों से ही संतुलित-संचालित होती है, वैसे ही नर और नारी से ही गृहस्थ की गाड़ी संचालित, संतुलित एवं अनुशासित होती है। इसके लिए दोनों का एक-दूसरे के साथ घनिष्ट सहयोग, सुख-दु:ख में समान भागीदारी, त्याग, समर्पण, सौहार्द्र, सहचर्य, सहकर्म जरूरी है।

मोटे रूप में विवाह के आर्य और अनार्य दो प्रकार हैं। अनार्य को पाप विवाह कहा गया है। दोनों के चार-चार भेद हैं। आर्य विवाह के ब्राह्म, प्रजापत्य, आर्ष एवं दैवत तथा अनार्य के गांधर्व, असुर, राक्षस और पेशाच प्रकार हैं। पाप विवाह नियम विपरीत स्वेच्छाचारी, उच्छृंखलतापूर्ण तथा वासनामय होने से घृणित ही माने गये हैं।

लोकजन में विवाह का सर्वतोभावेन महत्त्व माना गया है। इसी से वंश वृद्धि होती है और कुटुम्ब, कबीले, जाति, संघ, सम्प्रदाय में बंधकर मनुष्य अपने को सुखी, सुरक्षित, समतावान तथा सफल जीवन का धारक मानता हुआ वर्तमान ही नहीं, मृत्युपरांत के भावी जीवन को भी सफल कर संतोषी बनता है।

देश की लगभग सभी जातियों में विवाह को उत्सव विशेष के रूप में आयोजित करने की परंपरा एवं प्रथा है। कई जातियों में बड़ी विचित्र प्रथाएँ मिलती हैं। इतने विविध प्रकार भी मिलते हैं कि चकित रह जाना पड़ता है। विवाह मनुष्यों में तो होते ही हैं पर मानव ने पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों और वनस्पतियों के विवाह रचाने में भी कोई कसर नहीं रखी। यह भारत देश ही है जहाँ विवाह के कई रूप, कई विधियाँ, कई रीतियाँ, नेगचार के प्रसंग और ठाठ-ठसक देखने को मिलते हैं।

यहाँ लोकजीवन में व्याप्त विवाह के विविध संस्कारों, रीति-प्रसंगों तथा नेगचारों की बानगी दी जा रही है। बदलते परिवेश में शाही शादियों के ठाठ ही हमारी कल्पना से बाहर हो गये हैं। होड़ा-होड़ी में नित नये ऐसे विवाह होने लग गये हैं जो पहले कभी नहीं हुए। ऐसे विवाह भी हैं जो गिनीज बुक में दर्ज होकर चर्चित बने रहना चाहते हैं।

यहाँ जो लोकव्याप्त प्रसंग, रीति रस्म दिये जा रहे हैं वे राजस्थान के मेवाड़ अंचल में अधिव्याप्त हैं। समय के बदलाव के साथ उनमें भी कई बदलाव आ रहे हैं। लगता है, यह बदलाव ही ऐसा हो जायेगा कि पुराने पारंपरिक रीति-रिवाजों की जानकारी ही दुर्लभ एवं दूभर हो जायेगी।

विवाह के जिन रीति-प्रसंगों से मैं स्वयं गुजरा, अब उनमें से आधे भी नहीं रहे हैं। कुछ बचे हुए हैं वे भी केवल निभाने के अवशेषवत हैं। उनके साथ विवाहोत्सव का वह उल्लासित मन देखने को नहीं मिलता। जो भी हो, यहाँ जो प्रसंग दिये जा रहे हैं वे तत्कालीन समाज के परिवेश, रहन-सहन की जीवनधर्मिता, उत्सव समारोह की पावन पद्धति और उससे जुड़ी समूहबद्धता का सौहार्द्र तो व्यक्त करते ही हैं।

कुमकुम पत्रिका भेजना

विवाह में सम्बन्धियों, रिश्तेदारों तथा अन्य परिचितों को बुलाने के लिए निमंत्रण के रूप में कुमकुम पत्रिका लिखी जाती है, जिसे 'कांकोपतरी' अथवा 'कंकोतरी' कहते हैं। प्रारंभ में ये पत्रिकाएँ साधारण हल्के गुलाबी कागज पर काली स्याही से लिखी जाती थीं, जिनका अपना विशेष मजमून होता था। लिखने के पश्चात् अंगुलियों की सहायता से कागज पर कंकू छीट दिया जाता था फिर उसे बीड़कर (मोड़कर) लच्छा बांध दिया जाता था। वर्तमान में कई प्रकार की कुमकुम पत्रिकाएँ देखने को मिलती हैं।

गजानंदजी को न्योतना

कुमकुम पत्रिका छपने पर स्थानीय या पास के मान्य गजानंदजी के स्थान पर जाया जाता है। गृहस्वामी यदि आर्थिक दृष्टि से कमजोर है तो गजानंदजी के समक्ष निवेदन करता है- 'मुझे विवाह खर्च के लिए अर्थ की आवश्यकता है, अतः कल आऊँगा सौ रुपये ले जाऊँगा।' मैंने कई लोगों से सुना जो गजानंदजी के मंदिर में जाकर मूर्ति के समक्ष रखा आवश्यकतानुसार जितना धन माँगा, लाये और कौल वचन के अनुसार पुनः लौटाया।

ऐसे गजानंदजी का उदयपुर में बोहरा गणेशजी का स्थान अति लोकप्रिय तथा जाग्रत है। कई लोग विवाह के लिए इन गणेशजी से धन उधार लाये हैं। ऐसे ही गोगुन्दा के गणेशजी के लिए भी मुझे लोगों ने धन-लाभ पाने को कहा। रणथंभौर के गणेशजी तो प्रसिद्ध हैं ही। विवाह में गणेशजी के पधारने का न्योता, निमंत्रण देने पर उनके पदार्पण से निर्विघ्न विवाह सम्पन्न होता है। वर्षों पूर्व रणथंभौर (गीत में 'रणतभंवर रा आवो विनायक') में मैंने गजानंदजी के दर्शन किये। वे विवाह के दिन थे। पुजारी के पास प्रतिदिन आने वाली कंकोतरियों का ढेर लगा हुआ था। वह गजानंदजी के सम्मुख खड़ा हो एक-एक पत्रिका को खोलकर कह रहा था-'फलाणा गाँव में फलाणाजी रे कूकी (बाई) / कूका (बालक) रो फलाणी तिथि नै ब्याव है जो आपनै रिद्धी-सिद्धीजी सागै पधारणो है।'

उदयपुर के बोहरा गणेशजी की भी ऐसी ही मान्यता है। यहाँ हर समय ही भक्तों की भीड़ बनी रहती है। बुधवार को तो उधर का आवागमन ही अवरूद्ध देखा जाता है। ये देवता भी धनदेव हैं। इनका 'वोरा गणेश' नाम भी इसीलिए पड़ा। गाँवों में आज भी वणज करने वाले को वोरा कहते हैं। आर्थिक दृष्टि से वही सबकी समस्या को सुलझाते हैं। कालान्तर में यही 'वोरा' हिन्दी में आकर 'बोहरा' बन गया।

सांजी दिलाना

वर-वधू, वींद-वींदणी अथवा लाड़ा-लाड़ी बनने का शुभारंभ सांजी दिलाने से होता है। मुहूर्तानुसार भाई-गरास्या अर्थात्

निकटस्थ समधी तथा आस-पड़ोस की औरतों को निमंत्रित किया जाता है। उनकी उपस्थिति में विवाह सूत्र में बंधने जा रहे कुमार/ कुमारी को पाटे पर बिठाकर उनका तिलक किया जाता है। नाई द्वारा बालक-बालिका के पीठी की जाती है। हल्दी-तेल मिश्रित बेसन के घोल को पीठी कहते हैं। पूरे शरीर पर इसका लेप कर प्रतिदिन शरीर शुद्धि की जाती है।

प्रारंभ में पाँच थाली में पाँच औरतें मिल, मुट्ठी दो मुट्ठी मूंग बीनने (साफ करने) का उपक्रम करती हैं। वे आपस में एक-दूसरी की कलाई में लच्छा बाँधती हैं। अपनी-अपनी ऊँगली से अपनी टीली देती हैं। विवाह का यह प्रारंभ का लोकाचार होता है। इस अवसर पर जो गीत गाये जाते हैं, उनमें विनायक अर्थात् गणेशजी को याद किया जाता है। विनायक के रूप में गढ़ रणतभंवर (गढ़ रणथंभौर) के गणेशजी को सर्वप्रथम याद कर विवाह में पधारने की अर्जी दी जाती है-

(क) *गढ़ रणतभंवर सूं आवो विनायक, करो अणचींती वरदड़ी*

(ख) *चालो गजानंद जोसीड़ा रे चालां*
आछा-आछा लगन लिखावां ओ गजानंद

पाट अथवा बाजोट का गीत-

जमन्यो बाजोट्यो मोतीड़ा सूं जड़ियो।

पाट से उतारने का गीत-

नाय धोय बालक बनड़ी पाटोला ऊबी
जोवे वांरा समरथ दादासा री वाट
कदी मनै पाटोला सूं झटक उतारे।

अर्थात् नहा-धोकर बालक बनी बाजोट/ पाटिये पर खड़ी अपने समर्थ दादाजी की प्रतीक्षा कर रही है कि कब वे जल्दी से उसे पाटले से उतारें।

म्हारी हळदी रो रंग सुरंग निपजे मालवे।

सभी उपस्थित महिलाओं को रस्म समाप्ति पर दस-दस तथा उनके साथ के बालक-बालिका को दो से पाँच तक की गिनती की पतासी दी जाती है।

वंदोरा खाना

सांजी देने के दिन से ही वींद-वींदणी को सगे-सम्बन्धियों तथा पास-पड़ोसियों के घर भोजन के लिए आमंत्रित किया जाता है, जिसे वंदोरा देना कहते हैं। जीमने को, भोजन करने को वंदोरा खाना कहते हैं। सबसे पहला वंदोरा मामा के घर का होता है। मामा के घर औरतें गीत गाती जाती हैं। जीमने में गुड़ की लपसी, चावल तथा सब्जी के रूप में खाटो (कढ़ी) होती है। जीमणोपरांत मामा-मामी वींद-वींदणी की खोल भराई करते हैं, जिसमें नारियल-रुपया दिया जाता है। विदाई के वक्त भी औरतें गीत गाती हुई ब्याह-घर लौटती हैं।

मामा के घर जाते समय का गीत-

आज वंदोरो कणी कियो
समंदरिया री उली पेली पाळ
आज वंदोरा में कांई-कांई जीम्या
फलाणाजी नूत जीमाया ओ राज
आज रा वंदोरा में लापी चोखा जीम्या
नारेळां री खोळ भराई ओ राज।

अर्थात् आज किसने वंदोरा दिया? समंदर (तालाब) की इधर की और उधर की पाल। आज वंदोरे में क्या-क्या जीमा (खाया)? लपसी, चावल जीमे। नारियल की खोल भराई।

खोल भराते समय मामा के घर वालों के नाम क्रमशः बड़े से छोटे रूप में ले-लेकर गीत को बधाया जाता है। ब्याह-घर आकर टीलो जैसे और कई गीत गाये जाते हैं। इनमें पारिवारिक खुशहाली, समृद्धि तथा फलने-फूलने, वंश वृद्धि होने की भावनाएँ फलवती होती पाई जाती हैं। यथा-

कुणीसा रे आंगण केवड़ो
कुणीसा रे आंगण जाय
जाय नमे ओ कलियां उघड़े
फूलड़ा रो छैय न पार।

वन्यागड़ा जीमाना

जितने दिन की सांजी ली जाती है उतने ही दिन वर-वधू को जीमने जाना पड़ता है। एक-एक दिन में कई-कई घर जाने पर

थोड़ा-थोड़ा टोटके के रूप में, सब जगह दस्तूर रूप में, जीमण जीमना होता है। जीमने पर सीख रूप में रूपया, नारियल दिया जाता है। जीमने वाले के साथ छोटे-छोटे बालक-बालिकाएँ होती हैं जो वन्यागड़े कहलाते हैं। संख्या के अनुसार एक घर में एक अथवा एक से अधिक जीमते जाते हैं।

माया बिठाना

माया से तात्पर्य मातृ स्थापना से है। वधू के यहाँ स्तंभ रोपण कर यह क्रिया सम्पन्न होती है। यह स्तंभ माणक थंब के नाम से जाना जाता है। इसका कक्ष अलग होता है। दीवाल की एक तरफ पाँच मंगल कलश की स्थापना की जाती है। भूमि पर गेहूँ का स्वस्तिक बना प्रमुख कलश रखा जाता है। उस पर एक के ऊपर एक उतार देते चार अन्य कलश रखे जाते हैं। ऊपर की मटकी का नारियल से मुँह ढँक कर ऊपर लाल वस्त्र को लच्छे से बँध दिया जाता है। कलश पर कुमकुम की बिंदी-सात्या किया जाता है। दीवाल पर गणेशजी का पाठा लगा गजानंदजी की स्थापना पाठे पर तिलक अक्षत लच्छा चढ़ा कर की जाती है। घी का दीपक जलाया जाता है। गणेशजी के पाठे के सम्मुख आसन लगा विवाह करने वाले, वधू के माता-पिता सजोड़े बैठकर मन से वैवाहिक कार्य निर्विघ्न समाप्त होने का संकल्प करते हैं।

कलश वांदना

विवाहोत्सव प्रारंभ होने पर जो-जो समधी आते हैं, उनका द्वार पर ही पूर्ण सत्कार-स्वागत कलश वांदकर किया जाता है और तब ही उनका घर के भीतर प्रवेश होता है। इस हेतु बेनकुंवाई (बहिन-बेटी) और घर की बहू गीत गाती हुई उनके स्वागतार्थ पहुँचती है। एक के हाथ में मटकी (छोटी कलशी) होती है, जिसके मुँह पर लच्छा बँधा होता है और ढक्कन के रूप में बिजोरा ढंका होता है। समधीजी के पास पहुँचकर उनको तिलक लगाया जाता है। आने वाला समधी अपने हाथ से उस मटकी का ढक्कन उठाकर उसमें नेग रखता है। यह नेग एक रूपये से लेकर ग्यारह रूपये तक होता है। सजोड़े जो दंपत्ति आते हैं, स्वागत के पश्चात् वे दोनों नेग रखते हैं। यह एक प्रकार से उनके विवाह में उपस्थित होने का सूचक है, जिसे आजकल रजिस्ट्रेशन करना कहा जाता है। गीत है-

घोड़ लड़ा खड़ वाजिया
ओ म्हारे फलाणा सा रा बाई आविया
ओ म्हारी आंख फरुकै नाक ळरै
म्हींतो दीवो लेइने जोवां आपरी वाट
म्हारे पामण ला आया ओ
म्हारे घरां रंग होसी।

अर्थात् घोड़े की नाळ बजी है। मेरी आँख फड़क रही है। नाक झर रहा है। मेरे घर पाहुने आये हैं। घर में रंगोत्सव होगा। बहिन-बेटी आने पर उसके पिता के साथ उसका और बहू आने पर उसके ससुर के साथ उसका नाम लिया जाता है।

चाक पूजना

माँगलिक रूप में चाक सृष्टि का तथा कलश विश्व का प्रतीक है। यह विवाह पूर्व मुहूर्तानुसार तीन, पाँच, सात अथवा नौ दिन का होता है। चाक नूतने-पूजने की क्रिया वर तथा वधू दोनों के घर सम्पन्न होती है। यह अक्सर वर-वधू की माता द्वारा पूजा जाता है। माँ की अनुपस्थिति में बहिन अथवा भावज पूजती है। चाक लाने के लिए मुहूर्त के अनुसार गाजे-बाजे के साथ सभी औरतें कुम्हार के घर जाती हैं। कुम्हार के वहाँ रोली, मोली तथा चावल आदि से चाक पूजती हैं। फिर उस पर सातिया मांड चवन्नी तथा पतासे रखती हैं। कुम्हार कलश पर चुकल्या तथा उसके ऊपर बीजोरा का सैट बनाकर पूजने वाली को देता है। यह चाक एक से अधिक सग्गीजी लेती हैं। कलश के तिलक निकाल चुकल्ये को चाँदी की लड़ पहना दी जाती है। चाक लाने वाली नये वस्त्राभूषणों से सज्जित हो साड़ी पर चूंदड़ धारण करती है। सिर पर कोड़ियों तथा मोतियों की बनी लम्बी लटकनों वाली ईडोणी रख उस पर चाक धारण करती है। कुम्हार दंपत्ति को वस्त्र तथा दक्षिणा दी जाती है।

वहाँ से सभी गाजे-बाजे के साथ आती हैं। घर लाकर चाक माया के स्थान पर स्थापित कर दिया जाता है। उसी दिन से विनायक की स्थापना हुई समझ ली जाती है। स्थापना वाला स्थल लीप-पोत कर पवित्र कर लिया जाता है। दीवाल पर गजानंदजी का पाठा लगा दिया जाता है। ईडोणी (चूमली) का यह गीत बहुप्रसिद्ध है-

म्हारी सवा लाख री लूंब
गम गई ईडोणी
ईडोणी मोत्यां जड़ी जी कांई
लालां जड़ी पचास
गम गई ईडोणी।।

अर्थात् मेरी सवा लाख की लटकन (झूमका) वाली मोतियों तथा पचास लालों से जड़ी ईडोणी खो गई। चाक लेने जाते समय तथा लेकर आते समय आनंद-मंगल सूचक गीत गाये जाते हैं। जाते समय की गीत की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

मादर वाज्यो, मादर वाज्यो रावतजी री पोळ
जणी घर हरख वधावणो।

अर्थात् रावतजी की पोळ मांदळ बजा, जहाँ उल्लासित वातावरण में विवाह रचाया जा रहा है।

सपने गाना

चाक के दिन से लेकर विवाह के दिन तक सुबह ही सुबह औरतें मिल सपने गीत गाती हैं। ये सपने तीर्थंकरों से सम्बन्धित होते हैं। विधवाएँ भी इन्हें गाने के लिए सम्मिलित होती हैं। तीर्थंकर भगवान ने भी जब जन्म धारण किया, गर्भावास में उनकी माताओं को भी सपने आए थे। ये सपने शुभ एवं मंगल के सूचक होते हैं। गाने-वालियों को पतासे दिये जाती हैं। सपनों में प्रथम ऋषभदेव से लेकर अंतिम चौबीसवें महावीर स्वामी तक की गुणावली गाई जाती है। ये खुले स्थान में गाये जाते हैं। गाते समय ऊपर छत के एक किनारे किसी साड़ी को लटका दिया जाता है।

घुघरी बांटना

मूंग हाथ लेने अर्थात् सांजी दिलाने के बाद वर तथा वधू के घर घुघरी बंटाई की जाती है। घुघरी बनाने के लिए पहले गेहूँ को खांड कर उसका छिलका उतार लिया जाता है। फिर उसे हल्के-हल्के आँच में बाफ दिया जाता है। घुघरी के साथ गुड़ की लापसी मिलाकर थालियों में उसके छोटे-छोटे लेणे बनाकर महिलाओं द्वारा गाँव में सब सगे-सोई, अड़ोसी-पड़ोसी के घरों में बाँट दिये जाते हैं। गीत है-

कठेड़ा सूं आई, हंजामारू घूघरी
कठेड़ा सूं आया नारेळ.....

मेहंदी लगाना

विवाह पूर्व जिन समधियों को लाया जाता है, उनमें सर्वप्रथम दूल्हे की बुआ अर्थात् दूल्हे के पिता की बहिन को लाया जाता है। यही प्रथम आगमन (पैल आणा) होता है। बुआ अपने साथ मिठाई निमित्त पाँच सेर नुगतीदाणा अथवा बेसन की चक्की लाती है। यहाँ आकर बुआ के हाथ-पांवों में मेहंदी लगवाई जाती है। मेहंदी लगाने वाली चार औरतें होती हैं जो दोनों हाथ-पांवों में मेहंदी की भांतें निकालती हैं।

चार कटोरियों में घोली मेहंदी ली जाती है। दीयासलाई की सींक से मेहंदी की भांतें दी जाती हैं। मेहंदी लगाने वाली बाइयों को मेहंदी वाली कटोरी तथा एक-एक नारियल और पतासें दिये जाते हैं। इसके बाद से विवाह में आई सभी बहिन-बेटियाँ मेहंदी लगाती हैं। बची-कुची शादी के दिन मेहंदी के रंग में रंगती हैं।

मांडपा-माणक थंभ

शादी के दिन मुहूर्त के अनुसार मेड़ी ओवरे के बाहर माणक थंभ स्थापित किया जाता है। यह लकड़ी का बना होता है, जिस पर हल्दी रंग पोत दिया जाता है। ऊपर चारों दिशाओं की छोटी-छोटी खपचियां जोड़ उन पर चिड़कल्यां बिठा दी जाती हैं। लाल कपड़े की छोटी सी गठरी में मूंग, मेहंदी, चावल तथा चाँदी का कापा रख लच्छे से माणक थंभ को बाँध दिया जाता है।

जंगल से मांडपा यानी मण्डप तैयार करने हेतु बाँस की लकड़ी लाई जाती है। मण्डप छवाया जाता है। इसी में वर-वधू का विवाह कराया जाता है। मांडपा लाने तथा मण्डप छबाने वाले को तिलक निकाल हाथ में लच्छा बाँध आटा, घी, गुड़, नारेळ आदि का भाता (नेग) दिया जाता है। मांडपे का गीत-

सखी डूंगरिया सूं आयो सोवन मांडपो
सखी उदपर ती आयो माणक थंभ
पनवाड़्यां मांडो छाई रयो।

बत्तीसी झेलाना

कपड़े की बनी लाल कोथली में 32 की संख्या में दाख, बादाम, लोंग, खारक तथा हल्दी मिश्रित गेहूँ के आटे के बने अंगुली की शक्ल के फर के अलावा खोपरा, कपड़ा तथा पाँच

रूपया रोकड़ रखकर लच्छे से कोथली का मुँह बंद कर दिया जाता है। नायण के साथ बहिन लेकर भाई को न्यौतने जाकर यह कोथली देती है। इसे बत्तीसी झेलाना कहते हैं। एक पाटे पर भाई की गोद में बहिन, महिलाओं की उपस्थिति में बत्तीसी झेलाती है। बहिन द्वारा भाई-भाभी के टीला-टींकी की जाती है। महिलाएँ गीत गाती हैं-

छाब भरियो सैंया नारेळां रो
दीजो म्हारे दादासा रे घरै
या तो आई रे बत्तीसी म्हारा दादासा घर दीजो
माताबाई मलतां म्हारा नैण झरावण लागा।

भाई की ओर से बहिन को भोजन करवाकर विदाई में नायण को पाँच रुपया तथा बहिन को साड़ी-वेश दिया जाता है। बहिन के साथ उसके निकट के समधी, बेटी-जंवाई भी जाते हैं।

घोड़ी चढ़ना

दूल्हे की बारात के लिए उसके स्वगृह से घोड़ी चढ़ाई की रस्म की जाती है। सजा-धजा दूल्हा शादी करने जा रहा है। सभी पुरुष-महिलाएँ सजे-धजे खड़े हैं। घोड़ी भी सजी-सजाई है। दूल्हा राजा घोड़ी पर सवार होता है। धोबी, कुम्हार, मालिन, तेली, खाती, लखारा, सेवग, नाई, सोनी सभी ने विवाहोत्सव के दौरान जो कार्य किया, अपनी-अपनी सेवाएँ दीं, उनका बंधा बंधाया नेगचार दिया जाता है। घर की बेटी, भावज, बुआ घोड़ी की वाग (लगाम) पकड़ नेग माँगती है। उन्हें भी उनके हिस्से का नेग दिया जाता है।

दूल्हे की माँ अपनी साड़ी के पल्लू में घोड़ी को चने खिलाती है। उसकी चोटी गूंथती है। बालों में मेहंदी लगाती है। तिलक करती है और दूल्हे को साड़ी के पल्लू की आड़ में स्तनपान कराने का उपक्रम करती है। यह प्रतीक भाव इस बात का प्रमाण है कि जो पुत्र विवाह के लिए घर से प्रस्थान कर रहा है उसकी विजय हो। अपने कार्य में वह सफल हो और माता ने जो दूध पिलाया है, उसकी लाज बनी रहे। उसे लज्जित न होने दे।

पहले युद्धभूमि में प्रस्थान करने से पूर्व भी माताएँ अपने लालों को उनके तिलक कर उनकी आरती उतार ऐसे ही विदाई देती थीं और कहती थीं- 'हे लाल! युद्ध में जाकर बड़ी बहादुरी से अपना शौर्य प्रदर्शित करना। विजित होकर आना। मेरे दूध को लज्जित मत होने देना और यदि कहीं तुम्हें लगे कि बाजी हाथ से निकली जा रही है तो लौटकर मुँह मत दिखाना। देश के खातिर अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देना।'

घोड़ी सम्बन्धी गीतों के नमूने-

(क) *घोड़ी उदियापुर सूं आई ओ राज*
तेजण खड़ी रे सुहावणी
घोड़ी भंडा बजाई, चौरासी बजाई
घूघरा घमकावत आई ओ राज।

(ख) *चन्द्रमुखी या चन्द्रलोक सूं आई...*

(ग) *घोड़ी नाचत कूदत रंग रे गई*
या तो गई रे बजारां री हाट

(घ) *घोड़ी ने दाल चणा री चगावोजी बनां*

टूंटिया निकालना

दूल्हे की बारात चली जाने पर पीछे केवल महिलाएँ रह जाती हैं जो घर की रखवाली हेतु रातभर चौकसी बावत् आपस में मिलकर विनोद करती हैं। इस विनोद स्वरूप वे दूल्हे की तरह बारात निकालती हैं। इसमें सभी महिलाएँ ही होती हैं। महिला अपने हाथ में ढोल की जगह फूटा कनस्तर (पीपा) लिए बेलन से बजाती चलती है। उसके पीछे बांकिये की बजाय भूंगली से हवा देती दूल्हा बनी महिला चलती है। कहीं-कहीं वर की तरह स्वांग कर महिला को घोड़े पर बिठा दी जाती है। इससे किसी फर्जी मकान पर तोरण भी बंधवा दिया जाता है। उसके पीछे महिलाओं का समूह हास्य-विनोद करता गाता चलता है।

गाँव के मुख्य स्थलों से होती इस हास्यास्पद बारात को देख सभी समझ जाते हैं कि नकली बारात सूचक यह टूंटिया निकाला गया है। कहा यह भी जाता है कि यह टूंटिया असली बारात को बुरी नजर से बचाने का टोटका है, साथ ही उस शुभ शकुन का भी प्रतीक है कि बारात वधू सहित बिना किसी विघ्न-बाधा के शांतिपूर्वक लौट आये। बारात के इस नकली स्वांग में सभी महिलाएँ बड़े उन्मुक्त एवं स्वच्छंद भाव से खुलकर हास्य विनोद करती हैं। इस विनोदात्मक प्रहसन में रात्रि कब व्यतीत होती है, पता ही नहीं चलता। घर की रक्षा-सुरक्षा भी हो जाती है। टूंटिया

को कहीं-कहीं खोड़िया भी कहते हैं। वर बनने वाली वधू से छोटी उम्र लिए होती है।

ख्याल-झामटड़े

विवाह सूत्र में बंधने से कुछ दिन पूर्व से ही विवाह-गृह की महिलाएँ मनोविनोद स्वरूप देर रात तक नाना प्रकार के स्वांग-वेश निकालकर भरपूर मनोरंजित होती हैं। इस प्रहसन-विनोद में महिलाएँ ही प्रदर्शक तथा दर्शक होती हैं। इसमें महिलाओं की वेशभूषा एवं साज-सज्जा की प्रमुखता नहीं घरेलू वातावरण एवं बोलचाल में जो आपसी संवाद मूलक स्वांग प्रस्तुति करती हैं, वे शील-मर्यादा के सभी बांधों से मुक्त-उन्मुक्त होते हैं। इसीलिए एक उम्र के बाद समझे-सयाने बच्चे भी इसमें शरीक नहीं होने दिये जाते हैं।

इन ख्यालों के लिए किसी तरह की कोई खास तैयारी नहीं की जाती। प्रति रात्रि गीत गाने के बाद देर रात्रि को ख्याल-झामटड़े किये जाते हैं। इसके लिए किसी पूर्व रंग-भूमिका, सज्जागृह, रिहर्सल की आवश्यकता नहीं होती। वहाँ बैठे-बैठे ही महिलाएँ प्रेरित होती हैं और स्वांग भरना प्रस्तुत हो जाती हैं। महिलाएँ पढ़ी-लिखी नहीं होने पर भी जिस स्वाभाविक ढंग से अपना बुद्धि चातुर्य तथा समझ दृष्टि का बखान करती हैं, चकित रह जाना पड़ता है। इनमें गाडोल्या, घूघरी बाँटना, बेरकी, टीपणा बांचना, बाबाजी, भायली, ललवा, टोडर माता, दलजी, हरजुड़ा, बिच्छू चढ़ना, भीलजी, भाभीसा, चटणी, तम्बाकू जैसे अनेक स्वांग हैं।

रावजी का मुजरा झेलना

बारात की प्रस्थानगी के वक्त घोड़ी चढ़ा दूल्हा गाँव के ठिकानेदार सामंत अथवा जागीरदार को मुजरा करने उसकी हवेली (रावले) के भीतर ले जाया जाता है, तब बाजे बजाना बंद कर दिया जाता है। रावतजी को सूचना मिलने पर वे अपने महल के गोखड़े से मुजरा झेलकर विदाई देते हैं। यों भी वर अथवा वधू की विवाह पूर्व वनोली निकाली जाती है, तब रास्ते में यदि रावला पड़ता है तो कुछ समय के लिए वहाँ बाजे वाले बाजा बजाना बंद कर देते हैं। वहाँ से गुजरने के बाद ही पुनः बाजों का दौर प्रारंभ होता है। इस अवसर का गीत है-

थाणी जाने मोटा-मोटा राजवी चढ़िया
थां पण क्यूं थी लाड लड़ाव
अड़ करी रया.....

अर्थात् आपके घर-परिवार में बड़े-बड़े राजकुमारों की बारात चढ़ी है। आप हमारे वींद राजा से लाड़-प्यार नहीं कर, क्यों जिद्द किये हैं? रावजी के गवाक्ष से दरसन देने पर ही वनोली वहाँ से आगे बढ़ती है।

बारात आना

मुहूर्त के अनुसार सांझी दिलाने के बाद प्रतिरात्रि को वर की वनोली निकाली जाती है। यह वनोली पहले पैदल ही निकाली जाती थी। कई जातियों में आज भी पैदल ही निकाली जाती है। वनोली में एक रास्ते से निकलकर गाँव के मुख्य मार्गों का चक्कर लगाकर दूसरे रास्ते द्वारा पुनः घर लौटा जाता है। आगे ताशे वाले चलते हैं। पीछे औरतें गीत गाती हुई चलती हैं। वनोली के समय वर को विशेष प्रकार की पोशाक पहनाई जाती है।

शादी के लिए प्रस्थान करते समय वर के साथ बारात के रूप में सगे-सम्बन्धियों, रिश्ते-नातेदारों का जो समूह होता है, उसे बारात तथा समूहजन को बाराती कहते हैं। जब आवागमन के साधन नहीं थे, तब बारात बैलगाड़ियों में ले जाई जाती थी। उन गाड़ियों में एक गाड़ी खाद्य-सामग्री-रसद की होती थी, जो सदैव बारात से पहले गन्तव्य स्थान पर पहुँच भोजनादि की व्यवस्था करती थी। ताशे अथवा बाजे बजाने वालों की गाड़ी भी अलग होती थी। बारात की गाड़ियों तथा बैलों को विशेष रूप से सजाया जाता था। वर के लिए घोड़ी होती है। जो सोने-चाँदी के आभूषणों से सजी रहती थी। बैलों के गलों में घंटियाँ अथवा टोकरें तथा घोड़ी के पांवों में घुँघरू बाँधे जाते थे। बारात का यह दृश्य बड़ा ही भव्य तथा आकर्षक बन जाता था।

कुछ बाराती अपनी व्यक्तिगत सवारी जैसे ऊँट, घोड़े भी बारात में ले जाते थे, जो बड़े सजेधजे होते थे। दूल्हे की घोड़ी बाजों की धुन पर कभी दो-दो तो कभी तीन-तीन पांवों पर नाच के विविध ठुमके लिए शोभित होती। भांति-भांति की घूमरें लेतीं पूरी बारात की शोभा में चार चाँद लगा देतीं। सम्पन्न लोग नौटंकियों की मधुर स्वर लहरी तथा पातरों के नाच द्वारा बारात की यादें छोड़ते।

वींद कोथली

वींद से तात्पर्य वर अथवा दूल्हे से है। दूल्हे के ब्याह में बारात जाने से लेकर पुनः लौटने तक के खर्च के लिए एक विशिष्ट कोथली होती है। लाल रंग की यह कोथली तीन पड़ लिए होती है। पड़ से तात्पर्य पड़दा अथवा घर होता है। लगभग पौन-एक फीट लंबी तथा आधा फीट की चौड़ाई की यह कोथली बटुए का काम करती है। इसके विभिन्न हिस्सों (पड़ों) में एक में रोकड़ रूपये, दूसरे में रेजगारी (छुट्टे पैसे) तथा एक में नोट रखे जाते हैं। यह कोथली घर का कोई बुजुर्ग रखता है। कोथली रखने वाला भरोसे वाला तथा सम्माननीय समझा जाता है। आवश्यकतानुसार समय-समय पर विविध नेगचार सम्बन्धी दूल्हे की ओर से जो खर्चा वहन करना होता है, वह इस कोथली में से किया जाता है।

नूता देना

विवाहोत्सव में समूह भोज के दौरान सगे-सम्बन्धी, अड़ोसी-पड़ोसी तथा अन्य रसूकदारों को जीमने के लिए आमंत्रित किया जाता है। यह आमंत्रण सेवक द्वारा कराया जाता है, जिसे नूता देना कहते हैं। यह नूता प्रायः तीन तरह का दिया जाता है। घर के केवल एक पुरुष को जीमने बुलाने के लिए दिया जाने वाला नूता 'पागड़ी बंध नूता' कहलाता है, जबकि परिवार के सभी सदस्यों को आमंत्रित करने के लिए 'हाव हंगरी' नूता दिया जाता है। इसी प्रकार उस घर में यदि कोई उनका मेहमान आया होता है, उस स्थिति में सबको निमंत्रित करने के लिए 'पाई पावणा सूदी' अर्थात् घर के मेहमानों सहित जीमने आने को कहा जाता है। यों नूता का अर्थ ही जीमने, भोजन करने के लिए निमंत्रित करने अथवा नूतने से है।

परूसा भेजना

जो व्यक्ति विवाह में भोजन के लिए नहीं आ पाते हैं उनके लिए, उनके घर भोजन-थाल जिसे 'परूसा' कहते हैं, भेजा जाता है। इस परूसे में जो जीमण (भोजन) बना होता है वह इतनी पर्याप्त मात्रा में रखा जाता है कि उसकी तृप्ति हो जाय। ऐसे विशिष्ट जीमण में लपसी, पूड़ी, चने की दाल, मालपुए, झकोलमा पूड़ी तथा बेसन चक्की या फिर मोतीचूर के लड्डू बनाये जाते हैं। यह कार्य किसी विशिष्ट व्यक्ति को सौंप दिया जाता है जो अपने साथ लाने वाले (साथ वाले) को लेकर सूची के अनुसार घर-घर परूसा दे आता है। ऐसे परूसे मुख्यतः विधवाओं, अशक्त महिला-पुरुषों के लिए होते हैं। परूसा देना, परूसा रखना अथवा परूसा पहुँचाना सम्मानजनक कार्य समझा जाता है। शहरों में तो नहीं पर गाँवों में यह प्रथा अब भी मिलती है जो टिफिन पहुँचाने के समान ही है।

आरती करना

दूल्हे द्वारा तोरण चटकाने (वांदने) से पूर्व उसकी सासू द्वारा आरती की जाती है। यह आरती बहिन-बेटियों द्वारा बाँस की पतली-पतली खपच्चियों से लड़की को डायचे में दी जाने वाली थाली में बनाई जाती है। आरती के ऊपर ही ऊपर आटे का बड़ा दीपक बनाया जाता है, जिसमें कपास के बीजों (कपास्यों) में तेल डाल कर अग्नि प्रज्ज्वलित की जाती है। इस दीपक के अलावा आरती के हर किनारे, जहाँ-जहाँ एक खपच्ची दूसरी से मिलती है, छोटे-छोटे दीपक बनाये जाते हैं। उनके नीचे लच्छे की छोटी-छोटी लड़ें तथा उनके नीचे हल्दी मिश्रित आटे की छोटी-छोटी गोटियाँ लटकाई जाती हैं। वर के समक्ष जब जगमग करती पूरी आरती लाई जाती है तब लगता है आरती का यह श्रृँगार किसी वधू के सोलह श्रृँगार से कम नहीं है। इसका प्रत्येक दीप वधू के अंग-प्रत्यंग की तरह जगमग झिलमिला रहा है। तिलक करते समय वर जरा भी अपनी गर्दन नहीं झुकता, कुछ प्राप्ति की आशा में नखरे खाता अड़ पकड़ लेता है, तब सासू द्वारा सोने की चेन पहनाई जाती है। किसी वर का नाथू नाम रखने पर सासू द्वारा नेग के रूप में नाथ्या नारा दिया जाता है। गाय के छोटे बछड़े (नारक्ये) को नारा कहते हैं।

तोरण वांदना

विवाह में तोरण का अर्थ द्वार विशेष से न लेकर काठ की बनी टिकटी विशेष से लिया जाता है, जिसके ऊपर मयूर तथा उसके अगल-बगल में चिड़ियाँ बनी होती हैं। ये चिड़ियाँ विषम संख्या में 3, 5, 7, 9 तथा 11 तक होती हैं। यह खाती द्वारा बनाया जाता है जिसे या तो गेरु अथवा हल्दी से पोत दिया जाता है या फिर लाल, पीले, हरे आदि रंगों से रंग दिया जाता है। कहीं-कहीं आसापाला के पत्तों का तोरण भी तैयार किया जाता है।

राजस्थान में प्राय: हर जाति में तोरण वांदने की प्रथा है। यह तोरण अक्सर तलवार से चटकाया जाता है। कहीं-कहीं छड़ी तथा खांड़े से चटकाने की प्रथा भी है। यह घोड़ी पर बैठकर वांदा जाता है। सम्पन्न घरों में हाथी पर तोरण चटकाने की परंपरा रही है। कहीं-कहीं केवल बाजोट पर ही तोरण बाँधा जाता है। तोरण युद्धस्थल का प्रतीक माना जाता है। राजस्थान में इसकी कई किंवदंतियाँ प्रचलित हैं। इस सम्बन्ध में गीत भी मिलते हैं। यथा-

म्हारो बनो नखराळ्यो रे
हाथी रे होदे तोरण वांदसी।

आज म्हारा बनड़ाजी तोरण आई लुम्याए
सइयां रो मन हरकियो।

तोरण राज तोरण कामण कणी कीधा।

अरे खातीड़ा रा बेटा थूं चतुर सुजान
तोरणियो घड़लायो चनण किये रूंखरो।

गीतों में दूल्हे को शाही ठाठ से निरखा जाता है।

बना हस्ती कजली देश रो लाइजो
हथणी रे होदे बैठ पधारजो
सोनो लंका देश रो गहनो घड़ाईजो
मोती समदां पार रा
मोत्यां रो चूड़लो पुराइजो
सुख पाल्यां बैठ पधारजो
मोत्यां री लड़ सूं तोरण वांदस्यो।

अर्थात् बनड़ाजी, कजली देश के हाथी लाना। हथिनी पर सुख पालकी में बैठ आना। लंका देश के सोने के आभूषण, समुद्र पार के मोती के गहने, चूड़े में सज्जित हो महंगे मोतियों की लड़ से तोरण चटकाना।

वर पूंखना

माया में बिठाने से पूर्व सास द्वारा वर को पूंखने की क्रिया सम्पन्न की जाती है। पाँच कुलकियों (मिट्टी की बनी छोटी कुल्हड़) के गले में लच्छा बाँधकर सास एक-एक हाथ में कुल्हड़ ले उस पर मैदे-शक्कर से बने छोटी पपड़ी के आकार के तले हुए दो खाजे रख क्रम से दांई और फिर बांई ओर फिर चूड़ी से, खाई से, नथ से वर के वक्षस्थल को छूती हुई पूंखती है। इस समय का गीत हैं-

खाजा सूं वर पूंखिया
राजा रो जीमण होसी
चूड़ी सूं वर पूंखिया
एवाता रो पैरण होसी
रवाई सूं पूंखिया
मईयो विलोवण होसी
नथ सूं वर पूंखिया
राण्या रो जीमण होसी।

अर्थात् खाजे से वर पूंखा, राजा का जीमण होगा। चूड़ी से वर पूंखा, सुहागिन का पहनावा होगा। बिलौनी से वर पूंखा, छाछ बिलोवणा होगा। नथ से वर पूंखा, रानियों का जीमण होगा।

पाटे उतारना

दूल्हे द्वारा तोरण चटकाने के पश्चात् वर को माया स्थान पर ले जाया जाता है। इधर दुल्हन को पाट पर बैठाकर स्नान कराया जाता है। फिर मामा उसे पाट पर से उतारने की रस्म करता है और चूंदड़ ओढ़ाता है। बाद में उसे माया स्थल पर वर-वधू को गजानंदजी, पूर्वज, कुलदेवता आदि के धोक लगवाया जाता है। यहीं उनके अंतरवास्या का गठजोड़ किया जाता है। शादी के बाद सीख अर्थात् विदाई से पूर्व वधू की चोटी आदि की जाती है।

रंग बांटना

माया के स्थान पर वर-वधू की उपस्थिति में वर के बहन-बहनोई अर्थात् उस घर के जंवाई-बहिन से रंग बंटाई का दस्तूर कराया जाता है। ऐसी स्थिति में दोनों मिलकर एक थाली में पावभर के करीब पीसी हुई मेहंदी अथवा मेहंदी के पाले को नारियल से बंटवाने अथवा पिसवाने का उपक्रम करते हैं और बदले में नेग प्राप्त करते हैं। इसी मेहंदी को हथलेवा जोड़ने के लिए पानी मिलाकर घोल रूप में तैयार कर ली जाती है।

मिलणी करना

वधू के घर वर तथा वधू के लोगों का आपसी समारोहिक

मिलन ही मिलणी करना कहलाता है। इसमें समानधर्मी समधियों का मिलन होता है जैसे वर पक्ष का दादा, पिता, चाचा है तो वधू पक्ष से भी दादा, पिता, चाचा का मिलन कराया जाता है। यह प्रसंग वधू परिवार द्वारा वर पक्ष के समधियों-बारातियों के स्वागत-मिलन का द्योतक है। इसमें वधू पक्ष वाला पहले वर पक्ष के बाराती को तिलक करता है और नारियल देता है। बदले में वधू पक्ष वाला भी तिलक कर आपस में एक-दूसरे को मुजरा करते हैं।

रद घर

रद घर से तात्पर्य उस विशेष कक्ष, ओवरा-ओवरी से है जिसमें सामूहिक जीमण के लिए बनाई सामग्री रखी जाती है। इसमें हर किसी का प्रवेश वर्जित रहता है। मिष्ठान्न सामग्री का सर्वप्रथम गजानंदजी को भोग लगाया जाता है। कक्ष के दरवाजे के बाहर पाटा लगा दिया जाता है, जिस पर वे व्यक्ति तैनात रहते हैं जिन्हें रद घर का कार्य सौंपा होता है। ये परोसकारी करने वाले को भीतर से लाकर सामग्री देते हैं।

रद से ऋद्धि होती है। ऐसा हर जगह होता है। कहीं-कहीं रद घर में गजानंदजी को ठीक से स्थापित नहीं करने के कारण जीमण सामग्री का अभाव हो जाता है। ऐसी स्थिति में निमंत्रित व्यक्तियों को बिना भोजन किये निराश लौटना पड़ता है। गजानंदजी के टूटमान होने पर जितने व्यक्तियों का भोजन बनता है, उससे कहीं अधिक संख्या में लोगों के जीमने के बाद भी भोजन सामग्री बची रहती है। भोग से पूर्व इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता है कि कोई उसे चख नहीं ले। चखने पर वह सामग्री झूठी मानी जाती है। ऐसी सामग्री का भोग लगने पर देवता घोर नाराज हो जाते हैं और विघ्न खड़ा कर देते हैं।

पडरा भेजना

पडरा वर द्वारा वधू को भेजा जाता है। बाँस की बनी मोटी छाब में वधू के दो वेश जिसमें एक घाट घाघरा तथा नील कोरपल्ले वाला लाल साड़ी का घाट होता है। घाट के अंदर डबूकड़े होते हैं। घाघरा लाल टूल का होता है। इसके अलावा मेहंदी का पाला, लच्छा, कंकू, डाळां (लाख की दो चूड़ी) दोवड़ा (आसमानी रंग की चीणों का पाँच लड़ी गले का आभूषण जिसे चौथे फेरे में बहिन पहनाती है), गले में बाँधने का सींग बीजासण (लच्छे में चाँदी के पतरड़े की 7 पुतलियाँ), चोटी के बाँधने का फूंदा, पहनने की चमकणी जूती भेजी जाती हैं। इसके अलावा एक चूंदड़ भेजी जाती है जिसे मामा चौथे फेरे में ओढ़ाता है। हाथी दांत का डाडा होता है जिसे कोहनी के ऊपर वर की बहिन-बुआ पहनाने का दस्तूर करती है और बदले में नेग प्राप्त करती है।

कन्यावर

विवाह के दिन कन्या के माता-पिता, भाई एकासना व्रत करते हैं जो कन्यावर के नाम से जाना जाता है। यह कन्या को वर की प्राप्ति होने के उपलक्ष्य में किया जाता है। इस दिन केवल एक बार दिन को भोजन किया जाता है। इस व्रत में केवल सिंघाड़े के आटे का बना हलवा बनाया जाता है जो दही के साथ खाया जाता है। विवाह में आये अन्य सगे-समधियों को भी यह व्रत करने को कहा जाता है, पर अन्यों की मनोभावना होने पर ही वे यह व्रत करते हैं।

अंतरवास्या

यह दो मीटर के करीब लंबाई लिए लाल कपड़ा होता है। शादी के वक्त इसका एक हिस्सा वींद अपने कंधे पर रखता है जबकि दूसरे हिस्से से वधू की चूंदड़ का पल्ला बांधा जाता है। अंतरवास्या वींद-वींदणी की अंतरंगता का सूचक है। दोनों आत्मीय रूप से एक दूसरे के लिए अंतरंगी हो गये हैं।

कामण करना

तोरण पर आये वर का स्वागत करते समय सासू कामण करती है। कामण से तात्पर्य वह क्रिया होती है, जिससे दूल्हे को वशीभूत किया जाता है। वहीं सासू उसकी लंबाई कच्चे सूत अथवा लच्छे से नापती है। कहीं-कहीं तिलक निकाल उसका नाक पकड़ा जाता है लेकिन दूल्हा बड़ी सावधानी तथा स्फूर्ति रखता है। सासू को ये क्रियाएँ नहीं करने देता हैं। साथ वाली महिलाएँ मसखरी के माहौल में गीत गाती हैं-

कोरी-कोरी कुलड़ी में मइड़ो जमायो राज
आज म्हारा राईवर ने दादासा घर नूत्या ओ राज
दादासा घर नूत्या राईवर दाद्यां नूत जिमाया राज
लीली दगली लीलो सूत बांधोजी सासू रा पूत

बांध्या सूंद्या करे सलाम
एक सलाम भाई दूसरो सलाम
तीसरो सलाम थांका बाप री गुलाम
छोड़ ए दादासा री प्यारी
अब तो कामण कीधा ओ राज
कामण का तो पैली केता अब तो थांका चाकर राज।

अर्थात् कोरे कुल्हड़ में दही जमाया। आज मेरे बनड़े को दादा सा के घर आमंत्रित कर जीमाया है। दादियों ने जीमाया है। हरे सूत से बने राजा को बांधो। वह सबको सलाम करेगा। तीसरे सलाम में बाई का गुलाम हो जायेगा।

दादासा रा मेलां नीचे बनड़ी हंस उड़ावे सा
बनड़ी हंस उड़ावे वांकी माता कामण गावे सा
पाव की पंसेरी बनाई दूं कागज का दो पलड़ा सा
मंडप नीचे तोल लगाई दूं जान्या ने तुलवा दो सा
बारा मण को बामण उतर्‌यो, बीस मण को नाई सा
तीस मण का देवर उतर्‌या अस्सी मण का जेठ सा
सौ मण का ब्याईजी उतर्‌या कुसुमबाई सुसरा सा
बनी का बना सा ने तोल्या फूल बराबर उतर्‌या सा।

अर्थात् दादा सा के महल के नीचे बनी हंस उड़ा रही है। उसकी माता कामण गा रही है। पांव की पंसेरी बना दूँ। कागज के दो पलड़े भर दूं। मंडप के नीचे बारातियों को तुलवा दूँ। बारह मण का ब्राह्मण, बीस मण का नाई, तीस मण का देवर, अस्सी मण का जेठ, सौ मण का ब्याई पर बनी के बना का तोल मात्र फूल बराबर रहा।

म्हारी जोड़ी रा बनड़ा पे कामण कणी कीधा
म्हारे रेशम रे फूंदा पर कामण कणी कीधा।

अर्थात् मेरी जोड़ी के बनड़े पर किसने कामण किया? मेरे रेशम के फूंदे पर किसने कामण किया?

बना बागां आय बिराजिया ओ
गज कामणिया
म्हारो माली वींद सरायोजी।
चालता री चाल बांधूं
देखता रा नैण बांधूं
घोड़ी चढ़तो वींद बांधूं
वींद का वड वीर बांधूं
बांधूं सारो कुटंब कबीलो ए गज कामणिया।

अर्थात् बना ने बाग में आकर विश्राम किया। मेरे माली ने उसे सराहा। चलते हुए की चाल, देखते हुए के नयन, घोड़ी चढ़ते दूल्हे, दूल्हे के बड़े भाई और उसके सारे कुटुंब-परिजनों को बाँध दूँ।

कामण गीत बड़ा गूढ़ अर्थ लिए होते हैं। गीतों में कामण का जादुई प्रभाव अभिव्यंजित हुआ मिलता है। यह गीतों की ही शक्ति होती है कि उस कामण के प्रभाव को भी दर्शाया जाता है। विवाहिता बाई तथा उसके परिजनों के वश में दूल्हा हो जाय। महिलाएँ कहती भी हैं कि शादी के पश्चात् दूल्हा जोरू का गुलाम बना रहता है और दुल्हन के परिवार की ओर ही उसका झुकाव अधिक देखा जाता है।

कुछ गीत तो ऐसे भी मिलते हैं जिनसे यह पता चलता है कि वशीकरण के चलते पूरी बारात के भागीदारों को ही जादू में बाँध लिया जाता है। हर बाराती की चाल, उसकी दृष्टि, उसके कामकाज, दूल्हे को घोड़ी सहित ही नहीं, दूल्हे के सभी भाई, सगे-समधी और पूरा कुटुम्ब परिवार ही बाँध दिया जाता है, ताकि विवाह निर्विघ्न समाप्त हो सके और वधू पक्ष के लोग शांतिपूर्ण विवाह रचाकर अपनी चाह अनुसार बारातियों को विदा कर सकें।

चूंदड़ ओढ़ना

चूंदड़ सुहाग एवं सौभाग्य की निशानी है। ये चूंदड़े कई प्रकार की होती हैं जिनमें केरी (आम), पुतली, मकई, ज्वार, फूल, चौकड़ी, डाबा, मोतीचूर, एक थाली भांत तथा काली एवं लाल चूंदड़ें विशेष प्रचलित हैं। चूंदड़ें प्रायः साड़ी के ऊपर ओढ़ी जाती हैं। सबसे पहले शादी के समय चंवरी में चूंदड़ धारण कराई जाती है। उसके बाद क्रमशः चूड़ा पहनते समय, माताजी पूजते समय, घूघरी बाँटते, चाक लाते, झलमा पूजते, रोड़ी पूजते, भैरूजी पूजते, घोड़ी चढ़ाते, मुस्यारा पहनते, लाडू बाँटते तथा आणा आते समय चूंदड़ ओढ़ी-पहनी जाती है। जब कोई सधवा स्त्री मर जाती है तो उसे भी चूंदड़ ओढ़ाई जाती है। राजस्थानी लोकगीतों तथा पारसियों में इन चूंदड़ों के कई गीत तथा पारसियां मिलती हैं।

राजस्थान में चूंदड़ें बनाने का काम पैतृक व्यवसाय के रूप में रंगरेज करते हैं। नमूनार्थ-

नानी बंधण री चूंदड़ी बेचां हाटूं जी हाट
चतर व्है तो मोल लै मूरख फिरि-फिरि जात। (पारसी)

अर्थात् छोटे-छोटे बूंदक वाली चूंदड़ी, बाजार-दर-बाजार बेची जाती है। चतुर व्यक्ति उसकी पहचान कर खरीद लेता है जबकि मूर्ख घूम फिर उसे देखता रह जाता है।

काली नदी रो पाणी न पीवूं
काला न बैंगन खावूं।
काला पिया री सेज न सोवूं
म्हें काली पड़ जाऊं
काली चूंदड़ ऊपर बालमो बोत राजी। (गीत)

अर्थात् काली चूंदड़ पर मेरा पति बहुत फिदा है। काली नदी का पानी नहीं पीऊंगी। काले बैंगन नहीं खाऊँगी। काले प्रियतम की शैय्या नहीं सोऊँगी। मैं काली पड़ जाऊँगी।

हथलेवा जोड़ना

हथलेवा जोड़ने से तात्पर्य वर-वधू दोनों के हाथ में रंग बंटाई वाली गीली मेहंदी रख उनके हाथ जोड़ दिये जाते हैं। वर का दाहिना हाथ नीचे रख कन्या का अँगूठा अंदर बाँधकर हाथ ऊपर रखा जाता है और उन पर लाल कपड़ा लपेट दिया जाता है। यह क्रिया पाणिग्रहण कही जाती है। कहीं मेहंदी कन्या के हाथ पर रखने का प्रचलन है। हथलेवा छुड़ाने के बाद दोनों का हाथ देख महिलाएँ उनके बीच आपसी भावी मेल-मिलाप का शकुन निरखती हैं। जैसी मेहंदी रचती है उसके अनुसार दोनों के बीच गाढ़ा प्रेम अथवा हल्का प्रेम रहने का अर्थ निकाला जाता है।

फेरे फरना

फेरे फरने से तात्पर्य मण्डप में वैवाहिक जीवन में बंधने हेतु होम (यज्ञ) की परिक्रमा करने से है। अग्नि की साक्षी में पंडित विवाह विधि सम्पन्न कराता है। यह परिक्रमा सात बार की जाती है। प्रथम तीन में वधू आगे रहती है जो धर्म, अर्थ, काम की प्रतीक है किंतु चौथे मोक्ष मार्ग में पति को ही आगे रहना होता है। सात फेरों को सप्तपदी भी कहते हैं।

तीन फेरे पूर्ण कर वधू वर के बाँयी ओर बैठने की अधिकारी होती है। दायाँ और बायाँ दोनों भाग श्रेष्ठ हैं पर अधिकतर काम दायाँ हाथ करता है सो वही श्रेष्ठ है। लेकिन ऐसा नहीं है। श्रेष्ठ अंग बायाँ ही है कारण कि इसी भाग में हृदय होता है। वधू को बाँयी ओर बिठाने से तात्पर्य उसे वर ने अपने हृदय में स्थान दे दिया है।

माँग भराई

चौथे फेरे के बाद वर-वधू के आसन ग्रहण करने पर कन्या पक्ष द्वारा वर को सरोपाव स्वरूप पाग (पगड़ी) धारण कराई जाती है। वधू को उसकी सहेल्यां पूंछा, चूड़ी आदि धारण कराती हैं। इसी क्रम में वर सिंदूर, कुम्कुम अथवा चाँदी के सिक्के या अँगूठी द्वारा वधू की माँग भराई करता है।

सात फेरे में लिए सात वचन इस बात के सूचक हैं कि वर-वधू दोनों प्रतिज्ञाबद्ध हो चुके हैं साथ ही वे अन्न-बल, धन-सम्पदा, सुख-दु:ख, पशु, वनस्पति रक्षा तथा ऋतु के अनुसार सात्विक आहार-विहार का ध्यान रखते हुए नवगृहस्थ जीवन का सम्यक् प्रकारेण निर्वाह करेंगे।

कांकण दोवड़ा बांधना

चंवरी में चार फेरे के बाद बहिन-बेटी की ओर से वर तथा वधू के एक-एक हाथ-पांव में दोवड़ा बांधा जाता है। लच्छे के दो पड़ बंट कर उसमें लाख की एक बींटी (अंगूठी), एक कौड़ी तथा एक लोहे की बींटी को जोड़ अलग-अलग गाँठ बाँधकर दोवड़ा तैयार किया जाता है। यह दोवड़ा शादी के बाद विदा से पूर्व वर-वधू द्वारा एक दूसरे कांकण खोलते हैं। दूसरा दोवड़ा खोलने की रस्म वर के घर पूरी की जाती है। दोवड़ा से तात्पर्य दुहरे बंटे हुए लच्छे से है। यह गृहस्थ जीवन के बंधन का भी सूचक है।

हथलेवा छुड़ाना

बहिन-जंवाई रंगबंटाई के दस्तूर में मेहंदी का सूखा पाला बाँटने की रस्म अदायगी करते हैं। उसी पाले के साथ घुली मेहंदी मिलाकर अंतरवास्ये में दूल्हा-दुल्हन के हाथों के बीच मेहंदी तथा रूपया रखकर हाथ बाँध दिये जाते हैं। चंवरी में शादी के बाद दोनों का हथलेवा छुड़ाया जाता है। सबसे पहले दुल्हन के दादा-दादी, माता-पिता यह रस्म पूरी करते हैं और हथलेवा छुड़ाकर चाँदी का

आभूषण देते हैं। फिर सभी सगे-सम्बन्धी, अड़ोसी-पड़ोसी की महिलाएँ आकर हथलेवा छुड़ाते हैं और नेग देते हैं। सम्बन्धों के अनुसार नेग में कोई रकम तथा रोकड़-रूपये रखते हैं। हथलेवा छुड़ाना बड़े पुण्य का काम समझा जाता है। कन्या को कुछ देने का धर्म करना हर परिवार वाला चाहता है, इसलिए गरीब से गरीब भी कुछ न कुछ देकर प्रसन्न होता है। इस अवसर का गीत है-

धरम करो म्हारा धरमी ओ दादासा
आई धरम री वेळां ओ राज
देणो लेणो चंवर्‌यां में दीजो
पछे झूठी वातां ओ.....

अर्थात् धर्म करो मेरे धर्मी दादा सा। धर्म करने का वक्त आ गया है। जो कुछ देना हो, चंवरी में ही दे दो फिर बालिका के चले जाने के बाद कुछ देने की बात का कोई अर्थ नहीं रह जायेगा। यहाँ हथलेवा छुड़वाने आई सम्बन्धियों का सम्बोधन दे-देकर गीत गाया जाता है, जैसे- दादसा, वीरसा, भावज, मासी सा,बुआ सा आदि। यह गीत अचरू भी कहलाता है।

वधू को डेरे पहुँचाना

शादी कराने के पश्चात् लड़की को बारात स्थल डेरे पहुँचाया जाता है। डेरे पहुँचाने का यह दृश्य अत्यंत कारुणिक तथा हृदय-द्रावक होता है। अत्यंत लाड़-प्यार में पली, चांदे बैठी चिड़कली अपना सुरंगा पीहर छोड़ती है। हरिये बन की कोयलिया अपने बावळ, मावड़, भाई-भौजाई तथा सगे-सम्बन्धियों, पास-पड़ोसियों से सुबक-सुबक अश्रु विगलित हो, एक-एक से गले मिलकर विदा होती है। उसकी सखी-सहेलियाँ और सभी नाते-रिश्तेदार उसे नाना प्रकार की भलावण देते हैं, जिसमें सर्वप्रिय सर्वस्व पतिदेव तथा उनके सारे परिजनों की सेवा करने का परम धर्म मुख्य रहता है।

विदा होती हुई लड़की गीतों ही गीतों में अपने पिता से नाना प्रकार के प्रश्न कर बैठती है- 'बाबुल! तुम्हारा परिंडा (पानी का स्थान) अब मेरे बिना रीता पड़ा है। मुझ धीय बिना उसे अब कौन भरेगी? कौन गायों का दूध निकालेगी? कौन उनके गोबर के उपले थेपेगी? उनके बछड़े को कौन चारा खिलाएगी और कौन तुम्हें 'बाबुला कहकर पुकारेगी?'

पिता का कोमल हृदय फूट पड़ता है और देखते-देखते अपनी भौजाई को इशारा दे वह विदा हो जाती है-

एलो भावज घर आपणो, म्हें तो जावां परदेस
संप जो व्है तो लावजो नी तो भलां म्हाणे देस

हे भावज! अब यह तुम्हारा घर तुम संभालो। मैं तो पराये घर जा रही हूँ। मेरे प्रति तुम्हारे मन में भावना उमड़े तो मुझे लेने भेजना अन्यथा मैं अपने घर-ससुराल में ही भली चंगी।

भात जीमाना

शादी के दिन संध्या को वधू पक्ष की ओर से भात जीमाने की परंपरा है। यह भात वह विशिष्ट जीमण (भोज) होता है, जिसके लिए बारातियों के साथ-साथ वधू पक्ष के समधियों तथा अन्य मिलने वालों को आमंत्रित किया जाता है। स्थिति-परिस्थिति के अनुसार पूरे समाज तथा गाँव वालों को भी न्योता दिया जाता है। भोज में गुड़ की लापसी, पूड़ी तथा चने की दाल बनाई जाती है। बारातियों को अलग से खाजा पापड़ी तथा ग्वार की फली तल कर परोसी जाती है।

वींद यानी दूल्हे को अलग से भात जीमाया जाता है। उसके साथ उसके खास मित्र होते हैं। सबको एक बड़े थाल में बाजोट पर जीमाया जाता है। इनके लिए और भी मिष्ठान दही आदि परोसे जाते हैं। इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता है कि दूल्हे के साथ आए सभी की हर माँग पूरी की जाय।

इसी अवसर पर दुल्हन की सखी-सहेल्या दूल्हे के पांव की एक पगरखी (जूती) छिपा देती हैं। जब दूल्हा भोजन कर विदा लेता है तब अपनी एक जूती नहीं पाता है। उसके साथी इधर-उधर ढूंढने का उपक्रम करते हैं। इधर सखी-सहेल्या जोर-जोर से ठहाके देती ठिठोली पर उतर आती हैं। अंत में दूल्हे से जूती छिपाई का नेग मांगती है तब ही जूती लाकर देती हैं।

खेल खेलाना

शादी के बाद वर-वधू की हार-जीत की परीक्षा हेतु दोनों को खेल खिलाया जाता है। इसके लिए एक पीतल की परात में तनिक हल्दी और दही मिला पानी तैयार किया जाता है। खिलाने वाली पानी से भरी परात में सात खारक तथा एक बींटी (अंगूठी)

डालती है। दूल्हा-दुल्हन दोनों अपने हाथ पानी में डाल के ढूंढते हैं। जिसकी मुट्ठी में अंगूठी आ जाती है वह जीता हुआ और दूसरा पक्ष हारा हुआ समझा जाता है। हार-जीत का गीत गाती हुई औरतें दोनों को पाँच-सात बार खिलाती हैं। गीत है-

रायां रा जीत्या ओ राज लाड़ी खेलनु जाणे
लाड़ी जी जीत्या ओ राज लाड़ो खेलनु जाणे।

अर्थात् वर विजयी रहा। वधू खेलना नहीं जानती। वधू जीत गई। वर को खेलना नहीं आता। ऐसी ही रस्म वर के घर पूरी की जाती है।

गाली खाना

विवाह पर आपसी मनोरंजन तथा हँसी-दिल्लगी के लिए ब्याई -समधियो को गालियाँ सुनाई जाती हैं। यही एक अवसर होता है, जब वर के पिता-माता अर्थात् ब्याईजी-ब्याणजी को रंजनपरक खोटी-खरी सुनाकर उन्हें आड़े हाथ लिया जाता है। गीतों के माध्यम से दुल्हन की सास को भळावण भी दी जाती है कि नवोढ़ा बहू को भली प्रकार रखना। गाली मत देना। यह हमारे ताले की कूंची समान प्यारी तथा लाड़ली है। इसे हमने परिवार में सबसे अधिक लाड़-प्यार से रखा है। दुल्हन को वर के ठहराव स्थल डेरे पहुँचाते वक्त की गाली गीत देखिए-

पांच बरस रा ब्याईजी
रस्सी बरस री घर नार
बालम छोटा सा...
पाणी जावूं तो बालम हठ लागा
म्हनै घड़ल्यौ देईदै म्हारी नार
बालम.....

पाँच वर्ष के ब्याई और अस्सी वर्ष की ब्याण। दूल्हा छोटा-सा। पानी जाने पर पति ने हठ की, मुझे घड़ा दे दो मेरी नार। दूल्हा छोटा-सा।

म्हूं आपने पूछूं वेवाइसा
मूछां कांसै बळी
बळी तो थोड़ी नै चरमरी घणी
रंग धोरा लगाई दूं रै
म्हारा बाबूड़ा...

मैं आपसे पूँछू ब्याईजी, आपकी मूछें कैसे जलीं? जलीं कम, चरमराई अधिक। मजे की झड़ी लगा दूँ मेरे बाबूड़े ब्याई।

मोटी मोटी पागां बांधै
माइने भरिया गाबा
खरचवा नै कौड़ी न्ही नै
बेटो परणावा नै आगा
रंग धोरा लगाइदो रे....

बड़ी-बड़ी पगड़ी बाँध रखी। उसके भीतर कपड़े-लत्ते भरे हैं। खर्च के लिए कौड़ी नहीं और पुत्र का विवाह करने निकले। मजे की झड़ी लगा दूँ।

वेवाईसा रे हाथ में पाँच पछेटा
व्याणसा नै रमणो सीखावे
वेंडी रांड रा .....

ब्याईजी के हाथ में पाँच पछटे। ब्याणजी को खेलना सिखा रहे हैं। वेंडी रांड रा शब्द एक गाली है, जो मूर्खता का प्रतीक है।

वेवाईसा रे हाथ में छार्यां रा मींगणा
ब्याणसा ने नुगती चखावे वेंडी...
ऊंट रा मींगणा खवावे वेंडी...

अर्थात् ब्याईजी के हाथ में बकरियों के मींगणे (मल), ब्याणजी को नुगती कह चखा रहे हैं। ऊँट के मींगणे बता गुलाब जामुन कह खिला रहे हैं।

ओ सासू गाळी मत दीजो
म्हारा ताला माइली कूंची
बाई ने सबसूं राखी ऊँची

अर्थात् ओ सासूजी! मेरी बालिका को गाली मत देना। इसे मैंने ताले के बीच कूंची की भांति बड़े लाड़-प्यार से पाला है, सबसे अधिक सवाई मानी।

महिलाएँ गालियाँ गाकर मात्र मनोरंजन ही नहीं करतीं, स्वयं रंजित भी होती हैं और छिपे भावों से यह भी संकेत कर देती हैं कि यदि बाई को ठीक से नहीं रखा, तो हम भी आपसे दबने वाली नहीं हैं। मौका आने पर आपकी भी खबर ले लेंगी।

थापा देना

लड़की की विदाई से पूर्व मुख्य ब्याईजी को सबके प्रतिनिधि के रूप में विदा करने हेतु थापा देने की रस्म निभाई जाती है। इसके अंतर्गत ब्याईजी को निमंत्रित कर उन्हें पाटे पर बिठाया जाता है। तिलक किया जाता है। हल्दी का रंग कर नारियल दिया जाता है और उनकी पीठ पर एक मीटर करीब सफेद कपड़ा ओढ़ाकर, उस पर सास द्वारा कुमकुम का थापा दिया जाता है। इस अवसर पर कांसी के वाटके में चाँदी की रकम-रूपये आदि दिये जाते हैं। थापे के रूप में थाली में कुमकुम का घोल कर पूरी हथेली रंग कर कपड़े पर थप्पा दिया जाता है।

मसखरी पर उतर आए महिला समुदाय का मन देख थापे के साथ-साथ ब्याईजी की दाढ़ी भी पूरी कुमकुम रंग कर दी जाती है। इस मौके पर ब्याईजी तथा अन्य साथ आए समधियों पर केसरिया रंग की बौछार भी की जाती है। यह बौछार कभी-कभी उन्हें तरबतर कर देने वाली भी होती है, मगर ब्याई-सगे लाचार हो कुछ भी कहने की स्थिति में नहीं रहते हैं। यह स्थिति बहू परिवार वालों द्वारा अधिक स्नेह प्रदर्शन की सूचक होती है।

चूड़ा पहनाना

लड़की की विदाई पूर्व ठीक ढंग से श्रृँगारित किया जाता है। नायण उसके सिर के बालों की चोटी करती है। मेहंदी लगाती है। नणद काजल, टींकी करती है। आरती करती है। सोने की चूड़ियाँ पहनाई जाती हैं। भाभी मूठिया पहनाती है। पहले लखारा आता है जो लाख का चूड़ा पहनाता है। महिलाएँ मिलकर गातीं हैं। यथा-

(क) *हाड़ौती में मेथ्यो चूड़ो वापरियो*

(ख) *चूड़ो चंदरी रो राज*
टीपां सोना री
पैरण वाली नखराळी ओ राज
केसरिया ओ राज
चूड़ो चंदरी रो....

लेणे बांटना

शादी की विदाई पर वधू के साथ भांडा भेजा जाता है। यह एक बड़ा कलश होता है जिसमें लड्डू-पूड़ी का चूरा भर लाल कपड़े से उसका मुख बांध दिया जाता है। इसे भांडा का कलश कहते हैं। घर लौटने पर गाँव में अपनी जात बिरादरी तथा सगेसोई के घर उस भांडा के थाल सजाये जाते हैं। थाल में नमूने के रूप में लड्डू-पूड़ी का मुट्ठी-दो मुट्ठी मिश्रित मिष्ठान सजाकर भाई-गरासिया महिलाएँ सज-धजकर गीत गाती हुई घर-घर एक-एक लेणा बांटती है। भांडा का लेणा पाकर यह समझ लिया जाता है कि ब्याह के घर बहू आ गई है। इन महिलाओं के साथ बहू भी चूंदड़ ओढ़े होती है। यह चूंदड़ भी भांडे के साथ उसके पीहर द्वारा भेजी जाती है। लेणे से तात्पर्य नमूने से है। यह प्रसंग वधू के साथ बारात लौटने का सूचक है।

ऐसे ही लेणे बहू जब अपने पीहर लौटती है तब ससुराल की ओर से जो मिष्ठान ले जाती है, उसे बांटे जाते हैं। यह इस बात का प्रतीक है कि विवाहोपरांत बालिका श्वसुरगृह से अपने पीहर लौट आई है। ऐसे लेणे गर्भावस्था में सातवें माह बहू को जब उसके पीहर ले जाया जाता है, तब और संतानोत्पत्ति के पश्चात् जब वह पीहर से अपने ससुराल लौटती है, तब भी बांटे जाते हैं।

सगपण होने के बाद विवाह पूर्व जब वर पक्ष द्वारा वधू को पोशाक तथा आभूषण स्वरूप जो सामान भेजा जाता है, जिसे चीड़ी भेजना कहते हैं, तब भी चीड़ी का लेणा नाम से बांटे जाते हैं। इसी प्रकार वर के घर वधू पक्ष द्वारा विवाह पूर्व जो वर तथा उसके समधियों के लिए पोशाक-कपड़ा-आभूषण तथा अन्य उपयोगी सामान भेजा जाता है जिसे तिलक आना कहते हैं, तब भी तिलक दस्तूर के लेणे बांटे जाते हैं।

वींद गोठ करना

विवाहोपरांत जिस दिन बारात अपने घर लौटती है, उस दिन दूल्हे के गृहप्रवेश से पूर्व समूह भोज रखा जाता है, जिसे 'वींद गोठज' कहते हैं। यह गोठ इस बात की सूचक है कि सफलतापूर्वक बिना किसी विघ्न-बाधा के दूल्हा राजा दुल्हन ले आया है। यह गोठ गाँव बाहर किसी कुंड, बावड़ी, नदी किनारे या सघन वृक्ष के नीचे या ऐसे स्थल पर होती है, जहाँ सभी लोग रंजन के साथ जीम सकें । यह अक्सर संध्या-रात्रि को होता है। इसके बाद दूल्हा-दुल्हिन की वनोली निकाली जाती है। यह वनोली बड़े ठाठ से गाजे-बाजे के साथ गाँव में प्रवेश करती है।

दीवाली आणा करना

शादी के बाद आने वाली प्रथम दीपावली को लड़की का मुकलावा कराया जाता है, जिसे दीवाली-आणा कहते हैं। मुकलावे की तैयारी बहुत पहले से ही कर दी जाती है, जिसमें लड़की के काम आने वाली कई चीजें दी जाती हैं। इनमें वांदरवाल, विटावणा, खुलेची, बीजणी, मूंदड़ा, पच्चीस अथवा पचास कांचली कपड़े के बने हाथी, घोड़ा एवं ऊँट के बने खिलौने मुख्य हैं जो मांगलिक कहे जाते हैं। आजकल तो कई-कई तरह भेंट चल पड़ी हैं।

वांदरवाल रंग-बिरंगी कोथलियों से बनाई जाती है जो पाँच कोथलियों से लेकर छः कोथलियों तक की उतार लिये होती है। इन कोथलियों में फुंदे तथा रंग-बिरंगे मोती लटके होते हैं। कोथलियाँ अलग-अलग रंगों की होती हैं जो आपस में एक-दूसरे से जुड़ी रहती हैं। वांदरवाल अक्सर परिंडे (पानी के स्थान) के पास दीवाल पर लटका दी जाती है। कोथलियों में दैनिक जीवन में काम आने वाली आवश्यक चीजें भरी रहती हैं। यदाकदा जब जमाई भोजन करते हैं तब विटावणा (बिछात) बिछाया जाता है। यह विविध रंगों तथा भांति-भांति के कपड़ों का मिश्रित रूप लिए होता है। खुलेची में प्रायः सिलाई का सामान कैंची, सुई-डोरे, कापड़े-कापे आदि रखे जाते हैं। हाथी-घोड़ा कमरे की सजावट में सहायक बनते हैं। ये सारी चीजें गृहणियाँ स्वयं ही तैयार करती हैं।

लड़कियाँ अपने पीहर से दी हुई इन चीजों को बड़ी हिफाजत से रखती हैं। यही कारण है कि कई घरों में साठ-साठ, सत्तर-सत्तर वर्ष पुरानी मुकलावे में दी हुई खुलेचियां, विटावणे तथा वांदरवालें देखने को मिलती हैं। गीतों में भी इनका वर्णन मिलता है-

मोत्यां रा लूमक झूमका
कसतूरी ओ राजा वांदरवाळ
बधावो जी म्हारे आवियो।

अर्थात् मोतियों की लड़ों वाली लूमती-झूमती वांदरवाळ। मेरे घर बधावा आया है।

ऐसे और भी प्रसंग तथा रीति-रिवाज हैं किन्तु समय एवं परिस्थिति के कारण अब बहुत कुछ बदल गया है। बहुत सारे काज अति संक्षिप्त हो गये हैं और नया जुड़ाव भी हो गया है।

किसिम-किसिम के विवाह

जीवन के महत्त्वपूर्ण सोलह संस्कारों में विवाह संस्कार कई दृष्टियों से सर्वाधिक महत्ता लिए है, जब व्यक्ति अपना जीवन-साथी पाकर नये सिरे से गृहस्थ जीवन की शुरुआत करता है। सर्वाधिक उल्लास एवं आनंद-ठाठ भी इसी अवसर पर रहता है। इसीलिए विवाह को जीवन का वाह कहा गया है। गृहस्थाश्रम सभी आश्रमों का मूल भी इसीलिए माना गया है कि जब युगल युवक-युवती संतान पैदा कर अपने वंश की वृद्धि करते हैं। विवाह होने पर ही पुरुष और नारी एक से अनेक सम्बन्धों से जाने जाते हैं।

शास्त्रों के अनुसार वही कन्या संतानोत्पादन तथा द्विजातियों के विवाह सम्बन्ध के लिए श्रेष्ठ-प्रशस्त मानी गई है, जो अपनी माता की सात पीढ़ी के अंदर नहीं आती हो और जो पिता के समान गोत्र की भी न हो। इसलिए जिस कन्या के पिता की जानकारी न हो, उससे विवाह करना निषेध माना गया है।

विवाह पद्धतियाँ

मनीषियों ने विवाह की आठ पद्धतियाँ निश्चित की हैं। पहली ब्रह्म विवाह की है-जिसमें कन्या का पिता योग्य वर को अपने घर बुलाकर विधि-विधान पूर्वक विवाह रचा देता है। दूसरी देव पद्धति है जिसमें पिता यज्ञ में सम्यक् प्रकार से कर्म करते हुए ऋषि के साथ विवाह सम्पन्न करता है। तीसरी आर्ष पद्धति है जिसमें विधिपूर्वक विवाह करने वाला कन्या का पिता वर से एक या दो जोड़ी गाय-बैल धर्मार्थ प्राप्त करता है। प्रजापत्य विवाह में पिता वर-वधू को एक साथ गृहस्थ धर्म का पालन करने का आशीर्वाद देता है। यथाशक्ति धन देकर कन्या को स्वच्छंदतापूर्वक प्राप्त करना आसुर विवाह कहलाता है। गंधर्व विवाह में कन्या की वर के प्रति तथा वर की कन्या के प्रति प्रेमेच्छा रहती है। कन्या के न चाहने पर अपहरण कर लाने की क्रिया राक्षस विवाह कहलाती है। पैशाच विवाह सबसे अधम कोटि का है जिसमें किसी सोती हुई, नशे में पूर्ण या विकृत मस्तिष्क वाली कन्या को गुप्त रूप से उठाकर ब्याह कर लिया जाता है।

कालांतर में विवाह की कुछ और पद्धतियाँ चल पड़ीं। इसमें एक स्वयंवर है जिसमें कन्या अपनी स्वयं की इच्छा से अपने पति का वरण करती है। सीता का राम से विवाह स्वयंवर कहा जाता है

परन्तु यह स्वयंवर नहीं था, सशर्त विवाह था। राजा जनक ने प्रण किया था कि जो शिवजी के धनुष को तोड़ेगा, उसके साथ सीता का विवाह कर दिया जाएगा। ऐसा विवाह 'प्रण स्वयंवर' कहा जाता था। तब लड़कियों के विवाह की उम्र तेरह से सोलह वर्ष थी। आठ वर्ष की बच्ची 'गौरी', नौ वर्ष की 'रोहिणी' तथा दस वर्ष की लड़की 'कन्या' कहलाती थी।

अजब-गजब रूप

लोकजीवन में विवाह के बड़े अजीब अनोखे और अनूठे रूप प्रचलित हैं। गर्भावस्था में ही भिन्न सम्बन्धियों के मध्य दोनों लड़के-लड़की के जन्म लेने पर दोनों के विवाह निश्चित कर लिये जाते हैं। ऐसा विवाह पेटे ब्याह कहलाता है। राजस्थान में ऐसे जोड़े हर अंचल में मिलेंगे, जिनके सगपण उनके पेट में (गर्भ में) आने पर तय कर लिए गये और बाद में ब्याह रचा दिया गया।

आटे-साटे विवाह में दोनों पक्षों में लड़का-लड़की होना जरूरी है। इसमें दो विवाह आपस में होते हैं। ऐसे विवाह गरीब अथवा समस्याग्रस्त परिवारों में अधिक होते हैं। बिना किसी लेन-देन के जो विवाह किया जाता है वह धर्मादा विवाह कहलाता है। आटे-साटे विवाह की तरह एक विवाह तीजे दकड्. कहलाता है, जिसमें तीन पक्ष होते हैं, और तीनों की लड़कियाँ एक-दूसरे के लड़कों से ब्याही जाती हैं।

राजस्थान में विवाह को ब्याह अथवा माण्डा कहते हैं। विवाह की रस्म प्रारंभ करने को विवाह माण्डना अथवा माण्डा मांडना कहते हैं। इसी प्रकार विवाह के लिए वर के साथ जाने वाले व्यक्ति-समूह को बारात अथवा जान, व्यक्तियों को बाराती अथवा जान्या तथा वधू पक्षवालों को घराती, वर को वींद अथवा लाड़ा, वधू को वींदणी अथवा लाड़ी, बारात ठहरने के स्थान को डेरा अथवा जनवासा विवाह सम्बन्ध को सगपण, सगाई ब्याह में आई महिलाओं को नूतारण्यां, लड़की के विवाह में आए पुरुषों को मांड्या तथा सगपण की हुई लड़की को मांग अथवा मंगेतर कहते हैं।

वधू पक्ष वाले जब अपने यहाँ बारात नहीं बुलाकर स्वयं वर के वहाँ विवाह करने जाते हैं तो वह विवाह बैठा मांडा कहलाता है। विवाह में यदि वर पक्ष वाले वधू पक्ष से रूपये आदि धन-माल लेते हैं तो वह दैज (दहेज) तथा वधू पक्ष वाले वर पक्ष से वधू के जो रूपये आदि लेते हैं, वह दापा कहलाता है। घोड़ी चढ़ते समय उसकी लगाम वर की माता, बहिन अथवा भौजाई से पकड़ाई जाने का दस्तूर किया जाता है। शादी के लिए प्रस्थान करने के पूर्व वर को उसकी माता का स्तनपान कराया जाता है। प्रथम विवाह के बाद जब कोई व्यक्ति दूसरा विवाह करने जाता है तो उस समय उसकी संतानें उसकी घोड़ी की मोरड़ी (लगाम) नहीं देखती हैं।

कुँवारा आंगन शुभ नहीं

किसी भी गृहस्थ के लिए उसका आंगन कुँवारा रहना शुभ नहीं माना जाता। ऐसी स्थिति में उस घर में विवाह की रस्म जरूरी है, पर जिसकी संतान ही नहीं हो वह क्या करे? तब तुलसी विवाह रचाया जाता है। इसके अंतर्गत तुलसी के पौधे का विवाह शालिग्राम (ठाकुरजी) से करा दिया जाता है। यह विवाह असली विवाह की ही तरह बड़ी धूमधाम से किया जाता। यह भी देखा गया है कि किसी कारण पति-पत्नी का निधन हो जाता है, तब दोनों परिवार वाले अपने आपसी रिश्ते को जीवंत बनाये रखने के लिए तुलसी-शालिग्राम का विवाह रचाते हैं। कहीं-कहीं मनौती पूरी होने पर भी ऐसे विवाह आयोजित किये जाते हैं।

तीसरा विवाह रचाना शुभ नहीं माना जाता। जिस व्यक्ति ने दो बार विवाह रचाया और उसकी दोनों पत्नियाँ नहीं रहीं, तब उसका तीसरा विवाह किया जाता है। ऐसी स्थिति में अशुभ अथवा अमंगल से बचने के लिए वर को खेजड़ी अथवा बोरड़ी की परिक्रमा कराई जाती है। इसके बाद ही असल विवाह किया जाता है। खेजड़ी-बोरड़ी नहीं होने की स्थिति में वर की जेब में कपड़े की बनी ढूली (गुड़िया) रख दी जाती है। उत्तरप्रदेश के कुछ जिलों में ब्राह्मणों में किसी विधुर का दूसरा विवाह करने से पूर्व आम के पौधे से विवाह रचाया जाता है।

वर्षा नहीं होने पर इन्द्रदेव को प्रसन्न करने के लिए मेंढक-मेंढकी का विवाह समग्र वैवाहिक विधि-विधान के साथ कराया जाता है। मेंढक-मेंढकी का नामकरण कर सारे संस्कार महिलाओं के जिम्मे रहते हैं। इसी प्रकार तीतर-तीतरी का विवाह भी बड़ी धूमधाम से किया जाता है।

मंगली विवाह

लड़का अथवा लड़की मंगली अथवा मांगलिक हो तो उसका नामाजोड़ा मिलान करना आवश्यक है। दोनों के मांगलिक होने पर ही उनका विवाह रचाया जाता है। यदि ऐसा नहीं होता है तो दोनों में से एक का जीवन अल्प जीवी समझा जाता है, किन्तु यदि किसी कारण मंगली का मिलान नहीं हो पा रहा होता है, तब कन्या का विवाह पहले विष्णु रूप घट (कुंभ-कलश) से करा दिया जाता है। इसे घट विवाह कहा जाता है। गोधूलि-बेला में विवाह रचाना भी श्रेष्ठ है। इसे गदड़क्या लग्न (विवाह) कहते हैं। पहले इसी बेला में अधिकांश विवाह रचाये जाते थे। अब इस ओर लोगों का ध्यान पुनः केन्द्रित होने लगा है। मंगली लड़की को दोष रहित करने और उसके होने वाले पति पर कोई विपदा न आने पाये, इस दृष्टि से पीपल वृक्ष से उसका विवाह रचाया जाता है। किसी लड़की का विवाह योग्य होने पर भी विवाह का कोई योग नहीं बने तब किसी फलवाले वृक्ष से उसके फेरे लगवा दिये जाते हैं। ऐसी मान्यता है कि उसके बाद उसे शीघ्र ही वर प्राप्ति हो जाती है।

ढूला-ढूली का विवाह भी हमारे यहाँ खूब प्रचलित रहा। खासकर बच्चे-बच्चियों में खेल के रूप में इसकी बड़ी लोकप्रियता है। परिजन भी इस विवाह में बड़ी भागीदारी निभाते हैं। उन्हें हर तरह से अच्छे कपड़े-लत्ते तथा आभूषण आदि से सजाया जाता है। सम्पन्न लोग चांदी-सोने तथा हीरे-जवाहरात के गहनों से ढूला-ढूली सजाकर विवाह की रस्म पूरी करते हैं। एक विवाह प्रतिवर्ष आखा तीज (वैसाख शुक्ला तीज) को सम्पन्न होता है। कहावत भी है- अणपूछ्यां मोरत भला कै तेरस कै तीज अर्थात् वैशाख माह की तृतीया अथवा त्रयोदशी का विवाह बिना मुहूर्त के ही अच्छा है। इस दिन पूरे राजस्थान में सैंकड़ों दूध पीते अबोध, नासमझ और नाबालिग बच्चे-बच्चियाँ विवाह सूत्र में बंधते रहे हैं पर अब कानून की सख्ती ने यह प्रथा समाप्त कर दी है।

वृक्ष विवाह

कुछ जातियों में तो वृक्ष से विवाह करने की प्रथा ही है। गुजरात के आदिवासी कुनबों में लड़की का विवाह पहले आम या महुआ वृक्ष से किया जाता है। कुरमी शाखा की कुछ जातियों में लड़के का विवाह पहले बड़े वृक्ष आम से किया जाता है, तब वर तथा वृक्ष को सूत के धागे से बांधते हैं फिर पत्तों की माला पहनाकर वर को वृक्ष से मुक्त किया जाता है। इस अवसर पर वर द्वारा वृक्ष के सिंदूर के टीके लगाये जाते हैं। इसी प्रकार कन्या का विवाह महुए से किया जाता है और इसके उपरांत ही वे असली विवाह सूत्र में बांधे जाते हैं। कुनबों की एक शाखा में तो गुलफुन्दर नामक ऐसी विचित्र प्रथा है, जिसमें विवाह योग्य कन्या को उचित समय पर वर नहीं मिलने पर फूल के गुच्छे के साथ विवाह कर दिया जाता है।

मध्यप्रदेश के बस्तर जिले की कुछ आदिवासी जातियों में लड़की का विवाह जन्मते ही किसी नदी के किनारे उगे वृक्ष या लता से कर दिया जाता है। विवाहोपरांत वृक्ष-लता पर निशान बना दिया जाता है। उसके बाद ही लड़की सुहागिन कहलाने लगती है। जब लड़की बड़ी हो जाती है तद्नंतर ही उसका विवाह कर दिया जाता है। ऐसी ही प्रथा नेपाल की नेवार जाति में है, जहाँ पाँच से आठ वर्ष तक की कन्या का विवाह नारायण की प्रतिमा से किया जाता है। ऐसा विवाह सुवर्ण याकि इही कहा जाता है।

राजस्थान के पाली जिले के हबाली उपखंड में भिमाना तथा गोइया आदिवासी युवक-युवतियाँ अपने समूह नृत्य के दौरान एक-दूसरे को जीवन साथी चुनते हैं। प्रेमी युवक को रिझाने के लिए युवतियाँ आकर्षक परिधान तथा जड़ी-बूटियों का रंग अपने चेहरे पर मलती हैं ताकि उसकी महक से प्रेमी उनकी ओर आकर्षित हो सके। रेबारियों में औरत की मृत्यु हो जाने के बाद बारह दिन में पुनर्विवाह करने की परंपरा प्रचलित है। ऐसा विवाह डुगली विवाह कहलाता है।

कई जातियों में यहाँ नाता प्रथा है। ऐसी स्थिति में एक औरत को अपने जीवनकाल में कई पति बदलने पड़ते हैं। यह सधवा नाता कहलाता है। पति के मरने के बाद विधवा नाता का पहला अधिकारी देवर होता है। देवर से की गई शादी देवरवट्ट कहलाती है। कोई विधवा नाता करना चाहती है या नहीं, इसके लिए मेर जाति में पति की मृत्यु के बारह दिन पश्चात् विधवा के समक्ष सफेद व लाल रंग की ओढ़नी रख दी जाती हैं। यदि विधवा लाल ओढ़नी उठाती है तो समझ लिया जाता है कि वह नाता करने की इच्छुक है।

आंध्र के कूपड़वंशी ग्रामीणों में 12 वर्ष तक कन्या का विवाह कर देने का प्रचलन है। किसी कारणवश ऐसा नहीं होने पर

किसी फलदार पेड़ से उसका विवाह कर दिया जाता है। उसके बाद कभी भी उसका पुनर्विवाह हो सकता है। नेपाल की नेवार जाति में बिल्ब वृक्ष के साथ विवाह होने के पश्चात् किसी भी पुरुष के साथ लड़की ब्याह दी जाती है, तब वह पुरुष उपपति कहलाता है।

कुँवारे विवाहित

गरासियों में अधिकांश का विधिवत् विवाह नहीं होता, क्योंकि उनमें विवाह संस्कार अति खर्चीला होता है। ऐसी स्थिति में आपसी रजामंदी में विवाह हुआ समझ लिया जाता है और वंश-दर-वंश उनका जीवनक्रम चलता रहता है। आबू पर्वत के पूर्व में जो पहाड़ियाँ फैली हुई हैं, उनमें 24 गाँव बसे हुए हैं। यह क्षेत्र भाखरपट्टा कहलाता है जो आबू रोड, बाली, पिंडवाड़ा, कोटड़ा, गोगुन्दा तहसील की पहाड़ियों में फैला हुआ है। यह क्षेत्र कुँवारा देश के नाम से जाना जाता है। कारण यह है कि अधिकांश आदिवासी कुँवारे रहते हुए भी विवाहित जीवन व्यतीत करते हैं, जिसे समाज की सम्मति-सहमति है। यों इनमें बहु विवाह, प्रेम विवाह, वृद्ध विवाह तथा नाता-कैरवा प्रथा भी है। इनके विवाह में मोरबांधिया विवाह, पेरावणा विवाह, तनाणा विवाह, खेवणा विवाह भी प्रचलन में है।

सपन्या विवाह

एक सपन्या विवाह होता है। हल्दी पीठी लगाने के बाद वर-वधू को बेसमय घर के बाहर नहीं निकलना चाहिए अन्यथा अनिष्ट एवं अमंगल होने का भय बना रहता है। यही कारण है कि इन दिनों वर-वधू अपने पास लोहे की छुरी-चाकू रखते हैं। पूरी सावधानी रखने पर भी लड़की को कभी-कभी कोई भूत-प्रेत, दंदफंद लग जाता है जो चंवरी में उसके साथ फेरे ले लेता है। यह फंद सुपन्या कहलाता है। विवाहोपरांत लड़की जब ससुराल से पीहर लौट आती है, तब पुनः उसकी ससुराल जाने की इच्छा नहीं होती। ऐसी स्थिति में दोनों परिवार वालों को कई प्रकार की परेशानियों से गुजरना पड़ता है। तब उन्हें पुनः सात फेरे उल्टे खिलाकर उन पर चढ़ा सुपन्या उतारा जाता है।

कुछ जातियों में विवाह करने के बड़े कठोर नियम होते हैं। बारह वर्ष में केवल एक बार एक दिन विवाह का होता है, किंतु ऐसी भी लड़कियाँ होती हैं जो विवाह की उम्र लिए नहीं होती हैं और न अगले बारह वर्ष तक उनके विवाह की प्रतीक्षा कर सकते है। ऐसी स्थिति में उनका विवाह फूलों के गुच्छे से कर दिया जाता है और उसके बाद कभी भी उनका असली विवाह रचा दिया जाता है।

ऐसे ही विवाह की परम्परा गुजरात की कदावा कम्बी जाति में है। अगर एक परिवार में कई लड़कियाँ हैं और कोई बारह वर्ष तक प्रतीक्षा नहीं करना चाहती तो खिले फूलों के एक गुच्छे के साथ उसे परिणय सूत्र में बांध दिया जाता है। जब वह गुच्छा मुरझा जाता है तो लड़की विधवा मान ली जाती है, परन्तु वह किसी भी समय अन्य पति प्राप्त कर सकती है।

किन्हीं विशेष परिस्थितियों के कारण यदि वर विवाह के दिन उपस्थित होने में असमर्थ रहता है, तब उसकी बजाय उसकी पगड़ी, साफे, तलवार आदि से विवाह की रस्म पूरी कर ली जाती है। अब जब पगड़ी का प्रचलन नहीं रहा, तब वर के फोटो से विवाह सम्पन्न होते पाये गये हैं।

बहुविवाह की प्रथा कई जातियों में पाई जाती है। एक से अधिक दो और तीन विवाह ही नहीं, इससे अधिक विवाह भी देखे गये हैं। आदिवासी गरासियों में यह प्रथा विशेष है। आबू क्षेत्र के नाथिया गरासिया ने अपनी चालीस वर्ष की उम्र में सोलह विवाह रचा डाले। ऐसी अन्य जातियाँ भी हैं जहाँ विवाह की रस्म तो नहीं होती, पर परिवार बसा लिए जाते हैं और उनका वंश वृक्ष बढ़ता रहता है।

तोरण विवाह

तलवार अथवा खांडे से मुख्य द्वार पर काष्ठ निर्मित तोरण चटकाकर विवाह मण्डप में विधिवत् विवाह रचाना तोरण विवाह कहलाता है। तोरण बांधने की रस्म दूल्हे द्वारा घोड़ी पर बैठकर की जाती है। सम्पन्न घरों में यह विवाह हाथी पर बैठ तोरण वांदने पर होता है। गीत में भी कहा गया है- 'म्हारो बनो नखराळो रे, हाथी रे होदे तोरण वांदसी।' एक अन्य गीत में - 'हाथीड़ा हजार लाया, घुड़ला पचास लाया, जान्या रो छैय न पार वेवाइड़ा नै कुण जाणे जी राज।'

मेवाड़ महाराणा भूपालसिंह के समय जोधपुर से शाही बारात आई। जोधपुरी साफे में दूल्हे राजा हाथी पर सवार थे, पर तोरण

नहीं वांदा जा रहा था। इस पर सबको चिंता हुई। कोई उपाय नहीं सूझ रहा था और विवाह का मुहूर्त निकला जा रहा था। तब किसी ने दरबारी कवि राव मोहनसिंह से कोई उपाय खोजने को कहा। कविजी की सूक्ष्म दृष्टि में बुद्धि उपजी। बोले- गुस्ताखी माफ हो पर यह मेवाड़ है और बनड़ाजी ने सिर पर जोधपुरी साफा धारण कर रखा है। यदि इसकी बजाय मेवाड़ी पगड़ी धारण कराई जाय तो कुछ काम बने।.... और यही हुआ।

अन्तर्जातीय-प्रांतीय विवाह

वर्षा नहीं होने पर इंद्र देवता को राजी करने के लिए मेंढक-मेंढकी के विवाह के अलावा कहीं-कहीं गधे-गधी का विवाह सम्पन्न कराया जाता है। जल संकट से त्रस्त होने पर समुद्र का नदी से विवाह रचाते हैं। धार्मिक अनुष्ठान के साथ जहाँ नदी समुद्र से मिलती है, वहाँ दोनों के पानी को चाँदी के घड़ों में लेकर दोनों घड़ों को वर-वधू के रूप में सजाकर विधिवत् विवाह रचाया जाता है। दोनों घड़ों का पानी समुद्र में उड़ेल दिया जाता है। आजादी के बाद प्रेम विवाह, अन्तर्जातीय और अन्तर्प्रान्तीय विवाह का प्रचलन खूब बढ़ा है। बहुत पहले महात्मा गांधी ने अपनी भतीजी का विवाह उदयपुर के अग्रवाल परिवार में किया था। यह अपने ढंग का पहला अनूठा अन्तर्जातीय ही नहीं, अन्तर्प्रान्तीय विवाह भी था।

राजस्थान के भीलों में विवाह की एक विचित्र प्रथा 'गोल गधेड़ी' का प्रचलन होली के दिन देखने को मिलता है। इसमें एक वृक्ष पर नारियल तथा गुड़ बांध दिया जाता है। उस वृक्ष का घेरा डाले विवाह योग्य लड़कियाँ खड़ी हो जाती हैं। विवाह योग्य युवक उस घेरे को तोड़ नारियल-गुड़ खाने का प्रयास करते हैं। जो इसमें सर्वप्रथम सफल होता है, वह उन लड़कियों में से मनचाही को अपने जीवन साथी के रूप में चुन लेता है। इस प्रकार यह क्रम चलता रहता है।

इसी प्रकार भीलों की एक जाति आरावाक में लड़के की परीक्षा नाव में निशाना लगाने की होती है, जिसमें सफल होने पर ही वह विवाह-सूत्र में बंधता है। कई जनजातियों में लड़के को भावी सास-श्वसुर के घर सेवा-कार्य के लिए रहना पड़ता है। उसके कार्य से संतुष्ट होने पर ही उसका ब्याह रचाया जाता है।

लेकिन कई जातियों में इससे उल्टी पद्धति देखने को मिलती है। इसमें युवती विवाह की कामना लिए भावी वर-घर में जबरन घुस जाती है। यदि भावी वर की माँ उसे किसी भी तरह घर से निकालने में असफल रहती है तो दोनों को विवाह-सूत्र में बांध दिया जाता है।

बनजारों में लड़की यदि किसी सामान से भरी गुणती को बैल पर लाद दे तो उसका विवाह सम्बन्ध कर लिया जाता है। हिमाचल प्रदेश के किन्नौर क्षेत्र में मातृ प्रधान रीति के अनुसार किसी परिवार में छः या उससे कम भाई हैं तो एक ही पत्नी लाने का रिवाज है। संतान होने पर सभी उसके पिता कहलायेंगे। बड़े पिता को तेरा बावल और छोटे को गीता बावल कहते हैं। इन क्षेत्रों में बारात आने पर लड़की को सूचना दे दी जाती है, तब वह अपनी सखियों के साथ छत पर चढ़कर जोर-जोर से रोने का उपक्रम करती हैं।

मीराबाई की ही बात करें तो वह स्वेच्छा से कुँवर भोजराज से विवाह-सूत्र में नहीं बंधी। उसने तो अपनी माता के कहने से बचपन में ही शालिग्राम को अपना लिया था। विवाह के समय भांवर में भी मीरा ने शालिग्राम को ही अपने आगे लुकाये रखा और अंततः समुद्र समर्पण भी शालिग्राम के साथ ही किया।

अनमेल विवाह के कई किस्से मिलते हैं। इसमें शादी करने वाला अपनी परणेतर से दुगुनी-तीगुनी उम्र से भी अधिक बड़ा होता है ऐसे विवाह के लिए ऊँट बळद का जोड़ा कहा जाता है। यों भी पैसे का महत्त्व हर काल में रहा है। सर्वत्र ही पैसा पावर रहा, इसीलिए कहावत भी चली- वै रोकड़ा तो पन्ने डोकरा अर्थात् पैसे का बाहुल्य होने पर बूढ़ा व्यक्ति भी विवाह बंधन के योग्य हो जाता है।

अब परिवार और समाज की परम्परागत मान्यताओं और सोच की दृष्टि में बदलाव आता जा रहा है। व्यक्ति स्वयं भी अपने विचार और आचार में अधिक स्वतंत्र और प्रयोगधर्मी होने लग गया है। ऐसी स्थिति में विवाह रचाने के और भी कई अजीब, अनूठे, अनोखे और विचित्र तरीके सुनने को मिलें तो कोई आश्चर्य नहीं। किसी जात-पांत के युवक-युवती स्वेच्छा से कचहरी जाकर विवाह सूत्र में बंध जाते हैं। ऐसे प्रेमियों के लिए न जाने कब से कहावत चली आ रही है- मन मलै दो जणा तो झख मारै सौ जणा। उनके लिए टेवा अथवा अंकोरा मिलाने की झंझट भी नहीं।

पूर्वांचल में विवाह संस्कार

प्रो. हरिश्चन्द्र मिश्र

पूर्वांचल में विवाह संस्कार एवं रीतियों की एक लोक-परम्परा रही है। इसमें विवाह निर्धारित होता है और वरपक्ष से बारात लड़की वालों के घर जाती थी और विवाहोपरान्त दुल्हन की विदाई कराकर लोग लौट आते थे। यदि बाल विवाह होता तो लड़की आयु के अनुसार तीन वर्ष, पाँच वर्ष या सात वर्ष तक मायके में ही रह जाती और गवने में विदाई होती। उसी परिप्रेक्ष्य में कबीर ने कहा था –

अबहिं उमरि मोरि बारी हो, आई गवनवा की सारी॥

इसमें बारात जाने की पद्धति को 'चढ़के' कहा जाता था। दूसरी पद्धति 'डोला' की थी, जिसमें असमर्थ गरीब पिता डोली में बैठाकर लड़की को वर के घर ले जाता और वहीं शादी होती। इसके अलावा लड़कों की शादियों की जटिलता के दौर में लगभग सभी जातियों में 'दुइ फेरवा' और 'तीन फेरवा' शादियाँ भी होती थी। प्रथम में दो परिवञ्जारों में लड़के-लड़की की अदला-बदली होती थी। दूसरे में एक व्यक्ति अपनी लड़की की शादी दूसरे के लड़के से करता है लेकिन शर्त यह होती कि वह अपनी लड़की की शादी उसके किसी परिचित या रिश्तेदार के लड़के से करेगा। तीन में अदला-बदली होने के कारण इसे 'तीन फेरवा' विवाह कहते थे।

विवाहों में बनारस की विवाह-पद्धति के अनुसार ब्राह्मणों द्वारा अनेक कर्मकाण्ड तो होते ही थे, किन्तु महिलाओं द्वारा लोक रीतियों का भी निरन्तर अनुपालन होता रहता है। एक तरफ प्रत्येक प्रकरण पर ब्राह्मण का मन्त्र चलता है तो दूसरी ओर महिलाओं के गीत चलते रहते हैं। प्रत्येक विवाह में सभी जातियों की भूमिका होती है, जैसे- ब्राह्मण, नाई, हरिजन, कहार, लोहार, माली, धरिकार,

बारी, गोंड आदि। विवाह के पूर्व लड़कों का यज्ञोपवीत अनुष्ठान हो चुका होता है। उच्च जातियों में ही यह अनुष्ठान होता था। सारा अनुष्ठान लगभग विवाह के समान ही होता था। कुछ-कुछ का यज्ञोपवीत किसी कारणवश देवी मन्दिर में विशेष कर विन्ध्याचल में होता था। यदि नहीं हुआ है तो विवाह के समय ही अब हो जाता है। यज्ञोपवीत की परम्परा जिसे इस क्षेत्र में बरुआ कहते हैं, उसकी चर्चा यहाँ नहीं की जाएगी।

विवाह की शुरुआत वर-रक्षा या वर-क्षेका से होती है। सबसे पहले कुछ रुपये, मिठाई, एक जोड़ी जनेऊ तथा पान के साथ लड़की का पिता या अभिभावक शादी की निश्चितता करता है। सिर पर एक कपड़ा रखकर लड़की पक्ष देता है और सिर पर एक कपड़ा रखकर वर का पिता या अभिभावक उसे स्वीकार करता है। ब्राह्मण शुभ श्लोक पाठ करता है और लग्नपत्री लिखता है और हल्दी लगाकर उसे लपेट कर रक्षा से बाँध देता है और दोनों पक्ष को एक-एक प्रति दे देता है। लौटते समय लड़के के घर से लड़की वाले को धान दिया जाता है। उसे अक्षत कहते हैं। प्राय: शादियाँ गर्मी में होती थीं, अत: आगामी बरसात में उस धान की 'बेहन' पड़ती है और उससे धान पैदा किया जाता है। यह वंशवृद्धि का प्रतीक होता है। वर रक्षा सहज परम्परा है। उस दिन वर पक्ष वाले कुछ लोगों को खिलाते हैं। महिलाएँ आरम्भ में देवीगीत शकुन रूप में गाती हैं। प्राय: सभी अनुष्ठानों पर महिलाएँ अपने गीतों को शकुन से ही आरम्भ करती हैं। राम-कृष्ण और शिव भक्ति के उस क्षेत्र में मातृदेवी की उपासना प्राचीन काल से आज तक चल रही है। शकुन गीत निम्नवत होते हैं -

माता के अंगने जमिरिया लवंग केरी डरिया न हो,
दादा लहर-लहर केरी डरिया निदरिया नाही आवेला।
मोरे पिछवर वाँ बढ़इया बेगेह चली आवे भइया,
काटहु पेड़ जमिरिया लवंग केरी डरिया।
भइया ओकर पलंग सलावा मखतुलवा क ओनचन।
मोरे पिछवरवाँ सोनरवा बेगेह चली आवा न हो,
भइया चारों पावे घुघुरू लगावा कालीय मइया पवढ़य।
भइया सातोही बाहिनी पवढ़य; एक ओर सुतेलऽ डीहबीर बाबा एक ओर लालचन बाबा।
बहिनी बीचे ठइया सुतेरली शीतला मइया बेनिया डोलावय,
निदरिया भल आवेला।
हँसि-हँसि पूछेलऽ डीहबीर बाबा अउरु लालचन बाबा;
बहिनी कवने चेलिकवा खाट बिनल निदरिया भल आवेला।
भइया बढ़इया चेलिकवा खाट बिनल निदरिया भल आवेला॥
भइया सोनरा चेलिकवा खाट बिनल निदरिया भल आवेला।

दूसरा गीत शकुन का होता है —

अरे अरे सगुनी सगुनवा लिहले आव
तुहरे सगुनवा ये सगुनी होला बियाह।
ढोलिया के शब्दे गइलो मय जुड़ाय।
गीतिया सगुना ये सगुनी होला वियाह।
अरे-अरे सगुनी ...
पहिला सगुना पंडित घरवा जाय पंडितवा पतरवन
ये सगुनी होला वियाह।

इस प्रकार 'वर रक्षा' का कार्यक्रम सम्पादित होता है। कन्या पक्ष के लोग खाने बैठते है तो गाँव की महिलाएँ शुभ रूप में 'गारी' गाती हैं। इसमें गारी राग में सुराजी गारी के बाद खाटी गालियाँ होती हैं, जो विवाह के प्राय: सभी अनुष्ठान में होती हैं। इनका जिक्र एक ही बार विवाह के बाद बाराती के जेवनार के समय किया जाएगा।

'वर रक्षा' के बाद तिलक का अनुष्ठान होता है। यह विस्तृत अनुष्ठान है। वर-पक्ष अपने सभी परिचितों, पड़ोसियों, रिश्तेदारों को खिलाता है। तिलकहरुओं को खाने-पीने की विशेष व्यवस्था होती है। आँगन में या किसी खास जगह नाइन आटा से चौक पूरती है। दो तरफ आसन बिछाया जाता है। दोनों पक्ष के पंडित पूजन आरम्भ करते हैं। गणेश पूजन से नवग्रह पूजन के बाद वर का सम्मान किया जाता है। लड़की का भाई ही वर का तिलक करता है। ढेर सारा सामान पूजन के साथ वर को क्षमता के अनुसार प्रदान करने की परम्परा है। तिलक के बाद भोजन की व्यवस्था होती है। पवनी परजुनियाँ और ब्राह्मण, पुरोहित, गुरु आदि की विदाई और खुशी का दान दिया जाता है।

तिलक के समय महिलाएँ अपने मधुर कंठ से गीत गाती हैं। सबसे पहले देवी गीत फिर शकुन गाती हैं। इसके बाद तिलक से सम्बन्धित अनेक गीत गाती हैं। आधुनिक युग में नई लड़कियाँ फिल्मी धुन पर कुछ जोड़-जोड़कर गीत गाती हैं। पुराने गीत तो

नयी परम्परा को याद ही नहीं हैं। देवीगीत एक से अधिक भी गाये जाते हैं–

भइया मेरे बी.ए. पास तिलक क्यों घोड़ी चढ़ी?
इतना तो दाम उनके कापी किताब का,
कलमो दाम अनमोल तिलक क्यों ...?
इतना तो दाम उनके सूटव शर्ट का,
टाई का दाम अनमोल तिलक क्यों ... ?

इसी प्रकार अनेक खर्च जोड़ दिये जाते हैं।
दूसरा गीत –

अदब से बैठ जा भइया तिलक सब थोड़ लाये हैं।
न लाये सोने की थाली न लाये चाँदी की थाली।
ले आये पीतल की थाली तिलक सब थोड़ लाये हैं।

इसी प्रकार अनेक आवश्यक वस्तुओं को जोड़कर गाया जाता है। अन्त में खाते समय गारी गाने की परम्परा है, जो हर अवसर पर गायी जाती हैं। वर–पक्ष में होने वाले अनुष्ठान में घराती की गारी गायी जाती है और कन्या–पक्ष में होने वाले अनुष्ठान में वर पक्ष के लिये गारी गायी जाती है। फिर सबकी विदाई और मिलने के बाद तिलकहरु घर की ओर प्रस्थान करते हैं। प्रायः अक्षत 'वर रक्षा' के दिन ही दे दिया जाता है। अक्षत नये कपड़े में हल्दी और कुछ पैसे तथा दूब के साथ कपड़े में बँधा रहता है। यदि 'वर रक्षा' पर अक्षत नहीं दिया रहता तो तिलक के बाद विदाई के समय ही दिया जाता है। अब विवाह निश्चित हो जाता है। लग्न भी निर्धारित हो जाती है। लौटते समय लड़की के लिए पूड़ी और मिठाई भेजी जाती है।

इसके बाद पहला विवाह का अनुष्ठान उर्दी छूने का होता है। उस दिन गाँव भर की महिलाओं को नाइन के द्वारा या घर की किसी कन्या के द्वारा बुलावा दिया जाता है। सभी महिलाएँ इकट्ठा होती हैं। दो सूप में उड़द लेकर दो महिलाएँ स्पर्श कराती हैं। उड़द छूने के अनुष्ठान के साथ अक्षत की गठरी खोली जाती है। उसमें रखा पैसा या तो नाइन लेती है या घर की कोई विवाहिता लड़की। कभी–कभी ब्राह्मण की भूमिका होती है, नहीं तो यह कार्य महिलाएँ ही कर लेती हैं। उर्दी छूते समय दोनों नये सूप को सरसो के तेल और सिन्दूर से पाँच जगह टीका किया जाता है। इसके बाद बुलायी हुई सारी अहिवाती महिलाओं के माँग में तेल लगाकर सिन्दूर लगाया जाता है। अक्षत की गठरी ब्राह्मण खोलता है। इसके बाद महिलाएँ शकुन के गीत पूर्ववत गाती हैं। इसके साथ दो महिलाएँ चक्की में उड़द को डालती हैं। उसी समय निम्न गीत गाये जाते हैं। हरी उड़द सवा पाव या सवा सेर होती है।

कहंवाँ ही चकिया क जनम भयो है रघुनन्दन। शिवशंकर हो।
कहंवाँ ही उछहल जाले सुना हो शिव शंकर हो।
जनकपुर में चकिया क जनम भयो शिवशंकर हो रघुनन्दन हो।
अयोध्या में उछहल जाले सुना हो शिवशंकर हो।
कहंवाँ दुलहिन देई क जनम भयो है शिवशंकर हो रघुनन्दन हो।
कहंवाँ हो बिअहल जाली सुना हो शिवशंकर हो।
सेहरा सोहे दुलहेराम के मथवाँ सुना हो शिवशंकर हो रघुनन्दन हो।
सेनूर सोहे दुलहिन देई के मंगियाँ सुना हो शिवशंकर हो।

इस गीत के बाद पाँच विवाह के गीत गाये जाते हैं। देवताओं के विवाह और गृहस्थी का प्रकरण प्रथम शिव और राम के साथ ही जुड़ा है। इसीलिए इन्हीं दोनों देवताओं का क्रम से सम्बोधन है। पाँच विवाह गीत प्रथम दिन गाये जाते हैं, जिसमें नारी जीवन से सम्बन्धित अनेक सत्य का उद्घाटन होता है। उनके जीवन के अनेक वैषम्य, दुर्व्यवहार, मातृत्व तथा जीवन कर्म का सम्बन्ध भी इन गीतों में होता है। उर्दी छूने के बाद चकिया गीत तथा दो विवाह गीत कुल मिलाकर पाँच गीत हो जाते हैं। लड़की के तरफ लड़की का नाम जोड़ा जाता है और लड़के की तरफ लड़के का नाम जोड़ दिया जाता है।

धोबिनी के दतवा में जड़ी बत्तिसिया ओहि देखि रजवा लोभाय।
जवने घाटे धोबिन धोतिया पछारे वही घाटे रजवा नहाय।
ओहर ओहर चला रजवा क पूतवा पड़ैला नरकवा क छींट।
तोहरे ही लेखे धोबिन नरके क छिटवा हमरे लेखे अतर गुलाब।
जउ तू रजवा हो हमपै लोभइला मोरे संग बटोरा तूरेह।
दहिने ही हाथे राजा रेहिया बटोरे बायें हाथे पोछै ल आंस
जनमल रहलीं मैं राजा के घरवाँ परल धोबिनियाँ क साथ।

इस गीत में परकीया प्रेम का पाप फल दिखाया गया है कि बड़े लोग अपनी पत्नी के प्रेम को छोड़कर परकीया प्रेम में फँसते हैं और उनकी बड़ी दुर्दशा होती है। उधर पत्नी भी पति के प्यार के लिए तड़पती है। यही है विवाहिता का दर्द।

एक ही राजा के चारि बिटिअवा चारिउ क रचैल बिआह।
लगन धराइ बाबा तिलक चढ़ावैं एकही मड़वें बिआह।
के के विआहैं ल बाबा लंका के राजा के के गोकुलवा के कान्ह।
केके विआहैं बाबा इसर महादेव केके बिआहैं श्री राम।
काहु बजावै बाबा लंका क राजा काहु गोकुलवा क कान्ह।
काहु बजावै राजा इसर महादेव काहु बजावै श्री भगवान।
रूनझुन बाजे बेटी लंका क राजा वंशी बजावै गोकुला क कान्ह।
इसर महादेव उमरु बनावैं शंख बजावै भगवान।
मन्दोदरि बिआहैं लंका क राजा राधा बिआहैं गोकुला क कान्ह
गौरा बिआहै बाबा इसर महादेव, सीता बिआहैं श्री राम।

इस गीत में बताया गया है कि एक ही बाप की चार बेटियाँ हैं, पर सबके भाग्य अलग–अलग हैं। सभी की एक ही मण्डप में शादी होती है, पर वर पाने का भाग्य अलग–अलग है।

प्रतिदिन उर्दी छूने के दिन से ही रात में बड़ी देर तक आँगन जगाने का कार्यक्रम होता है। गाँव भर की महिलाएँ इकट्ठा होती हैं और देवीगीत से आरम्भ करके विवाह गीत, फिर विभिन्न प्रकार के गीत गाती है। जिसमें धोबियऊ, कहरऊ आदि गीत भी होते हैं। प्रत्येक दिन भिन्न–भिन्न गीत गाये जाते हैं। अधिकांश दुहराये भी जाते हैं। यह क्रम निरन्तर बिना बाधा के चलता है। प्रत्येक रात को आँगन जागरण होता है। अन्त में उत्सवपूर्वक महिलाएँ नाचती और मजाक करती हैं। प्रथमतः कुछ प्रथम गाये जाने वाले देवी गीत को प्रस्तुत किया जा रहा है–

बरहा बरिस कौ उठली बेइलिया हो, बेइलिया के तरे हो।
मइया लेयी बसेरवाँ हो बेइलिया के तरे हो।
गहमा के मातल उहै मालिया के छोकड़वा हो सबेरवाँ होत ना।
गजरा गुध के ले आवै हो सबेरवा होत नऽ।
आजु की रतिया बकसो हमरी मइया सबेरवाँ होत नऽ।
गजरा गुधि के चढ़इबां हो सबेरवाँ होत नऽ।

× × ×

मइया बिनती करूँ मैं दुनो कर जोरि जोरि ना।
मइया इतनी अरज मोरी सुन लेतू ना।
मोरे माँगे क सेनुरवा अमर कइ दिहा ना।

इसी तरह ...

मइया माँथे क बिंदिया ...
मइया हाथे क चुड़िया ...
मइया पैरों क बिछुआ ...
मइया गोदी क ललना ...
हम दोनों क जोड़ी ...

× × ×

निबिया क डरिया मइया डालैलीं झलुअवा
कि मइया झुलै लगली ना,
सातो बहिनियाँ हो कि झुलै लगली ना।
झुलत झुलत मइया लगलीं पियसिया हो कि हेरै लगली ना।
वही मलिया दुवरिया हो कि हेरय लगली ना।
भीतर बाटू कि बाहर हो मलिनियाँ हो कि बूँद एक ना
हमके पनियाँ पिअवतू कि मालिन बूँद एक ना
कइसे क पनिया पियाऊँ मोरी मइया हो कि मोरी गोद ना।
बाँटे बालक नदनवाँ हो कि मोरी गोदी ना।
बालक सुलावा मालिन पाटे क
खटोलवा हो कि बूँद एक ना
हमका पनिया पिआवा मालिन बूँद एक ना।
बाये हाथ लेहलीं मालिन रेसम की डोरियां हो कि
दाहिने हाथ ना लेहली झझरा गेडुअवा हो कि
पनिया पीआ मइया पट बैठा मोरी मइया हो कि –
भर मुख ना हमें देहु आशीर्बादवा हो कि भर मुख ना।
जइसे क मालिन तू हमके जुड़वुलू बइसे–वइसे ना
तोहरो मलिया जुड़इयैं हो कि वइसे वइसे ना ...

× × ×

अपनी महलिया से निकलै सीतल मइया
हाथ ठेंघुनियाँ लेहले ना ...
मइया डालै घर–घर फेरिया हाथ मे ठेघुनियाँ ले हले ना ...
अपनी महलिया से निकलै अकबर रजवा हो ...
कि केकरी आवै ना निजे पतरी तिरिअवा ही केकरी आवै ना
एतनी बचनियाँ जब सुनै सीतिला मइया हो क्रोधित भइली ना।
रजवा देवों मैं सरपवा हो कि आज की रतिया ना ...

तोहक तऽ मरबो रजवा भरली कचहरिया कि रनियवाँ तोहरी ना
मरबो फूलवन की सेजरिया कि रनियवाँ तोहरी ना।
बेटवा के मरबो रजवा खेलत शिकरवा हे बहुववा तोहरी ना
मरबो राम रसोइयाँ बहुववां तोहरी ना।
आजु की रतिया बकसा सीतल मइया हो कि
भोरवा होत चढ़इबो नरियल चुनरिया हो कि भोरवा होत ना
तोहके क त छोड़बो अकबर भरली कचहरिया ...
हे रनिअवा तोहरी ना छोड़बो फूलवन क सेजिया हो
कि रनिअवा तोहरी ना ...
बेटवा के छोड़बो रजवा खेलत शिकरवा हो ...
बहुरिया तोहरी ना छोड़बै राम रसोइयाँ हो बहुरिया तोहरी ना।

× × ×

केकरहीं घरवा मइया भइलैं तोहार अदरवा हो
केकरे घारवा ना मइया भइलैं तोहार निरादर हो
केकरे घरवा ना ...
बड़न के घरवा छोहड़नि भइलैं मोर निरादर हो
कि छोटकन घरवा ना छोहड़नि मोर भइलैं अदरवा
हो कि छोटकन धरवा ना ...
जय जय अगवरवाँ मइया जयजय पिछवरवाँ हो
कि जय-जय बोलिहा ना ...

घर भर के सभी आदमी का नाम लेकर गाया जाता है कि सबका जय जय बोलिएगा।

अब कुछ विवाह के गीत प्रस्तुत किये जाएँगे। देवी गीतों में देखा गया कि दुल्हन के सुहाग और वंशवृद्धि की कामना है। पूरे परिवार की सुख-समृद्धि की कामना है तो यह भी देखा गया कि बड़े-बड़े राजाओं को भी देवी के सामने नत होना पड़ता है। अन्तिम देवी गीत में देखा गया कि देवी का सम्मान छोटे लोगों में होता है। बड़े लोगों में नहीं। आदिम मानव मातृ उपासक था। बंगाल में भी छोटी जातियों के लोग ही मातृदेवी की पूजा करते थे। उच्च जाति के लोग मातृपूजा को अपमान मानते थे। देवी की स्वयं इच्छा होती है कि मैं उच्च जातियों में पूज्य होऊँ। अत: उन्होंने एक वणिक परिवार को चुना। वहीं से मनसा मंगल-काव्य की शुरुआत होती है। हिन्दी प्रदेश में देवी का पुरोहित माली ही होता है न कि ब्राह्मण। लेकिन आदिम संस्कृति और आर्य संस्कृति के समन्वय का प्रमाण है कि देवी स्तुति से ही विवाह का संस्कार शुरू होता है। हर विवाह गीत में जीवन का सार्थक प्रसंग जुड़ा होता है। आगे विवाह के गीतों में इसका निदर्शन होगा। प्रतिदिन के गीतों में समानता और भिन्नता होती है। यहाँ एक साथ ही कई गीतों को प्रस्तुत किया जा रहा है-

बगिया बोलैले काली रे कोइलिया
वृन्दावन में बोलेला मोर रे ललनवाँ।
जनक जी के बगिया बोलै बेटी सीता
अब बाबा व्याहन जोग रे ललनवा।
पूरुब खोजलीं बेटा पच्छिम खोजलीं
खोजि अइली नग्र तमाम रे ललनवा।
पूरुब खोजला बाबा पच्छिम खोजलां
नाहीं खोजला नग्र अयोध्या रे ललनवा।
जाऊ जाऊ बाबा अयोध्या नगरिया ...
जहाँ दसरथ जीके लाल रे ललनवा।
चारो भइया मिलिहैं एकरा में साँवर
अरे उनहीं के तिलक चढ़इया रे ललनवाँ।
रहिसि बिहसि बाबा अइहैं बरियतियाँ ...
अरे देखिहैं जनकपुर क लोग रे ललनवाँ।
अपने युगुत बाबा समधी रे रवोजिहा ...
मोरे लेखे बर समतुल रे ललनवाँ।

इस गीत में गोरे और साँवले का साम्य दिखाया गया है। गोरी लड़की काले वर का वरण करना चाहती है और अपने समतुल्य वर पाने की माँग करती है। लड़की का यही अधिकार बोध है।

मोर बर खोजा बाबा शबद सयनवाँ
अरे जइसे गोपिन में क कान्ह रे ललनवाँ।
मोहर भजाइ बाबा तिलक चढ़वलैं
अरे थरवा परतिया के साथ रे ललनवाँ।
हंडा ज देलै बाबा बटुला जे देलैं
खोरवा कटोरवा के साथ रे ललनवाँ।
गइया जे देलैं बाबा भइसी ज देलैं
लोरिया कलोरिया के साथ रे ललनवाँ।
एतना दहेज बाबा बेटी के देहलैं ...

अरे छुड़ी बिनु रुसेला दमाद से ललनवाँ।
मोहर भजाइ बाबा छुड़ी बनबंवलऽ
अरे देहलैं दुलहे राम के हाथ रे ललनवाँ।
रहिसि चलै ले बरियात रे ललनवाँ।

इस गीत में यह दिखाया गया है कि पिता अपनी लड़की को जीवनोपयोगी सारी चीजें भेंट स्वरूप देता है। दामाद की इच्छा पूरी करना उसका उद्देश्य रहता है।

सावन भदोउँआँ क निजी अँधियरिया
भइँसी तोड़ावैले छान ...
कइसे मोरी माता जनलू बिहनवाँ
कइसे क खोललू केवाड़?
अहिरा लगावैला धेनु धेनु गइया हो।
अहिरीन बिलोचन जाय ...
बाबा के पिजड़वा से बोलैले रइमुनियाँ हो
एहि गुने जानीला बिहान ... ।
एतनी बचन जब सुनलऽ कबन राम
लेहलैं जे छतिया लगाय।
जवन माँगन तुहु माँगा मोरी सुन्दरि
जे तोहरे हृदय जुड़ायऽऽ।
जवन माँगन हम माँगब मोरे प्रभु
तोरे बुते दिहलो ना जाय ... ।
गुलरी क फुलवा पुरसने के माँगी
चन्दबदन के हार
जवन माँगन मँगलू मोरी सुन्दरि
मोरे बुते दिहलो ना जाय ... ।
गुलरी के फुलवा में माता बसतु हैं
अवरो बसैलऽ भगवान।

इस गीत में दुल्हन के यौवन की सूचना है तथा रात भर पति के साथ का जागरण है। फिर पति के प्रेम की परीक्षा गूलर के फूल तथा चन्द्रहार के माँगने से है। बस पति अपनी सुन्दरी को यह बता देता है कि गूलर के फूल में माँ विराजमान हैं। उनको ही गूलर का फूल समझो। वही भगवान का रूप हैं।

बर खोजै निकलै न बेटी बाबा,
हथवाँ रूमाल मुख पान रे ललनवाँ।
कहे ले माता सुना महादेव ...
अरे गहना लिहा भली भाँति रे ललनवाँ।
हमरे न देशे सासु गहना ना होला
नथिया पे होला रे वियाह रे ललनवाँ।
कहे ले माता सुना महादेव
कपड़ा लिहा न भलीभाँति रे ललनवाँ।
हमरे त देशे सासु कपड़ा ना होला।
चुनरी पर होला वियाह रे ललनवाँ।
कहले माता सुना महादेव ...
सेनुरा ले आया भली भाँति रे ललनवाँ।
हमरा के देशे सासु सेनुरा ना होला
रोरी से होला बियाह से ललनवाँ।

इस गीत में दहेज प्रथा का संकेत है तो उसका विरोध भी है। यह भी दर्शाया गया है कि पहले सिन्दूर की जगह रोली का प्रयोग होता रहा होगा।

महादेव चलैल गउरा बिआहन
अरे गला में सरपे क माला रे ललनवाँ!
परछन जे चलैलीं माता मदागिन
अरे सरपवा छोड़ेला फुफुकार रे ललनवाँ।
मुसरा जे फेकलीं सुपवा पबरली
पाछे पारपल भागे रे ललनवाँ।
अइसन महादेव संग गउरा ना बिआहब
बबु गऊरा रहिहैं कुँवार रे ललनवाँ।
मछिया क भेस धइके उड़ेली महादेव के कान रे ललनवाँ
आपन भेस तूँ बदला महादेव
नइहर क लोग पतिआय रे ललनवा
परिछन जे चलैलीं माता मदागिन
धन्य तोहरा भाग्य रे गउरा।

× × ×

बेटी क बाबा जे बर खोजै निकलैं
बेटी दुवरिया धइले ठाढ़ हे हरि।
बर खोजि बाबा घर के लउटलऽ
बेटी अरज लेहले ठाढ़ हे हरि।
मूर्ख वर जिन खोजा मोरे बाबा

इससे बड़ा दु:ख होय।
दिन भर खेदय खरहवा साझी बेरे झगड़ा मचाय।
पढ़ल बर तुही खोजा मोरे बाबा ओसे बड़ा सुख होय।
दिन मोरे बाबा पोथिया विचरिहंय साँझी बिरवा थमाह
ऊसर गोड़ि बेटी काकर बोउलीं ना जानी तीत न मीठ।
नगरे बइठल बेटी त बर खोजली ना जानी करम तोहार।
बरतन ज रहत तो ठठेर घरे बदलती करम त बदली न जाय।

इस गीत में पढ़े-लिखे वर के वरण की बात है तथा भाग्यवाद का भी निदर्शन है।

तोर बर खोजे बेटी हम अलसइली
तोर बर खोजे नऊवा बारीरे ललनवाँ।
काहे के बाबा बेटी जनमवला ...
काहे राखेला कुँवार रे ललनवाँ।
काहे के मोरे बाबा सेजिया लगउला
काहे के कइला रनिवास रे ललनवाँ।
धरम के मारे बेटी धिअवा जनमवली
करम के कारन बेटी राखी ला कुँवार रे ललनवाँ।
सोये के मारे बेटी धिया जनमवलीं
बल से कइली रनिवास रे ललनवाँ।

इस गीत में पिता के दायित्व हीनता की ओर संकेत है। परिवार में लड़की के बारे में सोच बड़ी सामान्य है। पिता बहुत ध्यान नहीं देता।

बरवा कटावै चलैलऽ राजा दसरथ
अंगुरी में गड़े ले खइचिया हो बाय।
अंगुरी के बेदनियाँ मरैं राजा दसरथ कैकेयी के डालैल पुकार।
धाऊ तूही नऊवा हो धाऊ तूही बरिया कैकेयी के डाला गोहार।
आवैली रानी कैकेयी पलंग चढ़ि बइठैं कहा राजा कइसन पुकार।
अँगुरी बेदनियाँ हरहू रानी कैकेयी जवन मँगबू उहै देब।
राम क टिकवा भरत के लगावा राम के लिखा बनबास।
पहिला मगन माँगेली रानी कैकेयी मारेलू करेजवा में बाण।
सारी अयोध्या क राम दुलरुवा कइसे क लिखी र बनवास।

इस गीत में राम कथा का संकेत है। राम वनवास का कारण भी लोक का अपना कारण है। दुल्हन को समझाया गया है कि पति को किसी संकट में नहीं डालना चाहिए। दूसरे के बेटे को भी अपने बेटे जैसा मानना चाहिए। कई शादी करने का दण्ड पति को भी सहना ही पड़ता है।

ऊँची-ऊँची बखरी उठावा मोरे बाबा हो
नीचे-नीचे कटिहा दुवार।
बखरी सुतेलऽ दुलहे कवन राम
कोरवा ससुर जी धेय।
एकहू बचन हमें कही हयरे धना जो बचन मनतू हमार।
तोहरे बबइया जी के सोने क कटोरवा उहै देतू दहेज दियाय।
बोलिया त ये प्रभु बोलही न जाना तोहरी बोली हमें ना सोहाय।
हमरे बवइया जी के सोने के कटोरवा जेहिमां भइया कंचन दूध।
एकहू बचन हमें कहिं हमरे राजा जउ बचन मनता हमार।
तोहरी मयरिया के सोने क कंगनवा उहे देता हमके दियाय।
बोलिया तू ये धना बोलही न जनलू तोहरी बोलिया हमें ना सोहाय
हमरी मयरिया क सोने क कंगनवाँ बहिनी पहिर सासुर जाय।

इस गीत में पति के लोभ को शान्त करने की सीख दी गयी है। प्रतिक्रिया में पति की माँ का कंगन माँगती है। अब पति को पता चलता है कि ऐसी बात क्यों खराब लगती है।

एकही बसवा में दुइ रे करीलिया, एक बसरी एक बाँस।
एकही अम्मा के दुइ रे लड़िकवा एक ही बहिनी एक भाय।
अम्मा कहेली बेटी नगीचे बिअहबै बाबा कहेल दस कोस।
भइया कहेलऽ बहिना काशी बिअहबै नित उठ करा स्नान।
भऊजी कहेलीं ननदी एक ओर बिअहबो नाहीं के हू आवैन जाय।
बाबा जे देलैं हमें अनधन सोनवा अम्मा जे लहर पटोह।
भइया जे देलऽ हमें चदने के घोड़वा भऊजी महुरवा क गाँठ।
बाबा क सोनवा त बरिस दिन पहिब फटि जहहैं लहर पटोह।
भइया क घोड़वहिं हम नग्र कुदइबै भऊजी के अपजस होय।
किया तोहरा ये भऊजी नुनवा चोरवली किया तेल देली ढरकाय।
कवन ही चूक हम कइली ये भऊजी होइ गइली बैरिन तोहार।
नाही मोरी ननदा हो नूनवा चोरवलू नाहीं तेल दिहलू ढरकाय।
राम रसोइया बिरही एक बोल बोललू होइ गइलू बैरीन हमार।
बैरिन बैरिन जिन कहा सरहज इत बारी हमरी प्राण पियार।
जवने नगरिया इहै हो बैरिन जइहैं उजरल नगर बासी जाय।

यह गीत स्त्री विमर्श का दृष्टान्त बन सकता है। एक ही माँ की दो सन्तान के साथ अलग-अलग व्यवहार होता है। माँ, बाप, भाई तथा भाभी का व्यवहार एक लड़की के साथ अलग-अलग होता है। बिना कसूर लड़की दण्ड पाती है। इसी तरह का एक और गीत है-

जेहि दिन ये बेटी तोहरो रहन भइलैं पेडुर मोर हहराय।
माछ मछरिया बेटी खही न पउली आप प्रभु करैलऽ अत्याचार।
जेहि दिन ये बेटी तोहरो जनम भइलऽ भइलऽ अंधेरिया करे रात।
सास जेठानी बेटी घर दियनो न बारैं आप प्रभु गइलैं रिसियाय।
जेहि दिन ये बेटी तोहरो बिआह भइलऽ भइली आनन्द केरी रात।
सासु ननद घर आरती उतारैं आप प्रभु देलऽ कन्यादान।

इस गीत में भी लड़की के जन्म का विषाद व्यक्त है। घर भर के लोग दु:खी हो जाते हैं। पूरे घर में दीपक नहीं जलाया जाता। पूरे घर में भादों की रात छा जाती है।

राजा जनक जी क सागर तलवा हो सगेड़ नहाये नित जाँय।
शुक्र क डीठ पड़ी चउषइया धनुषा रखैलऽ ओठड़ाय।
घर में से निकलैल राजा जनक जी भै बेदियन पै ठाढ़।
आजि चउपइया कवन देयी लियैं धनुषा रखैलीं ओठड़ाय।
घर में से निकलैलीं माता सुनैना भइली ड्योड़िया धइले ठाढ़।
चाहे राजा मारा चाहे गरियावा चाहे राजा देसवा निकार;
आज चउपइया सीता देइ लिपैं धनुषा देली ओठड़ाय।
झिन झिन कापड़ पहिरैं जनक जी भये बेदियन पै ठाढ़।
देसहिं देसहिं जनक चिठिया पठावैं बाचहुं कुँवर सब लोग।
सबहिं मिलि धनुष उठावै धनुष जुमुस नहिं खाय।
हारै ल बाबू हो हारैल राजा हारैं कुँवर सब लोग।
जौं मैं जनतो सीता धनुष नाहीं टूटिहैं अब सीता रहबू कुँवार।
क्रोधित होइ जनक बाबू बोललऽ अब सीता रहबू कुँवार।
एतनी बचन जब सुनै बाबू लछिमन अड़पि तड़पि बोलैं बोल।
गुरु जी क आज्ञा जब मोहि मिलतैं धनुषा करीत नौ खण्ड।
उठहू राम करहू धनुष नौ खण्ड सीता बिअहि लेइ जाहु।
आवहु राजा आवहु बाबू आवहु कुँवर सब लोग ... ।
आजु हम घरवा जज्ञ एक ठनबै सीता बिअहि आजु लेब।

इस गीत में सीता विवाह का प्रकरण व्यक्त है। कैसे सीता का विवाह राम के साथ होता है। सारा प्रकरण लोक के अनुकूल है।

घर में से निकरैली गउरा रनिअवा भइलीं डेवड़िया धइले ठाढ़।
कही किया तीरथ कहीं किया विरथ, ई लोग कहँवा ही जायँ।
घर में से निकरैली माता मदागिन सुना बेटी अरज हमार।
ना कही तीरथ ना कही विरथ ई लोग नेवतेहीं जाँय।
कहता त ये महादेव हम हुँ जे जाइत नइहर सब लोग हमार।
बिनु रे बुलाए मत तुइ जइहा आदर होई न तोहार।
केहू क कहल गउरा मनबो ना कइलीं प्राचित नेवते ही जायँ।
घर में से निकरैली माता मदागिन भइली डेवड़िया धइले ठाढ़।
कहता त ये महादेव गऊरा के बुलाइत बिनु रे बोलाये गउरा आँय।
किया मोरे कारज किया मोरे परोजन किया मोरे बेटा क बिआह।
एतनी बचन जब सुनली गउरा देई भइलीं जे जगिया में ठाढ़।
उमरि घुमरि गउरा जगिया निरेखैं महादेव क भागों न होय।
उभरि घुमरि गउरा जगिया निरेखली कूदलीं अगिनियाँ के बीच।
जरि मरि गउरा हो राख होइ गइलीं काछि बाँधि कूदैं महादेव।

इस गीत में गौरा के पिता के घर अपमान को व्यक्त किया गया है। शादी के बाद मायके से उसका पुराना आसन उठ जाता है। बिना बुलाये नहीं जाना चाहिए। पति की बात न मानने पर परिणाम बुरा होता है।

पूरब देसवा से आवैला बभनवा
हथवाँ हरदिया क गाँठ रे ललनवा।
बइठा न बभना हो चन्दन पीढ़इवा
कहा नइहर कुसलात रे ललनवा।
तोहरे नईहरवा बेटी सब कुसलतिया
घरवा जे छोट भइया क विआह रे ललनवा।
देवरू क हरदी मैं अचरे छिपइबों
भइया नेवति हम जाब रे ललनवा।
घर में से निकरैलीं सासु कवन देई
सुना बहुअर अरज हमार रे ललनवा।
देवरू क हरदी तू अचरे छिपइहा भइया
नेवति चलि जइहा रे ललनवा।
पहिरान बहुअर इत्र चुनरिया अरे भइया
नेवति चलि जाओ रे ललनवा।
बाबा के अंगनवाँ हो चन्ननवाँ क पेड़वा
छितरि बितरि बारी डारी रे ललनवा।
सेइ डारी अटकैले इतर चुनरिया

अरे फटि गइलै लहर पटोर रे ललनवा।
बहरे से आवैलऽ भइया कवन राम
काहे के बहिनी मुँहवाँ धूमिल रे ललनवा।
चन्ने के डरिया फटै इत्र चुनरिया
अरे काऊ देवै सासु क जबाब रे ललनवा
जिन करा मन दु:खी बहिनी इत्र चुनरी किनि देवै रे ललनवा।
अरे हँसी खुशी जइहा ससुरारी रे ललनवा ... ।

इस गीत में मायके जाने का प्रबल उत्साह व्यक्त है और लहराती हुई इत्र युक्त रेशमी वस्त्र पहनने का उत्साह है। भाई का स्नेह भी गजब का है।

एक आम हरियर एक आम पियर एक आम भइलऽ अनमोल।
एक ही आम मोरे बाबा के दुवरवा ताहि तरे उतरै बरात।
केकरे दुवरवाँ बजन एक बाजै केकर होला बिआह।
तूहीं बेटी रुलरी तूहीं बेटी दुलरी तूहीं बेटी चतुरी सयान।
हमरे दुवरवाँ बजन एक बाजै तोहरा बेटी होला बिआह।
सिखही ना पउलीं बाबा घर घरुवरिया अवरो रसोइयाँ व्यवहार।
सास ननद बाबा तोहैं गरिअइहैं मोरे बुते सहलो ना जाय।
सीखि लेहु ये बेटी घर घरुवरिया अवरु रसोइयाँ व्यवहार।
सासु ननद बेटी हमें गरिअरहै लिहा बेटी अचरा पसार।

इस गीत में कुँवारी लड़की को शिक्षा दी गयी है। किसी भी परिस्थिति में उसे ससुराल में सहिष्णु होने की हिदायत दी जा रही है। इस प्रकार के प्रतिदिन भिन्न-भिन्न गीत गाये जाते हैं। विवाह गीत के बाद बन्दा-बन्दी के नाम से प्रत्येक रात आंगन जागरण के समय गीत गाये जाते हैं। उनकी भी संख्या पर्याप्त है पर कुछ गीतों का उल्लेख यहाँ अपेक्षित है।

बन्दे इतने दिन क्वारे क्यों रहे?
मलिया के यहाँ गये मलिया न मिला।
मउरु बिना क्वारे हम रहे।
बन्दे ... (टेक)
दरजी को गये दरजी न मिला।
जमवा बिन क्वारे हम रहे।
बन्दे ... (टेक)

फिर इसी प्रकार सुनार के यहाँ और मोची के यहाँ फिर अन्त में सास के यहाँ गये- सासु न मिली बन्दी बिन क्वारे ..। (टेक)

निदिया के भरमल दुलहे पलकी में सोवै लाल।
हथवा क मउरू लेहले मलिया खड़ा है लाल
उठ बाबू पालकी से मउरू सवारो लाल।
हथवा क जमवा दर्जी ...
हथवा क जुतवा मोची ...
हथवा क घड़िया लेहले बाबा ...
हंथवा क सोनवा लेहले सोनरा ... ।

× × ×

बन्दे तेरी आँखिया सूरमेदानी
बन्दे तेरे मउरु लाख का रे।
बन्दा तेरा सेहरा सब हजारी
बन्दे तेरा कुड़िल लाख का रे
बन्दा तेरी बलिया लाख का रे
बन्दा तेरी कुण्डल लाख का रे

इसी प्रकार सब कुछ को जोड़ दिया जाता है।

बन्दा गये रंगून ले आये टेलीफोन
अभी तो नहीं आये हैं।
बन्दे के माथे मऊरू सोहै।
सेहरा गये भूल ले आये टेलीफून
अभी तो नहीं आये है।

इसी प्रकार धारण करने वाली सभी चीजों का उल्लेख होता है।

दरवजवा पर डोलिया आय गयो रे
मगन भये दुलहे खुशी भयो रे।
बन्दे के माथे मऊरू सोहै, सेहरा बिनु दुलहे बिछुड़ गये रे।
मगन भय ... (टेक)

इसी प्रकार दूल्हे के धारण करने वाली सब चीजों को लेकर आगे बढ़ेगा।

बन्दा मैं तुमको सुनकर आयी।
बन्दा तेरे बाबा क नीचे दरवाजा,
बन्दा मै निहुर निहुर के आयी।
बन्दा तेरे मम्मी के नखरे भारी,
बन्दा मैं उनसे लड़कर आयी।

इसी प्रकार चाचा, भइया, बहन आदि सबका नाम लगाकर

गाया जाता है। उस प्रकार बन्दा–बन्दी के अनेक गीत होते हैं। इसके बाद सुहाग गाये जाते हैं। दृष्टान्त स्वरूप सुहाग प्रस्तुत है –

केहरो से आवेली कारी रे बदरिया कहवाँ बरिसने को जाय
नाजुक सोहाग बढ़े।
पूरब से आवैले कारी रे बदरि पच्छिम बरिसने को जाय
नाजुक ...
घर में से निकरैली बेटी हो कवन देयी सुना बदरी अरज हमार
नाजुक ...
तनी एक बूदियाँ नेवारा मोरी बदरी हमहूँ सोहागिन बनि जाँव
नाजुक ...
अगहन जोहली फागुन हम जोहली जोहीला जेठ बइसाख
नाजुक ...
हम ना मनबै कवन राम कधियरिया घमसि चढ़ेला अषाढ़
नाजुक ...

इस गीत में प्रकृति का सम्बल लिया जाता है। प्रकृति को सुहाग से जोड़ने की चेष्टा होती है और सहयोग की अपेक्षा होती है। प्रकृति और मानव अलग नहीं है।

केथुआ क बेनिया केथुआ लागी पाती जी
कवने चरित्र बेनिया अइली बिकाये जी।
सेहि बेनिया लेहलै कवन राम मोलाई जी
देहलै दुलहिन देई के हाथ पकड़ाइ जी।
तोहरै जे बेनिया प्रभु हम नाही लेबै जी
भाई बहिनी रउवाँ जइहैं रिसिआई जी।
होखै देहू होखै देहू काल्ह का बिहान जी
अम्मा बहिनि रउवाँ देसवा निकारब जी।
माई तोहरी बुजुरुग बहिनियाँ नदान जी,
बहिना निकारै प्रभु पतिनस होइहैं जी।
के मोरे बोवे ला कुसुमवा क बारी जी
केहो कोड़ै ला के देला ठण्डा पानी जी।
बाबा मोर बोवेलऽ कुसुमवा बारी जी
भइया कोड़ैलऽ भऊजी देली ठंडा पानी जी।

इसी तरह सभी परिवार वालों को जोड़कर यह गीत गाया जाता है। इसमें कृषि का सम्मान प्रस्तुत है। आपसी सहयोग की उपेक्षा व्यंजित है।

वृन्दाही वन बाबा बसवा कटावैलऽ
बसवा नयीयै नयीयै जाय हो।
सोहाग मोरा अजब बनी।
बसवा कटाइ बाबा पलंग सलावैलऽ
मकतुलवा क ओनचन लगायी
सोहाग ...
सेही पलंगा सुतैलऽ दुलहे कवन राम
कोरवा कवन देइ धियरी हो।
सोहाग ...
घुसकहु घुसकहु ससुर जी धियरीया
जोड़वा धूमिल होइ जाय हो
सोहाग ...
एतनी बचन जब सुनली दुलहिन देई,
रुसल धना जाली नइहर हो
सोहाग ...

इस गीत में निर्दिष्ट है कि पिता दम्पति के मिलन की सुविधा तैयार करता है। इस प्रकार अनेक सोहाग गाने के बाद कहरवा और धोबियवा गाकर महिलाएँ नृत्य आदि करती हैं। कुछ कहरवा यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

एकादसिया रहब दूनो जने बालमा।
लेबै आधा सेर मिठाई करबै पनिया क पियाई
रहि जाब निराजल दुनो जन बालमा।
गेहूँ बोवलो न जाई चावल कीनलोना जाई।
चला चली कवनो देस के पराय बालमा।
सुना बचवा के बाबू हमरे आवै ले थकाई
तनी बेनिया डोलायदा हमरे बारे बलमू।
सुना बचवा के माई हमरे आवै ले थकाई
तनी सा देहिया दबाय दा बारी धनिया।
सुना बचवा के बावू हमके आवैले थकाई।
अपने बहिना से कइला सगाई बालमा।

× × ×

जुअवा खेलैला जुआरी सारी रतियाँ ना।
एक दिन जुआ गइलै जीत घर में होखै लगली गीत।
अपने धना के गढ़ावै ल कंगनवाँ ना।

एकदिन जुआ गइलैं हारी घर होखै लगलैं मारी।
अपना धना क उतारै ल कंगनवाँ ना।
चार ठे बालक बाला देहलैं दाना दाना के मरि गइलैं।
कइसे जीवों रे गोसइयाँ इनके संघवाँ ना।
जुअवा ...

× × ×

सूतलऽ रहलो हो खाटी सपना देखीला हो राती।
सपने में पिअवा पतिया भेजै हो सुनब बतिया आपन सूनब
मोरे पिछवरवाँ हो रामा पढ़लै पण्डितवा
पतिया बाँचि सुनाव हो सूनब बतिया आपन सूनब
केकरा के लिखलै ये भौंरा कुसल मंगल
केकरा के बरहो वियोग सुनब बतिया आपन सूनब
माई बहिनियाँ ये रनियाँ कुसल मंगलवा
तोहरा के हो बरह बियोग सुनब बतिया आपन सूनब

इस प्रकार प्रेम, विरह और जीवन के कलह आदि का प्रसंग इन गीतों में आता है। एकान्त में रहने की इच्छा है तो जुआरी की वेदना है। विरह में स्वप्न देखने की प्रक्रिया है। इस प्रकार प्रतिदिन विभिन्न प्रकार के गीत गाये जाते हैं, जिनकी संख्या बहुत ज्यादा है।

इसके बाद विवाह से सात दिन, पाँच दिन या तीन दिन पूर्व हल्दी मटमंगरा का कार्य होता है, जिसे क्रमशः सतमंगरा, पंच मंगरा और तीन मंगरा कहते हैं। यह कार्य साइत के अनुसार होता है, जब ब्राह्मण बताता है तभी होता है।

सबसे पहले देवी का गीत होता है फिर पूर्ववत् सगुनी का गीत होता है। इसके बाद अहिवाती बहन या बुआ कलश गोठती है। यह कार्य गाय के गोबर की पिण्डी से होता है। जिसे चारों तरफ गोलाई में चिपका दिया जाता हैं। उसमें चावल या जौ धँसा दिया जाता है। सारी महिलाएँ कलश का गीत गाती हैं –

तालहि भरि मोरा हंस बइठैं अउरो हंसिनी बइठैं।
अरे तब हूना तलवा सोहावन एकही कवँल बिनु।
माड़ो ही भरि मोरा गोत बइठे अवरो गोतिनि बइठैं।
अरे तबहू ना मड़वा सोहावन एकहू बहिनि बिना।
सोने के खड़ऊँवाँ कवन भइया बहिनी बहिनी करैं।
अरे कहाँ गइलीं कवन देई बहिनियाँ कलश मोरा गोठैं।
गोठब ये भइया गोठब कलश तोहरा गोठब।
भइया का देबा कलशा गोठाई कलशा तोहरा गोठब।
देबो ये बहिनी देबो त नेग तोहरा देबो न ... ।
बहिनी देइं देबो हाथे क कंगनवाँ त गरे क हरवा।

इसके बाद पण्डित अपना कार्यक्रम करते हैं। मण्डप का कार्य करवाते हैं। एक गड्ढा खोदा जाता है उसमें एक बाँस का हरिस, केला का पत्ता डाला जाता है। बाँस के ऊपर आम का पल्लव बाँधा जाता है। तीनों को मूँज से मन्त्र के साथ बाँधा जाता है। उसी के पास जल भरा गोठा कलश रखा जाता है। कलश में पैसा, अक्षत, सुपारी और पुष्प डाला जाता है। कलश के गले में रक्षा सूत्र बाँधा जाता है। गौरी गणेश का पूजन होता है, उसके पहले नाइन आटा से चौक पूरती है। इधर हरिजन की पत्नी नगारा लेकर बैठती है। अइधी हुई महिला (जो पूरा पूजन कार्य करती है) मानर पूजती है। मानर सम्मान का प्रतीक है। पूजते समय उस पर हाथ से हल्दी का पाँच ठप्पा मारती है फिर तेल लगाकर सिन्दूर लगाती हैं। उस पर गेहूँ मुट्ठी से धीरे-धीरे पाँच बार गिराया जाता है। उस समय महिलाएँ गीत गाती हैं। –

अरे केकरे दुआरे मानर बाजैला बजत सोहावन!
डीह बाबा दुआरे मानर बाजैला बजत सोहावन।

इसी प्रकार सभी देवताओं का नाम लेकर गाया जाता है। यह मानर सम्मान के लिए ही है, अतः इसे मान बढ़ाने वाला अर्थात 'मानर' कहते हैं।

अब पण्डित लड़की या दूल्हे को हल्दी लगाते हैं। इधर लड़कियाँ तालाब में माटी लेने जाते हुई गाती हैं। इस समय वे भजन और नकटा गाती जाती हैं और माटी का पाँच टीककर लेकर आती हैं। आगे-आगे नाइन नई दऊरी लेकर चलती है। उसमें चावल, उड़द की दाल, चने की दाल और कुछ पैसा रहता है। भेली या बताशा भी रहता है। अजवाइन, सुपारी, हल्दी और एक हंसियाँ या चाकू रहता है। पाँच माटी का ठेला लेकर सब लौट आतीं हैं। रास्ते में नाचते-गाते आनन्द के साथ लौटती हैं। घर आकर 'अल्हह-दुल्हह' होता है। इसमें दो महिलाएँ आमने-सामने बैठतीं है उनके हाथ में चलनी में आटा होता है। अइधी महिला पहले आरम्भ करती है। पाँच महिलाएँ साड़ी पकड़कर

ढंकी रहती हैं, वे पाँच बार साड़ी को घुमाती हैं। महिलाएँ बगल में गाती हैं। 'कुसुम' का फूल साड़ी पर रखा जाता है।

अल्हह-दुल्हह टीकस हो
अउर कन्नौजवा क फूल
फूल लोढ़े चलैली कवन देयी
लौढ़ैली अऊर पछिताय।

सभी औरतों का नाम लेकर जो घर में अहिवाती होती है, गीत गाया जाता है। सभी अहिवाती महिलाओं की माँग को पहले ही तेल लगाकर सिन्दूर से टीका जाता है। इसके बाद दुल्हन या दूल्हे को पाँच या सात कुँवारी लड़कियाँ हल्दी लगाती हैं। इसके बाद कन्या या वर के हाथ में चावल और भेली या बताशा रखा जाता है। दोनों हाथ दोनों पैर के बीच होता है। इसके बाद दूब और हल्दी से जो एक ढकनी में घोल रूप में रहती है, सभी लड़कियाँ पैर से सिर तक चूमती हैं। इधर महिलाएँ निम्नवत गीत गाती हैं-

कोइरिन कोइरिन तुहू बड़ी रानी हो
कहवाँ क हरदी उतपन्न कइलू आज
हमरे कवन देईया कवन राम अस सुकुवार हो
सहही ना जानै ली हरदिया क गाँठ हो,
तेलिन तेलिन तोही बड़ी रानी हो
कहवाँ क तेलवा तू उतपन्न कइलू आज
हमरे कवन देई या कवन राम अस सुकुवार हो
सहही ना जानै ल सरसोइया क झाँक हो।

इस गीत में हल्दी पैदा करने वाले और तेल पैदा करने वाले के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की गयी है और दुल्हन-दूल्हे की कोमलता का उल्लेख किया गया है।

इसके बाद -

हमरे कवन बाबा अइसन फैसनदार जी।
हथिया चढ़ि खोजै ल हरदिया का गाँठ जी।
हमरे कबन दादी अइसन फैसनदार जी।
रगरि रगरि पीसै हरदी क गाँठ जी।

इसी तरह हर सम्बन्ध के लोग खोजेंगे और उनकी पत्नियाँ पीसेंगी। इस प्रकार गीत आगे बढ़ता है।

अब लड़कियों के चूमते समय महिलाएँ इस प्रकार गाती हैं -

गिरि पर्वत केरो चन्दन रइया गाछै हालर दूध
चूमै जे चलैलीं कवन देयी या
साठी क चाऊर हालरि दूध हो
चूमैं जे चलैंली कवन देयी, बाबा हो कबन राम धियरी
हिक भर चूँमा हो कवन देयी, मुखभरि दिहा असीस
तुहरी असीसियाँ दुलहिन दुलहा जियस लाख बरीस
मथवा चूँमि चूँमि दिहा असीस हो
जियैं मोरी दुलहिन दुलहा लाख बरीस हो।
जस रे जियस जस धरती में धान हो।
ओस रे जियस जस पुरइन पात रे।

इस गीत में साठ दिन में पैदा होने वाले धान का जिक्र है। हालरि दूध का अर्थ हरी-भरी दूब से हैं। इसके बाद लड़की या लड़के को लेकर कोहबर (कौतुकगृह) में ले जाया जाता है। पूजन करने वाली महिला लोटे में पानी लेकर पतली धार से गिराती चलती है और लड़की या लड़का पीछे-पीछे हाथ में चावल लेकर जाते हैं। अइघल महिला वह होती है, जिसे पूरे विवाह कर्म में पूजन हेतु अर्घ दिया जाता है। वह और कोई काम नहीं करती। जाते समय यह गीत गाया जाता है -

काँची पितरिया क इहै नया कोहबर
मामी क या मानिक रचल विआह।
तेहि पर से सूतलऽ दुलहे कबन राम
कोरवा कवन राम क धेरि।
पइठि जगावैली माई कवन देई।
... चाची ... । ... भाभी ...
उठ बाबू भइलै भिनसार।
अइसने माई के पठान हाथे बेचतो
अहसने बुआ के डोम हाथे बेचतो
आधी रात घूमै लीं गाँव।

अन्त में जिसका जैसा रिश्ता होता है, एक दूसरे से मजाक करते हुए गाया जाता है। इस गीत में काँची पितरिया का अर्थ कांचनी पुत्तलिका है और मानिक का अर्थ माणिक्य है। कांचनी पुत्तलिका का मतलब दुल्हन है और माणिक्य दूल्हा है। 'मामी

करचल बिआह' का अर्थ है कि मामी ने विवाह रचा है। लगता है प्राचीन काल में मामा की लड़की की शादी बुआ के लड़के से होती थी, यह रिवाज था। दक्षिण में यह परम्परा अब तक शेष है। कोहबर कौतुक गृह है। गीत से संकेत है कि पहले शादी के बाद कौतुक गृह में ही दुल्हन-दूल्हे का मिलन हो जाता है। दोनों रातभर कौतुक पूर्वक सोते हैं। सुबह के समय माँ, भाभी, चाची आदि जगाती हैं। इस प्रकार 'मटमंगरा' का अनुष्ठान समाप्त होता है। मटमांगर के बाद मण्डप में कलश पर दीपक जलाकर प्रतिदिन भोर और सन्ध्या जगाया जाता है। उस पर गीत इस प्रकार गाये जाते हैं।

अरे भोर भयल भिन सहरा धरम के रे जूनियाँ।
पठै दा कवन राम जाति दोहड़ियाँ कवन राम।
अरे नाहीं घर धेनु बकेनू नाहिं हो घर ओसर।
अई दुधवा त आवै ला कमोरिया त मठवा कनारी बहै।

(यही क्रम सभी मृत पूर्वजों का नाम लेकर चलता रहता है)

अरे बढ़े दही एक दहेड़िया घिवही के रे गागर।
बढ़ऊ सास देयी क सासुर अउर कवन देईक नइहर।

इसमें ससुराल और लड़कियों के मायके की समृद्धि की कामना की जाती है।

आहो आहो सन्ध्या गोसाई तोहके ना जगाइला आज।
ब्रह्मा विष्नु महेस तीनों देव भगतिन आगर हाथ।
चवँर लेइ बिनवै युग जीयै युगे जीयै दुलहिन देई
दुलहे देव सोहाग बढ़े तोर।

(अब सभी देवताओं का नाम लेकर इसी प्रकार गाया जाता है। दूल्हा-दुल्हन के दीर्घायु होने की कामना की जाती है।)

साठ बरद बाबा साम्बर हो, नून लेहु नून लेहु
अमुक देवी नीक।
अरे नाहीं मोरे नूनवाँ के साध अरे मोरे घरा नून्नू
फलाने बाबू नीक।

इसमें अमुक देवी की सभी बहुओं का नाम लिया जाता है और फलाने बाबू के जगह उनके बेटे का नाम लिया जाता है।

इसके बाद सुबह-शाम हल्दी लगायी जाती है। फिर हल्दी के दिन की तरह पानी गिराते हुए कोहबर में जाते हैं। उस समय काँची पितरिया का गाना गाया जाता है।

इसके बाद लड़कों की तरफ विवाह से एक दिन पूर्व भत्तवान होती है और कोहबर लिखा जाता है। बाद में बाँस और हरिश में लकड़ी का सुग्गा बाँधा जाता है। लड़की की तरफ शादी के पूर्व ही मण्डप छाजन होता है। इसमें चारों ओर नौ बाँस गाड़े जाते हैं। फिर सरपत से मण्डप छाया जाता है जो मूँज से बाँधा जाता है। इसे पहले बरई ही छाता था। उसी दिन कोहबर लिखा जाता है। लड़कों का 'कोहबर क पातर' एक दिन पूर्व भत्तवान के दिन होता है और लड़कियों का विवाह के दिन होता है। इस दिन लड़के और लड़की फलाहार पर रहते हैं। पित्तर नेवतने के बाद ही अलग से उरद भात, बरा, पकौड़ी आदि बनता है और उसे लड़का पाँच कुँवारे लड़कों के साथ और लड़की पाँच कुँवारी लड़कियों के साथ खाती है। पहले एक ही बार खाना पत्तल पर परोस दिया जाता है फिर सबकी पत्तल लड़की या लड़के को 'ओइछ' कर सबको दिया जाता है। प्रत्येक प्रकरण पर गीत गाये जाते हैं। कोहबर लिखते समय प्राय: गीत नहीं गाये जाते। लिखने वाली लड़कियों को नेग या उपहार दिया जाता है।

फलाने राम दुआरे थुनिया दल होय
बेटा राम भोजइता ये माड़ो छाइला आज।

(इसमे पिता का नाम पहले और बेटे का नाम बाद में लिया जाता है। इसी प्रकार खानदान के सभी पिता-बेटों का नाम लगाकर गाया जाता है।)

इसके बाद वेदी बनाने के समय यह गीत गाया जाता है।

अरइल बन बाबा खरइल करावैलरा।
अरे बलि वन वृन्दा केरो बाँस सीता के बर चाहीला।
गइया के गोबर बाबा मड़वे लिपाई ला।
अरे बलि गज मोती चउका पुराई सीता के बर चाही ला।
गंगा क मटिया बाबा मड़वे धराइला।
अरे बलि ऊँची-ऊँची बेदिया पटाई सीता बर चाही ला।
सोने क कलस बाबा मड़वे धराइला।
अरे बलि माटी क दियना जलाइ सीता के बर चाहीला।
पठै दा कवन राम क पूतवा।

अरे बलि पइते कवन राम धियरिया सीता के बर चाहीला।
अरे बलि मोतियन माँग भराई सीता के बर चाहीला।
अरे बलि सेन्दुरन माँग भराई सीता के बर चाहीला।

इस प्रकार मण्डप छाते समय दो-चार विवाह के गीत गाये जाते हैं। इस बीच मण्डप छाजन पूर्ण हो जाता है। इसके बाद लड़के के यहाँ एक दिन पूर्व पितृ निमन्त्रण (पित्तर नेवता) दिया जाता है और लड़की के यहाँ पित्तर नेवते का काम विवाह के दिन होता है। रस्म एक ही होती है। इस अनुष्ठान के समय पति-पत्नी या देवरानी-जेठानी सील लोढ़ा के साथ नयी साड़ी ओढ़कर आमने-सामने पूरे ढँके हुए बैठते हैं। फिर भीतर ही प्रत्येक पितृ का नाम लेते के समय पान कुपुटते हैं तथा दो ढकनी में रखते हैं। एक ढकनी पितृ की होती है और एक-आँधी पानी की। इसके बाद दोनों मिलकर उड़द पीसते हैं। ढकनी के भीतर पान-सुपारी रखकर एक दीया से ढँकते हैं फिर पीसी उड़द से चारों ओर चिपका देते हैं। इधर क्रमशः गीत होते रहते हैं।

पाँच पनन नवाँ फोफर हो सरगे ही बारे डीह बाबा
उनहूँ नेवली ला आज।
सरगे ही बाटै लालचन बाबा उनहूँ नेवती ला आज।

(इसी प्रकार सभी देवताओं का नाम लेकर गाया जाता है)

पाँच पनन नवाँ फोफर सरगे ही बारे फलाने बाबा

उनहूँ नेवती ला आज।
उनही सरीखे उनकर मेहर हो उन्हूँ नेवती ला आज।

(इसी प्रकार सभी पूर्वजों का नाम लेकर गाया जाता है तथा उनकी पत्नी का भी नाम लिया जाता है।)

पानी क डूबल रूखे क गीरल
साँपे क काटन बिच्छी क मारल
आगी क जरल गोठिला के भीतर धमधूसर
उनहू नेवती ला आज
उलायल भुलायल जेहू उनहू नेवती ला आज।

× × ×

सील ओहनी सील पोहनी सील्हिया सोहागे क।
सील पोहै बैठे ली कबन देई सील्हिया सोहागे क॥

(इसी प्रकार सभी बहुओं का नाम लेकर गाया जाता है।)

अब घसर-घसर पीसो दाल अहो दिलजनियाँ।
के हबैं घोड़वा के हवैं असवार अहो दिल जनियाँ।

(इसके बाद भाई-बहन को लगाकर सभी स्त्रियाँ गारी देती हैं।)

इधर दूल्हे के घर बारात जाने की तैयारी होती है। गाँव भर की स्त्रियाँ इकट्ठी होती हैं। सबसे पहले हल्दी लगती हैं और पूर्ववत् गीत होते हैं। इसके बाद बाजे के साथ महिलाएँ लावा लाने जाएँगी। गोड़िन लावा लेकर गाँव से बाहर आती है। अइधने वाली महिला सीधा और पैसा कपड़ा लेकर जाती है और गोड़िन के साथ लेकर बैठती है। गोडिन का सूप तेल लगाकर सिन्दूर के पाँच टीके से टीका जाएगा, फिर उसकी माँग तेल और सिन्दूर से टीकी जायेगा। फिर दोनों सूप में धान का लावा लेकर पाँच बार इधर-उधर मिलाया जाएगा। अब महिलाएँ गीत गाती हैं -

मोर लावा तोर लावा एकै में मिलाय दे।
मोर भइया तोर बहिनी एकै में सुलाय दे।

(इसी प्रकार सभी रिश्तों को जोड़कर गाया जाता है।)

दोनों सूप गोड़िन ले लेगी। सब लोग ओइछ कर पैसा देते हैं। फिर गोड़िन सूप देती है। सभी परजूनियों को दान देकर सब लोग घर गाते हुए लौटती हैं। वहाँ महिलाएँ नाचती हैं। नाना प्रकार का गान होता है। फिर लावा कोहबर में रख दिया जाएगा। परिछ कर ही लावा रखा जाता है। सूप का लावा जाते समय कोहबर का वही गीत- काँची पितरिया क इहै नवाँ कोहबर ... गाया जाता है। इसके बाद गाते-बजाते पुनः महिलाएँ कुआँ पूजन के लिए जाती हैं और गाती नाचती लौटती हैं।

अब प्रकरण नहछू नहावन का होता है। पहले घर की बहिन या बुआ पोखरा खनन का अनुष्ठान करती है और उन्हें नेग देना होता है। इस समय लड़का जुआठ पर बैठकर नहाता है। महिलाएँ गीत गाती हैं -

के मोरा पोखरा खनावैला घाट बनावैला।
केकर भरैला कहार त के नहवावैला।
राजा दसरथ पोखरा खनावैलंऽ घाट बनावैलाऽ

कौसल्या देई क भरैला कहार त राम नहवावैला।
कैकेयी देई क ...सुमित्रा देई क ...
केहू देला अंगूठी मूँनरिया केहू देला रूपा।
कैकेयी क देली रतन पदारथ भरि गइलैं सूप।
कौसल्या देली अंगुठी मुनरिया सुमित्रा देली रूपा
रानी कैकेयी देली रतन पदारथ भरि गइलै सूप।
कवन राम पोखर खनावैलऽ घाट बनावैलऽ।
कवन देई कभरैला कहार त राम नहवावैलऽ।

(इसी प्रकार घर के पति-पत्नी का नाम जोड़कर गाया जाता है।)

फिर महिलाएँ नहाते समय गाती हैं-

जल्दी नहालो के बन्दा आज तुम्हें बन्दी से मिलना है।
बाबा ले आये फूलों का गजरा जल्दी पहनो के बन्दा
आज तुम्हें बन्दी से मिलना है।

(इसी प्रकार सभी सम्बन्धियों को जोड़कर गाया जाता है)

इसी प्रकार बन्दा-बन्दी के कई गीत गाये जाते हैं। नहाने के बाद नये कपड़े से देह पोछी जाती है। नाई देह पोछने का नेग माँगता है। फिर कपड़ा पहनने के बाद लड़का मण्डप में बैठता है। उसके पीछे उसकी माँ बैठती है। सिर पर जीजा या फूफा मयूर बाँधते हैं। किसी के न होने पर नाई बाँधता है।

अरे अरे बाबा कवन राम तुहू न असीसा
तोहरी असीसिया कवन दुलहे चउके बइठैं।
अरे अरे भाई कवन देई तुहून असीसा,
तोहरे असीसियों कवन दुलहे चउके बइठै।

× × ×

तइयार हो जा बन्दा ससुराल तुम्हें जाना है
नया मउरु नया सेहरा नई टोपिया लगाना है।
तुम्हारे सामने बाबा उनका आसीर्वाद लेना है।

(इसी प्रकार सबको लगाना है।)

इसके बाद नह काटने का कार्यक्रम होता है। लड़का के पीछे अइघने वाली महिला बैठी रहती है। नाइन नह काटती है और पैर में रंग लगाती है। उस समय निम्नवत गीत होते हैं-

नह काटो नउनिया सुमंगल घड़ी।
नह काटो नउनिया
नउवा के देबो मैं चढ़ने के घोड़वा।
नउनिया के देबो हम रतन जड़ी।
नह काटो ... ।
नउवा के देबो मैं चढ़ने के हथिया।
नउनिया के देबो मैं गले क हरवा।
नह काटो ...

(इसी प्रकार प्रत्येक गहने आदि का नाम लेकर गाया जाता है।)

नह काटो ये नउवा नह काटो आंगुर मत काटो।
बाबू क पतरी अंगुरिया नहनी नहिं लागै।

इसके बाद मामा को इमली (अम्ल) घोटाने के लिए बुलाया जाता है। मामा न होने पर नाई ही यह कार्य करता है। मामा द्वारा आम पल्लव पाँच बार कुचवाते हैं और लड़का, माँ के हाथ पर काटकर गिराता है।

मामा हाली हाली इमली घोटावल करा मामा हाली हाली।
जइसे कुकुरे क पोंछ वइसे मामा क मोंछ मामा हाली हाली।
जइसे लाल टमाटर बइसे मामा क गाल मामा हाली हाली।

(इसी प्रकार मजाक रूप में गाया जाता है।)

इसके बाद मामा नेग देते हैं और परजूनियों को भी नेग देते हैं। अब महिलाएँ गाती हैं-

बरसा बरसा मामा बरसा जइसे देव बरिसै वइसे बरसा।
लूटा लूटा बहिना लूटा जइसे चोर लूटै वइसे लूटा।

(इसी प्रकार सभी मामाओं को लगाकर गाया जाता है।)

उसी स्थान पर लड़के को दहीगुर कराया जाता है। महिलाएँ गारी गाने लगती हैं-

खाओ खाओ दुलहे बाबू गुर दही।
तोहरे माई ...
तोहरे चाची ...

(सब पर लगाकर गाली गाई जाती हैं।)

अब दुल्हा पालकी पर या कार में बैठकर किसी देवता के स्थान पर जाता है। बाजा भी बजता रहता है। सभी महिलाएँ गीत गाती जाती हैं। वहाँ जाकर पहले मूसर पानी और लोढ़ा से परिछन होता है। महिलाएँ गीत गाती हैं–

रघु रघु चन्दन छिरुक भर अंगने
छिरुक भर अंगने डीह बाबा उजरि बरात।

(सभी देवताओं का नाम लेकर उजरि बारात गाती चलती हैं।)

दल साजन साजन होइ गइलै
दलवा त साजैल हो कबन बाबा हो
जिनकर नतिया बिआहन जाई हो।
दलवा त साजैल कवन पापा हो।
जिनकर बेटवा बिआहन जाई हो।

(इसी प्रकार सभी रिश्तों का नाम लेकर गाया जाता है।)

अरे! अरे! काली बदरिया घमड़ि जिन बरसा।
अरे बिनु छतवा हउवैं कवन राम उनही जिन भिजइहा।

(अब सबका नाम लेकर इसी प्रकार गाया जाता है।)

अब देवता के स्थान पर सभी परिछन करेंगे। गीत होगा –

परिछन चलैली बड़ी कामिनि हो बड़ी कामिनि,
हथवा मूसर अउरु पान।
टिकवा लगावा दादी दहिया लगाव, चउरा लगावा हो
पनिया से दिया जुड़वाय ... ।

सब महिलाएँ परिछेंगी और ऐसे ही गीत होंगे–

रघुबर क नैना रसीला परिछन कर लो आज।
केथुवा क दियना केथुवा केरी बाती ... ।
आरती उतारा दादी रानी हो परिछन कर लो आज।
सोने क दियना रूपे क हो बाती आरती उतारै दादी रानी हो।
परिछन कर लो आज ... ।

(इसी प्रकार सबको लगाकर गाया जाता है।)

जब सभी महिलाएँ परिछ लेती हैं, तब एक गीत होता है –

गइया क दूध बाबू हटिया बिकाला।
बजरिया बिकाला, अम्मा क दूध अनमोल।

इसके बाद माँ दूल्हे को अपने आँचल से ढँककर अपने दूध को दिखा देती है कि इस दूध के सम्मान की रक्षा करना। ऐसा कहते हैं सभी दूल्हे राम ही होते हैं। इसके बाद दही–गुर कराकर सभी देवताओं का नाम लेकर जय–जय कार करती हैं। अब बारात प्रस्थान करती है। महिलाएँ घर लौटतीं हैं और घर लौटते समय पाँच कंकड़ सूप में लेकर आती हैं। अब पहला गीत होता है –

उजरल नगर बसि जइहैं जवने नगरी ई दुलहा जइहैं।
जवने सड़किया पर घूर उड़त है मेस्तर झाड़ू लगइहैं।
जबने नगरी ई दुलहा जइहैं।
जवने पोखरवा में पानी नहीं है, पुरइन हालर दिहैं।
जबन नगरी ई दुलहा जइहैं।
जवनेहिं बउर नहिं अइहैं अमवा घवदि लेइ लिहैं।
जवन नगरी ई दुलहा जइहैं।

घर लौटकर महिलाएँ मूसर लेकर मण्डप में पाँच बार घूमती हैं। एक महिला आगे चलती है, दूसरी उसके पीछे मूसर सटाती है। मजाक चरम सीमा पर चलता है। गीत होता है –

हाट क ठिकरी बार कै धूर
ई धूर भरा कवन देयी के अमुक अंग।

बारात जाने के बाद यहाँ गाँव सूना हो जाता है। अधिकांश पुरुष बारात के साथ चले जाते हैं। महिलाएँ अकेली होती हैं। पूरी रात नाचती गाती हैं। नाना रूप बनाती हैं। पुलिस, चोर, डॉक्टर आदि बनती हैं। पुरुषों के वस्त्र धारण करती हैं। नाना प्रकार से नाचती गाती हैं। दउरी से ढँककर बैठती हैं और उस पर थप–थप पिटती हैं। अइघल महिला पीटती है। इसको 'दादर पीटना' कहते हैं। फूहड़–फूहड़ गीत गाती हैं। जिसका उल्लेख सम्भव नहीं है। अब महिलाएँ अपने मन की कुण्ठा छोड़ देती हैं। अकुण्ठ भाव से अपने मन का उच्छ्वास करती हैं। जीवन भर तो लजाती ही रहती हैं। अब उन्मुक्त आचरण करती हैं। इसको नकटवरे की रात कहते हैं। सुबह नकटवरे की पूड़ी बनती है। गाँव भर में बाँटा जाता है। कहीं–कहीं केवल दामाद के घर बाँटी जाती है। गीत है –

खाय ला हो नकटवरे का पूरी
जैइसन नकटवरे क पूरी ओइसन फलाने देयी क ... ।

(सभी मजाक के रिश्ते वाली महिलाएँ सबका नाम लेकर बनाती–खाती हैं और गारी देती हैं।)

इधर बारात कन्या पक्ष की ओर प्रस्थान करती है। बारात पहले तीन दिन तक कन्या पक्ष के यहाँ रहती थी और नाना अनुष्ठान होते थे। अब तो बारात एक रात ही रहती है, लेकिन उसी समय में सारे अनुष्ठान होते हैं। बारात कन्या पक्ष के घर के पास पहुँच कर कुछ दूर रहती है, जिसे जनवासा कहते हैं। अब तो विवाह-भवनों में ही विवाह का अनुष्ठान होता है। लड़की वाले उस भवन में एक तरफ रहते हैं, बाराती एक तरफ रहते हैं। उसी भवन के प्रांगण में बारात लगती है और मण्डप भी डेकोरेटर के द्वारा सजा रहता है। बारात आती है तो पुराने नियम के अनुसार जनवासे में रहती है। अब घराती बरातियों की अगवानी करते हैं। पहले तो हाथी-घोड़े दौड़ते थे। बैण्ड बाजा बजता था। अब हाथी-घोड़े के दौड़ने का रिवाज नहीं है, लेकिन बारातियों का स्वागत होता है। पहले बारात के स्वागत के बाद द्वार पूजा होती है। नाइन चौक पूरती है और उसके दोनों तरफ आसन लगाया जाता है। दोनों ओर कुछ मानिन्द घराती-बाराती बैठते हैं। दोनों तरफ के पण्डित नाना प्रकार का पूजन करते हैं। घड़े में पानी भरा जाता है। गणेश, गौरा और नवग्रह का पूजन होता है। दूल्हे को बुलाया जाता है। पिता या घर का कोई बड़ा आदमी हाथ पकड़कर वर को बैठाता है और वर का पूजन करता है। गौरजा टीकने से लेकर गोदान आदि का कार्यक्रम, मन्त्र पाठ होते हैं। बड़े जोश से बाजा भी बजता है। नये लड़के नाचते हैं। शेष बाराती नाश्ता करते हैं। अनुष्ठान में लगे लोग बाद में नाश्ता करते हैं। पूजन में सभी परजूनियों, ब्राह्मण आदि को उपहार दान दिया जाता है। यह विवाह पद्धति के अनुसार होता है। लेकिन लोक रीति भी महिलाओं द्वारा साथ-साथ चलती रहती है।

बारात के आते ही लड़की कहीं छिपकर दूल्हे के ऊपर अक्षत फेंककर चली जाती है। सारी महिलाएँ स्वागत गीत गाती हैं। ये गीत कई प्रकार के होते हैं। सज-धजकर महिलाएँ बारात के स्वागत के लिए एकत्रित रहती हैं। बड़ी प्रसन्नता, उल्लास एवं गीत के साथ स्वागत करती हैं। -

सबसे पहले एक देवी का गीत गाया जाता है। इसके बाद यह गीत होता है -

साँकरि खोरिया बटोरा कवन राम हथिया लेहलस पइसार।
किया हो दल उतरैला अम्मा इमिली तर
किया हो कदम जुड़ि छाँह।
नाहीं दल उतरैला अम्मा इमिली तर नाहिं कदम जुड़ि छाँह।
ईदल उतरैला बाबा हो कवन राम जेहि घर कन्या कुँवार।
ईदल उतरैला हो भइया कवन राम जेहि घर बहिना कुँवार।

(इसी प्रकार सभी रिश्तों को जोड़कर गाया जाता है।)

ऐसा बराती न देखों आज तक जिया करै धका धक... ।
केहू के आँख नाहीं केहू के कान नाहीं जिया ... ।
केहू के हाथ नहीं केहू के गोड़ नाहीं जिया ... ।

इसके बाद बन्दा-बन्दी गाया जाता है, जिसे आँगन जगाने के समय भी गाया जा चुका है। इसके बाद भी कई गीत-गारी आदि के रूप में गाये जाते हैं। गारी बारातियों के खाते समय गाया जाएगा।

द्वार पूजा के बाद बारात जनवासे में जाती है। यह पहले का रिवाज है। अब तो द्वार पूजा के बाद ही जयमाल का कार्यक्रम होता है। एक सजे मंच पर सजी-सजायी दुल्हन सहेलियों के साथ दो जयमाल लेकर आती है। मंच पर दुल्हन और दूल्हा आमने-सामने खड़े होते हैं। अब दोनों जयमाल लेकर बड़ी अदा से एक दूसरे को जयमाल डालते हैं। सभी लोग हर्षध्वनि करते हैं। दुल्हन और दूल्हे कुर्सी पर बैठ जाते हैं। लोग दोनों पक्ष के पीछे खड़े होकर आशीर्वाद देते हैं।

इसके उपरान्त बाराती जनवासे में चले जाते हैं। अब पण्डित, नाई और घरातियों के कुछ बुजुर्ग लोग आयस लेकर जाते हैं। आयस के समय नाई पूड़ी, चीनी, दही और पानी-पत्तल लेकर जाता है। दूल्हे और उसके साथ के छोटे बच्चों को खिलाता है। पण्डित लोटे में पानी भरकर कपड़े से ढँक कर कुछ मुद्रा के साथ वरपक्ष के मालिक के सामने खोलता है और विवाह तथा भोजन की आज्ञा माँगता है। फिर नाई वर के पिता या अभिभावक से चुनरी, शृँगार की सामग्री तथा वर के नहछुआ के बाद एकत्रित मेटे के जल को लेकर आता है, जिससे दुल्हन के नहछुआ-नहावन के समय पानी में मिलाया जाता है या उसके ऊपर छिड़का जाता है। जब वर का नहावन होता है तो नहाने के बाद उसकी शिखा को धोकर एक मेटे में पानी भर दिया जाता है, जिसे बारात के साथ ले जाया जाता है।

नाई सामान लेकर जाता है। अब लड़की के घर अनुष्ठान शुरू होता है। लड़के के घर की तरह पोखर खनने का अनुष्ठान होता है फिर जुआठ पर लड़की नहलायी जाती है। फिर वर पक्ष से प्राप्त वस्त्र और शृँगार के प्रसाधन चीज पहनाये जाती है। फिर नह काटा जाता है और गोड़ रंगा जाता है। फिर मण्डप में बैठकर 'इमिल घोटउवा' होता है। सारे गीत और नेग उसी प्रकार ही होते हैं जैसे दूल्हे के घर होते चुका होता है। बस वर के यहाँ बन्दा का सम्बोधन होता है यहाँ बन्दी का सम्बोधन होता है।

पहले वरनेति उठने पर विवाह का कार्यक्रम होता था। कुछ लोग विवाह हेतु मण्डप में बैठते थे और शेष लोग खाना खाते थे। मण्डप में बैठे लोग विवाह समाप्त होने के बाद खाना खाते थे। रात बीत जाने के कारण कुछ लोग दही-मीठा ही खाकर रह जाते थे। पहले बाराती खाते थे, फिर घराती खाते थे। अब ठेके के जमाने में और जयमाल के जमाने में सभी लोग पहले खा लेते हैं और फिर विवाह होता है। कारण कि जयमाल होते-होते बड़ी रात हो जाती है। पूरी रात शादी होती है। उसी रात सारा कार्यक्रम सम्पादित हो जाता है। बाराती खाने बैठते हैं तो सभी महिलाएँ स्वागत में गारी गाती हैं। गारी एक राग भी है और गारी भी है। आरम्भ में स्वागत में स्वराजी गारी गायी जाती है। बाद में महिलाएँ अकुण्ठ भाव से खाटी गारी देती हैं। प्राय: बारातियों का नाम लेकर और उनकी बहन को जोड़कर गारी दी जाती है। परन्तु सुनने वाले को अच्छी लगती हैं। जिनका नाम ले लिया जाता है, वह महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हो जाता है। वृन्द कवि ने इसीलिए कहा था 'फीकी पै नीकी लगै ज्यों विवाह की गारि।' कुछ गारियों में स्वागत और शिक्षा भी होती है फिर 'लिंग-भग नाम कृतै:' गालियाँ दी जाती हैं, किन्तु राग गारी की ही होती है। कबीर आदि ने भी गारी राग में अनेक पद लिखें थे। कुछ गारियाँ यहाँ प्रस्तुत की जा रही हैं -

नमस्ते नमस्ते पाहुन हमरा नमस्ते
बइठा पाहुन आसन मारी जी।
जाइ कहा ए पाहुन अपने माता जी से,
दिहैं चरखवा चलाई जी।
चरखा चलइहै सूत बदलिहैं,
होइ जइहैं खद्दर धारी जी।
जाई कहा ए पाहुन अपने चाची जी से,
लइकवन के दिहै पढ़ाई जी।
लड़िका पढ़िइहैं हेडमास्टर होइ जइहैं,
होइ जइहैं रउरी बड़ाई जी।
जाइ कहा ए पाहुन अपने बहिन जी से,
पराये मरदो से दिल ना लगाना जी।
दिल क लगाना प्रभु होइहैं बदनामी,
होइ जइहैं तोइरो हिनाइ जी।

× × ×

सीता लागी झरोखे सीता लागी झरोखे
सखिया सब पूछैं सखियाँ सब पूछैं
कवन हउवैं ससुरु तोहार जी।
जेकर माती हथिनियाँ जेकर माती हथिनियाँ,
उहै हउवैं ससुरु हमार जी।
सीता लागी ... ।
सखियाँ सब पूछैं सखियाँ सब पूछैं,
कवन हऊवैं प्रियतम तोहारजी।
जेकरे माथे मउरवा जेकरे माथे मउरवा,
उहै हउवैं स्वामी हमार जी।
सीता लागी ... ।
सखियाँ सब पूछैं सखियाँ सब पूछैं,
कवन हउवैं देवरू तोहार जी।
जेकरे माथे पै टीकवा जेकरे माथे पै टीकवा,
उहैं हउवैं देवरा हमार जी।
सीता लागी ... ।

× × ×

जेहि दिन राम जनक पुर अइलैं,
जेहि दिन राम जनक पुर अइलैं,
देखै लगलैं सारी दुनिया देखै लगलैं सारी दुनिया,
हाँ सीता राम से बनी।
मचियहिं बइठै ली सासु हो कवन देई,
सोने क आरती उतारैं कि हाँ सीता राम से बनी।
अचरन पाँव पखारैं कि हाँ सीता राम से बनी।
हाँ सीता राम से बनी।

× × ×

गलियाँ ही गलियाँ कान्हा बंसिया बजावैं,
केहू सखी चलबू नहाये हाँ सीता राम से बनी।
अपने महलिया से बोलैं रानी राधा,

हम कृष्ण चलबै नहाये हाँ सीता राम से बनी।
चीर छोड़ि राधा रखली किनरवाँ रखली किनरवाँ,
कृष्ण जी लेहलैं उठाई हाँ सीताराम से बनी।
हाथ जोड़ि बिनवैं प्यारी राधा
अरे कान्हा देइदा चीरिया हमारी,
हाँ सीताराम से बनी।
तोहरी ही चीर राधा तंबहीं हम देबै,
जब जल से होइ जा निराली हाँ सीताराम से बनी।
पुरइन पात पहिरि राधा निकरै,
कृष्ण बजावै ताली हाँ सीताराम से बनी।
गलिया ही गलिया ... ।

× × ×

बचपन क यादे बचपन क यादें,
बतावा कान्ह कहीं की नाहीं।
दुई बाप तोहरे दुई बाप तोहरे,
बतावा कान्ह कहीं कि नाहीं।
तोहरी माता जसोदा तोहरी माता जसोदा,
बेचत दान दही रे दही।
तोहरी बहिनी सुभद्रा तोहरी बहिनी सुभद्रा,
वेद अउर शास्त्र पढ़ी रे पढ़ी।
तोहरी चाची बेचन्द्रा तोहरी चाची बेचन्द्रा,
चंचल चाची नारी रही रे रही।

× × ×

राजा जनक अँगनवां सजा जनक अँगनवाँ,
जगमग ज्योति जली रे जली।
राम ब्याहन आये राम ब्याहन आये,
घूमि गये हैं गली रे गली।
जागी भाग्य सिया जागी भाग्य सिया,
राम की जोड़ी मिली रे मिली।
राजा जनक अँगनवाँ राजा जनक अँगनवाँ,
फुलवन कै खिली कली रे कली।
देखै अवध बरतिया देखै अवध बरतिया,
मिथिला क नारि चली रे चली।
बैठी रानी सुनयना बैठी रानी सुनयना,
मिथिला क नारि चली रे चली।

× × ×

राजा जनक जी परन एक ठनलैं,
धनुषा के देहलैं धराई हाँ सीताराम से बनी।
जे यही धनुषा के तोड़ि बहइहैं,
सीता मैं देब बिआही हाँ सीताराम से बनी।
एक से एक भूपति सब अइलैं धनुषा न पारै उठाई,
हाँ सीताराम से बनी।
राजा जनक जी मनही मन सोचैं,
सीता कुँवारी रहि जाई हाँ सीता राम से बनी।
केहू ना वीर देखाय ये ही जग में,
कइसे क धरम रहि जाई हाँ सीताराम से बनी।
कवन तकदीर बिधना लिखलै करमवाँ में,
राजा जनक पछिताई हाँ सीता राम से बनी।
उठलैं राम गुरु आज्ञा पाइके धनुषा तोरि बहाई,
हाँ सीताराम से बनी।
डाली सिया जयमाल गरे में सखियाँ सब मंगल गाई,
हाँ सीता राम से बनी।
सब सखियाँ मिथिलेश नगर क घर-घर खुशियाँ मनाई,
हाँ सीताराम से बनी।

इस प्रकार अधिकांश गारियाँ राम, जनक और सीता से जुड़ी हैं। तुलसीदास जी ने भी जनकपुर में गारी होने की बात कही है। यह पूरब की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। अधिकांश गारियों में 'सीता राम सेवनी' का टेक है। कुछ और गीत –

निहुरि निहुरि परोसैं ल कवन राम,
धोतिया धूमिल होइ जाइ हाँ सीता राम से बनी।

(इसी प्रकार बाबा, चाचा, भाई आदि को लगाकर गाया जाता है। यह उस समय की बात है, जब घर के लोग स्वयं परोसते थे। अब तो सब ठेके के लोग करते हैं।)

होत बिहान बेटी अंगना बहोरिहा,
जिन सुतिहाँ दिनवा उगानी जी।
सास ससुर क बेटी सेवा तू करिहां हो,
अवरु तू जेठ जेठानी जी।
पहिली ही रोटी बेटी सास के बोलइहा,
दूसरी में जेठ जेठानी जी।

तीसरी ही रोटी बेटी ननद के दिहा,
रखिया तू नइहरवाँ क मान जी।

(यह शिक्षा से सम्बन्धित गारी है।)

कइसे देहु ललन जी के गारी,
हाँ जी गारी है प्रेम पियारी।
कइसे देहु ... ।
उनकी माता जसोदा है रानी,
जिन निति मथै ली मघानी।
कइसे देहु ... (टेक)
उनकी बहिना सुभद्रा हैं रानी।
बिनु ब्याहन लइका बियानी
कइसे देहु ... ।

खाने के बाद विवाह के लिए बारात में बुलावा जाता है। इसके बाद ही 'बरनेति' आती है। वर नयति से बरनेति शब्द बना होगा। वर को ले जाना ही 'बरनेति' है। बाजा बजना आरम्भ होता है। बक्सों में विवाह की सामग्री लेकर बारात के लोग मण्डप में पहुँचते हैं। मण्डप में दो तरफ आसन लगा होता है। दो तरफ घराती और बराती बैठते हैं। दोनों तरफ के पण्डित आमने-सामने बैठ जाते हैं। नाई दोनों तरफ रहते हैं। आम का पीढ़ा भी रखा रहता है, जिस पर दूल्हा बैठता है। सबसे पहले दोनों तरफ के पण्डित मण्डप आदि को मन्त्र पढ़कर पानी पल्लव से छिड़क कर पवित्र करते हैं। लड़की का पिता भी बैठा रहता है। सबसे पहले लड़की नहावन के बाद बुलायी जाती है। ब्राह्मण कलश को छुआकर सोने का गहना और साड़ियाँ लड़की के हाथ से स्पर्श करके देता है। नई दऊरी में नाई ले जाकर कोहबर में ले जाकर रख देता है। अब विवाह का कार्यक्रम चलता है। ब्राह्मण की पद्धति के साथ महिलाओं की पद्धति चलती है। आरम्भ से ही गीत गाये जाते है। जब बारात आती है, तब महिलाएँ गाती हैं। -

किया बरितिया चलैले अठिलाई हो।
किया बरितिया चलैले रंग लाई हो।
नाहीं बरितिया चलैले अठिलाई हो
नाहीं बरितिया चलैले रंग लाई हो।
इहै बरितिया कवने राम दुवारे हो
इहै बरितिया जिनि घर बाटी कन्या कुँवारी हो।
बइठै लँ कबन समधी जाजिम बिछाई हो।
कोरवा दुलहे राम कचरैलऽ पान हो।
बइठै लँ कवन बाबा खरई बिछाई हो।
कोरवा हो कवन बेटी लट छिटकाई हो।
हँसि हँसि बिरवा थम्हावै ल दुलहे राम हो।
रूसे ली कवन देई बिरवो ना लेली हो।
तोहरै बिरवा प्रभु जब हम लेबै हो।
हमरे बाबा से दहेज नाहिं लेबा हो।

(घर में सभी रिश्तों को लगाकर गाया जाता है।)

तोहरे बाबा से दहेज नाहिं लेबै हो।
हमरी मयरिया के जबाब जिन दिहा हो।
तोहरे मयरिया क जवाब नाहीं देबै हो।
हमरे रहत बहिनियाँ जिन बलइहा हो।
तोहरे रहत धना बहिनी ना बलइबै हो।
हमरे रहत धना नइहर जिन जइहा जी।

इसके बाद लड़की का जेठ (भसुर) गुरेहेथा जाता है। ताग-पात डालता है। ब्राह्मण उसको संकल्प करवाते हैं। मन्त्र से पवित्र करते हैं। वह संकल्प के बाद माला रूप में ताग-पात डालता है और कुछ दक्षिणा दुल्हन के सिर पर रख देता है। यही उसका दुल्हन को अन्तिम स्पर्श होता है। यह कार्य दूल्हे का कोई बड़ा भाई ही करता है। महिलाएँ उस समय गीत गाती हैं।

आया आये भसुर जी ठट के
बैठो बैठो मण्डप जरा हट के।
तुम तो गहनों की रीति न जानो,
पुरानी रीति चलायो।

(इसी प्रकार कपड़ा और सभी गहनों का नाम लेकर गाया जाता है।)

आया भसुरसाला चोर हो
मड़वे के भीतर।
गहना जो लाया भसुर ओ भी मँगनी का आया ...
मोरी स्याम सुन्दर गौरी के निरेखै अइलै भसुर।
दही दिया लगाने को तो चाट बैठे भसुर।
चाटने को चाट लिया नाचने लगा भसुर।

अक्षत दीया लगाने को तो फाँक बैठा भसुर।
फाँकने को फाँक लिया नाचने लगा भसुर
मोरी स्याम ...
गहना दियो चढ़ाने को तो पहन बैठा भसुर।
पहनने को पहन लिया नाचने लगा भसुर।

(इसी तरह लहंगा आदि को लगा कर गाया जाता है।)

मँगनी क ताग पात मँगनी क भसुर।
छूछे हाथे जिन डलिहा ये लड़भसुर।

गहना और साड़ी देते समय महिलाएँ गाती हैं –

जरा टारच दिखाओ मैं डाल देखूँगी।
गहना होगा पुरान गारी दूँगी हजार।
समधी साले को मण्डप में बाँध रखूँगी।
कपड़ा होगा पुरान गारी दूँगी हजार
समधी साले को मण्डप में बाँध रखूँगी।

अब लड़की कोहबर में चली जाती है। अब दूल्हे को बुलाया जाता है। दूल्हा आता है। नाई जूता खोलता है। लड़की का पिता उसके पैर पर अक्षत छोड़ता है। पीढ़े पर पाँच जगह अक्षत रखा जाता है। दूल्हा और पिता पीढ़े को पकड़कर कलश को पाँच बार छूकर रखते हैं। इसके बाद कन्या का पिता वर के दोनों हाथ पकड़कर पीढ़े पर बैठाता है। फिर कन्या का पिता वर का पाँव धोता है। पीढ़े पर बैठते समय महिलाएँ गीत गाती हैं–

बइठत रहला उइयाँ भुँइयाँ पीढ़ा बइठे अइला
छक छउड़ा पूता।
आपन भाई देवै अइला छक छउड़ा पुत्ता।
बइठत रहला ओखरी–पोखरी मड़वा बइठै अइला
छक छउड़ा पूता।
आपन बहिना देवै अइला छक छउड़ा पूता।
बइठत रहला ईटा भीटा पीढ़ा बइठै–अइला।
आपन फुआ देवै अइला छक छउड़ा पूता।

इसके बाद लड़की बुलाई जाती है। माँ–बाप के आगे पत्तल पर बैठायी जाती है। अब ब्राह्मण लोग मन्त्र द्वारा कन्या दान की प्रक्रिया करते हैं। महिलाएँ गीत गाती हैं –

छोट मोट मड़वा ये बाबा साजन लोग बहुत।
काहू तू उनकर खइला ये बाबा काहूतू लेहला उधार।
केकरे करनवा ये बाबा छेकैं ल नग्र तोहार।
पनवा उनकर खइलीं ये बेटी फूलवा लेहली उधार।
तोहरे करनवा ये बेटी छेकै ल नग्र हमार।
पनवा उनकर फेरि दा ये बाबा फूलवा दा छिताय।
अपने सोनवा पियरिया ये बाबा कइ देहू धरम विवाह।

(परिवार के सभी लोगों का नाम लगाकर गाया जाता है।)

कवन गरहनवा बाबा साझे लगतु है हो।
कवन गरहनवा भिनुसार।
कवन गरहनवा बाबा तोहरे ऊपर लागैला।
कबहू ना उग्रह होय।
चन्द्र गरहनवा बेटी साझे लगतु है हो।
सूरुज गरहनवा भिनुसार।
तोहरै गरहनवा बेटी मोरे ऊपर लागैला।
कबहू ना उग्रह होय।
काँपैं ल लोटिया कापैं ले धोतिया हो
काँपैं ले कुसवा क डार।
मड़वे में काँपै ल बेटी क बाबा हो।
बेटी हो धरम तोहार।

(इसी तरह परिवार के सभी सम्बन्धों को जोड़कर गाया जाता है।)

इधर कन्यादान का कार्यक्रम होता है। दूल्हे के हाथ पर कन्या का हाथ रखकर पिता–माता कन्यादान करते हैं। इसके बाद गोदान आदि करके परजूनियों और ब्राह्मणों को दान देकर पिता व्रत भंग करने चले जाते है। कन्या स्थान बदलकर वर के दाहिने बैठती है। अभी बामांगी नहीं होती। अब घर के अन्य लोग जो कन्यादान व्रत रहते हैं, वे कन्यादान देते हैं। इसके बाद आगे का कार्यक्रम होता है।

इसके बाद दुल्हन–दूल्हे के आगे खड़ी हो जाती है। दुल्हन का हाथ नीचे और दूल्हे का ऊपर होता है। उसके हाथ में डाल मौनी होती है। कन्या का भाई वर पक्ष के गमछे में धान का लावा लेकर बाँस के चोंगे से कलश से छुवाकर बहन के हाथ की डाल में लावा डालता है और उसका कुछ भाग ब्राह्मण लेकर हवन अग्नि में डालता है। इस प्रकार साथ–साथ लाजाहुति भी होती है। वर पक्ष के साथ माटी, आम की लकड़ी और घी आता है। मिट्टी

की वेदी बनाकर उस पर आहुति होती है। उसी गिरे हुए लावे से बाद में सप्त वेदी बनती है। जिसे दुल्हन-दूल्हा अपने पैर से हर फेरे के साथ मिटाते चलते है। सात बार फेरे उसके बाद ही होते हैं। लावा परिछने के समय महिलाएँ गीत गाती हैं। लावा परिछने के बाद भाई लोटे के पानी से वर और कन्या के युग्म हाथ पर पतली धार से पानी गिराता है। उस समय भी महिलाओं के गीत होते हैं। ब्राह्मणों का मन्त्र पाठ भी साथ-साथ चलता रहता है।

नइहर लावा ससुर लावा एकै में मिलाय दे।
लावा परिछै चलैल दुलहिन देई क भाई।
लउवा परिछहु कवन भइया बहिना तुम्हारी।
अँगुठा मारिहु छिनारि पूता धनिया तुम्हारी।

(सभी भाइयों को लगाकर गाया जाता है।) पानी गिराते समय यह गीत होता है।

अरे अरे भइया कवन राम धरिया न टूटै।
धरिया ज टूटि फाटि जहहैं बहिनियाँ से हारि जइबा।
दिन भर लोढ़ला लोढ़वला त साँझि बेला बहिनियाँ कवन दुल्हे जीति लेहलैं।
जीति लेहलैं हीरा एस बहिनियाँ कवन दुलहे जीति लेहलैं।

इस बीच लाजाहुति होती रहती है। इसके बाद गोत्रोच्चार और सुमंगली होती है। दोनों ओर के पण्डित बड़े जोर-शोर से कई श्लोक गाकर तब गोत्रोच्चार करते हैं। गोत्रोच्चार में तीन पुश्त के पूर्वजों का नाम पितृ-पक्ष से मातृपक्ष तक लेकर कहते हैं- इति कन्या पक्षयो: प्रथम शाखोच्चार: और वर पक्ष से भी वर पक्षयो: प्रथम शाखोच्चार: इस प्रकार कन्या पक्ष से तीन और वर पक्ष से पाँच बार शाखोच्चार होता है। अब वर पक्ष का ब्राह्मण मन्त्र पढ़कर हवन करवाता है। वर और कन्या आहुति डालते हैं। हवन करते समय महिलाएँ वर पक्ष के पण्डित के लिए गारी गाती है।

पण्डित हाली हाली आऊ तू देहु उधियाव।
मोरी बारी चलत सुकुवारी त धुअँवा अकाशे जाय।
जैसे बाँसे क कइनियाँ वइसे पण्डित क बहिनिया।
सुनु बाम्हन रे ... ।
जइसे धोबिया क पाटा वइसे बभना क पीठ
सुनु बाभन रे ... ।

(इसी प्रकार कुछ जोड़कर गाया जाता है।)

इसके बाद दूल्हे को उत्तर दिशा में ध्रुव तारा देखने को कहा जाता है। मधुपर्क होंठ से लगाया जाता है। अब हवन के बाद दुल्हन-दूल्हा मण्डप में सात बार घूमते हैं। फिर सात लावा से बनी कूरी को पैर से मिटा देते हैं। सात फेरे होने के बाद दूल्हे को कन्या पक्ष से पीली धोती दी जाती है। अब तो कन्धे पर ही लोग रख लेते हैं। पहले दूल्हा मण्डप में ही धोती पहनता था और उसके पहनने के बाद ही सिन्दूर दान होता था। अब तो पहनते नहीं क्योंकि सूट पहनने की रस्म है।

इसके बाद दुल्हन के सामने आकर चादर से ढँककर दूल्हा-दुल्हन की माँग में सिन्दूर लगाता है। इस समय गीत होता है।

पहिला घूमर हम घूमिला अपने बाबा जी क।
दूसरा ... अपने पापा जीक।
तीसरा ... अपने चाचा जी क।
चौथा ... अपने मइया जी क।
पँचवाँ घूमर हम घूमिला अपने जीजा जी क।
छठवाँ घूमर ... फूफा जी क।
सतवाँ घूमर हम घूमिला अपने स्वामी जी क।
दहिने बगल जब रहली त अपने बाबा जी क।
बायें बगल जब भइली त अपने स्वामी जी क।

इसके बाद सिन्दूर दान का गान होता है -

हुए जब नाथ तुम मेरे तो नारी मैं तुम्हारी हूँ।
भरो अब मांग में सिन्दूर सोहागिन बन के आयी हूँ।
सुनो ससुरु सुनो भसुरु अरज तुमसे हमारी है।
हमारे पुत्रवती कन्या को सजन जी का आसरा देना।
बड़ी ये भोली भाली है बड़ी नादान लड़की है।

इसे लड़की समझ करके इसकी गलती को माफ कर देना।

सुन्दर वर हो सिन्दूर धीरे से डाला।
अगल बगल मेरे बाबा खड़े है, पापा खड़े हैं।
सामने खड़े हैं सारे सजना।
सुन्दर वर हो ... ।

समने चाचा, भइया सब खड़े हैं।
सुन्दर वर हो ... ।
× × ×

बाबा ही बाबा पुकारी ला बाबा ना बेलैलऽ
बाबा ही के बरियइया सेन्दूर बर डालैलऽ
पापा ही पापा पुकारी ला पापा ना बोलैलऽ।
पापा ही के बरियइया सेन्दूर बर डालैलऽ।

(ऐसे ही सभी सम्बन्धों पर लगाकर गाते हैं।)

इसके बाद दुल्हन वर के बायें बैठती है। दूल्हे का पिता पूजा के लिए पहले सिन्दूर निकाल लेता है। सिर पर वस्त्र रखकर पूरब की ओर मुँह कर लेते है। दूल्हा घर से लाये सन से ही सिन्दूर लगाता है। सिन्दूर लगाने के बाद कन्या की बड़ी बहन या बुआ सिन्दूर सुधार करती हैं। वर पक्ष से उसे साड़ी आदि उपहार में दिया जाता है। सिन्दूर सुधार के बाद वर-वधू का चूमावन होता है। इस समय महिलाएँ वर के साथ बहुत मजाक करती हैं और चूमते समय ढकेलने लगती हैं। बहुत प्रकार का आनन्द करती हैं। पत्थर का पूजन करवाती हैं। दीया-बाती मिलवाती हैं। अब चूमावन के गीत होते हैं-

चूमायला हो दुलहा धीरे-धीरे।
चूमैं जे चलैली सरहज सोहागिन।
बजावत बिछुवा हो धीरे-धीरे।
चूमै जे चलैली साली सोहागिन।
खनकावत कँगना हो धीरे-धीरे।

(इसी प्रकार सभी को लगाकर गाया जाता है।)

चौके पर बइठै दुलहा दुलहिन शिवशंकर हे रघुनन्दन हे।
चूमै जे चलैली सरहज सोहागिन ... ।
मथवा चूमिय चूमिय देहु असीस शिवशंकर हे रघुनन्दन हे।

(इसी तरह साली, सहेली, मामी आदि को लगाकर गाया जाता है।)

इसके बाद दूल्हा-दुल्हन कोहबर में जाते हैं। सालियाँ और सरहज द्वार छेंकती हैं और दुआर पढ़ने के लिए कहती हैं। नेग लेने के बाद घर में जाने देती है। सालियाँ नेग लेने के बाद ही चुराया हुआ जूता देती हैं। जाते समय गीत होते हैं -

हलबल हलबल दुलहा चलैं हरवाहे क जनमल हो।
धीरे-धीरे मोरी बारी चलैं रनिवासे क जनमल हो।

इसके बाद घर में जाने पर सास मौर छोड़ती हैं और नेग देती है। इसके बाद दही गुर कराया जाता है और गारी दी जाती है-

खाओ खाओ दुलहे बाबू गुर-दही।
तुहरी माई मरावैलीं खोरी खोरी।

(इसी प्रकार सबको लगाकर फूहड़ से फूहड़ गीत होते हैं।)

अब विवाह का मूल कार्य समाप्त होता है। इधर मण्डप कार्य समाप्त होने के बाद ब्राह्मण, पुरोहित, गुरु और परजूनियों का पावना दिया जाता है। दोनों ओर के ब्राह्मण-ब्राह्मणी को वरणी दी जाती है। फिर परजूनियों आदि को साड़ी आदि की विदाई दी जाती है। पुरोहित को भी साड़ी दी जाती है। सिन्दूर दान के पूर्व दुल्हन को लाने के लिए नाइन को एक साड़ी का सेट दिया जा चुका होता है। उसके अलावा भी नाइन को दिया जाता है। पीढ़ा देने वाले लोहार को भी विदाई दी जाती है। अब तक कुछ लोग ही रह जाते हैं। पूरी रात जागरण होता है।

इसके बाद दूल्हे को खिलायी जाती है। उसके साथ चार कुँवारे लड़के बैठते हैं। दूल्हा जल्दी खाता नहीं है। बहुत मनाया जाता है। वर पक्ष से कोई एक व्यक्ति निर्धारित होता है, जब तक वह नहीं कहता, दूल्हा नहीं खाता। महिलाएँ भी गीत में अनुनय करती हैं।

खीर खालो जसोदा के बारे लला खीर खा लो।
घड़िया माँगो तो घड़ियाँ देंगे
घड़िया के बदले अपने माई को देना खीर खा लो।

(इसी प्रकार सब सामान का जिक्र करके बहन, बुआ आदि या मनाती हैं।)

कइसे देहु ललन जी के जारी

पहले जब बारात तीन दिन रहती थी तो खिचड़ी से पहले समधी भात खाकर कन्या पक्ष को अपने समान करता था और नेग लेता था। अब एक दिन की बारात में वह परम्परा लुप्त-प्राय है। समधी के भात खाते समय महिलाएँ गारी गाती थीं-

समधी समझो गरीबी हमरे गरीबी क ध्यान धरो जी।
तोहरे कोठा अटारी तोहरे कोठा अटारी,
हमरे मड़इया क ध्यान धरो।
तोहरे हाथी से घोड़ा तोहरे हाथी से घोड़ा,
हमरे बैलवा क ध्यान धरो।
तोहरे सोने क थाली तोहरे सोने क थाली
हमरे गेडु वउवा क ध्यान धरो।

खिचड़ी खाने के बाद दूल्हा बाहर ही रहता है। अब पुनः दुल्हन मण्डप में आती है। समधी मण्डप में आता है और उसको साड़ी से ढँककर माथे पर आशीर्वाद देता है। इसके बाद समधी चला जाता है। अब दूल्हे को मण्डप में बुलाया जाता है, फिर दुल्हन आती है। थाली में पीला चावल रहता है उसमें सोने की अँगूठी डाली जाती है। उसमें से खोजने का काम होता है जो पहले पा जाता, वही जीतता है। फिर इसके बाद दुल्हन की अंगुलि से दूल्हे को और दूल्हे की अंगुलि से दुलहन को दही-गुर कराया जाता है। जब यह कार्य सम्पन्न होता है, दूल्हा-दुल्हन मण्डप में ही रहते हैं। घर और गाँव की सभी औरतें उपहार देती हैं। इसके बाद दूल्हा चला जाता है। दुल्हन की विदाई होती है। गीत होता है-

जब हो कवन राम निकालै आपन धियारिया।
अरे साजन लोग रहै ल मुरझाई।
का तूही समधी रहैला मुरझाई जी।
हमरी बिटिअवा समधी रखिया आपन बनायी जी।

लड़की रोती हुई विदा हो जाती है। वातावरण बड़ा करुण व मार्मिक हो जाता है। पूरा घर सूना हो जाता है। पहले लड़कियों को विराग करके रूदन करना सिखाया जाता था। भोजपुरी में लड़कियों का रूदन एक साहित्य ही होता है। अब बड़ी उम्र में लड़कियों की विदाई होती है। रूदन तो बड़ा गहरा होता है, पर वह विराग नहीं होता। पहले विदाई के समय लड़कियाँ सभी सम्बन्धियों का नाम लेकर विराग पूर्वक क्रन्दन करती जाती थी। पूरा गाँव रो पड़ता था। इसी प्रकार चीत्कार पूर्ण विराग होता है। माँ, पिता और भाई भी चित्कार करके रोते हैं। कहा गया है कि शकुन्तला के विदा होने पर कण्व ऋषि का भी कलेजा फटने लगता है। भोजपुरी में इस वेदना का वर्णन इस प्रकार है -

बाबा के रोवले गंगा बढ़िअइली।
माई के रोवले अनोर,
भइया के रोवले धोती तन भिजलीं।

इस प्रकार की वेदना में लड़की विदा हो जाती है। इधर मण्डप हिलाने का काम होता है। समधी मण्डप का बन्धन तोड़कर बाँस को हिला देता है और नेग पाता है। इसके बाद मिलने का काम होता है। अन्त में अक्षत पीढ़ा दिया जाता है। यही बारात की अन्तिम विदाई होती है। हल्दी से रंगा चावल भी दिया जाता है। अब कुछ दूर तक घराती बारातियों को छोड़ने जाते हैं। सम्मान के साथ बारात विदा होती है।

अब लड़की मायका छोड़कर ससुराल के लिए प्रस्थान करती है। अब सारा अनुष्ठान ससुराल पहुँचने पर होता है। एक लड़की पत्नी बनकर पति के साथ ससुराल पहुँच चुकी है। अब दूल्हे की माँ परिछन करने आती है। वर हाथ में दही की हांडी और वधू हाथ में सिन्दूर लेकर उतरती है। सास को दुल्हन बहुआवर यानी मायके की दी हुई साड़ी आदि देती है, जिसे पहनकर माँ या अइघी महिला दुल्हन-दूल्हे को उतारती हैं। अब वह महिला धार देती है। सिन्दूर से माँग टिकती है और परिछन करती है। इधर महिलाएँ देवी के गीत गाती हैं, फिर अन्य गीत गाती हैं। अब दूल्हा आगे-आगे चलता है और दुल्हन पीछे-पीछे चलती है। चलते समय उनका पैर दउरी और परात में पड़ता चलता है। अब गीत इस प्रकार है -

बेटा केथुवा क कइला व्यापार
कि बहुबा लेइके घरे अइला
बाबा सेनुरा क कइलीं व्यापार
बहुववा लेइके धरे अइली।

(अब कपड़ा, गहना आदि का उल्लेख करते हुए गीत होता है।)

सुनो भाभी पउवाँ धीरे से डालो।
अगले बगले तेरे ससुरु खड़े हैं।
समने खड़े हैं तेरे सजना।
सुनो भाभी ... ।
× × ×

धनवा क मेढ़ि धइले अइया न हो,

धन आगर होइहा न हो।
जउवा क मेढ़ि धइले अइहा न हो,
जवा आगर होइहा न हो।
सरसो क मेढ़ि धइले अइहा न हो,
तू छटपट होइहा न हो।

अन्त में कोहबर में बैठने पर दही गुर होगा। फिर सभी लोग दुल्हन का मुँह देखकर उपहार देंगे। इसके बाद सबके चले जाने पर मूँज की चटाई पर बैठाकर पाँच बार पूड़ी-खीर चटाई जाती है। थोड़ा-थोड़ा टूँग कर खीर थाली में दुल्हन रख देती है। उसे नाइन ले जाती है। घर में जो खाना बना रहता है, उसे दुल्हन हाथ से छूती है।

अब इसके बाद लड़की के घर और दूल्हे के घर साइत के अनुसार कंकन छूटने का अनुष्ठान होता है। दोनों ओर सारा अनुष्ठान एक ही तरह होता है। दऊरी में मउर और मउरी रखकर महिलाएँ गाती हुई सभी देवताओं के यहाँ घूमती हैं। पण्डित सब जगह हवन करते हैं। महिलाओं के साथ दूल्हा घूमता है और अइघल महिला घूमती है। लड़की के तरफ केवल अइघल महिला सभी महिलाओं के साथ घूमती है। अब नकटा के गीत होते हैं। -

कोहबर अवध बिहारी दिठई माफ करा हमार।
हम हुई सिया जी क सखिया सहेली,
लागी साली सरहज तोहारी।
ढिठई माफ करा हमार।
दुआर छेकाई नेग कुछ दिहा अब लिहा निकार,
ढिठाई माफ करा हमार।
नाहीं त सिया सिर पाँव धरिहा बनि के प्रेम पुजारी,
दिठाई माफ करा हमार।

× × ×

ओरहन मिलै हर जुनिया कान्हा तोहरी टूटै न बनिया।
केहू कहै मोर दूध चुराये केहू कहै ले गइलै दुहड़िया।
कान्हा तोहरी टूटै न बनिया।
केहू सखी कहै मोर दही चुराये केहू कहै ले गइलै मथनिया।
कान्हा तोहरी टूटै न बनिया।
केहू सखी कहै मोरी चीर चुराये केहू।
कहै ले गइले ओढ़नियाँ।
तोहरी कान्हा टूटै न बनिया।

× × ×

हमरे घरवाँ काम हमैं जाये दा मुरारी।
कलई मोरी पकड़ला चूड़ी मोर तोड़ला।
कइला परेशान हमे जीये दा मुरारी।
साड़ी मोर फड़ला चोली बन्दा तोड़ला।
कइला बदनाम हमे जाये दा मुरारी।
दही मोर खइला मकुट सिर फोड़ला।
कइला बड़ा नुकसान जाये दा मुरारी।

× × ×

ना माने हमरा कहनवाँ निडर जसुदा क ललनवाँ।
साँझ सबेरे हर दम घुमै बइठे बीच अँगनवाँ।
निडर जसुदा क ललनवाँ।
चला सखी ओरहन देइ आईं नन्द जसोदा भवनवाँ।
निडर जसुदा क ललनवाँ।
दही मोरा खयिलैं मकुट सिर फोड़लऽ।
तोड़लऽ माखन क बरतनवाँ निडर जसुदा क ललनवाँ।
माता जसोदा ओरहन न लिहैं न डटिहैं आपन ललनवाँ।
निडर जसुदा क ललनवाँ।

× × ×

बलमु मोर गजरा ले गयो चुराई।
कोठा मैं खोजों अटारी मैं खोजों,
बलमु मोर जियरा तोहीं पै सोधाय हो
बलम, मोर जियरा ... ।
सास नहीं लिन्हा ननद नहीं लिन्हा,
बलमु मोर जियरा तोहीं पै सोधाय हो।
बलमु मोर जियरा ... ।
जवने सउतिनिया को दियो मोर गजरा
बलमु ओके देसवाँ देबो निकार
बलमु ओके ... ।
भरली कचहरी मुकदमा लड़बों
बलयु तोर पगिया देवो उतार
बलमु तोर ... ।

कँगना के बदले कंगन धन देबों
घना मोर बतिया देहु बिसारि
धना मोर बतिया ... ।
× × ×

होखे न पावे सखी सन्ध्या बलमु भँवरा बनके आय गयो रे।
बागों गयी थी कलिया चूनन को
चुनने न पायी चार कलियाँ
बलमु भौंरा ... ।
कुँवनो गयी थी पनिया भरन को।
भरने न पायी चार घड़ियाँ
बलमु भौंरा ... ।
तालों गयी थी कपड़ा धुलन को
धुलने न पाई चार कपड़ा।
बलमु धोबिया बनिके आय गयो रे।
महलों गयी थी सेज लगन को।
सोने न पाई चार घड़ियाँ ...
बलमु रजवा बनके आय गयो रे।

इसी प्रकार अनेक गीत गाये जाते हैं। इसके बाद सभी लोग घर लौटते हैं। घर पर सत्यनारायण की कथा होती है।

आँगन बेदिया लिपाई ला तुलसी लगाई ला हो।
अरे जऊ मोंहि जनतो सत्यनरायन बाबा आँगन मोरे अइबा न हो।
ऊँची ऊँची बेदिया पटवतों चउकिया
सजवतो मंगन किछु मँगतो न हो।
सोनवा माँगी ला हरदी एस चनियाँ दही एस हो।
बाबा पूतवा त माँगी नरियर एस धियवा लवंग एस।
का करबू सोनवा हरदी एस चनिया दही एस।
का करबू पूतवा नरियर एस धियवा लवंग एस।
सोनवा त माँगीला हो धन खातिन चनियाँ त पहिरै खातिन न हो।
बाबा पूतवा त माँगी बेलसै खातिन धियवा धरम खातिन न हो।
सोनवा त दिहलैं हरदी एस चनियाँ त दही एस न हो।
बाबा पूतवा त देहलैं नरियर एस धियवा लवंग एस न हो।

इसके बाद हवन होता है–

चन्दन काठ केरी लकड़िया कपूर घीव बासल।
होमवा होला काली मइया चउरवाँ,
देवता सब मोहैं।

(अब सभी देवताओं को लगाकर इसी प्रकार गाया जाता है।)

चन्दन काठ केरी लकड़िया कपूर घीव बासल
होमवा होला कवन राम दुवरवाँ
देवता सब मोहैं।

(घर में सबका नाम लेकर इसी प्रकार गाया जाएगा।)

आम के लकड़िया बिना होमओ ना होला।
घीव बिना होमओ ना होला।
अरे पूत बिना सोहरो ना होला।
धिया बिनु धरमों ना होई।

इसके बाद दमाद और पउनी परजूनियाँ खाना खाते हैं। बड़ा उत्सव होता है। पहले कंकन छूटने के बाद ही दाम्पत्य जीवन की शुरुआत होती थी। प्रायः बारात लौटने के दिन ही कंकन छूट जाता है। मूलतः शादी का अनुष्ठान खत्म हो जाता है। लड़की पक्ष में उदासी रहती है और वर पक्ष में दुल्हन आने का उत्साह रहता है। धीरे–धीरे लड़की वर के घर को अपना घर समझ लेती है। फिर भी मायके के प्रति आसक्ति बनी रहती है। जोगी के रूप में जिस भाई को आने की बात कह आयी थी, उसकी प्रतीक्षा करती रहती है। विवाह के बाद लड़की के घर से चउथ जाती है। लड़की से मिलने का बहाना भी होता है। वर का पानी जिस मेटे में जाता है, उसमें लड्डू भरकर चउथ के साथ भेजा जाता है। उसके साथ ढेर सारी मिठाइयाँ जाती हैं। पियरी धोती भी जाती है। वहाँ जाने पर मिठाइयों का बैना कई गाँव में बाँटा जाता है। पहले लोग चार दिन रहते थे। उन्हें 'चउथिहार' कहा जाता था। प्रत्येक दिन भिन्न–भिन्न भोजन कराया जाता था। अन्तिम रात को कढ़ी–भात, बरा–दही, उड़द की दाल आदि खिलाया जाता था। इसे 'खेदुआ–लबेदुआ' कहते थे। चौथे दिन दोपहर को पूड़ी, चाउर खिलाकर विदा किया जाता था। दुल्हन से छोटे बच्चों को कपड़े आदि विदाई में दिया जाता था। बाँहगीं ले जाने वाले कहारों को भी विदाई दी जाती थी। इस प्रकार मायके से जाने वाले सभी लोग लड़की से भेंट करते थे और कुशल–क्षेम लेते थे।

बज्जिकांचल के वैवाहिक लोकाचार

डॉ. ब्रजनन्दन वर्मा

वैदिक साहित्य में भी वैवाहिक परम्पराओं के लोकगीतों का उल्लेख मिलता है। यह परम्परा बहुत ही पुरानी है, इसकी गाथा वाल्मीकि रामायण और महाभारत में भी दिखाई पड़ती है। चाहे कृष्ण का जन्मोत्सव हो या राम जन्मोत्सव सभी अवसरों पर लोकगीत गाने की परम्परा रही है। चाहे कोई भी वैवाहिक कार्यक्रम हो, उसमें भी लोकगीत गाने की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। इसके संरक्षण में महिलाओं का विशेष योगदान रहा है। किसी भी देश या प्रदेश की सभ्यता और संस्कृति को समझने के लिए वहाँ के संस्कार गीतों का अवलोकन करना आवश्यक है। यह गीत आधुनिक गीतों से बिल्कुल भिन्न होते है। गाँव के अनपढ़ कवियों के मन में जो भाव उत्पन्न होते हैं, उसी को गीतों के रूप में वह अपनी टूटी-फूटी भाषा में गाने लगते हैं। वही गीत लोकगीतों का रूप धारण कर लेता है। लोक परम्पराओं में गीतों में भाषा और अलंकार के वो भिन्न शब्द नहीं होते है। यह सीधे लोक जीवन से जुड़ा होता है।

ऐसे तो बज्जिकांचल की धरती पर अनेक लोक परम्पराएँ बिखरी पड़ी है, यहाँ वैवाहिक परम्पराओं, रीतियों और लोकाचार से जुड़े लोकगीतों पर केन्द्रित अर्थात् विवाह से पूर्व, विवाह के समय और बाद में रीति-रिवाज देखने को मिलते है। उन सन्दर्भों पर गीत गाये जाते हैं। आज इन गीतों को गाने वालों की संख्या काफी कम रह गयी है। जो इस भाषा के जानकार नहीं है, उनके लिए तो और भी कठिन कार्य है।

मानव जीवन में मुख्य रूप से सोलह संस्कार आते है। इन सभी संस्कारों का महत्त्व भी अलग-अलग है। भारतीय शास्त्रों के अनुसार भी प्रत्येक व्यक्ति का जीवन कुल सोलह संस्कारों से होकर गुजरता है, जैसे- गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातिकर्म,

नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकरण, कर्णभेदन, विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत, समावर्त्तन, विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास और अंत्येष्टि।

प्रत्येक मनुष्य का जीवन मुख्य रूप से इन्हीं संस्कारों से होकर गुजरता हैं, इसमें से तीन संस्कार जीवन के पूर्व में होते हैं, बाकी सभी संस्कार जीवन काल में ही सम्पन्न होता है। किन्तु एक संस्कार 'अत्येष्टि' मरने के बाद होता है। आज हमारा परिवेश इतना बदल गया है कि कई संस्कारों के बारे में हम लोग अनभिज्ञ होते जा रहे है। लोग आज मुख्य रूप से तीन ही संस्कारों के बारे में जानते-समझते है, जैसे-जन्म, विवाह, अंत्येष्टि। जन्मोत्सव के अवसर पर महिलाएँ छठी पूजती हैं और मांगलिक गीतों को गाती हैं। जब लड़का और लड़की बड़े हो जाते है तो हर्षोल्लास के साथ उनके विवाह संस्कार किये जाते है। इस संस्कार का महत्त्व अन्य सभी संस्कारों से काफी बड़ा है। इस अवसर पर अनेक प्रकार की विधियाँ, रीति-रिवाज होते है। इसमें दूल्हा और दुलहिन मुख्य केन्द्र होते हैं।

समाजशास्त्र के अनुसार विवाह कई प्रकार से होते हैं। सर्वमान्य दो ही प्रकार से विवाह सम्पन्न होने का प्रचलन मिलता है- शिव विवाह और राम विवाह। परन्तु इन दोनों में राम विवाह सर्वोपरि और सर्वमान्य समाज में अधिक प्रचलित हैं। इन्हीं के आदर्शों को ध्यान में रखकर विभिन्न प्रकार के गीत इस अवसर पर गाये जाते हैं। इसकी परम्परा भी काफी पुरानी है।

लड़का हो या लड़की दोनों के विवाह संस्कार के अवसर पर निम्नांकित उपकरणों की आवश्यकता होती हैं। जैसे-आम का पल्लों, ओखली और मूसल, पालो, पत्थर का लोढ़ा-सिलौत, कलश, रूप, चमेली (दौड़ा), मथनी, बेदी, आम की लकड़ी (हवन के लिए) मण्डप, बाँस, रस्सी, परिहत, गाय का गोबर, गाय का दूध, जौ, तिल, पान, कसइली, लाल धागा, लाल-धान, धान का लाबा, घी, हल्दी, दूब, आबा चावल, रोली, चन्दन, सरसों, जमाईन, रूई, नारा-चोटी, लकड़ी की पाँच कंघी, घरपुरिया फूल-माला, भकरा सेन्दूर, लकड़ी का पीढ़ा, दो घड़े, चौमुख, मिट्टी का बना हाथी, नवग्रह के लिए लकड़ी, धूप इत्यादि।

बज्जिकांचल क्षेत्र में विवाह के समय, विवाह से पूर्व और विवाह के बाद अनेक प्रकार के विधि-विधान और पौराणिक परम्पराओं से गुजरना पड़ता है।

विवाह से पूर्व की परम्परा

शकुन उठाने की परम्परा, छेका करने की परम्परा, परीक्षण, आम-महुआ का विवाह, पानी काटने की परम्परा, लावा भूजाई, शील बोहाई, देवी-देवताओं की पूजा/अर्चना, मड़वा बन्हाई, कुमरपत का विध, घी ढारी, गौरी-गणेश की पूजा, तिलक, धनवही, नहद्दू, हल्दी चढ़ाने का विध, नहनौत, विलौकी, सतवन करने का विध, द्वार पूजा, धूरधक, कन्या निरीक्षण, गेठबन्धन, भांवर-घुमाई, आन्ही-पानी न्योतने की परम्परा, कोरंजा घुमाई, मटकोर, जोड़ा पेन्हाई, इमली घोटाई, कन्यादान, लाबा घितराने का विध और गलसेकी।

विवाह का विध - सेन्दूर दान।

विवाह के बाद का विध

कोहबर लिखाई, कोहबर, भतमान (मण्डप पर भात) खिलाने का रिवाज, मझका, समधी मिलन, मण्डप का बन्धन खोलने का विध, कोहबर छेकाई, घर भरावन का विध, मथ वन्ही, विदाई, चौठारी (बसगरी) इत्यादि।

इन परम्पराओं के अतिरिक्त अन्य कई प्रकार की परम्पराएँ स्थान विशेष और समयानुसार होते रहते है। इनके परिदृश्य काफी लुभावने होते है। इसके अतिरिक्त कई प्रकार के विध ऐसे होते है जो हास्य-परिहास के लिए किये जाते हैं।

बज्जिकांचल क्षेत्र में जब बारात लड़की के दरवाजे पर आती है तो सर्वप्रथम पंडित द्वारा मंगल मंत्रोचारण किया जाता है विभिन्न प्रकार के बाजे दरवाजे पर बजते है। लोग खुशी से झूम उठते है, लड़की पक्ष वाले लोग बारातियों का स्वागत मालार्पण से करते है। लड़का जब आँगन में आता है तो उसे आँगन में बैठाकर पान के पत्ते और लोढ़ा से परछन किया जाता है फिर लड़की के भाई द्वारा गर्दन में गमछा डालकर मण्डप के चारों ओर परिक्रमा कराई जाती हैं जिसे भांवर 'घुमाई' कहा जाता है। उसके बाद आठ आदमी मिलकर लठगर कूटते हैं, जिसमें लड़के समेत कन्यापक्ष के आठ पुरुष भाग लेते है, ये सभी एक साथ ओखल में मूसल से धान कूटते है। उसी धान के चावल से लड़का-लड़की दोनों के हाथ में आम के पल्लों से कंगन बनाकर मंत्रोचारण के साथ पंडित जी द्वारा लड़के के दायें हाथ और लड़की के बायें हाथ में बाँधा जाता है। शादी से पूर्व आम-महुआ के पेड़ों को

ब्याह कराने की एक परम्परा है। वधू उससे गले मिलकर, आजीवन सौभाग्यवती रहने का आशीर्वाद प्राप्त करती है। मटकारे की रात में पानी काटने का एक विध होता है। सभी महिलाएँ भोर में सूर्योदय से पहले कुआँ पर जाकर चाकू से पानी काटती हैं फिर घर आकर दिन में धान का लाबा भूंजने का विध करती हैं। इसमें पाँच औरतें बैठकर गीत गाती हैं। इसके बाद शील बोहने की भी परम्परा है। गाँव-घर के देवी-देवताओं की पूजा की जाती है ताकि शादी सही ढंग से सम्पन्न हो सके। विधकानी द्वारा मंगल मंत्रोचारण के साथ ही ढारी का रस्म सम्पन्न होता है। लड़की की शादी में आँगन में बाँस-रखकर मण्डप तैयार किया जाता है, उसी मण्डप के बगल में वेदी बनायी जाती है, जहाँ कन्यादान के बाद सिन्दूर दान का विध सम्पन्न होता है। मण्डप पर शादी से पूर्व गौरी-गणेश की पूजा-अर्चना की जाती है, वहाँ पर लड़का-लड़की दोनों की नहछू 'अर्थात्' नख काटने की रस्म अदा की जाती है। वहीं पर लड़की को या लड़के को हल्दी चढ़ाने का विध होता है। घर के सभी बड़े शादीशुदा लोग हल्दी चढ़ाते हैं। उसी समय लड़की का मामा अपनी बहन को इमली घोटाता है। फिर धोबिन और सुहागन औरतें अपने आँचल से साड़ी का धागा निकाल कर लड़की को देती हैं, लड़के का बड़ा भाई मण्डप पर लड़की को जेवर इत्यादि के साथ साड़ी प्रदान करता है। जिसे कन्या निरीक्षण कहा जाता है। कन्यादान सिन्दूर दान होता है, फिर लड़का-लड़की को कोहबर-घर में भेज दिया जाता है। यह स्थान वर-वधू के लिए पहला मिलन स्थल होता है, जहाँ दोनों विश्राम करते है। उस दिन से दोनों का ब्रह्मचर्य जीवन समाप्त हो जाता है और गृहस्थ जीवन का शुभारम्भ होता है। कोहबर घर को मांगलिक प्रतिमाओं द्वारा काममूलक चित्रों से सजाया जाता है। वात्स्यायन ने इसे 'कामकला गृह' की संज्ञा दी है। बिना कोहबर किये विवाह पूर्ण नहीं माना जाता है। दूसरे दिन मण्डप पर विभिन्न प्रकार के व्यंजनों से सुसज्जित वर पक्ष वालों को यहाँ पर भात खिलाने की परम्परा है। इसके तहत उन लोगों को भोजन कराया जाता है। इसके बाद लड़की का मथबन्ही आदि कई रस्म यहाँ पर सम्पन्न किया जाता है। फिर मझका होता है इसके बाद लड़की के पिता और लड़के के पिता गले मिलते हैं ,जिसे समधी मिलन कहा जाता है। लड़की वाले अपनी इच्छानुसार विदाई देते हैं। इसके बाद लड़की की विदाई कर दी जाती है।

बज्जिकांचल में जहाँ से बारात आती है, उस स्थान को अयोध्या से सम्बोधित करते हैं और जिस स्थान पर बारात ठहरती है उसे जनकपुरी से सम्बोधित करते हैं। यहाँ की स्त्रियाँ जो गीत गाती हैं उसमें लड़के के पिता को राजा दशरथ और कन्या के पिता को राजा जनक कहकर सम्बोधित किया जाता है। बज्जिकांचल की संस्कृति में लड़की की शादी का गीत इन्हीं को सम्बोधित करके आज भी गाया जाता है। कहीं-कहीं पर पार्वती-शिव को भी सम्बोधित करके गीत गाने की परम्परा चली आ रही है। शिव और पार्वती का विवाह बेमेल विवाह की ओर इशारा करता है जैसे -

एहन बउरहबा बर से गउरीन बिआहबई।
हम्मर गउरी रहथिन कुमार गे माई
मुंह में न दाँत एको तीन गो हई आँखिआं,
दखहूं में लगई हई भिखार गे माई।

अर्थात्- लड़की की माँ कहती है- ऐसे पागल लड़के से मैं अपनी बेटी गौरी की शादी नहीं करूँगी, चाहे हमारी बेटी आजीवन कुँवारी ही क्यों न रहे। जिस लड़के के मुँह में एक भी दाँत न हो अर्थात् बूढ़ा हो, जिसके तीन नेत्र हो अर्थात् कुरूप हो, ऐसे लड़के से मैं अपनी बेटी की शादी कभी नहीं करूँगी।

बन्नी माई के घोटकी गहबर हए, कइसे-निहुरी गोर लागू हे,
सोना के झारी गंगाजल पानी,
मइआ के गोर धोआ दे, कइसे निहुरी गोर लागू हे।
सोनमा के चउकी में रतन जरी हुए,
मइआ के ला के बइठा दे,
कइसे निहुरी गोर लागू हे।
सोनमा के चरिआ में मेवा परोसल,
मइआ के भोग लगा दे,
कइसे निहुरी गोर लागू हे,
सोनमा के चरिआ में कपूर के बाती,
मइआ के आरती देखा दे,
कइसे निहुरी गोर लागू हे।
पाकल पान के बीरा लगा दे, मइआ के पान खिआ दे,
कइसे निहुरी गोर लागू हे,

अर्थात्-बन्नी माता का छोटा-सा मंदिर है, झुककर कैसे

प्रणाम करूँ? सोने की झारी में गंगाजल पानी है, बन्नी माता का पैर धो दो, झुककर कैसे प्रणाम करूँ? सोने की चौकी में रज लगा हुआ है, उस पर बन्नी माता को बैठा दो । सोने की थाली में मेवा मंगाकर बन्नी माता को भोग लगा दो। सोने की थाली में कपूर जलाकर बन्नी माता की आरती उतार लो। पान का बीड़ा लगाकर बन्नी माता को खिला दो। झुककर में कैसे प्रणाम करूँ?

बेटी के जुगुत बर खोजहू हो स्वामी,
अब बेटी भेलओ सेआन,
खोजे ढूँढ़े जाहू स्वामी, मत करऽदेरिआ,
हमरो बचन लहू मान,
बेटिआ हम्मर रोज अइसन बढ़लई,
जइसे बढ़े दुतिआ के चान,
पटबो के पनिआ न पचई हो स्वामी,
सोचते में भेलई विहान,
बेटी के जुगुत वर खोजी हो स्वामी,
कब करबऽ तूहू कन्यादान,
उत्तर में जाहूँ स्वामी मोरंग देस
दखिन में गंगा स्थान,
पूरब में जाहू स्वामी जिला दरभंगा
पश्चिम में गोरख स्थान
एहन सुनर खौजी हो स्वामी,
होए पढ़ल-लिखल गुनमान,

पत्नी-पति से कहती है कि मेरी बेटी बड़ी हो गयी है उसके लिए कोई योग्य वर खोजना। अब इसमें तुम देर मत करो, मेरा वचन मान लो, बेटी रोज-रोज इस कदर बढ़ रही है जैसे दूज का चाँद बढ़ता है। हे स्वामी! मेरे पेट का पानी भी अब हजम नहीं होता है। यह सोचते ही सवेरा हो गया। आप अपनी बेटी से उऋण कब होंगे, कब बेटी का कन्यादान करेंगे? उत्तर दिशा में मोरंग देश में लड़का ढूँढ़ने जाइए। दक्षिण दिशा में गंगा स्थान, पूर्व दिशा में दरभंगा और पश्चिम में गोरख स्थान (उत्तर प्रदेश) तक लड़का खोजे। ऐसा वर-खोजकर लायें जो पढ़ा-लिखा गुणवान हो, देखने में काफी सुन्दर भी हो।

कहलीन सिआ के माई, साजू सखी डाला हे,
दुलहा दुआरी अएलन, सुनलीह हल्ला हे,
सोनमा के दउरा लेले, जनक जी खरा हे,
पालकी में बइठल दुलहा, आरती उतारू हे,
मुंहमा में पान सोभे बइठल हए चुय हे,
सिआ जी के भाग सुन्नर, मनमोहन रूप हे,

अर्थात्-सीता जी की माँ कहती है- हे सखी! जल्दी से डाला सजाओ। लड़का दरवाजे पर आ गया है। चारों तरफ हल्ला हो रहा है। यह सुनकर जनक जी सोना का दौड़ा लेकर दरवाजे पर खड़े है, पालकी में दूल्हा बैठा हुआ है, उसकी आरती उतारने के लिए कह रहे हैं। मुँह में पान रखकर लड़का चुपचाप बैठा हुआ है। सीता जी का भाग्य सुन्दर है जो ऐसा मनमोहक वर उसे प्राप्त हुआ है।

तनीगो के अप्पन सासु बड़ी गो दमाद हे,
तनिएक निहरू बावू, सेकब दून्नू गाल हे,
तनीगो के अप्पन चाली, बड़ी गो दमाद हे,
तनिएक निहरू बाइ, से कब दून्नू गाल है

(इस प्रकार परिवार के सब रिश्तेदारों को लेकर गीत गाया जाता है।)

अर्थात्-छोटी-सी अपनी सास है और लड़का लम्बा है, इसलिए सासू जी कहती है कि थोड़ा-सा झुक जाइए, हम आपके दोनों गाल सेकेंगे। छोटी-सी अपनी चाची है और लम्बा दामाद है, इसलिए थोड़ा-सा झुक जाइए, हम आपके गाल सेकेंगे।

हे जनक रउरी मड़वा में मोती के लरी।
मोती वे लरी हीरा लाल जरी।। हे जनक..... ।
कहमा से आबले राम जी दुलहा।
कहमा से आबे दसरथ समधी।। हे जनक..... ।
अजोधा से आबले राम जी दुलहा।
माई हे अजोधे से आबे दसरथ समधी।। हे जनक..... ।
कहमा बइठएबो में राम जी दुलहा।
माई हे कहमा बइठएबो दसरथ समधी ।। हे जनक..... ।
मड़बे बइठएबो में राम जी दुलहा,
माई हे दुअरे बइठएबो दसरथ समधी। हे जनक..... ।
कथिए खिअएवो राम जी दुलहा,
माई हे कथिए खिअएवो दसरथ समधी। हे जनक..... ।

खोआ खिअएवो में राम जी दुलहा।
माई हे मेवा खिअएबो दसरथ समधी।। हे जनक.....।

अर्थात् –राजा जनक जी के आंगन में मड़वा जो बना है, उसमें मोती की लड़ी लगी है, लाल हीरा जड़ा हुआ है। किस स्थान से राम जी दूल्हा आ रहे हैं और कहाँ से दशरथ जी समधी बनकर आ रहे हैं? अयोध्या से राम और दशरथ जी दोनों पधार रहे हैं। सखियाँ पूछती है कि कहाँ पर राम जी को बैठाने और कहाँ पर दशरथ समधी को बैठाएंगे? सीता की माँ कहती हैं कि मण्डप पर लड़के राम को बैठायेंगे और दरवाजे पर समधी जी को बैठायेंगे। फिर पूछती है कि राम को क्या खाना खिलायेंगे और दशरथ को क्या खिलायेंगे? फिर कहती है कि राम को खोया खिलायेंगे और समधी जी को मेवा–मिष्ठान खिलाऊँगी।

हरदी चढ़ाउ सिआ के तेल चढ़ाऊ हे,
बन्नी के गोर देहिआ के खूब चमकाऊ हे,
बन्नी हम्मर हए चान के टुकरा
फूल जइसन हए बन्नी के मुखरा
मुंह सम्हार के सखी हरदी लगाऊ हे
हरदी चढ़ाऊ सिया के तेल चढ़ाऊ हे।
बन्नी के बाँह जइसे फूल के डाढ़ी,
गमें–गमें बहिआ पर हरदी चढ़ाऊ हे।

(ऐसा गीत लड़के के लिए भी होता है।)

अर्थात्–सीता जी को हल्दी चढ़ाओ और तेल चढ़ाओ। लड़की के गोरे चेहरा को और सुन्दर बनाओ। लड़की हमारी चाँद का टुकड़ा है। फूलों जैसा उसका मुखड़ा है, ठीक से हल्दी चढ़ाओ उसकी बाहें फूलों की डाली के समान कोमल हैं। धीरे–धीरे उसके ऊपर हल्दी लगाओ।

ऑन्ही नेओतय पानी नेओतय।
नेओतल पितर के लोग हे,

अर्थात्–आन्धी को निमंत्रण दिया जाता है और पानी को भी निमंत्रण दिया जाता है। साथ ही अपने सभी पूर्वजों को भी इस मांगलिक कार्य में आने के लिए निमंत्रण दिया जाता है, ताकि सभी इस अवसर पर पधार कर सभी मांगलिक कार्य को सफलता पूर्वक सम्पन्न करायें, साथ ही सबकी रक्षा भी करें।

भइसूर साले की–की लेअएलन मरवे पर ।
नकली टीका आ नथिआ लेअएलन मरबे पर।
अपना बाबू के नाओ हँसा लेलन मरबे पर।
नकली ककना आ टएरा लेअएलन मरबे पर।
अपना बाबा के नाओ डूबा लेलन मरबे पर।
नकली हार आ झूमका लेअएलन मरबे पर।
अपना कुल के नाओ डूबा लेलन मरबे पर।
नकली पाएल आ डरकस लेअएलन मरबे पर।
अपना गांओ के नाओ डूबा लेलन मरबे पर।

अर्थात्–कन्या निरीक्षण के समय लड़की को मण्डप में बैठा देते हैं। लड़के का बड़ा भाई सभी जेवर लड़की को देता है, तब सभी औरतें गहनों को देखकर कहती है कि भैसूर साथ साले क्या–क्या मण्डप पर लाए हैं। नकली टीका, नकली नथिआ, कंगन, टएरा, हार, झुमका, पायल और डरकस लाकर अपने बाबा–दादा और अपने गाँव का नाम डुबा दिया है।

आजु सिआ जी के होखले सगाई,
अंगना में खरा बामन मांगले बधाई,
सादी के कराई नेग दीउ सिआ माई,
अंगना में खरा नाई मांगले बधाई,
नहछू कराई नाई नेग दीउ सिआ माई,
अंगना में खरा मालिन मांगले बधाई,
मउरी बनाई नेग दीउ सिआ माई
अंगना में खरा डोमिन मांगले बधाई
डाला बनाई नेग दीउ सिआ माई,
अंगना में खरा चेरिआ मांगले बधाई,
गोर के बधाई नेग दीउ सिआ माई ,

अर्थात्–आज सीता जी की शादी हो रही है, आँगन में पंडित खड़ा होकर बधाई मांग रहा है। अर्थात् शादी कराने की दक्षिणा मांगते हैं, फिर हजामिन, मालिन, डोमिन और नौकरानी बारी–बारी से नेग मांगती है।

जहिआ सिआजी के अंगूरी छूअले नउनिआ,
जय–जय बोलू सिआ के,
लछमी बिराजे हजमा द्वार,
जय–जय बोलू सिआ के

जहिआ सिआके गोर रंगले नउनिआ,
जय-जय बोलू सिआ के,
लछमी बिराजे हजमा द्वार,
जय-जय बोलू सिआ के,

अर्थात्-जिस दिन सीता जी की अंगुली का नख काटने के लिए नाईन पैर छूती है, उस दिन सीता जी की जय-जयकार होने लगती है। भरपूर नेग (इनाम) मिलने के कारण हजाम के दरवाजे पर लक्ष्मी का निवास होने लगता है। जिस दिन हजामिन सीता जी के पाँव में महावर लगाती है, उस दिन चारों तरफ सीता की जय-जयकार होने लगती है। हजामिन को इतना धन-दौलत इनाम में मिलता है कि उसके दरवाजे पर लक्ष्मी निवास करने लगती है।

कहमा के पीआ माटी कहाँ के कोदार हे,
कहमा के पाँच सोहागिन, माटी कोरे जाए हे,
अजोधा के पीआ माटी, जनकपुर के कोदार हे,
बज्जिकांचल के पाँच सोहागिन माटी कोरे जाए हे,

अर्थात्-किस जगह की मिट्टी पीली है और कहाँ का कुदाल है? कहाँ की पाँच विवाहिता माटी खोदने के लिए जाती हैं? अयोध्या की पीली मिट्टी है और जनकपुर का कुदाल है, बज्जिकांचल की पाँच विवाहिता (सुहागिन) माटी खोदने के लिए गयी है।

लाबा छितराउ बस लाबा छितराउ हे।
हम्मर दादा राउर दादी एक्के जग सुताऊ हे, लाबा.....
हम्मर मामा राउर मामी एक्के जग सुताऊ हे,
हम्मर काका राउर काकी एक्के जग सुताऊ हे लाबा.....
हम्मर फुफा राउर फुआ एक्के जग सुताऊ हे, लाबा.....

अर्थात्-इस समय औरतें हास-परिहास करते हुए कहती हैं- हे वर! लाबा को छितराइए और चुनकर खाइए भी, मेरे दादा और अपनी दादी को हमारे मामा और अपनी मामी को, हमारे काका और अपनी काकी को, हमारे फूफा और अपनी फूफी को एक साथ सुला दीजिए और आप स्वयं लाबा चुन-चुनकर खाते रहिए।

हाथ कापले कुस पानी, अच्छत दूमी धान हे,
सिआ लेले जनक कापल, कइसे करब कन्यादान हे,
सिआ के निरेखी रानी सुनैना, आँखिआसे बरसले लोर हे,
हम्मार सिआ हए अती सुकुमारी, कइसे करब कन्यादान हे।

अर्थात्-हाथ में अक्षत, फूल, पानी और कुश लेते ही राजा जनक जी का हाथ काँपने लगता है। वे सोचते हैं कैसे मैं कन्यादान करूँगा? सीता जी को बार-बार रानी सुनैना देखती हैं, उनकी आँखों से लोरे गिरने लगती है। वे कहती हैं- हमारी सीता बहुत सुकुमारी हैं, मैं कैसे उसे दान करूँगा?

सेन्दुर देने वाले सेनुर का लाज रखी हे।
बापू के देल थाती अपने ही पास रखी हे। सेन्नुर..... ।
चाचा के देल थाती अपने ही पास रखी हे। सेन्नुर..... ।
अम्मा के देल थाती अपने ही पास रखी हे। सेन्नुर..... ।
भइआ के देल थाती अपने ही पास रखी हे। सेन्नुर..... ।
भाभी के देल थाती अपने ही पास रखी हे। सेन्नुर..... ।

अर्थात्-ओ सेन्दूर देने वाले, हमेशा सिन्दूर की लाज रखना- पिता, चाचा, भाई, भाभी, माँ की दी हुई अमानत हमेशा अपने ही पास रखना। किसी को तुम मत देना। हमेशा सिन्दूर की लाज तुम रखना।

हो बाबू हम न जाएव ससुरारी।
के कही हमरा के उहाँ बेटी प्यारी,
संइआ जी हमरा के ताना दीहेन,
सास-ननद दीहेन गारी,
हो बाबू हम नऽ जाएव ससुरारी,

अर्थात्-हे पिता जी! मैं ससुराल नहीं जाऊँगी। वहाँ कौन मुझे बेटी प्यारी कहकर पुकारेगा। पति तो बार-बार मुझे ताना ही देंगे। सास और ननद तो मुझे गाली ही देंगी। इसलिए मैं ससुराल नहीं जाऊँगी।

बरा रे जतन से सिआ जी के पोसली,
से हो रघुबर लेले जाए,
रोएथीन सिआ आओर सिआ माए,
रोयथीन नगरी के लोग,
जनी रोउ सिआ, जनी धिआ माए,
जनी रोउ नगरी के लोग,
केकरा ही संग सिआ, जाके धीआ बइठल,
के पोधथिन हुनकर लोर,

केकरा के जाके जनक रिसी पुकार थीन
केकरा देखी धरथीन धीर,

अर्थात्–बहुत जतन करके सीता बेटी का पालन–पोषण किया। उसे भी राम लेकर जा रहे हैं। इसे देखकर सीता रोने लगती हैं, उनकी रूलाई देखकर उनकी माता जी भी रोने लगती है, इसे देखकर नगर के सभी नगरवासी भी रोने लगते हैं। हे सीता! आप मत रोएँ। हे सीता की माता! आप भी मत रोएँ। नगरवासी भी नहीं रोएँ। किसके साथ में जाकर सीता बैठेंगी? कौन उसके आँसू पोछेगा? किसको जनक ऋषि जाकर पुकारेंगे? यह सोचकर सीता के माता–पिता व्याकुल हो जाते हैं। अपने सब्र को खो देते हैं, उन्हें बार–बार चिन्ता सताती है कि मेरी प्यारी बेटी सीता के आँखों के आँसू अब कौन पोछेगा?

आई फूल से कोहबर सजाएल जाई।
बन्नी टीका पहिन, बन्नी नथिआ पहिन।
आई दुलहा से नएना लराएल जाई।
बन्नी नकलेस पहिन, बन्नी झुमका पहिन।
आई दुलहा से नएना लराएल जाई।
आई दुलहा से नएना लराएल जाई।
बन्नी हार पहिन बन्नी डरकज पहिन।
आई टुलहा से नएना लराएल जाई।

अर्थात्–आज फूलों से कोहबर सजायी जायेगी। हे बेटी! आज तुम टीका, नथिया, नेकलेस, झुमका, हार, डरकस पहन लो। आज पहली बार दूल्हे राजा से आँखे चार होगी अर्थात् पहला मिलन होगा।

धान कुटू हे बरबा, धान कुटू हे।
अपना मइआ के ओखरी में धान कुटू हे। धान..... ।
अपना बहिनी के ओखरी में धान कुटू हे। धान..... ।
अपना चाची के ओखरी में धान कुटू हे। धान..... ।
अपना भउजी के ओखरी में धान कुटू हे। धान..... ।

अर्थात्–विवाह से पूर्व एक परम्परा है 'लठगर' कूटने की। इसमें लड़का और लड़की पक्ष के सात पुरुष शामिल होते हैं। औरतें गीत गाती हैं– हे दूल्हा राजा! आप धान कूटिए। अपनी माँ, बहन, चाची और भाभी की ओखली में धान कूटिए।

चुम–चुम चुमाबले–सिआ–रघुबर के,
माई हे बदन निरेखले सिआ–रघुबर के,
चुम–चुम चुमावले अम्मा सोहागिन,
माई हे बदन निरेखले सिआ–रघुबर के,

(इस प्रकार घर के सभी बड़े लोग चुमाबन करती है और गाती है।)

अर्थात्–आज सभी लोग सीता और राम को चुमा रहे है, और उनको निहार रहे है। सबसे पहले सास, चाची, भाभी, दादी, बड़ी बहन आदि लड़का–लड़की को एक साथ चुमाबन करते हैं और आशीर्वाद देते हैं।

डोलिए चढ़ीए धिआ गेलीन ससुरिआ,
नएना से बरसले, लोर हे,
छुट गेलई बाबुघर, भरल दुअरिआ,
घुटल माई के अंचरा के कोर हे,
गमछा से मुंह झांपी रोअथ बाबू
अंचरा से मुंह झांपी माई हे,
सुसुकी–सुसुकी बहिनी रोअले,
पुकीफार रोए छोट भाई हे,
धीआ कहे तनी डोली बिलमाबहु,
देखे दहू गऊआ के ओर हे,
डोलिए चढ़ीए गेलिन ससुरिआ
नएना से बरसले लोर हे,

अर्थात्–जब लड़की की विदाई होती है। उस समय जैसे ही लड़की डोली में चढ़कर ससुराल जाने के लिए प्रस्थान करती है, उस समय सभी की आँखों में आँसू भर जाते हैं। बाबा का घर छूटने का उसे काफी दु:ख होता है। उसे अपनी माँ के आँचल में सोने का गम भी काफी सताता है। गमछा में मुँह लपेटकर अर्थात् ढंककर पिता जी और आँचल से मुँह ढंककर माता जी खूब रोती हैं। सिसक–सिसक कर बहन और जोर–जोर से छोटा भाई रोता है। कभी–कभी रोते–रोते लड़की भी बेहोश हो जाती है। वह कहती है थोड़ी देर के लिए डोली को रोक दो, ताकि एक नजर अपने गाँव की ओर देख लूँ। आज से तो यह गाँव सदा के लिए छूट ही जाएगा।

लड़की जब ससुराल पहुँचती है तो सर्वप्रथम लड़की डोली से निकल कर बाँस के बने दौड़ा में पाँव रखती है और धीरे-धीरे पति के घर गठ-जोरकर आगे-आगे पति चलता है और पीछे से लड़की चलती है। उस समय औरतें गाती है-

तोहर पाएल से होखे अबाज, दुलहनिया धीरे चलऽ
तोहर नहिरा नहए हे कनिआ, दुलहनिया धीरे चलऽ।
तोहर हुए ई अब ससुरार, दुलहनिया धीरे चलऽ।
तोहर कंगना से होए झनकार, दुलहनिया धीरे चलऽ।
तोहर ससुरा के इहे कन्यादान, दुलहनिया धीरे चलऽ।

अर्थात्-हे दुल्हन! तुम्हारी पायल से आवाज हो रही है, तुम धीरे-धीरे चलो, तुम्हारी माँ का घर नहीं है। यह तो तुम्हारा ससुराल है, तुम धीरे-धीरे चलो। तुम्हारे कंगन से आवाज हो रही है तुम धीरे-धीरे चलो। तुम्हारे ससुराल की यही रीति-रिवाज और परम्परा है, तुम धीरे-धीरे ससुराल में चलो। पाँव इस कदर रखना कि आवाज नहीं हो।

इस प्रकार बज्जिकांचल के क्षेत्र में वैवाहिक कार्यक्रमों में अनेक प्रकार के रीति-रिवाज विभिन्न प्रकार के परम्पराओं और लोकाचार का समावेश होता है। सबको इससे होकर गुजरना पड़ता है। बहुत सारी परम्पराओं और लोकाचार की चर्चा इसमें नहीं की गयी है। फिर भी कुछ गीतों के माध्यम से बानगी के रूप में पाठकों के सामने रखने का प्रयास किया गया है।

बुन्देली के वैवाहिक लोकाचार

डॉ. (श्रीमती) गायत्री वाजपेयी

भारतीय संस्कृति में मान्य सोलह संस्कारों में विवाह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्कार माना गया है। यह नर-नारी का वह पारस्परिक सम्बन्ध है, जो धर्म एवं नियम से आबद्ध है। वस्तुतः भारतीय संस्कृति एवं शास्त्र मनुष्य के शतायु होने का उद्घोष करते हैं तथा मनुष्य जीवन के इस सौ वर्ष को चार खण्डों में विभक्त कर ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम एवं संन्यासाश्रम के अन्तर्गत कर्त्तव्यरत रहने पर बल देते हैं। इन चार आश्रमों के साथ ही चार पुरुषार्थों धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति का विधान भी बताया गया है। आश्रमबद्ध जीवन व्यवस्थान्तर्गत ही पुरुषार्थ चतुष्ट्य की प्राप्ति बतलाई गई है। शास्त्रानुमोदित इन चारों आश्रमों में गृहस्थाश्रम को सर्वश्रेष्ठ बतलाया गया है तथा यह माना गया है कि प्रत्येक मनुष्य संसार में तीन ऋण लेकर आता है। ये ऋण हैं -ऋषि ऋण, देव ऋण तथा पितृ ऋण। इन तीन ऋणों से उऋण होना मनुष्य के लिए अत्यावश्यक है। ब्रह्मचर्य आश्रम में ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुये आर्ष मनीषा द्वारा प्रणीत शास्त्रों का स्वाध्याय कर मनुष्य ऋषि ऋण से मुक्त होता है। शास्त्रों में वर्णित यज्ञों का सम्पादन कर देवऋण से मुक्ति प्राप्त करता है। वेदान्त पद्धति से कुलानुरूप गुणशील वाली कन्या से विवाह सम्बन्ध स्थापित कर सन्तानोत्पत्ति कर पितृऋण से मुक्त होता है। इस प्रकार इन तीनों ऋणों से उऋण होकर मनुष्य संन्यास की ओर प्रवृत्त होता है तथा मोक्ष की प्राप्ति करता है। विवाह गृहस्थाश्रम में प्रविष्टि का प्रथम द्वार है। वास्तव में विवाह मनुष्य के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक परितुष्टि का सर्वोत्तम साधन है। इसमें योग एवं संयम का अद्भुत सम्मिश्रण होता है।

विवाह शब्द का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है-ले जाना। साधारणतः इस शब्द का अर्थ होता है वधू को उसके पिता के घर से विशेष रूप से ले जाना। विवाह शब्द के समानार्थक शब्दों के रूप में उदवाह, परिणय, उपयम, पाणिग्रहण आदि प्रयुक्त होते हैं। उदवाह का अर्थ है- वधू को उसके पिता के घर से ले जाना। परिणय का अर्थ है- चारों ओर घूमकर अर्थात् अग्नि की परिक्रमा अथवा प्रदक्षिणा करना।

उपयम का अर्थ है- किसी को निकट लाकर अपनाना तथा पाणिग्रहण का अर्थ है वधू का हाथ ग्रहण करना।

भारतीय संस्कृति एवं समाज में विवाह का लम्बा-चौड़ा विधान होता है। हमारे प्राचीन वेदादि धर्मशास्त्रों में विवाह संस्कार का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। ऋग्वेद का एक पूरा सूक्त तथा अथर्ववेद के दो सूक्त सोम और सूर्या के विवाह वर्णन के माध्यम से विवाह संस्कार की पूर्ण विवेचना प्रस्तुत करते हैं। ऋग्वेद एवं अथर्ववेद के मन्त्रों में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि नर एवं नारी का यह विवाह बंधन उनका व्यक्तिगत स्वार्थपरक नहीं है, वरन् यह समाज की एकसूत्रता एवं उसके माध्यम से मानव समाज की एकसूत्रता प्रकट करने का सामूहिक प्रयास है। स्त्री-पुरुष विवाह बंधन में बंधकर परिवार को उसी प्रकार संयमित रख सकते हैं, जिस प्रकार दोनों ध्रुव धरती को नियंत्रित रखते हैं। विवाह मात्र दो व्यक्तियों का आपसी सहचर्य नहीं वरन् सम्पूर्ण समाज को साथ लेकर चलने की भावना है, जिसके साक्षी व्यक्ति ही नहीं नक्षत्र भी होते हैं। इसीलिए इस सम्बन्ध में वैसी ही दृढ़ता होती है, जैसी नक्षत्रों में होती है।[1] हमारे प्राचीन धर्म ग्रन्थों में विवाह के आठ भेदों का उल्लेख मिलता है- बह्म, देव, आर्ष, प्रजापत्य,आसुर, गन्धर्व, राक्षस और पिशाच। इन आठ प्रकार के विवाहों में प्रथम चार प्रकार- ब्रह्म, दैव, आर्ष और प्रजापत्य श्रेष्ठ माने गये हैं तथा अन्तिम चार आसुर, गन्धर्व, राक्षस और पिशाच निन्दनीय माने गये हैं। 'मनुस्मृति' में उल्लेख हैं-

चतुर्णामपि वर्णानां प्रेत्य चेह हिताहितान्।
अष्टाविमान्समासेन स्त्री विवाहान्नि बोधत।।
ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथा सुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्वाष्टमोऽधमः।।
आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुतिशीलवते स्वयम्।
आहूय दानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तितः।।
यज्ञे तु विततते सम्यगृत्विजे कर्म कुर्वते।
अलंकृत्य सुतादानं दैवं धर्म प्रचक्षते।।
एकं गोमिथुनं द्वै वा वरादादाय धर्मतः।
कन्या प्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्चते।।
सहनौ चरतां धर्मामिति वाचानुभाष्य च।
कन्याप्रदानं मभ्यर्च्य प्रजापत्यो विधिः स्मृतः।।
ज्ञातिभ्यौ द्रविंण दत्वा कन्यायै चैव शक्तितः।
कन्या प्रदानं विधिवदासुरो धर्म उच्यते।।
इच्छयाऽन्योन्यसंयोगाः कन्यायाश्च वरस्य च।
गान्धर्वः स तु विज्ञेयो मैथुन्यः कामसंभवः।।
हत्वा छित्वा च भित्वा च क्रोशन्तीं रुदतीं गृहात्।
प्रसह्य कन्याहरणं राक्षसो विधिरुच्यते।।
सुप्तां मत्तां प्रमत्तां वा रहो यत्रोपगच्छति।
स पापिष्ठौ विवाहानां पैशाचश्चाष्टमोध्धमः ।।[2]

अर्थात् लोक और परलोक में चारों वर्णों के हित और अहित के साधक रूप आठ प्रकार के विवाह होते हैं - ब्रह्म, देव, आर्ष, प्रजापत्य, आसुर, गन्धर्व, राक्षस एवं पिशाच। अच्छे शीलवान, गुणवान वर को स्वयं बुलाकर उसे वस्त्राभूषण से अलंकृत एवं पूजित कर कन्या अर्पित करना ब्रह्म विवाह है। यज्ञ में सम्यक् प्रकार से कर्म करते हुए ऋत्विज को वस्त्राभूषण से अलंकृत कर पूजा करते हुये कन्या देना देव विवाह है। वर से एक या दो जोड़े गाय, बैल, धर्मार्थ लेकर विधि पूर्वक कन्या देना आर्ष विवाह कहलाता है। तथा 'तुम दोनों साथ मिलकर गृह स्वधर्म का पालन करो' यह कहते हुये कन्यादान करना प्रजापत्य विवाह है। कन्या के पिता आदि को तथा कन्या को यथाशक्ति धन देकर स्वच्छंदतापूर्वक कन्या को ग्रहण करना आसुर विवाह है। कन्या एवं वर की सहमति या स्वेच्छा से उनका संयोग होना गन्धर्व विवाह है। बलपूर्वक रोती बिलखती हुई कन्या को ले जाना राक्षस विवाह है। नींद में सोई हुई अथवा विक्षिप्त कन्या के साथ एकान्त में सम्भोग करना पिशाच विवाह है।

उपर्युक्त इन विवाहों में से हिन्दू समाज में सर्वाधिक मान्यता प्राप्त विवाह ब्रह्म विवाह है हालांकि समाज में अन्य विवाहों का भी प्रचलन है, लेकिन बह्म विवाह सर्वोत्तम माना गया है। इस विवाह में कन्या के माता-पिता अथवा संरक्षक सुयोग्य वर का चयन कर धन एवं वस्त्राभूषण आदि यथाशक्ति प्रदान कर कन्यादान करते हैं। बुन्देलखण्ड अंचल में प्रचलित विवाहों में सर्वाधिक महात्म्य ब्रह्म विवाह का है। हिन्दू समाज में इसी विवाह को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। हालांकि पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव एवं अतिशय आधुनिकता की ओर बढ़ रही युवा पीढ़ी प्रेम विवाह एवं अन्तर्जातीय विवाह की ओर तीव्र गति से अग्रसर हो रही है, वहीं वर पक्ष की ओर से दहेज की अनुचित मांग के परिणामस्वरूप कन्या पर बढ़ रहे अत्याचारों के कारण यह श्रेष्ठ विवाह प्रथा

अभिशाप बनती जा रही है। फिर भी सभ्य, सुशिक्षित एवं सुसंस्कारित परिवारों में आज भी यह विवाह मान्य है। इस विवाह में अनेक विधि-विधान, रीतियाँ एवं लोकाचार होते हैं। डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय ने अपनी पुस्तक 'लोकसाहित्य की भूमिका' में उल्लेख किया है कि इस विवाह के अवसर पर कन्यापक्ष में बाइस और वरपक्ष में सोलह प्रकार के विधि-विधान सम्पादित किये जाते हैं।[3] चरखारी नरेश गंगासिंह देव द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'विवाह गीतावली' में वैवाहिक रीतियों- बना (दूल्हा) की नजर निछावर, लगुन, सीधो (सामग्री) छूना, करैया धरना, धोबा धोना, छेईमाटी, मड़वा गढ़ना, चीकट उतरना, कन्हर लेना, मायनौ, मटयानौ, मैर को पानी भरना, कंकन पूरना, राछ फिरना, निकासी, टीका, चढ़ाओ, सुहाग लेना, कन्यादान, भांवर, लहकौर, पंगत की गारी देना, कुँवर कलेऊ, देनी (दायजौ) सोंपना, बंद खोलना, विदा, देवता पूजन, कंकन छोरना, मौंचाइनो, आदि सम्मिलित हैं। भक्त कवि हरिराम व्यास ने विवाह के अवसर पर प्रचलित लोकाचारों को 'विवाह लीला' गीत में वर्णित किया है। उनके अनुसार- 'पुरोहित द्वारा शुभ घड़ी शोध कर लगन भेजना, पुरोहित का वरपक्ष के घर पहुँचना, वर का तिलक करना, पंचों को लगन की जानकारी होना, वर को तेल चढ़ाना, मंडप की रचना कर खंभों में दीये रखना, बारात की तैयारी, वधूपक्ष द्वारा बारात की अगवानी, सजन भेंट, बारौठी, (वर के द्वार पर आने के समय टीका की रस्म) जनवासा देना, ज्योनार, साखोचार, जनवासे में वधू के आगमन पर आनंद बधावा, मुख दिखलाई, पलकाचार, दाइज, विदा, वरपक्ष के घर बारात वापिस आने पर ज्योनार, आरती (वर की आरती) मान या मान सम्बन्धियों के द्वारा द्वार छेंकना, भाये (वर-वधू को कनियाँ लेकर आनंदमग्न हो नृत्य करना) कंकन छोरना आदि प्रमुख लोकाचार विवाह के समय प्रचलित हैं। बख्शी हंसराज ने अपने 'सनेह सागर' में जिन वैवाहिक लोकरीतियों की चर्चा की है, वे हैं- लगुन, मण्डप, तेल चढ़ाना, हल्दी चढ़ाना, मटियानो (छेईमाटी) मैहर थापना, बारात, मिरचानी, पौनछक, वाग्दान, अगौनी, आतसबाजी, दोरचार (द्वारचार) टीका, मंडप, जनवासा, लहकौर, जनेऊ, चढ़ाऔ, राछ, सुहाग लेना, साखोचार, हथलोई, भाँवर, कुलदेवी पूजा, रहस बधाओ, ज्यौनार, दाइज, मोहचावनों, दादरे आदि। तुलसी कृत 'रामचरितमानस', 'गीतावली', 'जानकीमंगल' एवं 'रामललानहछू' में वैवाहिक रीतियों लगन बाँचना, वर-वधू पक्षों के घरों की साज-सजावट, परछन, पाँव पखारना, कन्यादान, भाँवर, सेंदूर देना, बारात का सम्मान, कोहबर के नेगचार, लहकौर, वरपक्ष के घर वर-वधू द्वारा देवपूजन आदि का वर्णन मिलता है।

बुन्देलखण्ड अंचल में वैवाहिक रीतियों एवं लोकाचारों में वेद-विधि एवं लोक-रीति दोनों का सुन्दर सम्मिश्रण देखने को मिलता है। विवाह योग्य कन्या के लिए वर की खोज हो जाने के पश्चात् जिन वैवाहिक रीतियों एवं लोकाचारों का निर्वहन वर एवं वधू पक्ष के परिवारों में होता है। वे इस प्रकार हैं-

वरीक्षा

वरीक्षा का अर्थ है वर की रक्षा। कन्या के पिता द्वारा योग्य वर की तलाश कर लेने के पश्चात् वर के हाथ में कुछ धन, नारियल, जनेऊ एवं सुपारी रखकर उक्त वर को सुरक्षित कर लिया जाता है। वरीक्षा की रीति सम्पन्न हो जाने के पश्चात् उसके अन्यत्र विवाह की चर्चा नहीं हो सकती है।

ओली भरना

वर की रक्षा हो जाने के पश्चात् वरपक्ष के द्वारा भी कन्या की गोद भराई की रस्म की जाती है। पण्डित द्वारा शुभ मुहूर्त शोधकर तिथि निश्चित कर दी जाती है। उसी तिथि पर वर पक्ष के यहाँ से वर के माता-पिता एवं रिश्तेदार आकर कन्या की ओली भरते हैं। इसमें वर पक्ष द्वारा लाई गई सामग्री नारियल, सूखे मेवे, बताशा, फल, मिष्ठान एवं वस्त्राभूषण आदि कन्या की ओली में भरे जाते हैं। कन्या पक्ष की ओर से यथाशक्ति वर पक्ष के लोगों को सम्मान एवं भेंट आदि देकर सन्तुष्ट किया जाता है।

लगुन

पंडित द्वारा शुभ तिथि शोधकर परिजन एवं पुरजनों की उपस्थिति में लगुन लिखी जाती हैं। लगुन में विवाह के सम्पूर्ण कार्यक्रम तिथि सहित अंकित किये जाते हैं। लगुन को बुन्देली में सुतकरा कहते हैं। लगुन पत्रिका में सीधा छूना, छैई माटी लेना, खदान पूजना, मण्डप गाड़ना, द्वारचार, चढ़ाव, भाँवर एवं विदाई आदि समस्त वैवाहिक कार्यक्रमों की तिथि एवं समय अंकित रहता है उसी के अनुसार सभी वैवाहिक रीतियाँ एवं लोकाचार सम्पन्न होते हैं। लगुन पत्रिका कन्या को स्पर्श कराने के पश्चात् उपस्थित सभी लोगों को स्पर्श करायी जाती हैं। सभी लोग उस पर

भेंट स्वरूप कुछ धनराशि चढ़ाते हैं। लगुन लिखते समय महिलाएँ गीत गाती हैं –

कोरे से कगदा मंगाये राजा बाबुल,
बेटी की लगुन लिखाई मोरे लाल।
पाँच सुपारी मँगाई बाबूल जु बेटी की
लगुन लिखाई मोरे लाल।
पाँच हरद की गठियाँ मँगाई बाबुल जु बेटी की
लगुन लिखाई मोरे लाल।
नारियल मंगाये, चांदी मंड़ाये, सो बेटी की
लगुन लिखाई मोरे लाल।[4]

तिलक

कन्या पक्ष के लोग पिता, चाचा, भाई आदि लगुन पत्रिका में निर्धारित शुभ तिथि को तिलक या फलदान की सामग्री लेकर वर पक्ष के यहाँ जाते हैं। जहाँ कन्या पक्ष द्वारा लाई गई सामग्री चाँदी से मड़ा हुआ नारियल, सुपारी, हल्दी की गाँठ, फल, फूलमाला, पान का बीड़ा, मेवा–मिष्ठान एवं वस्त्राभूषण चाँदी के थाल अथवा स्टील या काँसे के थालों में सजाकर रखा जाता है। वर को एवं कन्या के भाई को पटा पर आमने–सामने बैठाकर पण्डित द्वारा गणपति पूजन करवाया जाता है। तत्पश्चात् कन्या का भाई वर का टीका कर चाँदी के थाल में रखी धनराशि, वस्त्राभूषण, नारियल, सुपारी, हल्दी आदि वर के हाथों में सौंपता है। दोनों परस्पर गले मिलते हैं एवं पान का बीड़ा खिलाते हैं। वर का तिलक चढ़ जाने के पश्चात् वर पक्ष के रिश्तेदारों को कन्या के पिता द्वारा भेंट दी जाती हैं। पण्डित एवं नाई को भी दक्षिणा दी जाती है। पण्डित द्वारा इसी अवसर पर लगुन पत्रिका का वाचन किया जाता है। इस अवसर पर महिलाओं द्वारा यह गीत गया जाता है –

सो इन नाउ बमना ने हीरा मोरे ठग लये, नगीना मोरे ठग लये।
पैला कातते हतिया जो दैवी सो अंकुश दै समझा दये राजा बनरे।[5]

सीदौ छूना

तिलक के पश्चात् किसी शुभ दिन सात सुहागिनें मिलकर संध्या के समय अनाज छूती हैं। बुन्देलखण्ड में इसे सीदौ छूना कहा जाता है। इस लोकाचार में सात सुहागिनें मूंड महावर (श्रृँगार) करके गोद भरवा कर अपने–अपने सूप में सात बार अनाज आपस में पछोरती हैं। यह अनाज गेहूँ या चना होता है। इसी गेहूँ की मातृ पूजा के दिन मांयें बनती हैं तथा चना की बरी या फिर मण्डप के दिन दाल बनाई जाती है। इसे घर–परिवार के लोग खाते हैं। इस लोकरीति को सम्पन्न करते समय देवी–देवताओं के स्तुतिपरक गीत गाये जाते हैं–

सो मांक रई लौंगन से अटरियाँ, सिजरियाँ मांक रई लौंगन से।
सबरे देवता आये सवा में सो, महामाई काय नईं आई अटरियाँ।
सबरे देवता आये सवा में, हरदौल बाबा काय नईं आये अटरियाँ।[6]

छेईमाटी

छेई माटी की विधि सम्पन्न कराने हेतु गाँव–पुरा की एवं रिश्तेदार स्त्रियों को बुलउआ देकर बुलाया जाता है। सभी महिलाएँ मिलकर खेत या गेंवड़े में जाकर खदान से मिट्टी लाती हैं। मिट्टी लेने से पूर्व उस स्थान को हल्दी–चावल से टींकती हैं फिर घी–गुड़ लगाकर पूजती हैं। कुदारी एवं सात छोटी टोकनी भी हल्दी या गेरु से टींकी जाती हैं। वर अथवा वधू की बुआ द्वारा मिट्टी खोदी जाती है तथा सात डलियों में रखी जाती है। इसी मिट्टी से पाँच चूल्हे, दो परथनी, हवनकुण्डी आदि बनाई जाती हैं। मण्डप के दिन इसी चूल्हे पर मांयें बनती हैं। हवन कुण्डी भांवरों के समय हवन हेतु उपयोग में लायी जाती है। परथनी कलश रखने हेतु प्रयुक्त होती है। छेईमाटी के लिए जाते समय महिलाएँ यह गीत गाती हैं –

निहारो मोरी ओर न मोहन हमें नजर लग जैहे।
एक तो चन्द बदन उजियारी दूजे अपने पति खाँ प्यारी।
तनक नजर के लगतन लाला सुध बुध हिये न रैहे।
मैं तो घरे जात डगरिया सिर पर घड़ा हाथ गगरिया।
तुम्हरी जादू भरी नजरिया छिन भर में हो जैहो बवरिया।
ऐही से मैं घूँघट डारों न काहू से बोलो चालों अपने प्रेमपंथ खां पालौं।
होत अबेर जावे खां ननदी रार मचै है
तुम तो छलिया नंद किशोर हो रयो गलिन गलिन में सोर।
दास कहै मारग में मिलकै नये नये रास रचैहै।[7]

मण्डप

लगुन पत्रिका में निर्धारित शुभ तिथि के दिन आँगन के बीच में गड्ढा खोदकर एक पैसा एवं सुपारी रख दी जाती है फिर हरे बाँस, छेवले की लकड़ी तथा आम, जामुन की अधिक समय

तक हरी रहने वाली पत्तियों से मण्डप सजाया जाता है। मण्डप के मध्य में बढ़ई द्वारा लाया गया खम्भ गाड़ा जाता है। खम्भ को हल्दी से रंगा जाता है। मण्डप का पूजन पंडित द्वारा करवाया जाता है। मण्डप गड़ जाने के बाद महिलाओं द्वारा सभी को हल्दी के हाथ लगाये जाते हैं। इस समय मण्डप गीत गाये जाते हैं –

आज अंगन अति सुन्दर न जाने कउन गुना।
न जाने नउआ के लिपवे सै न जाने गोबर गुना।
आज कलश अति सुन्दर न जाने कउन गुना।
न जाने कुम्हरा के गढ़वे से न जाने मटिया गुना।
आज खम्भ अति सुन्दर न जाने कउन गुना।
न जाने बढ़ई के गढ़वे से न जाने लकड़ी गुना।
आज लेडलरी अति सुन्दर न जाने कउन गुना।
न जाने माइ के जन्में से न जाने कूँख गुना।[8]

तेल चढ़ना

मण्डप गड़ने के पश्चात् वर एवं कन्या को तेल चढ़ाया जाता है। इस समय कन्या के समस्त जेवर उतार दिये जाते हैं । केश खोल दिये जाते हैं। स्नान कार्य भी बन्द करा दिया जाता है। कहीं-कहीं सात कन्यायें तेल चढ़ाती हैं तो कहीं वर या कन्या की भाभियाँ या मामियाँ तेल चढ़ाती हैं। वर या कन्या को मण्डप में पटा पर बैठाकर पहले गणेश जी को तेल चढ़ाया जाता है तत्पश्चात् वर या कन्या को तेल चढ़ाते समय दोनों हाथों के अंगूठे तेल में डुबोकर वर या कन्या के चरणों, घुटनों एवं मस्तक को स्पर्श कराया जाता है। सात लोगों द्वारा तेल चढ़ाने की प्रक्रिया पूर्ण हो जाने पर तेल शरीर में मल दिया जाता है। इसके बाद हल्दी व उबटन लगाया जाता है। तेल चढ़ाते समय महिलाएँ गीत गाती हैं –

कौना ने तेल चढ़ाव को राये बैंहदुलिया।
बहनी ने तेल चढ़ाव जीजा राये बैंहदुलिया।
चढ़गव तेल फुलेल छुटक रहीं पाँखुरियाँ।
को ल्याव तेल फुलेल को ल्याव पाँखुरियाँ।
तेलन ल्याई तेल फुलेल मालिन ल्याई पाँखुरियाँ।
भावी ने तेल चढ़ाव वीरन राये बैंहदुलिया।[9]

मायनों (मातृका पूजन)

मायनों के दिन समस्त सुहागिन स्त्रियाँ टीका महावर करके गोद भरवाकर ताल या कुआँ के किनारे या फिर किसी खेत से मिट्टी खोदकर लाती हैं। मिट्टी लेने जाते समय वादक आगे-आगे नगड़िया बजाता हुआ चलता है। महिलाओं में से किसी बुजुर्ग महिला द्वारा नगड़िया का पूजन किया जाता है। नगड़िया के पीछे-पीछे सूप में पूजन सामग्री लिये नाइन चलती है। एक फावड़ा व टोकरी साथ में ले जाई जाती है। जिस स्थान से मिट्टी ली जाती है, उसे सुहागिन द्वारा पूजा जाता है। बाद में फावड़े से खोदकर पाँच बार मिट्टी निकाली जाती है। यह पवित्र मिट्टी कलश के नीचे रखी जाती है। इस दिन कुल देवता की भी पूजा होती है। कई परिवारों में मिट्टी के पाँच या सात घड़ों में पुरुषों द्वारा पानी (किसी भी कुआँ से) लाया जाता है, जिसे मण्डप के नीचे रखा जाता है। परिजनों द्वारा मांयें बनाई जाती हैं तथा पूजनोपरांत परिवार में सभी को बांटी जाती हैं। इसी दिन वर या कन्या के हाथ में एक धागे में राई-नमक मिलाकर चोकर की छोटी-सी पोटली बांध दी जाती हैं। तत्पश्चात् कनहर भी लिया जाता हैं, जिसमें वर या कन्या की माँ एवं मामा-मामी पूरे दिन व्रत रखते हैं। फिर मण्डप के नीचे वर या कन्या के हाथ में धनराशि रखते हैं। तदुपरांत माँ एवं कन्या अथवा वर की लट पकड़कर नाइन द्वारा उस पर लोटे से जल डाला जाता है, जिसे मामा-मामी द्वारा पिया जाता है। इस विधि को करते समय चार सुहागिनें या फिर कन्यायें नई साड़ी की चार परतें कर उसे सिर के ऊपर से ढँक लेती हैं तथा सात बार सूत या धागा एक से दूसरे को देते हुये घुमाती हैं। इसी धागे में कंकन बाँधा जाता है। कंकन लोहार के यहाँ से आता है, जो लोहे का होता है उसमें सात घूंचूँ लटकती रहती हैं। मातृका पूजन के समय कोहबर बनाया जाता है, जिसे मायन वाला कक्ष कहते हैं। यहाँ दीवाल पर मैर देवता लिखे जाते हैं। कन्या पक्ष के यहाँ एक मटके में मांयें एवं लपसी आदि भरकर रख दी जाती है। इसी कक्ष में लहकौरि की रीति सम्पन्न होती है। जिसमें वर-वधू एक-दूसरे के मुँह में कौर खिलाते हैं। इस अवसर पर साली-सरहजें हँसी-मजाक करती हैं। मायन वाले दिन ही विवाह निर्विघ्न सम्पन्न हो इस हेतु देवी-देवताओं, कुलदेवी-देवताओं एवं लोक देवी-देवताओं को घी-गुड़ का होम देकर निमन्त्रित किया जाता है। इस अवसर पर जो गीत गाया जाता है, वह इस प्रकार है –

सरग नसेनी पाट की यारो जे चढ़ नेवतो देंय।
तुम मोरे नेवते गनेश देव तुम मोरे आइयो।

तुम मोरे नेवते महादेव पारवती तुम मोरे आइयो।
तुम मोरे नेवते पवन सुत तुम मोरे आइयो। [10]

बुन्देलखण्ड में लोकदेवता के रूप में पूजित लाला हरदौल को प्रत्येक घर में विवाह के अवसर पर आमन्त्रित किया जाता है। बुन्देली विवाह गीतों में हरदौल से सम्बन्धित गीत अत्यंत भावपूर्ण है। एक गीत प्रस्तुत है जिसमें बुन्देली नारी आदरपूर्वक उन्हें निमन्त्रण दे रही है तथा विघ्न रहित कार्य सम्पादन का निवेदन कर रही है –

हरदौल लाला मोरी कही मान लियो हो हरदौल लाला।
कहूँ भूला परे कहूँ चूका परै तो सँभाल लियौ हो हरदौल लाला। [11]

चीकट

बुन्देलखण्ड में चीकट की परम्परा विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। इस परम्परा के निर्वहन को पुण्य कार्य माना जाता है। विवाह के पूर्व बहिन बड़े सम्मान के साथ (वर या कन्या के मामा) अपने भाई को आमंत्रण देने जाती है। मण्डप या फिर मातृका पूजन के दिन मामा चीकट लेकर आता है। चीकट में मामा यथाशक्ति खाद्यान्न सामग्री व वस्त्राभूषण आदि लाता है। भाई द्वारा लाई गई चीकट बहिन द्वारा उतारी जाती है। इस रीति को सम्पन्न करते समय नाइन सूप में कलश, घी, गुड़, हल्दी, अक्षत एवं बताशा आदि रखकर खड़ी हो जाती है। बहिन भाई का टीका कर मुँह मीठा कराती है तथा गले या कंधे लगकर भेंटती है। भाई बहिन के चरण स्पर्श कर न्योछावर करता है। कहीं-कहीं, भाई को दूध-चावल खिलाया जाता है। इस अवसर पर महिलाएँ चीकट गीत गाती हैं –

उठन ने हो मोरी साँवल गोरी तुम घर बींध उलावती।
जा बींध रे साईं हमें न सुहावे हमारे वीरन परदेश में।
तुम्हरे वीरन खौं पतियाँ पठैहों गोरीधन वीर बुलाइहों।
चिठियन साईं वीरो नईं आवें संदेशो भौजी कैसे आई हैं।
उठो नै मोरे बेटा अमुक राये जाओ लला ममयावरें।
मामुल खो बेटा नेवतो दियो मांईं लुवाय घर आइयो।
चलो देवरनियाँ चलो जिठानियाँ राजा वीरन खों आगे दे लाइये।
भैया बहिन बैठ दोई मतो करत हैं कौ खों का पहिराइये।
सास ननद खों छींट छिमरिया देवरानी जिठानी खों चूनरी।
हमखों वीरन मोरे जेवर गढ़ैयो पाट बरैयो बहनेऊ खों पचरंग पगड़ी।
जेखों बहिन मोरी इतनो नै पूजै वो कैसे बहिन घर आइयो।
जेखों वीरन मोरे इतनो नै पूजै तो पीरो खदा लै लाइयो।
जो न वीरन तुमे इतनोंई नै पूजै तो रोते भले सब आइयो। [12]

विवाह सम्बन्धी लोकाचार कुछ तो वर एवं कन्या पक्ष में समान रूप से होते है, कुछ रीतियाँ पृथक-पृथक होती हैं। जैसे कन्या पक्ष के यहाँ सुहाग लेने की विधि सम्पन्न होती है तो वर पक्ष के यहाँ दूल्हा निकासी होती है। बारात जाने के बाद जुगिया (नकटौरा) एवं गौरइयाँ होती हैं।

सुहाग लेना

लगुन पत्रिका में द्वारचार हेतु निर्धारित तिथि के दिन माता एवं अन्य सुहागिनों के साथ कन्या गौरीमाता के मंदिर में जाती है तथा गौरी माँ का पूजन कर सौभाग्य कामना करती हुई माँ गौरी से सिन्दूर लेकर अपनी माँग में लगाती है। फिर धोबिन के घर जाकर सुहाग लेती है। धोबिन को कन्या द्वारा बेसन की निगरी अर्पित कर निमन्त्रित किया जाता है, धोबिन कन्या को अपना सिन्दूर देती है। इसी प्रकार बेसन की निगरी सात सुहागिन स्त्रियों को देकर कन्या द्वारा उन्हें निमन्त्रित किया जाता है। वे अपनी माँग का सिन्दूर कन्या की माँग में देती हैं। कन्या द्वारा निमन्त्रित की गई ये समस्त सुहागिनें दिन भर व्रत रखती हैं। रात्रि के समय जब बारात आ जाती है तो वर पक्ष के यहाँ से नाई गौरधार लेकर आता है। नाई को भोजन कराया जाता है। निमन्त्रित की गई सभी सुहागिनें मण्डप के नीचे भोजन हेतु बैठती हैं। साथ ही कन्या को आसन पर बिठाया जाता है। सभी के समक्ष भोजन की पत्तल या थाल परोसे जाते हैं। कन्या के माता-पिता गाँठ जोड़कर लोटे से घी की धार पत्तलों या थाल पर चुआते हुए चलते हैं। उनके द्वारा सुहागिनों को घी-गुड़ परसा जाता है। माता-पिता कन्या के चरण स्पर्श करते हैं। सुहागिनें घी-गुड़ चखती हैं एवं कन्या को अपनी माँग से सुहाग देती हैं। इस सुहाग लेने की विधि में धोबिन का विशेष महत्त्व होता है। उसके लिए वर पक्ष की ओर से उपहार भी आता है। सुहाग की लोकरीति अत्यन्त सुहावनी होती है। बुन्देलखण्ड में इसे गौरइयाँ भी कहा जाता है। इस समय यह गीत गाया जाता है–

सुहाग प्यारी गौरा बेटी को देना सुहाग
जैसे सुहाग रानी लक्ष्मी को दीना वर पाये विष्णु भगवान।
सुहाग प्यारी गौर.....

जैसे सुहाग तुमने सीता को दीना वर पाये श्रीराम।
सुहाग प्यारी गौरा.....
जैसे सुहाग तुमने रुक्मणी को दीना वर पाये कृष्ण भगवान।
सुहाग प्यारी गौरा.....[13]

दूल्हा निकासी

बुन्देलखण्ड में कन्या पक्ष के यहाँ बारात प्रस्थान करने के पूर्व दूल्हा निकासी होती है। वर को पीला जामा पहनाया जाता है। मौर लगाया जाता है एवं पैरों में महावर लगाया जाता है। माथे पर चन्दन की टिपकियाँ रखी जाती हैं, जिसे खौर काढ़ना कहते हैं। खौरे वर के जीजा या फूफा द्वारा काढ़ी जाती है। उन्हें खौर कढ़ाई नेग भी दिया जाता है। भाभी द्वारा आँखों में काजल लगाया जाता हैं, जिसे आँखे आंजना कहते हैं। भाभी को भी आँख अँजाई का नेग मिलता है। जीजा एवं फूफा मिलकर वर को मौर या फिर पगड़ी धारण करवाते हैं। बुन्देलखण्ड में दूल्हा को तीन दिन का राजा कहा जाता है। अत: दूल्हा का श्रृँगार राजसी होता है। उसे पनरस धारण कराया जाता है। कमर में कटार बाँधी जाती है। घोड़ी पर सवार होकर देवी जी के मन्दिर ले जाया जाता है, फिर अनेक स्थानों पर घुमाया जाता है, जिसे राछ फिरना कहते हैं। व्यवहारी एवं रिश्तेदार टीका करते हैं। बहिन द्वारा राई-नौन उतारा जाता है। नाइन सूप में पूजन सामग्री लेकर चलती है। महिलाओं द्वारा समूह में चलते हुये गीत गाया जाता है -

बनरा वेग करो तैयारी तुमखां सजन बुलाबे जू।
आजी चलो हमारे साथ अकेले हम न जैबी जू।
बनरे आजुल ले लो साथ महलियाँ हमईं रखावी जू।[14]

राछ फिरने के बाद दूल्हा घर आता है। तदुपरान्त बारात जाने की तैयारी होने लगती है। दूल्हा निकासी की विधि सम्पन्न करने हेतु महिलाएँ दरवाजे पर एकत्रित हो जाती हैं। द्वार पर चौक पूरा जाता है। चौक पूरकर मिट्टी के कच्चे बड़े दीये (मलिया) रखे जाते हैं, जिसमें हल्दी-चावल भरे जाते हैं। दूल्हा सज-संवरकर चौक में खड़ा होता है। चार महिलाएँ दूल्हा के ऊपर चादर तान कर खड़ी होती हैं। दूल्हा के सामने माँ और पीठ के पीछे नाइन खड़ी होती है। माँ द्वारा दूल्हा का टीका कर मुँह मीठा कराया जाता है। मूसल और बट्टा उतारा जाता है तथा आरती की जाती है। सात बार सात रोटियाँ भी फेंकी जाती हैं। राई-नौन से दूल्हे की नजर उतारी जाती है। तत्पश्चात् दूल्हा चौक में रखी हुई कच्ची मलियाँ या दीपक को पैर से फोड़ता हुआ घर से निकल जाता है। इसी समय माँ द्वारा दूल्हे को स्तनपान कराया जाता है। दूल्हा घर से निकलकर कुएँ पर जाता है जहाँ कुआँ पूजन होता है। वर की माँ कुएँ में पैर लटका कर बैठ जाती है, तब वह माँ को आजन्म आज्ञाकारी रहने का वचन देता है। उनकी सेवा सुश्रुषा हेतु बहू लाने का आश्वासन देकर माँ का पैर कुएँ से बाहर निकालता है।

इस प्रकार बारात कन्या पक्ष के घर जाने के लिए प्रस्थान करती है। बारात विदाई के समय महिलाएँ यह गीत गाती हैं-

इन गलियन हो कै ल्याइयौ री रघुनाथ बना खौं।
सिर पै सैरा, बाँधों राजा बनरे,
कलगी पै लाल लगाइयौ री रघुनाथ बना खौं।
चन्द्रन खौंरे काढ़ौ राजा बनरे,
टिपकी पै लाल लगाइयौ री रघुनाथ बना खों।
नैनन सुरमा आँजौ राजा बनरे,
सींकन लाल लगाइयौ री रघुनाथ बना खों।
कानन कुण्डल पैरो राजा बनरे,
मुतियन लाल लगाइयौ री रघुनाथ बना खों।
हातन कंकन पैरो राजा बनरे,
चूरा पै लाल, लगाइयौ री रघुनाथ बना खों।
उगरिन मुंदरी पैरो राजा बनरे,
छल्ला पै लाल लगाइयौ री रघुनाथ बना खों।
केसरिया जामा पैरो राजा बनरे,
पनरथ पै लाल लगाइयौ री रघुनाथ बना खों।
पाँउन तोरा पैरो राजा बनरे,
लच्छा पै लाल लगाइयौ री रघुनाथ बना खों।
पाँउन जूता पैरो राजा बनरे,
मौजा पै लाल लगाइयौ री रघुनाथ बना खों।[15]

द्वारचार

बुन्देलखण्ड में विवाह के दिन संध्या समय तक बारात कन्या के घर पहुँच जाती है। बारात का स्वागत करने के पश्चात् जनवासे में ठहरा दिया जाता है। संध्या के समय शुभ घड़ी में द्वारचार की विधि सम्पन्न होती है। बारात कन्या के दरवाजे पर आती हैं। वर की पूजा की जाती है और कन्या का पिता निर्धारित

धनराशि, बर्तन, वस्त्राभूषण आदि भेंट करता है। इसी अवसर पर दुर्गा जनेऊ होता है। द्वारचार की विधि सम्पन्न हो जाने के पश्चात् दूल्हा मण्डप के पास जाकर बाँस का पंखा रखता है। कन्या द्वारा ओट में रहते हुए दूल्हे को पीले चावल मारे जाते हैं। द्वारचार के अवसर पर महिलाओं द्वारा मंगलगीत गाये जाते हैं –

कोट नवै परवत नवै सिर नवै नवाये;
माथो जनक जू कौ तब नवै जब साजन लाये। [16]

चढ़ाव

बुन्देलखण्ड में द्वारचार के पश्चात् चढ़ाव चढ़ता है। नाइन द्वारा कन्या का उबटन कर स्नान कराया जाता है तथा श्रृँगार कर उसे अजुली में सिंधोरी लिए मण्डप में लाया जाता है। मण्डप के नीचे चौक पूरा जाता है। गणेश जी की मूर्ति स्थापित की जाती है। पण्डित द्वारा कन्या से गौर–गणेश की पूजा कराई जाती है। तत्पश्चात् ससुराल पक्ष से आये वस्त्राभूषण गौर–गणेश को स्पर्श कराते हुए कन्या को दिये जाते है, अर्थात् छिलाते हैं। ससुराल से लाई गई लाल चुनरी ससुर द्वारा उड़ायी जाती है एवं सूखा मेवा, नारियल आदि से गोद भरी जाती है। गोद भरने की विधि ससुर एवं जेठ दोनों द्वारा की जाती है। इसी अवसर पर कन्या की बहिन द्वारा मांग भरी जाती है। बदले में उसे वरपक्ष द्वारा लाई गई भेंट दी जाती है। इस अवसर पर महिलाओं द्वारा गीत गाये जाते हैं। एक गीत प्रस्तुत है –

तुम आई चढ़ाय के चौक बेटी राजन की।
समार समार पग धारियो बेटी राजन की।
माथे की बैंदी समारियो बेटी राजन की।
कहूँ झूमर उलझ न जाये बेटी राजन की । [17]

पाणिग्रहण एवं भाँवर

वैवाहिक लोकाचारों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पाणिग्रहण एवं भाँवर की विधि होती है। कन्या का पिता मण्डप के नीचे विराजमान समस्त बारातियों की उपस्थिति में कन्या का हाथ वर को सौंपता है, जिसे कन्यादान कहा जाता है। वर द्वारा जब वधू का हाथ थामा जाता है तो भावी जीवन के समस्त सुख–दु:ख में साथ देने का आश्वासन दिया जाता है। हाथ थामने का अर्थ है– मित्रता, निर्वाह एवं संरक्षण आदि। अर्थात् जो दायित्व अभी तक माता–पिता का था, वह वर को स्थानान्तरित कर दिया जाता है। विवाह के पश्चात् पत्नी के सुख–सौभाग्य की रक्षा का दायित्व पति का होता है। वर, वधू का हाथ थाम कर कहता है–

येनाग्निरस्या भूम्या हस्तं जग्राहदक्षिणम्। तेन ग्रहणामि ते
हस्तं मा व्यथिष्ठा मया सह प्रजया च धनेन च। [18]

अर्थात् जिस तरह अग्नि ने इस धरती का हाथ थाम रखा है उसी तरह मैं भी तेरा हाथ थामे रखूँ। जिससे तू कभी भी व्यथित न हो, मेरे साथ धन व सन्तति का उपभोग कर।

कन्यादान करते समय पिता द्वारा आटे की पिण्डी (लोई) कन्या के हाथ में रखी जाती है। नीचे वर का हाथ लगाया जाता है। लोई के अन्दर यथाशक्ति स्वर्ण, चाँदी, ताँबा आदि का सिक्का रखा जाता है, जिसे गुप्तदान कहते हैं। पिता द्वारा कन्या के हाथ पीले (हल्दी लगाकर) किये जाते हैं और माता द्वारा जल डाला जाता है। कन्यादान के समय गोदान भी किया जाता है। इस विधि के सम्पन्न होते ही कन्या पराई हो जाती है। तत्पश्चात् पाँव पखरई (पैर पूजन) की रस्म प्रारम्भ होती है। सभी परिजन, रिश्तेदार एवं व्यवहारी वर–वधू के पैर पूजकर उपहार देते हैं।

पैर पूजन के पश्चात् सप्तपदी होती है, इसे भाँवर कहा जाता है। मण्डप के नीचे पण्डित दोनों की (वर–वधू) गाँठ जोड़ देता है। चार भाँवर में वर आगे रहता है वधू पीछे एवं तीन भाँवर में वधू आगे वर पीछे रहता है। इसी समय पण्डित द्वारा सप्तपदी का वाचन किया जाता है। सप्तपदी के वाचन में सात वचन वर की ओर से सात वचन वधू की ओर से रखे जाते हैं। सप्तपदी के इन वचनों के माध्यम से वे एक दूसरे के प्रति प्रतिज्ञाबद्ध होते हैं। सप्तपदी की विधि सम्बन्धी वेदोक्त मंत्र इस प्रकार हैं –

वर के सप्त वचन

1. एकमिथे विष्णु सूत्वानयतु। अर्थात् अन्न हेतु विष्णु तुम्हें पहला कदम चलायें।
2. द्वै अज विस्वा सूत्वानयतु। अर्थात् शक्ति उत्पन्न करने हेतु विष्णु तुम्हें दूसरा कदम चलायें।
3. भीणि रायस्पोषाय विष्णु सूत्वानयतु। अर्थात् धर्म की पुष्टि हेतु विष्णु तुम्हें तीसरा कदम चलायें।
4. चत्वारि मायो भवाय विष्णु सूत्वानयतु। अर्थात आत्मिक सुख हेतु विष्णु तुम्हें चौथा कदम चलायें।

5. पंचमी पशुम्यी विष्णु सूत्वानयतु। अर्थात् षड पशुओं की वृद्धि हेतु विष्णु तुम्हें पाँचवां कदम चलायें।
6. ऋतुम्यो विष्णु सूत्वानयतु। अर्थात् छह ऋतुओं हेतु विष्णु तुम्हें छठा कदम चलायें।
7. सप्तपदाभव सामभामनु व्रतभव विष्णु सूत्वानयतु। अर्थात् तुम्हें मेरी अनुगामिनी बनने हेतु विष्णु तुम्हें सातवाँ कदम चलायें।

वधू के सप्त वचन

1. *यदि यज्ञ कुर्यातास्मिन्नम सम्मति गृहणीयात्।*
अर्थात् जो यज्ञ करें, उसमें मेरी सम्मति हो।

2. *यदि दानं कुर्यातास्मिन्नम सम्मति गृहणीयात्।*
अर्थात् जो दान करें, उसमें मेरी सम्मति हो।

3. *अवस्थान्नये मम पालनां कर्यात।*
अर्थात् किशोर, युवा और वृद्धा अवस्था में मेरी पालना करें।

4. धनादि गोपने मम सम्मति गृहणीयात्।
अर्थात् धन इत्यादि गोपनीय रखने में मेरी सम्मति हो।

5. गवादि पशु क्रविक्रये मम सम्मति गृहणीयात्।
अर्थात् सम्पति क्रय-विक्रय में मेरी सम्मति हो।

6. *वसन्तादि षट ऋतुषु मम पालने कुर्यात।*
अर्थात् छः ऋतुओं में मेरी समयानुसार पालना करें।

7. *सखी सुगन हास्य कटुयं वाक्यम् न वदेत् न कुर्यात्।*
तदाहं भवतो वामांगे अगच्छामि।।

अर्थात्- सखी-सहेलियों में मेरी हँसी न करें और न कठोर वचन उनके सामने कहे। यदि आप यह सब शर्तें स्वीकार करें तो मैं आपके वाम अंग आऊँ।

भांवरों के बीच में लोटपटा भी होता है, जिसमें वधू बाईं ओर से दाईं ओर तथा वर दाईं ओर से बाईं ओर बैठता है। भाँवरों के बीच में ही वर द्वारा सोने या चाँदी के सिक्के से वधू की माँग भरी जाती है। इसी समय शिला या पत्थर पर पैर रखकर प्रतिज्ञा की जाती है कि वे अपने जीवन सम्बन्धों में चिर स्थायित्व बनाये रखेंगे एवं अपने उत्तरदायित्व के निर्वाहन में शिला या चट्टान की भाँति अटल और अडिग रहेंगे। पण्डित द्वारा इस समय इस मंत्र का उच्चारण किया जाता है -

ऊँ आरोहेममश्मानमश्मेव त्वं स्थिरा भव।
अभितिष्ठ पृतन्यतोऽवबाधस्व पृतनायतः।।[19]

सप्तपदी के मध्य ही धान बुवाई का नेग होता है। वधू का भाई सूप में लावा लेकर वधू के हाथों में डालता है, जिसे वर द्वारा वधू के हाथ के नीचे हाथ लगाकर गिराया जाता है। वर पक्ष की ओर से भाई के लिए उपहार आता है। भाभी द्वारा बिछिया दबाने की रीति भी इसी समय सम्पन्न होती है। हिन्दू विवाह पद्धति में वर-वधू को मण्डप के बाहर ले जाकर ध्रुव तारा दिखलाया जाता है तथा पण्डित द्वारा इस मंत्र का उच्चारण किया जाता है -

ओं ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं जगत्।
ध्रुवासः पर्वता इमे ध्रुवा स्त्री पति कुले इयम्।
ओं ध्रुव मसि ध्रुवन्त्वा पश्यामि ध्रुवैधि पोष्ये मयि।
मह्यंत्वादाद् वृहस्पतिर्मयापत्या प्रजावती संजीव शतम्।[20]

अर्थात् हे वरानने! जैसे सूर्य की कान्ति और विद्युत, सूर्य लोक तथा पृथिव्यादि में निश्चल हैं, जैसे भूमि अपने स्वरूप में स्थिर है, जैसे यह सब संसार प्रवाह स्वरूप में स्थिर है, जैसे ये प्रत्यक्ष पहाड़ अपनी स्थिति में स्थिर हैं, वैसे मेरी पत्नी मेरे कुल में सदा स्थिर रहे। हे स्वामी! जैसे आप मेरे समीप दृढ़ संकल्प करके स्थिर हैं या जैसे मैं आपको स्थिर दृढ़ देखती हूँ, वैसे ही सदा के लिए मेरे साथ आप दृढ़ रहियेगा। क्योंकि मेरे मन के अनुकूल आपको परमात्मा समर्पित कर चुका है, वैसे मुझे पत्नी के साथ उत्तम प्रजायुक्त होकर सौ वर्ष पर्यन्त जीवन प्राप्त करिये तथा हे वरानने पत्नी! धारण और पालन करने योग्य मुझ पति के निकट स्थिर रह मुझको अपनी मनसा के अनुकूल, तुझे परमात्मा ने दिया हैं, तू मुझ पति के साथ उत्तम प्रजायुक्त होकर सौ वर्ष पर्यन्त आनंदपूर्वक जीवन धारण कर।

वर-वधू का दाम्पत्य जीवन सुख-समृद्धि एवं शान्ति से भरा रहे इस निमित्त पण्डित पुरोहितों द्वारा आशीष वाचन किया जाता है -

शशि धरासुतो गुरु गणाधियो भानु भार्गवो।
सूर्य नन्दनो राहुश्रकेतुप्रभृति नवग्रहः कुर्वन्तु पूर्ण मनोरथ सदा।

कन्यादान पाँव पखरई एवं भाँवर से सम्बन्धित अत्यन्त भावपूर्ण गीत गाये जाते हैं। क्रमशः गीत प्रस्तुत हैं –

कन्यादान गीत – *माई बाबुल जुरमिल हरदी ल्याये जू।*
बेटी के हाथे पीरे करकें धरदये सजन जू हाथ जू।[21]

पाँव पखरई गीत – *गंगा को नीर सुरंगा कलश भर व्याइयों हो।*
माई हाथ के गडुअना बाबुल कस डोले रे।[22]

भाँवर गीत – *भाँवर पड़न लगी सिया जू की बेटी हुई पराई जू।*
पहली भाँवर जब फेरियो बेटी अबहूँ हमारी जू।
सातई भाँवर जब फेरियों बेटी हो गई पराई जू।[23]

धान बुवाई – *धान बयो, वीर धान बयो तुमारी बहन धनवन्ती होय।*
दूध सींचो भौजी दूध सींचौ तुमारी ननद
पुत्रवन्ती होय।[24]

कोहबर

भाँवरों के पश्चात् वर-वधू को कोहबर (मैर का कक्ष) में ले जाया जाता है। यहाँ हास-परिहास के वातावरण में लहकौर की रस्म होती है] जिसमें वर-वधू एक दूसरे को खिलाते हैं। इसे दूदा भाती भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें दूध-चावल के सात कौर वधू, वर को और पाँच कौर वर-वधू को खिलाता है। इसके पश्चात् बाती मिलाई होती है। एक दीपक में जलती हुई दो बत्तियों को वर के द्वारा सोने या चाँदी की सलाई से मिलाकर एक किया जाता है। यह दो आत्माओं अथवा शक्तियों के एकत्व का द्योतक है। इसके बाद जूता पूजाई अर्थात् स्त्रियों द्वारा जूता एक मटके या कपड़े में छिपाकर रख दिये जाते हैं और उन्हें देवता बताकर वर से पैर छुलवाये जाते हैं। जिन लोगों को इस परिहास का पूर्व ज्ञान करा दिया जाता है, वे पैर नहीं छूते हैं। जिन्हें ज्ञान नहीं होता वे छू लेते हैं तथा साली-सरहजों के परिहास का माध्यम बन जाते हैं। इसी अवसर पर वर-वधू से कुलदेवता की पूजा भी कराई जाती है। वर को प्रसाद रूप में मांयें दी जाती हैं। कोहबर की इस लोकरीति के सम्पन्न होने के पश्चात् वर जनवासे चला जाता है। कहीं-कहीं लाकौर की विधि जनवासे में भी होती है। जिसमें महिलाएँ वर के लिए भोजन सामग्री लेकर जनवासे जाती हैं। जहाँ हास-परिहास के साथ रंग-गुलाल भी खेला जाता है। इस लोकाचार के अवसर पर जो गीत गाया जाता है, वह है –

लहकौर

राम लखन व्याहन खों आये सीता जनक दुलारी वे हां हां वे हूं हूं वे।
हाथी घोड़ा ऊँट पालकी रथ बग्घी असवारी वे हां हां वे हूं हूं वे।
डेरा जनवासे में दे दये राजे अवध बिहारी वे हां हां वे हूं हूं वे।
फर्श गलीचा बिछे अनेकन धूम मची है भारी वे हां हां वे हूं हूं वे।
कछु न कावे मन मुस्कावे देवे पान सुपारी वे हां हां वे हूं हूं वे।
दै गुलाल सखियन खां घाले निरदय,
निपट अनारी वे हां हां वे हूं हूं वे।
नसा दई रेशम की अंगिया रन बन हो गई,
सारी वे हां हां वे हूं हूं वे।
ठाड़े सब नर नारी कर जोरे चरनन की,
बलिहारी वे हां हां वे हूं हूं वे ।[25]

बाती मिलाई

सखी री भाँवर पर गई बाती मिलन खाँ भीतर गई लिवाय।
सखी री सोहे जोड़ी चारो भइयन की शोभा बरन न जाय।
सखी री लक्ष्मी निधि की नारी आई कंचन दीप जलाय।
सखी री कि बाती तुम्हें ताती लागत है कि तुम रहे डराय।
नेग में लाल घोड़ा लइलेओ हाथी लइलेओ माता खां देव पठाय।[26]

कुँवर कलेवा– विवाह के दूसरे दिन विदाई के पूर्व कलेवा होता है। इस लोकाचार में वर के भाई एवं साथी साथ में बैठते हैं। सभी के समक्ष विभिन्न प्रकार के मिष्ठान परोसे जाते हैं। वर को उसकी इच्छानुसार नेग मिलता है। सभी महिलाएँ वर एवं उसके साथियों का तिलक कर भेंट देती हैं। इसके उपरान्त वर द्वारा मण्डप का बंध खोला जाता है तथा खप्पर लौटाया जाता है। इस हेतु वर को नेग दिया जाता है। सास उसके सिर पर अपना आंचल रखती है। इसी समय कन्या का पिता वर पक्ष के बुजुर्ग व्यक्ति या समधी को बेला (काँसे का पात्र) सौंपते हैं। इसे दायजा या बेला सौंपना कहते हैं। दूल्हे की सालियाँ इसी अवसर पर दूल्हे के जूते चुरा लेती हैं और तब तक नहीं देतीं, जब तक उनको मनचाहा नेग नहीं मिल जाता है। कलेवा के समय महिलाओं द्वारा गीत गया जाता है –

वन में दौरी गइया वा चरे बिजोरे,
आये चारऊ भइया जे करन कलेवा।

जनक भूप अगनैया जे करन कलेवा,
चंदन पलका डारो तुम राम बिराजो।
नैना सुफल करैया जे करन कलेवा,
सुन्दर व्यंजन परसे सो धरे अगारे।
जा को देवत ताले सो धरे अगारे,
जैबे राम रघुरैया जे करन कलेवा।
हँस-हँस पूंछे सखियाँ जो लाल बता दो,
सुन लो धनुष टुरईया जे करन कलेवा।
जे गोरे तुम कारे जो भेद बता दो,
यश राकेश रचइया जे करन कलेवा।[27]

बंध छोरन

छोरो-छोरो सलोने थराई में कहा लैहो बंध छुराई में।
मांगत नेग जो राज दुलारे हम का दैवे लाक तुम्हारे।
जब से रूप अनूप निहारे लोचन हो गये सफल हमारे।
करौ विनती निहोर रघुराई मैं कहा लैहो बंध छुराई में।
तुम हो सब जग के बिचरैया विनती सुनियो चारऊ भइया।
प्यारे जू कहै हमारी मईया तुम बिन कौ है पार लगइया।
अब कोऊ हमें देत न दिखइया कहाँ लैहो बंध छुराई में।[28]

विदाई

कन्या पक्ष के यहाँ कलेवा के पश्चात् अन्तिम वैवाहिक लोकाचार विदाई का होता है। वर-वधू को मण्डप के नीचे खड़ा करके घर परिवार की महिलाएँ निहारन करती हैं। हल्दी, अक्षत एवं रोली से वर-वधू का तिलक किया जाता है तथा भेंट दी जाती है। निहारन की रस्म पूर्ण होने पर वधू की माँ (समधिन) वर के पिता (समधी) को सूप सौंपती है। यह सूप सौंपने की क्रिया में वर-वधू के आगे कन्या की माँ और पीछे वर का पिता खड़ा होता है। सूप वर-वधू के ऊपर से पकड़ाया जाता है। इस अवसर पर समधी-समधिन में परिहास भी होता है। सूप सौंपने की विधि सम्पन्न होते ही भाई-बहिन को उठाकर डोली में बिठा देता है। डोली उठते ही सभी की आँखें नम हो जाती हैं। डोली में बैठी बिसूरती बिटिया को गाँव के बाहर तक सभी छोड़ने जाते हैं, जहाँ नाइन द्वारा बिटिया का मुँह धोया जाता है। भाई द्वारा कुछ दूर चलने के पश्चात् डोली लौटाई जाती है। रुदन और क्रन्दन के मार्मिक क्षणों में दु:ख एवं करुणा का संचार करने वाले गीत गाये जाते हैं। एक विदाई गीत प्रस्तुत है -

राजा ससुर घर जाती हैं बेटी करके सोरह सिंगार मोरे लाल।
दम दम दमके माथे की बिंदिया ऊसई गरे को हार मोरे लाल।
अंगना में छोड़ी चुनती मुनइयाँ तुलसी घरा की ढ़ार मोरे लाल।
छूटे वे अमुवा की डारी के झूला सूनी नदी की किनार मोरे लाल।
ममता है छूटीं भाई बहिन की बाबुल को छूटो दुलार मोरे लाल।
भौजी सें छूटीं मीठी सी बतियाँ भइया से छूटो प्यार मोरे लाल।
बहिना सी छूटीं प्यारी ये सखियाँ गुरु से छूटो स्नेह मोरे लाल।
भैया है किल्पे बहिना है सिसके बाबुल ने खाई पछार मोरे लाल।
चन्दा-सी बेटी डोली में बैठी डोला उठाओ कहार मोरे लाल।[29]

देवी-देवता पूजन

बारात वर-वधू सहित जब घर वापिस आती है तो सर्वप्रथम परिवार की बुजुर्ग महिला उनका पानी उतारती है। ऐसा माना जाता है कि पानी उतारने से नवविवाहित जोड़े के साथ रास्ते में यदि अनिष्टकारी आत्माएँ आ गई हों तो वे भाग जाती हैं। पानी उतारने के पश्चात् बहिन द्वारा शरबत पिलाया जाता है या दूध-भात खिलाया जाता है, जिसका उसे नेग मिलता है। शुभ घड़ी में बहू का गृह प्रवेश होता है। ननद द्वारा मार्ग रोका जाता है, भाई-भाभी से नेग मिलने पर उन्हें अन्दर प्रवेश दिया जाता है। तदुपरान्त मैर के घर में कुलदेवता की पूजा होती है। मैर के ही कक्ष में खिचड़ी की रस्म होती है। बहू द्वारा मापक पात्र (पैला) में भरकर खिचड़ी रखी जाती है। वर द्वारा पैर मार कर उसे बिखरा दिया जाता है। ऐसा सात बार किया जाता है। यही खिचड़ी वधू द्वारा अंजुली में भरकर पाँच या सात बार घर-परिवार की महिलाओं की गोद में डाली जाती है। इसके पश्चात् नव वधू की गोद में कपड़े से भलीभाँति बंधा हुआ लोढ़ा वर द्वारा रखा जाता है, जिसमें बहू के पुत्रवती होने की भावना अंतर्निहित होती है। इसके पश्चात् शुभ तिथि पर वर-वधू को देवी-देवता पूजने हेतु ले जाया जाता है। वर-वधू से देव पूजन करवाकर ध्वजा, नारियल, पान, बताशा चढ़वाया जाता है। तथा मन्दिर के दरवाजे पर हाथा लगवाये जाते हैं। तत्पश्चात् कुल या खानदान के सभी घरों में वर-वधू को हाथा लगवाने हेतु ले जाया जाता है। तदुपरांत निहारन या मौचाइनों की रीति सम्पन्न होती है। कन्या के मायके से आये हुए सुसज्जित सूप एवं गुना (बेसन का गुठा हुआ पकवान) से वधू का मुख निहारा जाता है? और मुँह दिखाई में उपहार स्वरूप आभूषण आदि दिये जाते हैं। इस समय यह गीत गाया जाता है -

सोने का सूप सरैया तोरी सासु निहारे रे,
अब का निहारो मोरी सासु बहू जग उजियारी रे।[30]

कंकन छुराई

वर-वधू द्वारा कंकन छोरने का लोकाचार अत्यन्त मनोरंजक होता है। प्रथम तो हास-परिहास के वातावरण में कंकन छुड़वाया जाता है। कंकन की उलझी हुई गाँठे खोलना अत्यन्त कठिन होता है। इन्हें खोलने में वर-वधू का युक्तिचातुर्य परखने का प्रयास किया जाता है। कंकन खुल जाने पर दूध मिश्रित जल या फिर हल्दी मिश्रित जल के थाल में कंकन और अंगूठी डाल दी जाती है। उसे वर-वधू दोनों मिलकर ढूँढते हैं, जिसे वह प्राप्त हो जाता है, उसकी जीत होती है। कंकन छोड़ते समय महिलाएँ यह गीत गाती हैं-

जौ नै होय धनुष को टोरबो, कठिन कंकन गांठ छोरबो।
तुमने जनकपुरी पग धारे शिव के धनुष टोरकैं डारे।
जौ नै होय मारीच को मारबो कठिन, कंकन गांठ छोरबो।
हम हैं जनकपुरी की नारी आखिर सारी लगें तुम्हारी।
जिनको बिन हथयारन मारबो कठिन कंकन गाठ छोरबो।
वे तो जनकपुरी की नारी हँसी करें तुम्हारी।
अब तो सीखो सिया खों कर जोरबो कठिन कंकन..... ।[31]

इस प्रकार वर पक्ष एवं कन्या पक्ष के यहाँ समग्र वैवाहिक लोकाचार सम्पन्न होने के पश्चात् दसवें दिन दशवाननी होती है, जिसमें मैर मांयें बनकर मैर की पूजा, सत्यनारायण कथा, सुहागिले एवं बहू से भोजन बनवाने आदि के पश्चात् खम्भ निकालकर मण्डप का विसर्जन किया जाता है। विवाह के ही वर्ष भादौ मास की शुक्ल पक्ष की छठवीं एवं सातवीं तिथि को मैराई छठ मनाई जाती है, जिसमें छठवीं को वधू का तथा सातवीं तिथि को वर का मौर नदी या जलाशय में विसर्जित किया जाता है। वर-वधू के भावी दाम्पत्य जीवन की सुख-समृद्धि की कामना के साथ वैवाहिक लोकाचार की अन्तिम विधि सम्पन्न होती है।

लोकाचारों में प्रतीकात्मकता

भारतीय संस्कृति में विवाह दो आत्माओं का पुनीत मिलन माना गया है। अतः इस अवसर पर प्रारंभ से लेकर अन्त तक विविध लोकाचार सम्पूर्ण विधि-विधान से सम्पन्न किये जाते हैं। ये लोकाचार मात्र लोक प्रचलित रीति-रिवाज ही नहीं है, वरन् इनके मूल में गंभीर अर्थ छिपा हुआ है। इनका अपना प्रतीकात्मक अर्थ है। विवाह धर्म से जुड़ा हुआ मांगलिक अनुष्ठान है। इस अनुष्ठान की सम्पन्नता के साथ ही नव दम्पत्ति गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर कामना के गहन सागर में अवगाहन करते हुये सांसारिक सुखोपभोग के साथ-साथ कर्त्तव्य (पंचमहाभूत यज्ञ) के विस्तृत महाप्रांगण में प्रविष्ट हो आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त करते हैं। भोग में योग और आसक्ति में अनासक्ति की सत्प्रेरणा वे जिस हरित मण्डप के नीचे ग्रहण करते हैं, वह सृष्टि रचयिता ब्रह्मा का प्रतीक माना गया है। मण्डप के चार खम्भ ब्रह्मा के चार मुख के प्रतीक हैं। मण्डपाच्छादन के लिए प्रयुक्त आम, जामुन की लकड़ी एवं पत्ते सुख-सौभाग्य एवं रसमयता के प्रतीक हैं। मण्डप छाने के लिए प्रयुक्त बाँस एवं उससे निर्मित सूप, टोकनी, टिपारो, पंखा आदि शुभत्व एवं वंशवृद्धि के प्रतीक हैं। मण्डप के नीचे स्थापित कलश सर्वमंगल मांगल्य का प्रतीक है। शास्त्रानुसार कलश समग्र विश्व का प्रतीक है। कलश के मुख में भगवान विष्णु, कण्ठ में शिव, मूल में ब्रह्मा, मध्य में मातृशक्ति का वास है। कलश की कुक्षि में समस्त सागर, सप्तदीप, वसुंधरा और चारों वेदों की स्थिति मानी गयी है। समस्त तत्त्व, प्राणशक्ति गायत्री आदि कलश में अन्तर्निहित हैं, इसीलिए 'उदकुम्भाय नमः' मंत्र का उच्चारण करते हुए हल्दी, चन्दन, अक्षत आदि से कलश का पूजन किया जाता है। यथा-

ऊँ कलशस्य मुखे विष्णुः, कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा, मध्ये मातृगणाः स्मृताः।
कुक्षो तु सागराः सर्वे, सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः, सामवेदो ह्यथर्वणः।
अंगैश्च सहिताः सर्वे, कलशन्तु समाश्रिताः।
अत्र गायत्री सावित्री, शान्ति-पुष्टिकरि सदा।[32]

कलश के शीर्ष पर रखा श्रीफल श्री एवं समृद्धि का प्रतीक है, तो कलश के नीचे रखा हुआ अन्न सम्पन्नता एवं भरे-पूरे जीवन का प्रतीक है। मण्डप के ही नीचे कलश के निकट स्थापित गोबर (गाय का) के गणेश जी विघ्नविनाशक, ऋद्धि-सिद्धि प्रदायक आदि देव के प्रतीक माने गये हैं। विवाह के प्रथम लोकाचार से लेकर अन्तिम लोकाचार तक गणेश जी सर्वप्रथम पूज्य हैं। गणपति जी के पूजन हेतु प्रयुक्त सामग्री हल्दी, चंदन, चावल, सिन्दूर, दूर्वा

एवं कुश का उपयोग वैवाहिक लोकाचारों में सर्वाधिक होता है। हल्दी मंगल, सुख-सौभाग्य एवं पवित्रता की प्रतीक मानी गयी है। अत: लग्न पत्रिका, निमंत्रण पत्र, जामा रंगने, चावल रंगने, कन्यादान आदि अनेकानेक कार्यों में प्रयुक्त होती है। हल्दी का पीलापन आत्मोन्नयन की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति कराता है। वहाँ सांसारिक सुखभोग के साथ-साथ आध्यात्मिक उन्नति का संकेतार्थ है। चन्दन पवित्रता एवं शीतलता का प्रतीक है तो अक्षत वधू के अखण्ड सौभाग्य का प्रतीक है। इसीलिए सप्तपदी के अवसर पर वेदी में प्रज्ज्वलित अग्नि से उत्तर की ओर अक्षत की सात ढेरियों पर वर-वधू एक के पीछे एक पैर रखते हैं तथा सात प्रतिज्ञा करते हैं। मायके से विदा होती कन्या द्वारा अँजुलि में भरकर सिर के ऊपर से आगे बढ़ते हुये पीछे की ओर अक्षत बिखेरना श्री समृद्धि एवं ऐश्वर्य की परिपूर्णता की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है। सिन्दूर सुहाग एवं अनुराग का प्रतीक है। विवाह के अवसर पर कन्या को सर्वप्रथम सुहाग धोबिन द्वारा दिया जाता है जो सामाजिक समन्वय एवं चित्त की निर्मलता का प्रतीक है। गृहस्थ जीवन में प्रविष्ट होने वाली कन्या के हृदय में निर्माल्य अति आवश्यक है। सुहाग लेने का लोकाचार कन्या को तन-मन से सुन्दर बनाने का प्रतीक है। विवाह के अवसर पर दूर्वा या दूब का उपयोग पूजन से लेकर गाँठ बांधने तक किया जाता है। दूब सुकोमलता एवं दुर्घर्ष जीवटता की प्रतीक है। तीव्र आँधी तूफान में जब विशाल से विशाल वृक्ष धराशायी हो जाते हैं, तब नन्हीं-सी दूब अपना अस्तित्व सुरक्षित रखती है। दूब की सहनशीलता, लचीलापन एवं पवित्रता की सराहना करते हुये नानक जी ने दूब के सदृश बनने की सत्प्रेरणा इन पंक्तियों में दी है -

नानक नन्हें है रह्यौ, जैसी नन्ही दूब।
खड़ी घास जल जायेगी, दूब रहेगी दूब।।

दुर्दमनीय ऊर्जा की स्रोत यह दूब नारी की उस असीम सहनशीलता और अक्षय संघर्ष क्षमता की प्रतीक है, जो विपरीत परिस्थितियों में भी कमजोर नहीं पड़ती। वास्तव में घर-गृहस्थी चलाने हेतु ऐसी ही जीवटता की आवश्यकता होती है। इसीलिए वैवाहिक मंगलाचारों में दूब का अत्यधिक महत्त्व है। कुश त्याग एवं तपस्या का प्रतीक है। इसीलिए विवाह के अवसर पर कुश का आसन, कुश की पैंती, कुश के टुकड़ों का उपयोग किया जाता है। कुश पवित्र होता है। उसमें अनिष्टकारी तत्त्वों को नष्ट करने की अद्भुत क्षमता होती है। कुश की नौक अति तीक्ष्ण होती है जो इस बात का प्रतीक है कि गृहस्थ जीवन में परिवार के कुशल संचालन हेतु विवेक युक्त कुशाग्र बुद्धि और तीव्र निर्णय क्षमता की आवश्यकता होती है, तभी विभिन्न विचारधाराओं के सदस्यों के मध्य सामंजस्य स्थापन संभव हो पाता है। विवाह के अवसर पर श्रीफल अर्थात् नारियल का उपयोग वरीक्षा से लेकर विदाई तक के प्रत्येक लोकाचार में ग्रहण एवं अर्पण के रूप में किया जाता है। इसके साथ ही साथ समग्र देवताओं का प्रतीक माना गया है। इस हेतु विवाह के अवसर पर चाहे वह वरीक्षा के समय वर के हाथों में रखा जाये या फिर मण्डप के नीचे ससुर द्वारा वधू की गोद में डाला जाय अथवा अन्यान्य अवसरों पर जहाँ भी नारियल का उपयोग होता है, वहाँ वह सम्मान व आशीर्वाद का ही प्रतीक होता है। नारियल की बाहरी कठोरता और आभ्यंतर कोमलता इस बात का प्रतीक है कि दाम्पत्य जीवन में अनुशासन, समता और सामंजस्य बनाये रखने हेतु ऊपर से भले ही कठोरता बरतनी पड़े, लेकिन अन्दर से कोमल भावना युक्त ही होना चाहिए। तभी परिवार में सुख-समृद्धि, प्रेम और शान्ति स्थापित हो सकती है।

कन्या दान एवं सप्तपदी के अवसर पर वर-वधू द्वारा मौर धारण किया जाता है। मौर कंटीले खजूर की शाखाओं से निर्मित होता है। खजूर वृक्ष की विशेषता है कि यह बंजर भूमि में उगता है। आंधी-तूफान जैसी विनाशकारी स्थितियों में वैसा ही खड़ा रहता है। उसकी पत्तियों में नुकीलापन होता है जो इस बात का प्रतीक है कि गृहस्थ जीवन पर चलना कंटकाकीर्ण मार्ग पर चलने के समान है। इस मार्ग पर चलते हुये वही लोग अपना जीवन सार्थक बना सकते हैं जो प्रत्येक परिस्थिति में अपना सन्तुलन बनाये रखते हैं तथा बुद्धि और हृदय में समन्वय स्थापित रखते हैं। माता-पिता द्वारा कन्यादान के समय वर के हस्त में कन्या का हस्त सौंपना इस बात की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति कराता है कि उनकी एवं मण्डप में उपस्थित सभी स्वजन एवं परिजन की सहमति से युगल हस्त एकता के सूत्र में आरूढ़ हो रहे हैं। उनके हस्त के अग्रभाग में विराजमान लक्ष्मी, कर के मध्यभाग में विराजमान सरस्वती एवं कर के मूल भाग में विराजमान विष्णु उन्हें शुभाशीष देते हुये कर्त्तव्य पथ पर आरुढ़ होने की शक्ति प्रदान कर रहे हैं। अब वे एक नहीं वरन् दो शक्तियाँ हैं, जो कदम ताल करते हुये जीवन पथ पर चलने हेतु तत्पर हैं। कन्यादान के पश्चात् सप्तपदी के अवसर

पर शिला के ऊपर पैर रखना इस बात का प्रतीक है कि जिस प्रकार यह शिला अटल, अचल और स्थिर है, वैसे ही वे भी प्रत्येक परिस्थिति (सुख एवं दु:ख) में अटल, अचल एवं स्थिर रहेंगे। अग्नि के सात फेरे या परिक्रमा सप्तसिन्धु, सप्तवन, सप्तलोक, सप्तऋषि एवं सप्तद्वीप की परिक्रमा के प्रतीक हैं। ये समस्त उपादान वर एवं वधू के एकसूत्रता में बंधने के साक्षी हैं। कोहबर में बाती मिलाने का लोकाचार जिसमें दो प्रज्ज्वलित दीपशिखाओं को वर द्वारा आपस में मिलाया जाता है, यह इस बात का प्रतीक है कि अभी तक दो शक्तियाँ जो अपना पृथक अस्तित्व रखती थीं, आज वे अपना द्वैतभाव विगलित कर एक दूसरे में अपने अस्तित्व का विलय कर, एक मन हो आगे बढ़ने हेतु संकल्पित हो रही हैं।

इन वैवाहिक लोकाचारों के साथ-साथ वर पक्ष और कन्या पक्ष के मुख्य द्वार पर भित्ति चित्र बनाये जाते हैं तथा भू-अलंकरण भी किया जाता है। स्वस्तिक, विघ्न विनाशक श्री गणेश जी, उनका वाहन मूषक, बेल-बूटा, फूल-पत्तियाँ, गमला, हाथी-घोड़ा, पालकी, कलश, शुक एवं मीन आदि अंकित किये जाते हैं। दोनों परिवारों के दरवाजे पर बने ये भित्ति चित्र वर-वधू का स्वागत तो करते ही हैं साथ ही इस बात के प्रतीक भी हैं कि घर में प्रवेश करने वाले नव दम्पत्ति जन्म-जन्मान्तर तक अविच्छिन्न बने रहें और उनकी वंश वृद्धि हो। उनके दाम्पत्य जीवन में आने वाली समस्त विघ्न बाधायें नष्ट हों। उनका जीवन श्री-समृद्धि एवं प्रेम से आपूरित रहे। प्रत्येक अवसर पर पूरा गया अष्टमुखी चौक, अष्ट सिद्धि और अष्टांग योग का प्रतीक है। घर की ज्येष्ठा द्वारा मुख्यद्वार, कुलदेवता के कक्ष एवं देवी के मन्दिर पर गेरू से चौखटा बनाकर उसके ऊपर त्रिभुज अंकित कर बनाई गई मानवाकृति कुलदेवता का प्रतीक है। इनका द्वार पर अंकन नवयुगल के शुभागमन पर आशीर्वाद हेतु कुलदेवताओं के खड़े होने का प्रतीक है। चूँकि भारतीय धर्मशास्त्रों में वधू को लक्ष्मी स्वरूपा माना गया है। वधू द्वारा हाथा लगवाने के पीछे प्रतीकात्मकता यह है कि जो वधू गृहलक्ष्मी बनकर अपने स्वामी के साथ गृहस्थ जीवन में प्रवेश कर रही है, उस पर समस्त देवी-देवताओं का वरद्हस्त सदा बना रहे। उसका जीवन एवं गृह सदैव खुशियों एवं धन-धान्य से आपूरित रहे। उनमें आपसी प्रेम, सामंजस्य एवं विश्वास बना रहे ताकि वे सुख-समृद्ध परिवार की स्थापना करते हुये सौ वर्षों तक गृहस्थ जीवन का सुखभोग कर आत्मिक अर्थात् आध्यात्मिक उन्नति को प्राप्त हों। मनुस्मृति में उद्घोषित किया गया है -

सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।।[33]

अर्थात् जिस कुल में पत्नी से पति प्रसन्न है और पति से पत्नी प्रसन्न है, तो निश्चय जानो कि उस कुल में सुख-समृद्धि एवं कल्याण का सर्वदा निवास रहता है।

सन्दर्भ

1. रेमण्डो पणिक्कर - द वैदिक एक्सपीरियन्स, पृ. 258, 257
2. मनुस्मृति 2/19-50
3. डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय -लोक संस्कृति की भूमिका, पृ. 84
4. डॉ. के.एल.वर्मा 'बिन्दु' - बुन्देली लोक साहित्य एक अनुशीलन पृ. 44, 45
5 से 8 निजी संग्रह
9. डॉ. बलभद्र तिवारी - बुन्देली लोककाव्य भाग 01 पृ. 53, 54, 55, 57
10 से 12 निजी संग्रह
13. डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त - बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास, पृ. 180
14. निजी संग्रह
15. अथर्ववेद 14/09/48
16. पारस्कर गृहसूत्र 1/7/1
17. महर्षि दयानंद सरस्वती - संस्कार विधि: पृ. 170
18. श्रीचन्द्र जैन - बुन्देली लोकसाहित्य एक सांस्कृतिक अध्ययन, पृ. 50
19 से 20 निजी संग्रह
21. शिव सहाय चतुर्वेदी - बुन्देलखण्डी लोकगीत पृ. 117
22 से 27 निजी संग्रह
28. डॉ. बलभद्र तिवारी - बुन्देली लोककाव्य, भाग 1 पृ. 69-70
29. पण्डित श्रीराम शर्मा - कर्मकाण्ड, भास्कर पृ. 43
30. मनुस्मृति 3/60

बिआव के नेंगचार

डॉ. हरिविष्णु अवस्थी

भारतीय संस्कृति में जन्म से लेकर मृत्यु तक की अवधि में सोलह संस्कारों का विधान है। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण विवाह संस्कार होता है। इसके बिना गृहस्थ जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। देश के विभिन्न भागों में विवाह की रीति-नीति एवं लोकाचार की परंपराओं में एकरूपता देखने को मिलती है, जिन पर सामाजिक विकास और संस्कृति में समयानुसार होते परिवर्तन का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

बुन्देलखण्ड में विवाह एक ऐसा उत्सव है, जिसमें समाज के हर वर्ग की भागीदारी होती है। ब्राह्मणों पर विवाह संस्कार कराने, क्षत्रियों पर रक्षा का दायित्व, वैश्य पर विवाह हेतु आवश्यक खाद्य सामग्री एवं आवश्यकता होने पर धनराशि की व्यवस्था का दायित्व होता है, आभूषणों के निर्माण का कार्य स्वर्णकार, पोशाक के निर्माण दर्जी नामदेव द्वारा, विवाह हेतु मौर एवं बन्दनवार (मुकुट) माली द्वारा, मिट्टी के बर्तनों एवं विवाह में भाँवर (परिक्रमा) के समय 'बेरी' नामक मिट्टी के छोटे-छोटे पात्रों की व्यवस्था कुम्हार द्वारा, सम्बन्धियों के स्वागत सत्कार हेतु ताम्बूल की व्यवस्था तमोली द्वारा, लुहार द्वारा कंकन, कचेरे द्वारा काँच की चूड़ियों, ककेरे द्वारा ककई, ककआ, जोगी द्वारा-कचारा तथा अन्य आवश्यक सामग्री आदि। विवाह में सबसे महत्त्वपूर्ण सेवाओं का योगदान ब्राह्मण (नापित-सैन) एवं ढीमर (भोई कड़ा) का होता है। इनके अभाव में विवाह कार्य सम्पन्न होना लगभग असंभव लगता है।

घर-परिवार में कन्या के विवाह योग्य होने पर उपयुक्त वर की तलाश का दायित्व नाई का होता था। अपने सम्पर्क के माध्यम से वह अपने क्षेत्र के हर जाति वर्ग के विवाह योग्य लड़कों एवं घर परिवार की आर्थिक एवं सामाजिक हैसियत की जानकारी रखा करता था। नाई कन्या के उपयुक्त घर-वर की जानकारी के साथ लड़के की जन्म कुण्डलियाँ लाकर कन्या पक्ष को उपलब्ध कराता था। कन्या पक्ष पंडित से कुण्डली का मिलान करने का अनुरोध करता था। कुण्डली का मिलान हो जाने पर कन्या का पिता पंडित जी

एवं नाई से वर पक्ष से जीवंत सम्पर्क कर विवाह तय करने हेतु वर पक्ष के यहाँ जाने का विनम्र अनुरोध करता था।

पंडित और नाई अधिक बारीकी से वर पक्ष की आर्थिक एवं सामाजिक हैसियत का आकलन कर और पूर्णतः संतुष्ट होने पर ही वर के पिता से कन्या पक्ष की ओर से विवाह सम्बन्ध स्वीकार करने का अनुरोध करते। विवाह हेतु वर पक्ष की सहमति प्राप्त होने पर कन्या को देखने हेतु आने का अनुरोध करते थे। कन्या देखने की तिथि निश्चित हो जाने पर वह वापिस लौटकर कन्या पक्ष को इसकी सूचना देते थे। निश्चित तिथि को वर पक्ष के लोग आकर कन्या देखने की रस्म अदायगी करके विवाह की स्वीकृति देते थे। वर पक्ष द्वारा कन्या देखने की परम्परा उस समय उच्च वर्ण तक ही सीमित थी। अन्य वर्णों में यह प्रथा नहीं थी। अधिकांशतः पंडित और नाई दोनों विवाह तय करने हेतु अधिकृत होते थे। वह समाज की उपस्थिति में वर को नारियल, मिष्ठान तथा स्थिति अनुसार धनराशि भेंट कर पक्का करने की औपचारिकता पूर्ण करते थे। इस क्रिया को 'घर छैकना' कहा जाता था।

इसके पश्चात् विवाह पूर्व कन्या पक्ष द्वारा वर पक्ष के यहाँ जाकर समाज की उपस्थिति में वरीक्षा कार्यक्रम सम्पन्न होता था, जिसे बोलचाल की भाषा में 'पक्कयात होना' कहा जाता था। इसके पश्चात् कन्या पक्ष के यहाँ जाकर वर पक्ष कन्या की ओली (गोदी) भरता था। यह दोनों आयोजन वर-कन्या की परस्पर सहमति से सम्पन्न होते थे। इनमें पक्कयात पहले हो और उसके बाद ओली भरी जाय अथवा पहले ओली भरी जाय और बाद में पक्कयात जैसा कोई बन्धन नहीं था। वर-कन्या पक्ष की परस्पर सहमति से कोई भी कार्यक्रम पहले सम्पन्न कराया जा सकता था। इसके पश्चात् वैवाहिक आयोजन की तैयारी आरंभ हो जाती थी।

कन्या पक्ष अपने पंडित जी से पाणिग्रहण संस्कार का शुभ मुहूर्त निकलवा कर विवाह निश्चित तिथियों की सूचना लिखित रूप से वर पक्ष के यहाँ नाई द्वारा भेजते थे। पंडित जी दो प्रतियों में विवाह का शोधन कर पत्र तैयार करते थे। एक प्रति जो वर पक्ष को भेजी जाती थी, उसे 'सुतकरा' कहा जाता था। शोधन की एक प्रति कन्या पक्ष के पास रहती थी। शोधन में कन्या पक्ष की ओर से वर पक्ष के यहाँ लगुन (लग्न पत्रिका) भेजने, टीका, परिक्रमा आदि की तिथियों का पूर्ण वर्णन रहता था। सुतकरा आने पर विवाह की तैयारी जोर-शोर से आरंभ हो जाती थी।

सुतकरा में दी गई तिथियों के अनुसार कन्या पक्ष के यहाँ लगुन (विवाह लग्न पत्रिका) लिखने हेतु पंडित जी आते हैं। इसका बुलौआ दिया जाता था। कन्या पक्ष से सम्बन्धित स्त्री-पुरुष इसमें शामिल होते हैं। इस विवाह लग्न पत्रिका (लगुन) में टीका (तिलक), भाँवर, पाणिग्रहण की तिथियों के साथ समय भी लिखा जाता है। लग्न पत्रिका लिख जाने पर एक प्रति में पीले चावल, हल्दी की गाँठें, सुपारी खड़ी तथा दूब के साथ चाँदी के कुछ सिक्के डालकर उसे पीले रंग के सूत से बाँधकर वर पक्ष के यहाँ भेजने हेतु तैयार किया जाता है। लगुन जिस पक्ष में विवाह की तिथियाँ निश्चित की गई होती हैं उसके पूर्व पक्ष में लिखने की परम्परा है। इसे विवाह की पूर्व निश्चित तिथि अनुसार वर पक्ष के यहाँ भेजा जाता है। लगुन लेकर पंडित, नाई कन्या के भाई और कुछ अन्य सम्बम्धी जो रिश्ते में कन्या के भाई हो जाते हैं।

वर पक्ष के यहाँ निश्चित तिथि को लगुन लेकर पहुँचने पर लगुन बाचने का बुलउआ होता है। इसमें सम्बम्धी एवं परिवारों के स्त्री-पुरुष भाग लेते हैं। सभी को बुलौआ बाँटा जाता है। आमंत्रितों को भोजन कराया जाता है, जिसे लगुन की पंगत कहा जाता था। अब लगुन की पंगत देने की परंपरा लगभग समाप्त-सी हो गई है।

एक बात और महत्त्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय है कि पूर्व में व्यवहार तीन प्रकार के होते थे। पहले प्रकार के व्यवहारियों को सपरिवार आमंत्रित किया जाता था। जिसमें परिवार के समस्त सदस्य तथा मेहमान भी शामिल होते थे। इसे 'चूल' या व्यवहार कहा जाता है। इसका 'चूल' शब्द का सामान्य अर्थ व्यवहारी के यहाँ चूल्हा न जलना माना जाता है। दूसरी प्रकार के व्यवहारी- 'लोग-लरका' कहे जाते थे। इसमें परिवार के केवल पुरुष एवं लड़के ही भाग लेते थे। घर की महिलाओं एवं लड़कियों को आमंत्रित नहीं किया जाता था। तीसरे प्रकार के व्यवहारी के परिवार का कोई एक व्यक्ति ही आमंत्रित किया जाता था। इसमें आमंत्रित परिवार का कोई एक सदस्य ही भाग ले सकता था। व्यवहार की इन परम्पराओं चूल तथा एकहरे व्यवहार की परम्परा तो अब भी पूर्ववत् चली आ रही है। केवल लोग-लरका के व्यवहार की परम्परा समाप्त हो गई है।

लगुन में आये पंडित, नाई और लड़की के भाई-बन्धु को 'लगुनया' कहा जाता है। लगुनयों की विदाई के पूर्व सभी उपस्थित

आमंत्रितों के समक्ष वर पक्ष द्वारा नाई के समक्ष कुछ चाँदी के सिक्के रखे जाते थे और नाई से व्रत उठाने हेतु कहा जाता था। नाई चाँदी का सिक्का उठाने में आनाकानी करता और कहता- हजूर! हमाय मालक तो पतरी हरदी को टीका कर सकत। अपुन खों कछू देवी की हैसियत नईयाँ। लड़के वाले उस पर व्रत उठाने हेतु बराबर दबाव डालते रहते। नाई पहले बड़ी कठिनाई से एक सिक्का उठाता और दबाव बढ़ने पर वह कुछ सिक्के उठाये या ना उठाये यह नाई के विवेक और उसके मालिक अर्थात् कन्या के पिता की आर्थिक क्षमताओं पर निर्भर करता था। व्रत उठाने का अर्थ होता था कन्या पक्ष से दहेज में मिलने वाली नगद राशि का अनुमान। नाई यदि एक सिक्का उठाता तो उसका अर्थ होता था- एक सौ रुपया व्रत में जितने सिक्के नाई द्वारा उठाये गए उतने सैकड़ा नगद राशि कन्या पक्ष द्वारा दहेज में दिया जाना निश्चित माना जाता था। व्रत में अधिकतम तीन सिक्के ही नाई उठाता था। क्योंकि कन्या पक्ष द्वारा तीन सौ रुपया नगद कुँवर कलेवा के नेग में चाँदी का लोटा-गिलास तथा जनेऊ (यज्ञोपवीत) के समय एक तोला सोने के तारों से बना हुआ जनेऊ दिया जाना पूर्ण विवाह माना जाता था। सामाजिक मर्यादा का पालन करने हेतु धनाढ्य व्यक्ति भी विवाह में इससे अधिक दहेज नहीं देता था। एक ओर उल्लेखनीय बात है कि व्रत में जो राशि नाई उठाता था, वह राशि नाई की ही होती थी। इस 'व्रत' उठाने की परंपरा के कारण नाई का एक नाम और भी प्रचलित था- उसे नाई के साथ-साथ प्रतिया जू भी कहा जाता था।

उन दिनों मशीन से चलने वाली आटा पीसने की चक्कियाँ तो होती नहीं थी। विवाह में कितना आटा कितना रैन (बेसन) आदि लगेगा, उसका अनुमान कर सामाजिक सहयोग से उसके पिसवाने की व्यवस्था भी उत्सव के रूप में की जाती थी। विवाह वाला घर चाहे वह वर पक्ष का हो या कन्या पक्ष का, विवाह के दस-पन्द्रह दिन पूर्व प्रचलित परंपरा अनुसार महिलाओं को छटा-छरे का बुलउआ देकर बुलाया जाता था। बुलउआ में जो महिलायें आती है, वह गेहूँ को साफ कर उसे पीसने योग्य बनाती थी। तत्पश्चात् 'चकियाँ धरवे को बुलउआ' नाई-ढीमर सम्बन्धियों, पड़ोसियों के यहाँ से चक्कियां उठाकर वर-कन्या पक्ष के घर में एकत्र कर रख देते थे। सुबह, दोपहर या सायं जब जिस महिला को समय मिलता है, आकर पूर्व निर्धारित मात्रा में गेहूँ पीसकर जाती थी। इस बुलउआ में भी खकरिया बाँटी जाती हैं। इस प्रकार विवाह में व्यय होने वाले आटा की व्यवस्था सहज रूप से सौहाद्रपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हो जाती थी। 'छटे-छटे' एवं चकियाँ धरवे को बुलउआ केवल उन्हीं परिवारों को दिया जाता था, जिनके साथ चूल के व्यवहार होते थे। नाई-ढीमर की महिलाएँ तो आती ही थीं। विवाह कार्य का कोई भी नेग हो उसमें गीत गायन नेग के अनुसार होता है, जिससे उस घर में उत्सव के वातावरण का निर्माण होता था।

छटा-छटे एवं चकियाँ धरबे के बुलउआ होता था 'मटयाबने' का बुलउआ महिलायें एकत्र होकर समूह में गीत गाते हुए ग्राम/नगर की सीमा से लगे भू-भाग से मिट्टी खोदकर छोटी-छोटी टोकनियों में लेकर विवाह घर वापिस लौटती थी। इसके बाद बैठकर घण्टा-आधा-घण्टा गायन होता, बुलउआ बँटता है। विवाह घर की महिलाओं द्वारा इस मिट्टी से चूल्हों का निर्माण किया जाता था। कुलदेवता का प्रसाद बनाने, उसे रखने हेतु आवश्यकतानुसार इस मिट्टी से बर्तन बनाये जाते थे। पुराने समय में भोजन चूल्हों पर ही बनाया जाता था।

गणेश पूजन

मड़वा (मण्डप) एवं मायना का शुभारंभ प्राय: वर पक्ष के यहाँ बारात प्रस्थान के दो दिन पूर्व और कन्या पक्ष के यहाँ बारात आगमन टीका के दो दिन पूर्व होता था। गणेश जी की गोबर से प्रतिमा बनाकर उसे पलाश पत्रों से निर्मित दोनों में स्थापित कर पंडित जी विधिवत पूजन करवाते थे। विवाह आयोजन का समापन दस माननी को होता था। इस दिन यही गणेश जी पूजित होते थे।

गणेश पूजन के दिन बरा बनाने हेतु पर्याप्त मात्रा में उड़द की दाल फूलने हेतु डाल दी जाती है। दूसरे दिन 'दार (दाल) घुबबे' का बुलउआ होता। महिलाएँ फूली दाल लेकर तालाब पर जाती और उसे धो कर उसके छिलके निकाल कर साफ करती थी। धुली हुई दाल लेकर वापिस लौटते समय 'बरा पैबे' को बुलउआ दे दिया जाता था। दोपहर में महिलाएँ आती है और बुन्देलखण्ड क्षेत्र के विवाह का प्रमुख खाद्य पदार्थ बरा बनाती है। बरा बनाने वाली महिलाओं को सूखे बरा खिलाये जाते है। बरा बनाने पर उन्हें रय (बरा बुझाने हेतु तैयार किया घोल) में डाल दिया जाता।

घर के आँगन में डालने हेतु बैलगाड़ी से 'मऽघारू' लाई जाती थी। इसमें पलाश या सलैया की लकड़ी खंभों एवं ऊपर छप्पर डालने हेतु तथा जामुन की पतली-पतली प्रशाखायें पत्तों सहित मण्डप के ऊपर डालने को लाई जाती थी। वर पक्ष का मण्डप पाँच खंभों का और कन्या पक्ष का मण्डप सात खंभों का डाला जाता। मंडप डालने का कार्य पूज्य सम्बन्धी (वर के बहनोई, फूफा आदि) द्वारा किया जाता था। उन्हें इस हेतु नेग भी दिया जाता था। भवन के मुख्य द्वार के दोनों ओर हरे बाँस के पत्तों सहित गाड़ दिये जाते है। मण्डप के मध्य में लगे खंभे से सटा कर खाम गाड़ा जाता। वर पक्ष के मण्डप का खाम छोटा एवं साधारण होता था, जबकि वधू पक्ष का खाम बड़ा तथा बहुत सजावटी होता था। पूरा खाम हल्दी से पोता जाता था। उसे बीच-बीच में हरे एवं लाल रंग से सजाकर आकर्षक बनाया जाता था। कन्या पक्ष के खाम में चारों ओर लकड़ी की ही बनी हुई साँकले झूलती रहती थी, जो खाम की शोभा में चार चाँद लगा देती थी।

मण्डप के नीचे वर और कन्या को बैठाकर उनके मुख, हाथों आदि में हल्दी का लेप किया जाता है। उसके पूरी तरह साफ हो जाने पर तेल लगाया जाता है। इसी क्रिया को 'हल्दी तेल चढ़ाने' का नेग कहा जाता है। इसका मूलत: उद्देश्य वर-कन्या के रूप को निखारना होता है। हल्दी तेल चढ़ाते समय वर-कन्या के हाथों में सता (सात पुआ) रखा जाता है।

मण्डप डलने के ही दिन 'मड़वा' (मण्डप) की पंगत होती है। इसमें पंगत में सामान्यत: सम्बन्धी एवं सजातीय लोग ही शामिल होते हैं। इस पंगत में देवल (चना) की दाल, कढ़ी, भात, फुलकर (देशी घी में तर) बरा, बरो (शक्कर से विशेष रूप से बनाया जाता है) तथा दोनों में शुद्ध घी परोसा जाता है। किसी अन्य समुदाय के लोग मण्डप के नीचे बैठकर भोजन नहीं कर सकते है।

मण्डप के दिन ही या उसके दूसरे दिन 'मायना' होता है। इसके प्रसाद हेतु कठियाँ गेहूँ के आटे की बेर बराबर छोटी-छोटी गोलियाँ तथा सिक्कों के आकार की छोटी-छोटी कुचइयाँ हाथों से बनाई जाती हैं। उन्हें मण्डप पर चढ़ी कढ़ाही में तला जाता है। इसे 'मैर' कहा जाता है। मैर तैयार हो जाने पर मायने की पूजा होती है। मैर केवल कुटुम्बियों में ही वितरित किया जाता है। मायना को कुलदेव की पूजा के रूप में माना जाता है।

चीकटे तथा कंकन पूरने के नेग

मण्डप के नीचे वर तथा कन्या की माताओं को उनके भाइयों द्वारा वस्त्र भेंट किये जाते है। भाई-बहिन भेंटते है। बहिन अपने भाइयों तथा भाभियों को तिलक लगाती है तथा उनका मुँह मीठा करने हेतु बतासा खिलाती है। वर पक्ष के यहाँ चीकट का नेग बारात प्रस्थान के एक दिन पूर्व होता है, जबकि कन्या पक्ष के यहाँ यह नेग कन्या का 'चढ़ाव' (कन्या को वर पक्ष की ओर से मण्डप के नीचे वस्त्राभूषण भेंट किये जाने की रस्म को कहते हैं) चढ़ने के बाद होता है

कंकन लोहे की कुण्डली जैसी कीलों के एक तार से बने छल्ले में पिरोकर बनाया जाता है। कीलों के नोकों पर गुमची लगाकर सुन्दर बनाया जाता है। इसे पीले और लाल सूत के धागों से वर-कन्या की दाहिनी कलाई पर बांधा जाता है। इसे महिलायें वर के बहनोई की सहायता से करती हैं। इसे कंकन पूरना कहा जाता है। इसे प्रेतादि बाधा के कवच के रूप में माना जाता है। कंकन पूरने में धागों में ऐसी अनेक गाँठे लगाई जाती हैं, जिन्हें खोलने में पसीना आ जाता है। इस सम्बन्ध में एक बहुप्रचलित लोकगीत है-'जोन जानो धनुष को टोरवो, कठिन कंकन गाँठ छोरबो'।

बारात प्रस्थान से पूर्व वर को साधू वेष धारण कराया जाता है। हाथों में दाण्ड, पैरों में पादुका धारण कर एक हाथ में कटोरा लेकर वर भीख माँगने का अभिनय करता है। यह प्रथा विशेष रूप से ब्राह्मणों में ही प्रचलित है। घर की एवं सम्बन्धी महिलायें कच्ची खाद्य सामग्री आटा, दाल, चावल, पापड़, घी, मिर्च मसाला उसे भीख के रूप में देती है।

राछ (विनानायकी) एवं देव दर्शन

बारात प्रस्थान के पूर्व वर को पालकी में बिठाकर गाजे-बाजे के साथ उसकी राछरी निकाली जाती है। महिलाओं का समूह पालकी के पीछे गीत गाता है। ग्राम/नगर के देवी-देवताओं के मंदिर में जाकर वहाँ बतासा, पान आदि चढ़ाकर उन्हें वर नमन करता है। इनमें 'हरदौल' लोक देवता के स्थान पर जाकर पूजा करना अनिवार्य होता है। राछरी के समय मार्ग में रहने वाले व्यवहारी वर का टीका करके उसे अपने व्यवहार के अनुसार राशि भेंट

करते हैं। पालकी के साथ चलने वाला वर का बहनोई एक फर्द में नाम और राशि अंकित करता जाता है। देवी-देवताओं के पूजन पश्चात् राछरी वापिस घर लौटती है।

दूल्हा निकासी (बारात का प्रस्थान)

वर के द्वार पर बारात में जाने वाले लोगों के घर से बिस्तर लाकर नाई द्वारा रख दिये है। बाराती अपना-अपना बिस्तर गाड़ियों में जमा लेते हैं। बैलों की जोड़ी भूसा-घास खाकर प्रस्थान हेतु तैयारी की जाती है। घोड़ी को दाना खिलाया जाता है। अभिप्राय यह है कि बारात प्रस्थान की पूर्ण तैयार कर चुकी है, उसमें गोटा लगाया जाता था, पहनाते हैं; वास्तव में बागा मुगल बादशाह द्वारा पहनी जाने वाले अंगवस्त्र की प्रतिकृति होती है। बागे के बाद सिर पर खजूर जैसा बना हुआ मुकुट के आकार का मोर बाँधा जाता है। देशी जड़ाऊ जूते पहना कर दूल्हे को तैयार किया जाता है। अब से 'पनरथ' कपड़े की एक चौड़ी पट्टी जो एक कंधे से लेकर दूसरी ओर बगल में कमर तक रहती है पहनाई जाती है- इसमें एक पान का बीड़ा बंधा रहता है। दूल्हे की कमर में कटार बाँधी जाती है। इसका चलन अधिकतर क्षत्रियों में है। दूल्हे के गले में स्वर्णाभूषण पहिनाये जाते हैं। इस प्रकार दूल्हे का सर्वविधि श्रृँगार कर उसे घर के मुख्य द्वार पर खड़ा किया जाता है। महिलायें और दूल्हे का बहनोई दूल्हे के सिर के ऊपर एक लाल रंग का कपड़ा चंदोवा की भाँति हाथों में पकड़ कर तान लेते हैं। महिलायें मंगल गान कर रही है। घर की एक बुजुर्ग महिला दूल्हे के सिर के चारों ओर मूसल को सात बार घुमाती है। इसके बाद रोटियाँ सिर के चारों ओर घुमाते हुए उसके सिर के ऊपर से बाहर फेंकती है। इसके बाद दूल्हे की बुआ और बहिनें उसे घी लगा कर बताशा खिलाती हैं। इसके पश्चात् दूल्हा बारात हेतु प्रस्थान करता है। वह फिर पीछे मुड़कर नहीं देखता। बारात गन्तव्य के लिए प्रस्थान करती है।

बाबा

बारात प्रस्थान के पश्चात रात्रि में वर पक्ष की महिलायें मनोरंजन हेतु 'बाबा' का आयोजन करती हैं। इनमें एक तेज तर्रार महिला बाबा (साधु) का वेष धारण करती है। कुछ महिलायें पुरूषों का वेष धारण करती है। नकली मूछें लगाकर एवं अस्त्र के रूप में हाथों में बेलन लेकर सिपाहियों की भाँति चलकर अनेक प्रकार के प्रहसन करती है। घर के बाहर निकलकर स्वच्छंदता पूर्वक विचरण करते समय यदि कोई पुरुष मिल गया तो उसे तंग करने, उसका मजाक उड़ाने और बेलन का भय दिखाकर राशि वसूल करने में भी नहीं चूकती। इस बीच हँसी-ठिठोली के साथ हास्यप्रद लोकगीतों का गायन भी चलता है। बाबा का यह आयोजन अर्द्धरात्रि के बाद ही समाप्त होता है।

उन दिनों बिजली तो थी नहीं। गैस बत्ती भी प्रचलन में नहीं आई थी। अस्तु प्रकाश हेतु नाई पलीता (मसाल) जलाकर दूल्हा की पालकी के साथ-साथ चलता। कुछ और मसालची बारात के साथ चलते थे। बाजों में मुख्य बाजा 'रमतूला' होता था, इसके अतिरिक्त तासा आदि भी बजते थे। बारात का रास्ता इस प्रकार निर्धारित किया जाता था कि बारात कन्या के मकान का एक चक्कर लगा सके। कन्या का द्वार निकट आने के पूर्व बारात रूकती है। कन्या पक्ष के सगे-सम्बन्धी समान के साथ भेंट कर उसे कुछ राशि प्रदान कर चरण छू कर गले मिलते। अभिप्राय यह कि लड़की के मामा, वर के मामा से, वधू के फूफा वर के फूफा से और वधू के पिता वर के पिता से चाचा वर के चाचा से भेंट करता था। इस प्रथा को मिल के मिलनी कहा जाता है।

ऊबनी (द्वाराचार टीका)

मिलनी होने के पश्चात् सभी बाराती कन्यापक्ष के द्वार पर पहुँचते हैं। कन्या पक्ष का द्वार बंदनवारों एवं कागज की झंडियों से सजा रहता था। बरातियों के बैठने के लिए चबूतरों पर डोरिया/जाजम (छोटे-छोटे फर्श) बिछाये जाते है। वर का बहनोई पालकी में से वर को गोद में लेकर उतारता है और उसे घोड़ी पर बैठाकर कन्या के द्वार तक ले जाता है, जहाँ पूर्व से महिलायें सिर पर कलश रखे गीत गाती हुई खड़ी मिलती है। पंडित द्वारा टीका की रस्म पूरी होती। वधू पक्ष द्वारा वर को टीका में सामर्थ्यानुसार राशि दी जाती है। इसी बीच वधू पक्ष द्वारा बारातियों का स्वागत चन्दन या रोली का टीका लगाकर एवं पुष्पहार पहना कर किया जाता है। पान-सुपारी खिलाई जाती। टीका होते ही वर का बहनोई दूल्हा को घोड़ी पर से उतार कर वधू के घर के आँगन में बने मण्डप में ले जाकर उसके ऊपर दूल्हे से बिजना (पंखा) फिकवाकर वापिस लौट आता है। इस क्रिया के साथ ही ऊबनी की रस्म पूर्ण होने पर दूल्हा बारातियों के साथ बारात के डेरे पर पहुँच जाता था। उन दिनों वरमाला का प्रचलन नहीं था। बारात का डेरा, गाँव का मंदिर

अन्यथा गाँव के किसी आम, नीम, बरगद के सघन वृक्ष के नीचे दिया जाता था। यहाँ कन्या पक्ष की ओर से चार-पाँच डालियों (मिट्टी के बड़े-बड़े पात्र) में जल भरवा दिया जाता था। अन्य किसी प्रकार की व्यवस्था डेरा में वधू पक्ष द्वारा नहीं की जाती थी। दूल्हा के लिए अनिवार्य रूप से एक पलका (पलंग) की व्यवस्था वधू पक्ष की ओर से होती थी।

बाराती डेरा पर पहुँच कर अपने-अपने बिस्तर बैलगाड़ियों में से उठवाकर उन्हें बिछाकर उस पर बैठकर आपस में बातें करने में लग जाते। इसके आधे घण्टे या एक घण्टे के अन्दर वधू पक्ष की ओर से भोजन हेतु 'पोनछक' (आटा की लगभग एक किलो वजन की एक पूड़ी) उस पर अचार रखा रहता था। वह बारातियों को बाँटी जाती थी। पोनछक का भाव होता था कि जिसका तीन-चौथाई भाग (पोन भाग) खाकर व्यक्ति छक गया। उस समय लोगों का भोजन भी अधिक होता था। पोनछक की शेष बची पूड़ी को आगे के दिन के नाश्ता के लिए संभालकर रख लिया जाता था। बैलों के लिए घास और घोड़ा/घोड़ी के लिए दाने की व्यवस्था वधू पक्ष करता था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य जातियों में रात में ही डेरा पर यज्ञोपवीत (जनेऊ) की रस्म पूर्ण की जाती थी।

चढ़ाओ

चढ़ाओ का दस्तूर दूसरे दिन पंडित द्वारा निर्धारित समय पर होता या। सामान्यत: चढ़ाव दोपहर बाद 2-3 बजे के लगभग चढ़ता था। बाराती सवेरे निवृत होकर शेष बची पोनछक का पान करते। दूल्हे का पिता दोपहर के भोजन की व्यवस्था बारात के डेरा पर घर से लाई गई सामग्री से पूड़ी-सब्जी आदि बनवाकर करता था, उसके पश्चात् वधू पक्ष का नाई आकर चढ़ाव का चौक पूरने हेतु गुलाल की मांग करता तथा बारातियों को चढ़ाव हेतु पधारने का आमंत्रण देता था।

दोपहर का भोजन कर बाराती तैयार होकर वधू के घर पहुँचते है। इसके पूर्व तक पंडित जी मण्डप के नीचे का चौक पूर कर तैयार कर लेते थे। कन्या को नाईन (नाई की पत्नी) मण्डप के नीचे पटा पर बिठाकर स्वयं उसके पीछे बैठ जाती है। कन्या की पोशाक उस समय घाघरा (लहंगा) होती थी। मंत्रोच्चारण के साथ चढ़ाव का दस्तूर आरंभ होता है। वर पक्ष द्वारा लाये गये वस्त्राभूषण छुआकर रख दिये जाते हैं। नाइन सभी वस्त्राभूषण लेकर कन्या को अन्दर ले जाती है। जहाँ कन्या को सभी वस्त्राभूषण पहिनाकर पुन: मण्डप में लाया जाता है। चढ़ाव के मध्य बारातियों द्वारा कन्या पक्ष महिलाओं को बताशों से निशाना बनाया जाता तो महिलायें भी बारातियों पर बताशों की बरसात करती रहती थी। इस प्रकार हास-परिहास में चढ़ाव की रस्म पूर्ण होती और बाराती लौट कर डेरे पर आकर विश्राम करते।

संध्या के समय सभी बारातियों को वधू के यहाँ भोजन के लिए आमंत्रित किया जाता। दूल्हा पालकी में बैठकर और बाराती सज-धजकर वधू पक्ष के यहाँ भोजन हेतु पहुँचते। द्वार पर एक नाद (पीतल का पात्र) पानी से भरकर रखा जाता। उसके पास लकड़ी का एक पय रखा रहता। पहले वर पक्ष के परिवारजनों एवं बिरादरी के पैर कन्या पक्ष के परिजनों द्वारा धोये जाते थे। इसके बाद अन्य बिरादरी के लोगों के पैर नाई धुलाता था। भोजन में बैठक व्यवस्था भी जातीय आधार पर होती थी। मण्डप के नीचे वर पक्ष के पूज्य सम्बन्धी तथा बिरादरी के लोग ही बैठ सकते थे। अन्य बिरादरी के लोगों का मण्डप तक प्रवेश वर्जित होता था। आज की पंगत में चने की दाल, कढ़ी, भात, फुलका, बरा-बरी एवं घी परोसा जाता था। यह 'कौराँत' की पंगत कहलाती है।

दूल्हे को मण्डप के नीचे पटे पर बैठाया जाता है। बगल में उसका बहनोई बैठता है। बरातियों की परसदारी (परोसनी की क्रिया) पूर्ण हो जाने के पश्चात् दूल्हे का भोजन एक बड़े थाल में आवश्यकता से कई गुना अधिक परोसकर उसके समक्ष रख दिया जाता है। इसके पश्चात् कन्या पक्ष का कोई प्रमुख व्यक्ति दूल्हे से भोजन करने हेतु विनम्रता पूर्वक निवेदन करता है। दूल्हा नेग के रूप में अपनी कोई मांग रखता है। मांग पूरी न कर पाने की अपनी असमर्थता प्रकट करता हुआ वधू का परिजन कुछ राशि दूल्हे को भेंट करता है। थोड़ी देर मना-मनौअल होने पर दूल्हा नेग लेकर भोजन करना आरंभ करता है। इसी के बाद सभी बरातियों का भोजन आरंभ होता है। भोजन पूर्ण हो जाने की सूचना द्वार के बाहर से आ रही रमतूला की ध्वनि से प्राप्त होती है। इसके बाद ही लोग हाथ-मुँह धोना आरंभ करते हैं। भोजन के पश्चात् बाराती दूल्हे की पालकी के पीछे-पीछे डेरे पर वापिस पहुँच जाते हैं।

भाँवरे

तीसरे दिन प्रात: स्वल्पाहार के रूप में वर पक्ष द्वारा विवाह

के अवसर पर बनी हुई शेष मिठाई जो बाँध कर साथ लाई गई है, बारातियों को वितरित की जाती है। दोपहर का भोजन भी गत दिवस की भाँति ही डेरे पर तैयार किया जाता है। भाँवर हेतु निर्धारित समय के एक घण्टे पूर्व नाई आकर बरातियों को भाँवर हेतु पधारने का आग्रह करता है।

भाँवर के पूर्व कन्या पक्ष के यहाँ चीकट उतारने का नेग होता है। वर पक्ष की ओर से आये तूस का कचड़ा, रंगीन सूत एवं कंकन द्वारा लड़की (वधू) की कंकन पूरने की रस्म पूर्ण होती है। चीकट एवं कंकन पूरने की रस्म पूरी होने पर कन्या की 'कुआरी राछ' फेरी जाती है। इसमें कन्या पालकी में बैठकर गाजे-बाजे के साथ गाँव के देवी-देवताओं विशेष रूप से हरदौल (लोकदेवता) के दर्शन करने हेतु जाती है। इसी बीच वह सुहाग लेने धोबिन के घर भी जाती है। इसके बाद ही भाँवर का आयोजन होता है।

वर पक्ष के कुछ पूज्य सम्बन्धी भाँवर पड़ने से पूर्व कुम्हार के यहाँ 'वेदी' लेने जाते हैं। इस क्रिया में कुम्हार के यहाँ से सात डबला मिट्टी के बने छोटे पात्र लाकर मंडप के नीचे रख दिये जाते हैं। दूल्हा और बाराती दुल्हन पक्ष के यहाँ पहुँच कर मण्डप के इर्द-गिर्द बैठ जाते हैं। वर एवं वधू पक्ष के पंडित विधिवत भाँवर का कार्यक्रम आरंभ करते है। पहले कन्या के माता-पिता अथवा जिसे कन्यादान करना होता है वे पति-पत्नी मण्डप में आकर कन्यादान की रस्म पूर्ण करते हैं। इसके बाद भाँवर पड़ना शुरू होता है। पंडितों द्वारा मंत्रोच्चार के साथ छः भाँवर के बाद 'पाव पखरइ' का आयोजन होता है। बुन्देलखण्ड में कन्या एवं दामाद को पूज्य माना जाता है। अस्तु कन्या पक्ष के बुजुर्ग स्त्री-पुरुष भी सभी के साथ वर-कन्या का पाद प्रक्षालन करके अपनी सामर्थ्यानुसार उपहार के रूप में कोई वस्तु या नगद धन राशि भेंट करते है। भाँवर के बीच में ही धान बुआई की रस्म होती है। इसमें कन्या का भाई मण्डप में गड़े खाम के चारों ओर धान बोने का उपक्रम करता है। वर पक्ष द्वारा उसे इस उपलक्ष्य में वस्त्र भेंट किये जाते हैं। वधू की छोटी बहिन वधू की माँग भरने का दस्तूर करती है। इस हेतु भी वर पक्ष द्वारा उसे कुछ राशि भेंट की जाती है। पाँव पखरई पश्चात् आखिरी सातवीं भाँवर पड़ी जाती है। इसके साथ ही भाँवर पड़ने की रस्म पूर्ण हो जाती है।

'राछ-बधाव'

भाँवर पड़ने के बाद वर-वधू दोनों एक ही पालकी में बैठ कर गाजे-बाजे के साथ बारात के डेरे में प्रस्थान करते हैं। इसमें वधू की सखी-सहेली उसकी भाभी भी वधू के साथ डेरे पर जाती है। वर-वधू को डेरे में एक साथ बैठाया जाता है। वर पक्ष के परिजनों, सम्बन्धियों द्वारा यहाँ वधू की झोली भरी जाती है। वधू की फैली हुई गोद वस्त्र में सूखे पंचमेवा एवं बताशा के साथ कुछ राशि भी डाली जाती है। झोली भरने के साथ आई महिलाओं को वर पक्ष द्वारा कुछ राशि अथवा वस्त्र भेंट स्वरूप दिये जाते हैं। इसके पश्चात् वधू वापिस घर भेज दी जाती है। शाम को नाई आकर भोजन हेतु आमंत्रण देता है। दूल्हा और बाराती गत दिवस की भाँति मण्डप के नीचे आसन ग्रहण करते हैं। आज की पंगत में पूड़ी-सब्जी, रायता, पापड़ और मिठाई परोसी जाती है। दूल्हा नेग की माँग करता है मान-मनौआल होती है। दूल्हा के भोजन प्रारंभ करने के साथ ही पंगत शुरू हो जाती। रमतूला बजता है बाराती हाथ-मुँह धोकर दूल्हा के साथ डेरे में वापिस पहुँच जाते है।

विवाह के चौथे दिन सवेरे दूल्हा को मित्रों सहित 'कुँवर कलेवा' हेतु आमंत्रित किया जाता है। इसमें भी दूल्हा के समक्ष जो थाल रखा जाता है उसमें खाद्य पदार्थ आवश्यकता से बहुत अधिक होते हैं। दूल्हा द्वारा नेग माँगने उसकी पूर्ति पश्चात् कुँवर कलेवा होता है। कुँवर कलेवा के पश्चात् भीतर के नेग के लिए दूल्हा को मैर के घर में ले जाया जाता है। यहाँ दूल्हा मैर भरता है। और कई नेग दस्तूर औरतें करती है। इसके बाद दूल्हा डेरा पर वापिस आ जाता है।

पंच डेरा

कन्या पक्ष के पंच एकत्र होकर बारात के डेरा पर पहुँचते है। यहाँ वर पक्ष द्वारा उनका स्वागत-सम्मान किया जाता है। इसके पश्चात् कन्या पक्ष के पंडित द्वारा छन्दबद्ध शैली में वर पक्ष को महाराज दशरथ का पक्ष मानकर वर की प्रशंसा की जाती है। वर पक्ष का पंडित भी इसी शैली में कन्या पक्ष को राजा जनक का पक्ष मानकर कन्या पक्ष की प्रशंसा करता है। वैसे इस रस्म का मूल उद्देश्य विवाह कार्य में कन्या पक्ष द्वारा हुई भूलो हेतु क्षमा याचना करना होता है।

बुन्देली वैवाहिक लोकाचार

डॉ. रामस्वरूप ढेंगुला

सृष्टि के संचालन एवं संतति के विकास के लिये विवाह का होना एक अनिवार्य सामाजिक परम्परा बन गई है। विवाह सम्बन्धों का स्थापित होना, प्रकृति स्वरूपा और नैसर्गिकता का बोध कराने की प्रक्रिया है और सदियों से सामाजिक परिवेश में अपने विविध स्वरूपों, रीति-रिवाजों, परम्पराओं से अलंकृत होकर बदलते लोकाचारों के बीच सम्पन्न होती रही है। हिन्दुओं में मान्यरूप में सोलह संस्कारों में विवाह को प्रमुख स्थान प्राप्त है और यही स्थिति विवाह प्रणाली की संसार की सभी सभ्यताओं में बनी हुई है। प्रस्तुत लेख में बुन्देलखण्ड के गाँवों के विवाह समारोहों को प्रमुखता से रेखांकित किया जायेगा और यह विषय सन् 1960 तक की अवस्था के चित्रण के रूप पर ही अधिकांशतया केन्द्रित रहेगा। बुन्देलखण्ड के गाँवों के विवाह समारोहों में प्रायः विवाद की स्थिति जरूर पैदा हो जाया करती थी। इसका कारण आज की तरह दहेज कभी नहीं होता था। बारातियों की बैलगाड़ी के बैलों को ठीक से घास न मिल पाना, चढ़ावे के लिये जेवर, लड़की के पिता की गाँव की शान के अनुरूप चढ़ाना, बारातियों द्वारा गाँव में फूहड़ता का प्रदर्शन करना, बारात में नौटंकी वालों को न लाना अथवा किसी रिश्तेदार को पटा पर बिठाकर पैराउन न देना, क्योंकि हम उसके मानदान लगते हैं...आदि। अनेक छोटे-मोटे कारण होते थे, जो लोकाचार न होते हुये भी गाँव के विवाह समारोहों की अनिवार्य हेकड़ी और विनोद के अंग के रूप में होते थे। गाँव के विवाह-समारोह, गाँव की सामूहिकता, एकता के स्वरूप को प्रदर्शित करते थे, उस समय में गाँव की बिटिया को अपनी ही बेटी मान कर चलते थे। यही परम्परागत लोकाचार गाँव की जान और शान होते थे, जो आज के राजनीति के माहौल ने तोड़ दिया है। अब गाँव वाले आधुनिकता की होड़ में इतने आगे बढ़ गये हैं कि गाँव भर में बेचैनी और उकताहत पैदा करने के लिये डी.जे. की धुन पर रात भर चिल्लाने में गौरव का अनुभव करते हैं। गाँव की पत्तल के लगभग आधे भाग के बराबर परोसने वाले, शुद्ध ठेठ देशी घी परोसने वाले, माड़े-भूरे और गोबर के उपलों में सिकी बाटी परोसने वाले, अब चाऊमीन और बर्फ की

चुसकी, टिकिया-पानी पर उतर आये हैं। ग्रामीण समाज की इस नई होड़ की प्रथा को लेखक आलोचना की दृष्टि से नहीं, बल्कि बदलते होड़ भरे सामाजिक लोकाचारों के रूप में देखता हैं, परन्तु ये लोकाचार इंसान को प्राकृतिक स्वरूप से दूर ले जाते दिख रहे हैं।

विवाह की तैयारी और गाँव

मनुस्मृति में आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख है, पर मान्यरूप में वर्तमान में बुन्देलखण्ड के गाँवों में ब्राह्म विवाह का ही प्रचलन है। विद्वानों के अनुसार 'यह विवाह का शुद्धतम् तथा सर्वाधिक विकसित प्रकार था। इसमें पिता योग्य वर को स्वयं आमंत्रित कर, उसे विधिवत संस्कार कर उसे समुचित दक्षिणा देकर, कन्या को वस्त्र आभूषणों के साथ विदा करता था। यही स्वरूप आज हमें बदली हुई परिस्थिति के अनुरूप ढलता दिखाई देता है। आगे विद्वानों का यह भी मानना है कि अपनी प्रकृति से ही, विवाह का यह प्रकार अतिप्राचीन नहीं हो सकता है, क्योंकि इसके लिये सामाजिक अभ्यासों की सुदीर्घ संस्कृति अपेक्षित है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में विवाह प्रणाली में राम विवाह की परिकल्पना के स्वरूप को प्रदर्शित करने का उल्लेख अधिकांशतया मिलता है। विवाह सम्बन्धी उपलब्ध गीतों में राम के नाम का उल्लेख सर्वाधिक मिलता है। उदाहरण-

बने दूल्हा छबि देखो भगवान की, दुल्हिन बनी सिया जानकी।
जैसे दूल्हा अवध बिहारी, वैसी दुल्हन जनक दुलारी।

× × ×

रामलखन सिया ब्याहन आये, धरनी ने सीस नवाये,--मेरे लाल
हँस-हँस पूछें सखिन सें, कौन सखि ससुर हमारे,-- मेरे लाल

× × ×

करत प्रभुजी अपनी शादी जनकपुरी में जाकें
राम-लखन, भरत-शत्रुघ्न, विश्वामित्र लिवाकें।

गाँवों में साधन-सम्पन्न, गाँव के पटेल, नम्बरदार, पूर्व जागीरदार आदि के यहाँ और ब्राह्मण वर्ग आदि के घरों में विवाह होने पर, गाँव में महीनों पूर्व से बारात आदि के स्वागत की तैयारियाँ प्रारंभ हो जाती थी। जलाऊ लकड़ी की व्यवस्था में गाँव के सभी लोग सहयोग करते थे। बारातियों के लिये खटियों की व्यवस्था अथवा फर्श-जाजम आदि की व्यवस्था, घर-घर में गेहूँ पीसकर रखने का कार्य किया जाता था, जिससे जरूरत पड़ने पर गाँव के सम्मान की रक्षा की जा सके। गाँव के विवाह सामूहिकता, आपसी सामंजस्य और एकता को दर्शाने वाले होते थे। बिटिया की शादी की तैयारी इस तरीके से की जाती थी कि वह विवाह गाँव की बेटी का लगे, विवाह घर में गाँव के परिवारों की महिलाएँ महीनों से गेहूँ पीसने में लग जाती थीं और गाँव के कुम्हार, धोबी, नाई आदि भी गाँव की बेटी की शादी के लिये आवश्यक सामान तैयार करने में जुट जाते थे। कुल मिलाकर गाँव में एक उत्साह का माहौल बन जाता था। लड़के वाले भी अपने गाँव में कुछ इसी प्रकार की तैयारी करते थे, जैसे बैलगाड़ियाँ किस-किसकी जायेंगी, बैल किस-किस के दौड़ने में अच्छे हैं, आदि। गाँव में चकिया पीसते समय विवाह गीत गाये जाते थे। ये गीत भी बड़ी यात्रा करते हुये बदलते समय में अनेक रूप रख प्रचलित हुये थे।

अपनो नाम कमा गई जग में, कर शोर विकट भारी।
बाई साहब झांसी वारी रानी, अपनो नाम कमा गई जग में।
तोप चले बन्दूक चले धमाके से, जग में हुआ है शोर भारी।
वो थी झांसी वारी रानी, जिसकी हुई है अमर कहानी।

× × ×

रामराजा ने ओरछे में आसन लगाई, चलो दर्शन को माई।
इनके किले बने राजधानी, अकबर ने इनसे हार मानी।

× × ×

हमारे आंगन में तुलसी को बिरवा, बई तरे राजधानी खाना बनावें,
जेबन आबें भगवान जी,
बई तरें राजधानी चौपड़ लगावें, खेलन आवें भगवान जी,
बई तरें राजधानी सेन लगावें, पौढ़न आवें भगवान जी।

सभी जातियों में ग्राम्य क्षेत्र में ये सभी परम्पराएँ किसी न किसी स्वरूप में कुछ बदलते संदर्भों के साथ आज भी मौजूद हैं। मुख्य सवाल गाँव के संदर्भ में बिटिया के विवाह के क्रम में गाँव की सामूहिकता के प्रदर्शन का बोध था, जो सन् 1960 के आसपास तक सभी जातियों में मौजूद था। यह वह काल था, जब गाँवों में चुनावों के भौड़ेपन ने अपने पैर नहीं पसारे थे।

विवाह के अन्य लोकाचार

लड़के के विवाह समारोह की तैयारी में, पहले अपने

परिवार की सती-बउआ को लाना, लड़के का रक्कस करना, खेत-तालाब से घर में कई चूले बनाने के लिये मिट्टी लाना अर्थात् मटियाना करना, हवन के लिये परोथनी अर्थात् पाँच बर्तन लाना, माता की पूजा करना, गाँव के देवता और दूल्हादेव का आमंत्रण करना, ओरछा में हरदौल के स्थान पर निमंत्रण देने जाना, छेवले का मड़वा तैयार कराना, लड़के के लिये खजूर के पत्तों का मौर बनवाना और लड़के के पहनने के लिये बागा सिलवाना आदि। 'बागे' का रूप मुगलकालीन जामा वस्त्र के रूप का होता था, जो घुटनों तक नीचा और पूरे शरीर को ढँकने वाला होता था। लड़का शादी के दौरान कटार भी बाँधता था और घोड़े पर भी टीके के समय बैठता था। गाँव में जब बारात का फेरा होता था, उस समय दूल्हा पालकी में बैठता था। एक प्रकार से बारात का रूपक, दूल्हे की एक सेना के रूप की तरह होता था, जिसका सेनापति दूल्हा होता था। गाँवों में कहावतें भी प्रचलित हैं-

देवी-देवता परमेसरे, अरे पैलो न्योतो लेव
दूल्हादेव परमेसरे, अरे पैलो न्यौते लेव।

× × ×

और देवता आये बराते, दूल्हादेव काये नहीं आये,
चलो उनकों बुलाउन चले, गाँव टोरिया पै महराज।

गाँवों के हाट-बाजारों में जब आसपास के गाँव के लोग एक दूसरे से मिलते थे, तो अपने गाँव के विवाह समारोह की सूचनाओं का आदान-प्रदान कर उन्हें गंतव्य तक पहुँचाने की सूचना देने का कार्य करते थे। इस प्रकार की सूचनाएँ मौखिक अथवा हल्दी से छिड़के कागज पर लिखी भी आ जाती थी। प्रारंभ में 1970 के दौर में जब विवाह की चिट्ठियाँ छपने का दौर आया, तो उस समय ग्रामीण लोग बड़े प्रेम से चिट्ठियों पर लिखते थे,

यद्यपि पथ ग्रीष्म का है, पथ कष्ट तो होगा सही,
यदि आपने यही विचारा, तो कृपा ही क्या रही।

× × ×

यद्यपि पथ शीत का है, पथ कष्ट होगा सही,
यदि आपने यही विचारा, तो कृपा ही क्या रही।

× × ×

भेज रहा हूँ नेह निमंत्रण प्रियवर तुम्हें बुलाने को
भूल न जाना आने को तुम।

गाँव, बारात की कथा-व्यथा

एक गाँव से बारात दूसरे गाँव बैलगाड़ियों से जाती थी, गाड़ी वाले अपने बैलों को सजा कर और बैलों के लिये घास आदि आवश्यक दाना-पानी रख कर ले जाते थे। बारात का गाँव दूर होने पर रास्ते में एक दिन बीच में रूकना भी पड़ता था, इसके लिये बाराती अपने साथ खुरमा, पुरी, सतुआ और आटा-दाल भी रख कर ले जाते थे। सभी बाराती अपने साथ सूती पतली रस्सी और मोटे कपड़े वाली डोलची रखते थे। रास्ते में जरूरत पड़ने पर इसका उपयोग किया जाता था। प्रत्येक ग्रामीण बाराती अपने आप में स्वावलम्बी बनकर रहता था। यह भी एक प्रकार का लोकाचार था। शिकायत के स्थान पर सहयोग व एकजुटता की भावना आपस में रहती थी। गाँव में बारात 1950 के दौर तक सात-आठ दिन तक रूकती थी, फिर धीरे-धीरे यह अवधि घटते-घटते तीन दिन हो गई थी। बारात के साथ बाजे-ढोल वाले, रमतूला वाले, भंग बनाने वाले और नौटंकीबाज, मसखरे आदि भी जाते थे। यह सब कुछ विवाह समारोह के लोकाचार ही होते थे। उस काल की शादियों में लड़की वाले और लड़के वाले के बीच विवाद अवश्य ही होता था, यह विवाद रोचकता लिये हुये, किसी न किसी अहं व लोकरीति के कारण या सम्पन्नता की हेकड़ी के कारण होता था, आज की तरह दहेज का विवाह यह कतई नहीं होता था। ठाकुरों की बारात में तो गाँव में 'गुटुआ' अवश्य ही हो जाता था, गुटुआ की स्थिति में गाँव के लोग और लड़की वाले बारात का खाना-पीना व अन्य सुविधाएँ पूरी तरह बन्द कर देते थे। फिर लड़के वाले अपने साथ ले गये खाने-पीने की सामग्री से या शिकार की सामग्री से भोजन व्यवस्था करते थे।

उल्लेखनीय है कि बुन्देलखण्ड में बारात के ठहराने के लिये प्रायः बरगद के विशाल पेड़ का सहारा लिया जाता था। ऐसे स्थानों के समीप कुआँ-मंदिर भी होते ही थे। बरगद के पेड़ की जड़ें पानी को संग्रहित करने का कार्य बड़ी शिद्दत से करती हैं। और वे जड़ें विशाल भू-क्षेत्र में फैले होने के कारण मानव जीवन की बड़ी रक्षक के रूप में है। प्राचीन काल के लोग या पुराने लोग बरगद और पीपल के इन प्राकृतिक गुणों को बखूबी समझते थे।

इसलिये बरगद-पीपल के पेड़ मंदिर के स्थानों पर जरूर ही लगाये जाते थे। उल्लेखनीय है कि मुगल बादशाह भी अपने सैनिक अभियान या यात्रा अभियान के समय अपना मुख्य पड़ाव बरगद के पेड़ के नीचे लगाते थे।

एक बारात सन् 1955 के दौर में भांडेर-परिक्षेत्र के प्याउल गाँव से लहार-हवेली गई हुई थी। लड़की वाले का पिता गाँव का सम्पन्न और दबंग किसान था और बारात लेकर पहुँचने वाला कृषक परिवार समतुल्य नहीं था। उस स्थिति में लड़की के लिये उसकी शक्ति के अनुरूप 'चढ़ावे के लिये जेवर' लड़के वाले द्वार पर न लाने पर बात बिगड़ गई। चार-पाँच दिन गाँव में बारात पड़ी रही, पर विवाह की कोई रस्म आगे नहीं बढ़ी। बारात, लड़के को ब्याहे बगैर वापस नहीं लौट सकती थी, यही रीति थी और यही लोकाचार था। अब लड़के वाले किसी प्रकार का हल, खोजते-खोजते लड़की के पिता के एक गुरु को ढूँढ कर ले आये। उन संतबाबा गुरु ने तमाम दृष्टान्त देकर अपने शिष्य को समझाया कि तेल चढ़ी लड़की का वाग्दान हो चुका है, लड़ने और अड़े रहने से कोई हल नहीं निकलने वाला है। अब जैसा भी हो लोकाचार यही है, उसे स्वीकार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। उस समय उन्होंने कहा-

जब मिले दूध ओ पानी, दो मित्रों की सुनो कहानी।
जब दूध जले तो पानी उसका थामे हाथ।
जब घर द्वारे आ गई है बारात, तो वह है गाँव की नाक।
हेठी के झगड़े में नहीं है, तुम्हारा कोई सम्मान।
दूध-पानी की तरह, रिश्ते को अब निभाना है।
ओ अपने पूर्वजों का, गाँव-घर का सम्मान बचाना है।

गुरुजी के समझाने पर सारा 'बड़े-छोटे' का विवाद निपट गया था। बुन्देलखण्ड के विवाह समारोहों में इस प्रकार के रोचक, ज्ञानवर्द्धक विवादों का होना आम बात होती थी। इस प्रकार के लोक-विवादों की परम्परा वाचिक रूप में आज भी बूढ़े-बुजुर्गों से सुनने को मिल जाती है।

छत्तीसगढ़ में वैवाहिक परम्पराएँ और लोकाचार

उर्मिला शुक्ल

छत्तीसगढ़ अंचल को विविधताओं का अंचल कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। यहाँ ये विविधता हर क्षेत्र में देखी जा सकती है। वैवाहिक तौर-तरीके भी इससे अछूते नहीं हैं । सामान्यत: छत्तीसगढ़ को दो भागों में बाँटकर देखा जा सकता है। पहला- इसका मैदानी भाग जिसके अंतर्गत रायपुर, दुर्ग और बिलासपुर संभाग के कुछ क्षेत्र आते हैं और दूसरा इसके पहाड़ी और वनाच्छादित भाग जिसमें सरगुजा और बस्तर आते हैं। जिनमें गोंड और उराँव जैसी जनजातियाँ निवास करती हैं। छत्तीसगढ़ के ये दोनों भाग एक दूसरे से बिलकुल अलग हैं। इनकी बोली- बानी, रीति-रिवाज, खान-पान सब कुछ अलग है। इसका कारण है राजवंशों का शासन। सातवाहन, नलवंश, शरभपुरीय, पाण्डु वंशी, छिंदक नागवंश, कलचुरिवंश, फणिवंश, सोमवंश, चालुक्यवंश के साथ-साथ गोंड राजाओं का शासन रहा। यहाँ के गढ़ों में भी अलग-अलग राजाओं का शासन रहा। इन सबका प्रभाव छत्तीसगढ़ पर पड़ा । इसके साथ ही देश के दूसरे प्रांतों से आकर लोग यहाँ बसते रहे, इसलिये इन सबके लोकाचार और इनकी परम्पराएँ यहाँ रच-बस गयीं और इन सबने मिलकर छत्तीसगढ़ की वैवाहिक परम्पराओं को एक अलग रूप प्रदान किया।

छत्तीसगढ़ में कई तरह के विवाह का चलन है- पहला साधारण विवाह जिसमें वधूपक्ष वर के घर जाकर वर पसंद करते हैं। दूसरा यहाँ के कई समाजों में वर पक्ष वाले कन्या के यहाँ आते हैं। तीसरे तरह का वैवाहिक सम्बन्ध यहाँ होता है, जिसे गुराँवट विवाह कहते हैं। इसके तहत जिस घर की लड़की को वधू चुना जाता है, उसके भाई से दूल्हे की बहन का विवाह किया जाता है। इस तरह दोनों लड़कियाँ एक दूसरे की भाभी और ननद दोनों होती हैं। इसी तरह दोनों लड़के भी एक दूसरे के साले और बहनोई होते हैं।

वैवाहिक लोकाचार का प्रारंभ यहाँ फलदान से होता है। फलदान में लड़के वाले लड़की के घर फलदान लेकर जाते हैं। इसमें

लड़की के लिये जेवर, कपड़े और लड़की के परिवार के लिये भी कपड़े और फल, मिठाई आदि रहते है। कुछ समाजों में लड़के के यहाँ तिलक लेकर जाने का रिवाज है, पर अधिकांश समाजों में फलदान का ही चलन है। फलदान के बाद लगन निकाली जाती है। और उसके बाद विवाह के अन्य लोकाचार प्रारंभ हो जाते हैं।

चुलमाटी

छत्तीसगढ़ में विवाह का पहला चरण है चुलमाटी। यानि चूल्हा बनाने के लिए जाना। विवाह के लिये नया चूल्हा बनाया जाता है, जिसके लिये चुलमाटी लेने जाते हैं। घर की बेटियाँ जैसे ननदें, बहनें और उनके पतियों की इसमें मुख्य भूमिका रहती है। वे कुदाल से मिट्टी खोदती हैं और ननदें टोकरी सिर पर रखकर मिट्टी घर लाती हैं। इस अवसर पर गीतों के माध्यम से ननदोई पर व्यंग्य किया जाता है, जैसे ये गीत –

तोला माटी कोड़े ल नई आवे मीत धीरे-धीरे।
तोर कनिहा ल ढील धीरे-धीरे।
जतके परोसय वतके ल लील धीरे-धीरे।
तोला माटी कोड़े ल नई आवे मीत धीरे-धीरे

इसे महिलायें खासकर भाभियाँ गाती हैं। इस गीत में वे ननदोई पर व्यंग्य कर रही हैं कि तुम्हें तो मिट्टी खोदना भी नहीं आता। जरा अपनी नाजुक कमर को धीरे-धीरे नीचे झुकाओ कहीं ये लचक न जाये। और जितना तुम्हें परोसा गया है, उतना ही खाओ। दूसरे की थाली पर नजर मत रखो, अर्थात् अपनी पत्नी तक ही सीमित रहो, साली या सलहज पर नजर मत डालो।

मायमौरी

मायमौरी विवाह के समय देवताओं और पितरों का आह्वान किया जाता है। इस गीत में सभी देवी-देवता के साथ-साथ पितरों को भी नेवता दिया जाता है। उनका आह्वान किया जाता है। पितरों के साथ दिवंगत छोटे बच्चों की आत्माओं को भी आमंत्रित किया जाता है।

देवधमी ल नेवतेंव,
उनहूँ ल नेवतेंव।
जे घर छोड़िन बारे भोरेन,
ते घर पगुरेन हो,
मात पिता ल नेवतेंव उनहूँ ल नेवतेंव।

देवतला

हल्दी-तेल चढ़ने के पहले देवतला होता है। मन्दिर जाकर भगवान को और फिर कुल देवता को हल्दी चढ़ाते हैं। उसके बाद ही लड़की या लड़के को हल्दी तेल लगाया जाता है।

तेलचघी

इसके बाद तेलचघी की रस्म होती है। तेलचघी यानी तेल चढ़ाना। ये रस्म लड़का और लड़की दोनों की शादी में होती है। सभी सुहागिनें तेल चढ़ाती हैं। सात बार तेल चढ़ाने का चलन है। यहाँ इन गीतों में राम-लक्ष्मण के तेल चढ़ने का उल्लेख करते हुये दूल्हे के मनोभावों का वर्णन मिलता है। देखिए –

एक तेल चढ़िगे हो
हरियर-हरियर मँड़वा म दुलरु तोर बदन कुम्हिलाय
राम लखन के तेल चढ़त हे
कहँवा के दियना अँजोर
हरियर- - - -- - -
एक तेल चढ़गे
एक तेल चढ़गे, हो हरियर-हरियर
हो हरियर-हरियर
मड़वा मे दुलरू तोर बदन कुम्हलाय
रामे-वो-लखन के
रामे-वो-लखन के दाई तेल वो चढ़त हे
दाई तेल वो चढ़त हे
कहवा के दियना दीदी करथे अंजोर
आमा अमली के
आमा अमली के दाई सीतल छईहां
दाई सीतल छईहाँ
कर देबे फूफू तोर अँचरा के छाँव
दाई के अँचरा
दाई के अँचरा वो अगिन बरत हे
हो अगिन बरत हे

फूफू के अंचरा मोर इन्दरी जुड़ाय
काकी के अँचरा
काकी के अँचरा दाई अगिन बरत हे
दाई अगिन बरत हे
मामी के अंचरा मोर इन्दरी जुड़ाय

इस गीत में वर्णन किया गया है कि हरे-हरे मंडप में जैसे राम-लखन को तेल चढ़ा था, वैसे ही बेटे को तेल चढ़ रहा है। एक तेल चढ़ चुका है। मगर उस हरे-भरे मंडप में भी दुलारे बेटे की देह कुम्हला रही है। आम और इमली के पत्तों से शीतलता देने वाला सुंदर मंडप बना है, फिर भी दुलारे की देह कुम्हला रही है। माँ अपने आँचल से उसके सिर पर छाया करती है। तो उसे लगता है कि जैसे माँ के आँचल से आग बरस रही हो। वो कहता है आज तो फूफी यानि बुआ के आँचल की शीतलता से ही मुझे शांति मिलेगी। काकी के आँचल से आग बरस रही है। आज तो मामी के आँचल की शीतलता से मुझे शांति मिलेगी। इस तरह इस गीत के माध्यम से उन रिश्तों से प्रेम दर्शाया गया है जो नजदीक तो हैं मगर रोज का साथ नहीं है। यहाँ माँ और चाची से अधिक महत्त्व बुआ और मामी को देने के पीछे रिश्तों की निकटता दर्शाना ही है।

एक दूसरे गीत में तेली से विनती की जा रही है- डोंगरी पर तुम्हारी घानी चल रही है, मेरी राई सरसों भी पेर दो। मेरे राम-लखन जैसे दूल्हे को तेल चढ़ने वाला है। मगर सरसों तेल का झार (जलन) कम देना, नहीं तो मेरा दुलारा मौर नहीं बाँध पायेगा। जब तक तुम्हारा प्रेम और सहयोग नहीं मिलेगा, ये विवाह नहीं हो पायेगा। यहाँ समाज में तेली के महत्त्व को दर्शाया गया है।

डोंगरी पहारे
डोंगरी पहारे दीदी घनरा चलत हे
दीदी घनरा चलत हे
पेरि देबे तेलिया मोर राई सरसो के तेल
रामे-वो-लखन के
रामे-वो-लखन के दाई तेल वो चढ़त हे
दाई तेल वो चढ़त हे
पेरि देबे तेलिया मोर राई सरसो के तेल
हमरे दुलरवा
हमरे दुलरवा नई बांधे मऊरे
नई बांधे मऊरे
नई सहे तेलिया मोर राई सरसो के झार

लड़के के विवाह पर जहाँ हर रस्म में खुशी और उल्लास छलकता है, वहीं लड़की के विवाह में उदासी और दु:ख उभर आता है। तेल चढ़ाने की रस्म में भी ये उदासी नजर आती है। ये गीत ऐसी ही उदासी और दु:ख भरा है। इस गीत में तेल चढ़ने के साथ बढ़ते दु:ख का वर्णन है।

एके तेल चढ़गे कुंवरि पियराय।
दुए तेल चढ़गे महतारी मुरझाय।
तीने तेल चढ़गे फुफु कुम्हलाय।
चउथे तेल चढ़गे मामी अंचरा निचुराय।
पांचे तेल चढ़गे भइया बिलमाय।
छये तेल चढ़गे भऊजी मुसकाय।
साते तेल चढ़गे कुवरि पियराय।

एक तेल के चढ़ते ही लड़की दु:ख से पीली पड़ जाती है कि अब वो परायी हो जायेगी। दूसरे तेल के चढ़ते ही माँ कुम्हलाने लगती है कि अब बेटी परायी हो जायेगी। तीसरे तेल चढ़ने के बाद बुआ भी दु:खी हो उठती है और चौथे के बाद तो माँ का दु:ख इतना बढ़ जाता है कि माँ का आँचल आँसुओं से भीगकर निचोड़ने लायक हो जाता है यानि माँ का दु:ख अत्यधिक हो जाता है। और पाँच तेल चढ़ने के बाद तो भाई भी दु:खी हो उठता है कि अब मेरी बहन मुझसे दूर हो जायेगी। छठवाँ तेल चढ़ने के बाद भाभी मुस्कराती है। उसे प्रसन्नता होती है कि चलो अच्छा है, अब ये यहाँ से चली ही जायेगी। सातवें के बाद तो लड़की और अधिक पीली पड़ जाती है यानि उसका दु:ख और बढ़ जाता है। तेल के साथ ही हल्दी भी लगाई जाती है। ये रस्म भी दोनों के विवाह पर होती है। हल्दी के लिये अलग से गीत नहीं है, मगर कुछ तेलचघी गीतों में हल्दी चढ़ने का वर्णन मिलता है, जैसे ये गीत -

हरदी ओ हरदी तै सांस मा समाय।।
तेले हरदी चढ़गे देवता ल सुमरेंव
मंगरोहन ल बांधेव महादेव ल सुमरेंव।।

इस गीत में विवाह में हल्दी के महत्त्व को बताया गया है। एक अन्य गीत में भी हल्दी और तेल चढ़ने का वर्णन है।

हरे-हरे मण्डप में लड़के को हल्दी और तेल लगाया जा रहा है। प्रश्नोत्तर शैली में गीत में पूछा जा रहा है कि कौन हल्दी और सुपारी लाया है और कौन कच्चे तिल का तेल? तब लड़का जवाब देता है कि मेरे पिता हल्दी और सुपारी लाये हैं और माँ कच्चे तिल का तेल। फिर प्रश्न करते है- कौन तुम्हारे तन भर में हल्दी लगा रही है, और कौन तुम पर अपने आँचल की छाया कर रही है? बुआ मेरे तन भर में हल्दी लगा रही है और माँ अपने आँचल से सिर पे छाया कर रही है-

हरियर-हरियर मोर मड़वा में दुलरू वो,
काँचा तिली के तेल।
कोने तोर लानिथय मोर हरदी सुपारी वो,
कांचा तिली के तेल।
ददा तोर लानिथय मोर हरदी सुपारी वो,
दाई आनय तिली के तेल।
कोन चढ़ाथय तोर तन भर हरदी वो,
कोन देवय अंचरा के छाँव।
फूफू चढ़ाथय तोर तन भर हरदी वो,
दाई देवय अँचरा के छाँव।

एक और गीत में हल्दी के पैदा होने का प्रसंग मिलता है। ये गीत भी प्रश्नोत्तर-शैली में है। इसमें पूछा जा रहा है कि हे हल्दी! तुम कहाँ से आयी हो? तुम्हारा जन्म कहाँ हुआ है? और कहाँ से तुमने अवतार लिया? तब हल्दी कहती है- दीदी मेरा जन्म मरार की बाड़ी में हुआ है। और मैंने बनिया की दूकान से अवतार लिया। भाई कहाँ तुम्हारा जन्म हुआ और कहाँ तुम्हारा अवतार हुआ? दीदी सिया पहाड़ में मेरा जन्म हुआ और कड़रा के घर मैंने अवतार लिया। देखिये -

कहाँ रे हरदी कहाँ रे हरदी
भई तोर जनामन भई तोर जनामन
कहाँ रे लिए अवतार
मरार बारी मरार बारी
दीदी मोर जनामन दीदी मोर जनामन
बनिया दुकाने दीदी लिएँव अवतार
कहाँ रे पर्रा, कहाँ रे पर्रा
भई तोर जनामन भई तोर जनामन
कहाँ रे पर्रा तैं लिए अवतार
सिया पहार ऐ सिया पहार ऐ
दीदी मोर जनामन दीदी मोर जनामन
कँड़रा के घरे मैं लिएँव अवतार

चीकट

चीकट की रस्म में भाई-बहन के घर चीकट लेकर आता है। मण्डप के नीचे बहन खड़ी होती है। उसके कंधे पर साड़ी डालकर वो इस नेग को पूरा करता है। इसके बाद अपने बहनोई को चीकट डालता है। फिर अन्य सम्बन्धी भी इसी तरह चीकट डालते हैं। पर भाई का चीकट डालना अनिवार्य नेग है। अगर सगा भाई न हो तो रिश्ते का भाई ये नेग पूरा करता है।

नहडोरी

नहडोरी की रस्म भी लड़के और लड़की दोनों के विवाह पर होती है। नहलाने के बाद कंकण का धागा बाँधा जाता है, जिसे नहडोरी कहते हैं। विवाह के बाद दूल्हा-दुल्हन एक दूसरे का ये कंकण खोलते हैं। नहडोरी के समय लड़का या लड़की जिसकी भी शादी होती है, उसे पर्रा में बिठाकर बुआ या फूफा उसे पर्रा सहित उठाकर मण्डप छुआता है। ये नेग है। लड़के के विवाह में मण्डप के नीचे चूल्हा जलाकर लाई फोड़ते हैं । यही लाई फेरों के समय लड़की का भाई लड़की के हाथ में लाई रखता है। जिसे लड़की नीचे डालती है। सातों फेरों में ये डाली जाती है, लड़के की नहडोरी में गाये जाने वाले इस गीत में माँ विचलित है कि बहू के आने से उसके अधिकार ही न छिन जायेंगे। तब बेटा उसे आश्वस्त करता है कि वो तो अपने लिये घर की शोभा बढ़ाने वाली सुंदरी ला रहा है। मगर उसके लिये वो खाना पकाने और परोसने वाली ही होगी। देखिये -

दे तो दाई-दे तो दाई, असी ओ रुपया
सुंदरि ल लानतेंव बिहाय
सुंदरि-सुंदरि रटन धरे बाबू तैं
सुंदरि देस बड़ दूर
तोर बर लानिहों दाई रंधनी परोसनी
मोर बर घर के सिंगार ।

बारात

लड़के के विवाह पर बारात निकाली जाती है। दूल्हे को विशेष पोषाक पहनाई जाती है। बुआ काजल लगाती है। फूफा मौर पहनाता है। माँ पर्रा में जलता हुआ दीया, हल्दी-अक्षत लेकर दूल्हे की आरती उतारती है। फिर बारात विदा होती है।

परघनी

बारात की परघनी जाती है। वधू पक्ष के लोग बारात का स्वागत करके उसे द्वार तक लेकर आते हैं। इन गीतों में बारातियों का वर्णन होता है। राम और लक्ष्मण को आधार बना कर उनकी प्रशंसा की जाती है। इस गीत में राम-लक्ष्मण की बारात का वर्णन किया गया है-

बड़े-बड़े देवता रेंगत हे बरात
बरमा महेस
लिली हंसा में रामचन्द्र चघे हे
अउ लछिमन चघे सिंग बाघ
लहनत रेंगत डंडी अउ डोलवा
नाचत रेंगथे बरात
कै दल रेंगथे मोर हाथी अउ घोड़वा
कै दल रेंगथे बरात
हाथी म लादथे दारू अउ गोली
कै ऊँटवा म बान चचान
के दुइ घोड़वा सहस दुइ
मोहथिया पागा के हँव अनलेख

इस गीत में बारात की भव्यता का वर्णन है। बारात में बड़े-बड़े देवता शामिल हैं। ब्रह्मा-महेश भी इस बारात के साथ-साथ चल रहे हैं। लिली हंस पर रामचन्द्र हैं और लक्ष्मण बाघ पर सवार हैं। डोला धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा है और उसके पीछे-पीछे बारात आगे बढ़ रही है। सारे बाराती नाचते हुए आ रहे हैं। बारात के विषय में कोई पूछता है कि बारात में कितने दल हाथी, कितने दल घोड़े, ऊँट के कितने दल हैं और कितने पैदल बाराती हैं। जवाब मिलता है दो दल घोड़े, दो दल हाथी और ऊँट हैं। तथा पैदल बरातियों की तो कोई गिनती ही नहीं है। दूर तक पगड़ी ही पगड़ी दिखाई दे रही है। यानि बारात बहुत भव्य है। एक दूसरे गीत में शिव की बारात का वर्णन मिलता है -

लाली अउ पियरी बरतिया दिखत हे
कै कते दल दुलरु दमाद
झीना पिछौरी के अलग डारे हे
ये यही हर दुलरु दमाद
महल ले देखथे दुलहि केर भैया
केतकी दल आवत थे बरात
अपने सहर म महादेव पहुचे
के दुनिया के आवथे देखइया
निकर कइना अपन महल ले
के डोलवा परिछन लागव
नई मैं निकरवं राजा अपन महल ले
के डोलवा परिछय तोर बेटा
एक परिखे ममा के बेटा
पानी के बूँदे वो सुउते के बोली
कइसे म जनम पहाते

लाल और पीले परिधान में सारे बराती बड़े आकर्षक लग रहे हैं। मगर दुलारे दामाद तो बिलकुल ही अलग नजर आ रहे हैं। क्योंकि उन्होंने झीनी सी पिछौरी ओढ़ी है, जिसके कारण वो अलग ही नजर आ रहे हैं। अपने महल से दुल्हन का भाई बारात और दूल्हे को देखकर बहुत खुश होता है। महादेव दूल्हे के रूप में शहर में आये हैं। सारे लोग उन्हें देखने को उत्सुक हैं। सुनो दुल्हन बाहर आकर तो देखो परछन होने वाली है। दुल्हन आशंकित है कि कहीं पहले से वो विवाहित न हो, कहीं उसकी सौत न हो, अगर ऐसा हुआ तो उस सौत की बोली मैं कैसे सह पाऊँगी। मैं तो मर ही जाऊँगी।

कुछ गीतों में दूल्हे का मजाक भी उड़ाया जाता है। जैसे इस गीत में-

समधिन के दुलरवा खट्टर लुये आइस
ओला गड़गे खट्टर बनके बोझा
लानि देबे तैं भइया बँसुला बिधना
हरी देबे ओकर टन के खोझा

इसमें दूल्हे पर व्यंग्य किया जा रहा है कि तुम्हें देखकर लग रहा है जैसे तुम विवाह करने नहीं घास छीलने आये हो। भैया जरा इनको बंसुला तो ला दो। ये उससे घास छीलेंगे। ज्ञातव्य है

बंसुला से लकड़ी काटी जाती है, घास नहीं छीली जाती है, अर्थात् यहाँ व्यंग्य है कि तुम्हें तो घास छीलना भी नहीं आता।

भड़ौनी

इन गीतों में वर पक्ष का उपहास होता है, उन्हें अपने से कमतर बताते हुये कन्या पक्ष की बड़ाई इन गीतों में होती है। ये गीत उत्तर प्रदेश और बिहार में गायी जाने वाली गारी के समान ही होते हैं, मगर उतने अश्लील नहीं होते।

दार करेन चाँउर करेन लगन ल धरायेन हो
बेटा के बिहाव करे बाजा ल डेराये हो

इस गीत में वर पक्ष का उपहास किया जा रहा है। कहा जा रहा है कि हम बेटी वाले हैं तो बारात को खिलाने के लिये हमने दाल-चावल की व्यवस्था की है। मगर तुम लोग लड़के की शादी करने आये और बाजा तक नहीं लाये। अर्थात् तुम लोग कंजूस हो। एक और गीत है जिसमें दूल्हे का मजाक उड़ाया जा रहा है, कहा जा रहा है कि तुम्हें तो चलना तक नहीं आता। तुम तो ऐसे हिलते-डुलते हुये चलते हो जैसे आम के पत्ते का पंखा हिलता है। तुम तो किसबिन के बेटे हो यानि तुम्हारी माँ तो चरित्रहीन है और तुम हमारे घर बारात लेकर आ गये -

आमा पान के बीजना हालत झूलत आये रे।
किसबिन के बेटा हर बरात लेके आथे रे।

इसी तरह इस गीत में भी दूल्हे के रूप-रंग का उपहास उड़ाते हुये उसकी माँ को गाली दी जा रही है -

करिया-करिया दिखथस दुलरु,
काजर कस नइ आँजे रे।
तोर दाई गे हे पठान घर,
घर घर बसी माँगेस रे।

दूल्हे राजा तुम बहुत काले नजर आ रहे हो। तुमने काजल क्यों नहीं लगाया? शायद उससे तुम्हारी सुंदरता बढ़ जाती। पर तुम ये सब क्या जानो तुम्हारी माँ तो तुम्हें छोड़कर पठान के घर चली गई। तुम तो बिना माँ के घर-घर बासी माँग कर बड़े हुये हो। अर्थात् तुम्हारी तो हैसियत ही नहीं है कि हमारे घर में विवाह कर सको।

आती गाड़ी जाती गाड़ी, गाड़ी म लागे ताला रे।
दुलहा डउका के दाई ल, लेगे मोटर वाला रे।

आने वाली और जाने वाली दोनों ही गाड़ी में ताला लग गया है। अर्थात् आवागमन बन्द है। क्योंकि दूल्हे की माँ को मोटर वाला लेकर भाग गया है।

टिकावन

भाँवर से पहले टिकावन पड़ता है। परिवार के लोग और सगे-सम्बन्धी यथा शक्ति उपहार देते हैं। टिकावन गीतों में किसने क्या दिया, इसका वर्णन रहता है। इस गीत में इसका ही वर्णन है।

हलर-हलर मोर मड़वा हाले
खलर-खलर दाइज परे
सुरहिं गइया के गोबर मंगा ले
खुंट धरि अँगना लिपइले
गजमोतिन कर चौक पूरा ले
सोन के कलस धरा ले
कौन देवे मोरे अचहर पचहर
कोन हरे धेनु गाय
ददा मोर टिकथे लिली हंसा घोड़ा
दाई टिकथे एचहर पचहर
भइया मोर टिक थे कनक के थार
भउजी कहा किया काम।

हलर-हलर मण्डप हिल रहा है। और खलर-खलर दहेज भी बढ़ रहा है। यानि बहुत अधिक दहेज दिया जा रहा है। सुरही गाय का गोबर मंगवाकर चारों खूंट आँगन लीपा गया है और मोतियों से चौक पुरवाया। लड़की कहती है कौन मुझे पचहर देगा और कौन गाय का दान करेगा। वही जवाब भी देती है कि मेरे पिता तो लिली हंसा दे रहे हैं और माँ पचहर दे रही है। पचहर बड़े-बड़े पाँच बरतन होते हैं, जिन्हें हैसियत वाले ही दे पाते हैं।

भाँवर

सिल के फेरे लिए जाते हैं। हर फेरे के बाद सिल पर हल्दी की गाँठ और साबूत सुपारी रखी जाती है, जिसे दुल्हन अपने पैर के अँगूठे से गिराती है। भाँवर पड़ते समय राम और सीता से सम्बन्धित गीत गाये जाते हैं। ये गीत भी प्रश्नोत्तर ही है। पहले

प्रश्न किया गया है फिर उसका उत्तर है। प्रश्न है काली बदली कहाँ से उठती है और कहाँ से बूँद बरसती है? तो सरग अर्थात् आकाश से काली बदली उठती है और धरती पर बूँद पड़ती है। आगे प्रश्न है किसकी नवरंग चूनर भीगती है और किसका रूमाल भीगता है? सीता की नवरंग चूनर भीगती है और राम का रूमाल भीगता है।

कमा उलीथे करी बदरिया,कम ले बरसे बूँद।
सरग उलीथे करा बदरिया, धरती म बरसे बूँद।
काकर भीजे नवरंग चुनरी, काकर भीजे उरमाल।
सीता के भीजे नवरंग चुनरी, राम के भीजे उरमाल।

विदाई

लड़की की विदाई के समय विदा गीत गाये जाते हैं। इनमें लड़की के मन का दु:ख झलकता है। साथ ही माता-पिता, भाई और भाभी की मन:स्थिति का उल्लेख भी विदा गीतों में मिलता है। जैसे ये गीत-

नीक-नीक लुगरा निमार ले वो
हाय-हाय मोर दाई
बेटी पठो वत आँसू ढारे वो
नोनी के छूटगे महतारी वो
हाय-हाय मोर दाई
मया गजब तैंहर करस वो
नोनी घर आज छूटगे वो
हाय-हाय मोर दाई
रोवथे डण्ड पुकार
पहुना वो नोनी अब बनगे वो
हाय-हाय मोर दाई
बेटी के बिदा तुम करि दव वो

इस गीत में लड़की अपनी विदाई की पीड़ा को परिहास में डुबो देना चाहती है। वो अपनी माँ से कहती है कि तुम सबसे अच्छी साड़ियाँ चुनकर अपने लिये रख लो। और रोओ मत। तुम यूँ रोकर अपनी बेटी को विदा मत करो। हाय! मेरी माँ तुम्हारी बेटी का भी तो मायका छूटा जा रहा है। माँ तुमने मुझे बहुत प्यार किया है। तुम जिसे इतना प्यार करती थी, उसी बेटी का सब कुछ छूट रहा है। लेकिन माँ तुम अपनी बेटी को खुशी-खुशी विदा कर दो।

एक अन्य गीत में बेटी अपने मन का दु:ख कह रही है। जिस घर में पली-बढ़ी है। जिस घर में इतना प्यार मिला, उसे छोड़कर जाना पड़ रहा है। वो कहती है- माँ मैं तुम्हारी तो दुलारी बेटी थी। हाय! मेरी माँ महल के भीतर जोर-जोर से रो रही है। और मेरी बहन अली-गली में रोती फिर रही है। भाई भी दु:खी है वो रोते हुए कह रहा है जाओ बहन अपने महल में। वहाँ जाकर खुश रहना। तुम्हें जाना ही पड़ेगा। क्योंकि यही संसार की रीत है, जिसे हमारे पुरखों ने चलाया है। इसे छोड़ नहीं सकते।

दाई के रहेंव मैं रामदुलारी
दाई तोर रोवे महल वो
अलिन गलिन दाई रोवे
ददा रोवे मुसरधार वो
बहिनी बिचारि रोवत हावय
भाई करय उन्ड पुकार वो
तुम मन रहिहव् अपन महल म
दु:ख ल देइहव भुलाय वो
अँसुवन तुम झन ढारिहव् बहिनि
सब के दुखे बिसार वो
दुनिया के ये हर रीत हे नोनी
दिये हे पुरखा चलाय वो
दाई ददा के कोर म रहेन
अँचरा म मुँह ल लुकाये वो
अपन घर तुमन जावव बहिनी
झन करव सोच बिचार वो

इस गीत में लड़की अपनी विदाई की पीड़ा को परिहास में डुबो देना चाहती है। वो अपनी माँ से कहती है कि तुम सबसे अच्छी साड़ियाँ चुन कर अपने लिये रख लो और रोओ मत। तुम यूँ रोकर अपनी बेटी को विदा मत करो। हाय! मेरी माँ तुम्हारी बेटी का भी तो मायका छूटा जा रहा है। माँ तुमने मुझे बहुत प्यार किया है। तुम जिसे इतना प्यार करती थी, उसी बेटी का सब कुछ छूट रहा है। लेकिन माँ तुम अपनी बेटी को खुशी-खुशी विदा कर दो।

पठौनी

गौना को छत्तीसगढ़ में पठौनी कहा जाता है। बचपन में विवाह होता था तो पठौनी का चलन था। आज भी कहीं-कहीं ये रस्म होती है। ये गीत भी दु:ख से भरे होते हैं। इस गीत में भी यही दु:ख छलक रहा है -

दूध के राँधें व् दूध खिचरी
मोर बहिनी
खाये न जाँघिया जोर
पहिली कउ रा के उठाती म बहिनी
पहुँचि न ससुर के लोग
दुसर कउ रा के उठाती म
सघरा ल दिये सरकाय
तीसरा कउ रा के उठाती पहुंचे संदेसिया
पिंजरा ल दिये छटकाय
सिया के सियरिया छोड़ेंव
भइया के मैं पाठ छोड़ेंव
देस ले बिदेस भयेंव
राज ले बिराज होगेंव
चिरई बसेर करेंव
हंसा बसेर करेंव
पर के पुत्तर बर दाई मैं
संग लगेंव

दूध से मैंने खीर बनाई और भाई के साथ खाने बैठी, मगर पहला कौर उठाया ही था कि ससुराल से लोग लिवाने आ गये। दूसरा कौर उठा पाती उससे पहले मुझे भेजने का इंतजाम भी कर दिया गया और तीसरा कौर उठा पाती, उससे पहले मुझे ससुराल रूपी पिंजरे में कैद कर दिया गया। मुझसे भाई का साथ छूट गया। देश से मैं विदेश चली गई। मैं राज करती थी, अब वो सब मुझसे छूट गया। मैं चिड़िया के समान हो गई, जिसका आज यहाँ तो कल वहाँ जाने पर मजबूर हूँ। माँ दूसरे के बेटे के संग जाने को मजबूर हूँ। एक अन्य गीत में भी लड़की मायके के सुखों को याद करके दु:खी होती है। देखिये ये गीत -

साँझिया खवाये दाई घी के लोंदी ओ
दाई मोर अध रतिया चना के दार
कुकरा के बासत दूध खिचरी ओ दाई
मैं कौन दिन करिहौं छुटान ओ दाई बेटा
रहितेंव तोर घर म रहितेंव
बेटी भयेंव बिरान ओ दाई
आज चिरैया रनबन-रनबन ओ दाई
काली चिरैया बड़ दूर ओ
ददा मोर कहिथे कुँआ म धँसि जइतेंव
बबा कथे लेतेंव बैराग ओ बेटी
काबर ददा कुँआ म धँसि जइबे
काबर बबा लेंवें बैराग
बालक सुअना पठन्ता ददा मोर
मोला झट किन लाबे लेवाय
बाँट के बहुवा डिग डोलवा मोर कका
मोला झटकून लाबे लेवाय
भरे दरबार भाई बोले
आ आ मोर बहिनी
छिन भर कोरवा म लेंव
गोदी के हमावत ले
मोर गोदी म रहे
अब आज ले भये बिरान ओ मोर बहिनी

इसमें लड़की कह रही है- माँ तुमने मेरी हर इच्छा पूरी की। तुमने शाम को मुझे घी खिलाया तो आधी रात को चना की दाल खिलाई और मुर्गा के बांग देते ही खीर खिलाई। माँ मैं तुम्हारे इस स्नेह की कीमत कैसे चुकाऊँगी? अगर मैं बेटा होती तो तुम्हारे पास रहती। मगर मैं तो लड़की हूँ। चिड़िया की तरह आज यहाँ तो कल वहाँ जाने को विवश हूँ। कल मैं तुम सबसे दूर चली जाऊँगी। पिता कहते हैं कि वे मेरे बिना रह नहीं पायेंगे। कुएँ में डूब जायेंगे। बाबा कहते हैं- वे वैराग ले लेंगे। ददा क्यों कुएँ में धँसें, बाबा क्यों बैरागी हों, मैंने जो तोता पाला था वो बहुत होशियार है। उसे भेज कर मुझे बुला लेना। मेरी डोली रास्ते में ही रहे, तभी मुझे बुला लेना। यानि ससुराल पहुँचने से पहले ही मुझे लिवा लाना। उसकी बात सुनकर भाई कहता है- आ जा मेरी प्यारी बहन तुम्हे जरा देर अपने कोरा में ले लूँ, पर अब तुम बड़ी हो गई हो। आज मेरे कोरा में नहीं समा पाओगी। आज से तुम परायी हो गई हो।

इस तरह छत्तीसगढ़ की वैवाहिक परम्पराओं में कुछ भिन्नताएँ हैं और ये भिन्नताएँ ही इन्हें विशेष बनाती हैं ।

छत्तीसगढ़ के विवाह गीत

डॉ. अश्विनी केशरवानी

छत्तीसगढ़ में विवाह एक प्रमुख संस्कार है। इस संस्कार का बीजारोपण लड़का-लड़की के मंगनी (शादी तय होना)से होता है। अनेक जाति में वर पक्ष के लोग कन्या पक्ष के घर सकुटुम्ब भात खाने जाते हैं। भात खाने का अर्थ वचन बद्धता से लिया जाता है। इस अवसर पर कन्या पक्ष के लोग वर पक्ष के लोगों को भेंट देते हैं। इस अवसर पर गाया जाता है-

ऊंचे चौरा बबा औ चौपलिया, धन तुलसी के पेड़ हो।
जेहि तरि बैठि बिटिया, वोही तरी हिंगुन सुनार हो।
हार गढ़इया बबा टिकुली गढ़इया, नथनी गढ़इया हो।
अतका पहिर के बिटिया चौके में बैठें, गिरथे मोती कस बुंद हो।
का थोरे होगे बिटिया, काहे बर बदन मलीन हो।
सोन थोर होगे कि रूप थोर होगे, काहे बर बदन मलीन हो।
न बबा सोन थोरे न बबा रूप थोरे, न बबा बदन मलीन।
हम बबा गोरे-गोरे प्रभु जी हैं कारे-कारे, ए बर बदन मलीन हो।
कारे गोरे बिटिया झिन काहीं कहिबे, कारे हैं सिरी भगवान हो।
माई के कोख कुम्हार के आवा, कोई कारे कोई गोरे हो।

तुलसी के छांव तले वधू आभूषणों से लदी बैठी है। उसका मुख मलीन है। आखिर शुभ घड़ी में मलीनता का क्या कारण है?

वह गोरी है, पर उसका वर श्याम वर्ण का हैं। परन्तु यह सोच का विषय नहीं है, क्योंकि माँ की कोख कुम्हार के आवा के समान है, कोई काला और कोई गोरा है।

विवाह कार्य पुरोहित के लग्न विचार से होता है। यह कार्य उसी समय होता है, जब वर पक्ष के लोग कन्या पक्ष के घर जाते हैं। पुनरागमन के पश्चात् हल्दी में रंगे चावल, सुपारी आदि भेजकर विवाह का निमंत्रण (नेवता) भेजा जाता है।

जिस दिन तेल-हल्दी चढ़ने का लगन होता है। उससे आठ दिन पहले ग्राम या नगर के बाहर स्थित तालाब के पार जाकर महिलाएँ मिट्टी खोदने जाती हैं। इसे 'चूलमाटी' कहते हैं। उस मिट्टी से चूल्हा बनाया जाता है। चूलमाटी के लिए जाते समय महिलाएँ गाती हैं-

तोला माटी कोड़े ल नई आवै मीत
धीरे-धीरे तोर, कनिहा ढील धीरे-धीरे
जतके पोरसय ओतके ल लील
तोर बहिनी ला तीर, धीरे-धीरे

अर्थात् मीत! तुझे मिट्टी खोदना नहीं आता, धीरे-धीरे कमर ढीली कर। जितना परोसा जाये, उतना खा और अपनी बहन को धीरे-धीरे खींच।

एक अन्य गीत, जिसे मिट्टी खोदते समय महिलाएँ समवेत स्वर में गाती हैं-

तोला माटी कोड़े ल नइ आवे सुआसा धिरे-धिरे।
दही के भौंरा कपसा लिहेन धिरे-धिरे।

महिलाएँ रास्ते भर गीत गाती हैं। इन गीतों में प्रायः ददरिया (प्रणय गीत) होती है और कभी-कभी भावी समधिन का उपहास करती गारी गीत गाती हैं-

किया चौकी डारे समधीन, खोरि और डगर में
बोलो समधिन मोरे।
चौकी ल कहाँ डारि आये
बोलो समधिन मोरे।
नाचत नाचत समधिन के एड़िया बिछलि गै
टूटि गै नौ सेर के हारे
नवरंग चूनरी रंगाये समधिन
टूटि गै नवलाख चूरे।। बोलो समधिन.....

उसी दिन कन्या के साथ रहने वाली 'सुवासिनें' धान कूटती हैं। वर के लिए पाँच पायली और कन्या के लिए सात पायली। वर पक्ष के घर भी ऐसा ही कार्य होता है। वर जब तक अपने घर में रहता है, सुवासिनें उसका साथ देती हैं और जैसे ही बारात कन्या के घर के लिए प्रस्थान करती है- 'ढेड़हा' वर का साथ देता है। 'ढेड़हा' प्रायः लड़के का फूफा या जीजा होता है। इसी प्रकार वर का काका या पिता, जो अगुवा रहता है, उसे 'पगराइत' कहा जाता है।

इसी दिन 'बरी' बनाते हैं। मूंग या उड़द दाल को छिलके समेत पानी में भिगो दिया जाता है। सुबह उसे पीसकर सुवासिनें 'बरी' बनाती हैं।

चूलमाटी के आठ दिन बाद तेलमाटी संस्कार होता है। इस दिन शुभ मुहूर्त में महिलाएँ गीत गाती तालाब जाती हैं। इसके पूर्व वर या कन्या की माँ 'मांदर' बाजे को पीछे रखकर उल्टे हाथ से मारकर बजाती है- वर के लिए पाँच बार और कन्या के लिए सात बार। इसके बाद पर्रा या सूपा लेकर उसमें दीया, गोबर की मूठिया, गौरी-गणेश बनाते हैं। उसमें पकवान और मिठाई भी रखते हैं। महिलाएँ उसी तालाब के किनारे जाती हैं, जहाँ से चूलमाटी के लिए मिट्टी लाते हैं। वर या कन्या एक-एक पूड़ी ऊपर उछालती हैं। उसे परिवार की महिलाएँ झेलती और खातीं हैं। तालाब से घर पहुँचकर उसी प्रकार कन्या ऊपर उछालती हैं और परिवार की महिलाएँ उसे खाती हैं। उसके बाद वर या कन्या को तेल चढ़ाते हैं।

तेल चढ़ाने को तेलचघी भी कहते हैं। यह वर-वधू कन्या दोनों पक्षों में सुवासिनें बारी-बारी से उन्हें हल्दी-तेल लगाती हैं। इसी दिन मंडपाच्छादन या स्तम्भारोहण भी होता है। दो बाँस पास-पास में गाड़ देते हैं। मंडपाच्छादन के पहले एक गड्ढा खोदकर हल्दी, सुपारी और सिक्का रखकर उसे दबा दिया जाता है। पाँच हाथ लगाकर इसे सम्पन्न किया जाता है। चौक पूरकर फिर कलश की स्थापना की जाती है। स्तम्भ के साथ 'मंगरोहन'

गाड़ा जाता है। मंगरोहन, आम की लकड़ी का टुकड़ा होता है। गाँव में स्वजन और परिजनों को निमंत्रण दिया जाता है। तेल में हल्दी को घोल दिया जाता है। फिर सुवासिनें हाथ में तेल लगाकर हल्दी लेकर वर या वधू के अधोअंग से उपांग की ओर पाँच-पाँच बार थापे लगाती और समवेत स्वर में गाती है-

घर ले ओ निकले हरियर-हरियर,
मड़वा म घियरी के बदन मलीन।
काहे बिन घियरी हो अनमन दुनमन,
काहे बिन घियरी के बदन मलीन।
दाई बिन घियरी हो अनमन दुनमन,
ददा बिन घियरी के बदन मलीन।
पाँच पतीन के हो मड़वा छवायेऊ हरियर बांस,
जेहि तर बैठे बारे दुलरवा,
जोहत गोतिन के बांट।।

यह कन्या पक्ष का गीत है। यद्यपि विवाह का प्रसंग मंगलमय है, किन्तु लड़की का मन अपना घर छूटने की कल्पना से दुखित होने लगा हैं। माँ-बाप के अभाव की कल्पना से ही उसका मन मलीन हो गया है और वह खोयी-खोयी-सी लग रही है। इसी प्रकार वर पक्ष में भी हल्दी चढ़ाते समय गीत गाया जाता है। वर का मुख भी किंचित उतर गया है। वह हल्दी लगवाते-लगवाते परेशान हो उठा है। इस गीत में विधि का विधान और हर्ष की ध्वनि अधिक है। देखिये एक गीत-

एक तेल चढ़िगे हो हरियर हरियर
मंड़वा में दुलरा तोर बदन कुम्हिलाय।
हरियर हरियर मड़वा म दुलरू
अउ कांचा तिली के तेल
ददा तोर लाने बाबूहल्दी सुपारी,
दाई आने तिली के तेल
कौन चढ़ाये तोर तन भर हरदी,
औ कौन देवै अचरा के छांव
फूफू चढ़ाये तोर तन भर हरदी,
अउ दाई देवै अंचरा के छांव
औ राम लखन के तेल चढ़त है
आजा बजत है निसान।

तेल चढ़ाते समय हल्दी का विशेष महत्त्व होता है, उसकी महत्ता महिलाओं के मुख से इस गीत में सुनिये -

चंदन कथे चंदन कथे मैं बड़े में बड़े
हरदी कथे तोरेव ले मैं बड़े
तैं तो चंदन तैं तो चंदन राजदुआरे
मैं तो हरदी छोटे बड़े में।

सचमुच चंदन तो राजा-महाराजाओं तक सीमित होता है, किन्तु हल्दी तो सबकी पहुँच में होती है। उसकी उपादेयता समान है। देखिये एक अन्य गीत -

तोरे दाई बाबू देसपति के राजा
अउ काहे गुन रहे गा कुंवारा
हरदी के देस दीदी हरदी महंगा भइगे
अउ परी सुकाल भइगे
इही गुन रहेंव ओ कुंवारा
करसा के देस दीदी करसा महंगा भइगे
बिजना सुकाल भइगे
इही गुन रहेंवओ कुंआरा
हरदी के देस दीदी चांउर महंगा भइगे
अउ पर्ण भइगे सुकाल
इही गुन रहेंव ओ कुंआरा
करसा के देस दीदी
मंगरोहन महंगा भइगे
गुड़रा भइगे सुकाल
इही गुन रहेंव वो कुंवारा।

इस गीत में वर से कहा जा रहा है कि तू क्यों अभी तक कुंवारा रह गया। हल्दी महंगी हो गई, सूप सस्ता हो गया, इसलिए मैं कुंवारा रह गया। कलश महंगा हो गया, पंखा सस्ता हो गया, इसलिए मैं कुंवारा रह गया। चावल महंगा हो गया और सूप सस्ता हो गया, इसलिए मैं कुँवारा रह गया। अइपन महंगा हो गया और गुड़रा सस्ता हो गया, इसलिए मैं कुँवारा रह गया।

पहार ऊपर पहार मोर धानर बाजे
पेरि तेलिया मोर कांचा तिल का तेल
कोन तोर लाने मोर नोनी अटना के हरदी
पटना के हरदी बने
कोन तोर सिरही चढ़ाये, चंदन रूप अगनी
सजन घर मंड़वा गड़े
ददा तोर लाने नोनी अटना के हरदी पटना के,
हरदी बने दाई तोर सिरही चढ़ाये चंदन रूप अगनी
सजन घर मंड़वा गड़े
सुरहिन गइया के गोबर मंगाले ओ
हाय-हाय मोर दाई खूटा घर आंगना लिप ले ओ
खूंटा घर अंगना लिपा ले ओ
हाय हाय मोर दाई मोतियन चौक पुरा ले ओ
मोतियन चौक पुरा ले ओ
हाय-हाय मोर दाई सोने के कलसा मढ़ाले ओ
सोने के कलया मढ़ाले ओ
हाय-हाय मोर दाई सोने कर बतिया लगा ले ओ
सोने कर बकतया लगा ले ओ
हाय-हाय मोर दाई सुरहिन घीव जला ले ओ
हरियर-हरियर मोर मंड़वा में दुलरू वो
कांचा तिली कय तेल
कोनो तो लनिथय मोर हरदी सुपारी ओ
कोचा तिली कय तेल
ददा ओर लनिथय हरदी सुपारी ओ
दाई आनय तिली के तेल
कोन चढ़ाथय तोर तन भर हरदी ओ
कोन देवय आचरा के छांव
फूफू चढ़ाथय तोर तन भर हरदी ओ
दाई देवय अचरा के छांव
राम लखन के मोर तेल चढ़त हवै
बाजा के सुनव तुमन तान।

बाजा बज रहा है। तेली मेरे लिए तिल का तेल पेर दे। सुरहिन गाय का गोबर मंगाकर आँगन लिपवा लो, मोतियों से चौक पूर लो, सोने का कलश रख लो, सुरहिन गाय के घी से दीपक जला लो। अंतिम गीत में तेल चढ़ाने की प्रक्रिया का वर्णन है। तेल चढ़ रहा है। कौन हल्दी-सुपारी ला रहा है। पिता हल्दी-सुपारी ला रहे हैं। शरीर पर हल्दी कौन मल रहा है? आँचल की छाया कौन दे रहा है? फूफी (बुआ) हल्दी लगा रही है, माँ आँचल की छाया दे रही है। राम-लक्षण को तेल चढ़ रहा है, बाजे की तान सुनो।

तेलचघी के बाद 'माय मौरी' होता है। महिलाएँ गीत गाकर सभी देवताओं और पूर्वजों को आमंत्रित करती हैं और उनसे आशीर्वाद मांगती है, ताकि इस मांगलिक कार्य में किसी प्रकार के विघ्न-बाधा न आये।

देव धामी ल न्योतेंव
उन्हू ल न्योतेंव
जे घर छोड़ेन बारे मोरेन
ता घर पगुरेन हो
माता पिता ल नेउतेन
उन्हू ल न्योतेन

माय मौरी में सुवासिनें रोटी पकाती हैं। इसे वर या कन्या के हाथ में दोने में रखकर सूत से बाँधा जाता है। वर के लिए पाँच और कन्या के लिए सात रोटी रखकर उतनी ही बार सूत को लपेटा जाता है। इसी प्रकार रोटी बनाने के चूल्हे से लेकर मड़वा तक वर पाँच बार और कन्या सात बार परिक्रमा करते हैं।

बारात विदा होने के पूर्व नहडोरी होती है। वर नहाकर नये वस्त्राभूषण से अलंकृत होता है। डेढ़हा वर को मड़वा की पाँच बार परिक्रमा करवाता है। उसके शरीर को ढँक कर उनकी आँख बंद कराकर वर के हाथ में कंकन बांधता है। महिलाएँ इस अवसर पर गाती हैं-

दे तो दाईदे तो दाई अस्सी ओ रुपिया
सुन्दरि ल लान्त्यों बिहाय
सुन्दरि सुन्दरि रटन धरे बाबू
सुन्दरि के देस बड़ दूर
तोर बर लानिहों दाई
रांधही परोसही

मोर बर घर के सिंगारे
पायं बर ले दाई सचमुच पनही
चघे बर दे दे लिलिहंसा घोड़ा
भूख बर जोर दे दाई भुखहा कलेवा
प्यासा बर गंगाजल।

वर अपनी माँ से कहता है कि मुझे अस्सी रूपये दे दे, मैं सुन्दरी ब्याहकर लाऊँगा। माँ कहती है कि बेटे, सुन्दरी की रट क्यों लगा रखी है? सुन्दरी का देश बड़ी दूर है। पुत्र कहता है कि नहीं माँ, मैं तेरे लिए खाना बनाने वाली और अपने लिए घर का श्रृँगार लाऊँगा। माँ मुझे पहनने के लिए जूते दे दे, चढ़ने के लिए लिलि हंसा घोड़ा दे दे। भूख-प्यास मिटाने के लिए कलेवा और पीने के लिए गंगा जल रख दे।

दाबे बर ले दे खांड़े तलवारे
घामे बर छतरी तनाय
कोन गाँव ला टोरंव दाई
कोन गाँव ला फोरंव
कोन गाँव ले लानों बिहाय
राइपुर ला टोरंव
राइगढ़ ला फोरंव
नवागढ़ ले लानो बिहाय
चढ़त बेरा धरम के
उतरत बेरा लगिन के
धरम धरम जस ल ले
फेर धरम लइ मिले।

वर आगे कहता है कि साथ रखने के लिए तलवार दे दे। धूप से बचने के लिए छाता दे दे। माँ मैं किस गाँव से बहू लाऊँ... किस गाँव को मैं तोड़ू और किस गाँव को फोड़ू और किस गाँव से ब्याह कर ले आऊँ? रायपुर को तोड़ू, रायगढ़ को फोड़ू और नवागढ़ से ब्याह कर ले आऊँ। धर्म का समय उदित हो रहा है, लग्न का समय अस्त हो रहा है। धर्म का यश ले लो, फिर नहीं मिलेगा।

बारात विदा करते समय महिलाएँ गाती हैं -

लिखि लिखि पतियां भेजे राजा दशरथ
राजा जनक जी के पास हो
तोरा घर हवै राजा लाड़ली परेवना
मोरा घर हवै नंदलाल
कौन तोरे धनुस टिकोरे मोरे साहब
कौन तोरे बान संधारे हो
कौन तोरे सिया ल बिंहावै मोरे साहब
कौन तोरे साजे बरात हो
राम तोरे धनुष टिकोरे मोरे साहब
लछिमन बान संधारइ हो
भगवत सिया ल बिंहावै मोरे साहब
दसरथ साजैं बरात हो।

इस गीत में कहीं-कहीं वर के मनोभाव का दिग्दर्शन कराने का प्रयास किया गया है।

कन्या पक्ष बारात आगमन की प्रतीक्षा में है। बारात आगमन की खबर मिलते ही कन्या की माता अन्य महिलाओं के साथ मकान की छत पर जाकर बारात देखती है, जो अभी बहुत दूर है। बारात को बड़ी संख्या में देखकर माता को चिंता होती है कि वह इन्हें कैसे संतुष्ट करेगी। फिर सोचकर उसका निदान भी करती है-

ऊंचे चंवरवा हो चौखट छाये
हेंगुर धरे ल बान जा चढ़ि देखत हैं
दुलरवा के भइया
कते दल आये ल बरात हो।

मकान के ऊँचे द्वार हैं, उन पर बंदनवार लगे हैं। ऊपर छत पर जाकर कन्या की माता देख रही है कि कितने बाराती आये हैं-

सौ दुइ छोड़वा सहस दुइ हथियां
पैदल कै तो अनलेखे हो।

अब संकट आ पड़ा-

कामा समोखौं साहेब हथिया अउ घोड़वा

कामा समौखिहौं बारात हो।
कामा समोखिहौं भोगी अउ समधी ला
ओही मोर दल के सिंगार हो।

विचार करने पर उसका हल भी निकल आता है–

बगरी समोखों साहेब हथिया घोड़वा
भाते दे समोखिहौं बरात हो।
दाइज दे समोखिहौं भोगी औ समधी
बेटी दे के दुलरू दमाद हो।

बारात बढ़ती चली आ रही है। घर की महिलाएँ अगवानी करने स्वागतार्थ आगे बढ़ती है। बारात का स्वागत करती हुई कहती है–

बड़े-बड़े देवता रेंगत है बरात, बरमा महेस
लिली हंसा घोड़वा म राम जी चघे हैं,
लछिमन चघे सिंह बाघ।

लोकगीतों में हर बाराती उतना ही महान और पूज्यनीय है, जितने बह्मा जी और भगवान शंकर है। वर तो भला राम जैसे होता ही है, उसका वाहन भी उसके अनुकूल ही होगा। बारात को एक निश्चित स्थान में रूकाया जाता है, जिसे 'जनवासा' कहा जाता है।

जनवासा में नाश्ता-पानी के बाद सभी बाराती सज-धजकर बाजे-गाजे के साथ नाचते-गाते परघनी के लिए निकलते हैं। गाँव के प्रमुख मार्ग से गलियों से गुजरती हुई बारात कन्या के घर तक पहुँच जाती है, जहाँ कन्या पक्ष के बड़े बुजुर्ग बरातियों को परघाकर स्वागत करते हैं। कन्या पक्ष की महिलाएँ वर से द्वार पूजा करवाती है। सभी बारातियों का पैर धोकर उन्हें चाय, नाश्ता और शरबत आदि देकर स्वागत किया जाता है। पैर धोने की परंपरा को 'गोड़ धोई' कहा जाता है। तत्पश्चात् वर को एक कमरे में बिठाया जाता है और कन्या पक्ष की सुवासिनें उन्हें भाजी खिलाने का उपक्रम करती है। इसे 'भाजी खिलाना' कहते हैं। कन्या पक्ष की महिलाएँ बारातियों का स्वागत करते हुए गीत गाती हैं–

हाथ धरे लोटिया
कांधे में धरे पोतिया
सगरी नहाये चले जाबो
पनिया हिलोरे गौरी नहावय
परगे महादेव के छांही
सात समुन्दर ल तै धाये महादेव
परगे महादेव के छांही
एक फुल टोर के
मैं मइके भेजाइयों दाईन के देस
महादेव के साथे
किया तुम हवौ राजा बोरे भौरे
किया तुम हवौ राजा कंच कुंवारे
तुंहर पलंग ह सांकुर हवय
कैसे के काहौं बिहाने
ना हम बारे कन्या
ना हम भारे ना हम कंच कुंवारे
तुंहर कोखे में पूत नइये
रचत हंवौ दुसरे बिहावे
कोन तो होहै राजा डोलहा बजनिया
कोन तोरे ठसै बरातै
गंगा नागिन ल मैं गर म लपेट्यों
बइला म चघे महादेव
चंदा सुरूज ह अरतिया बरतिया
अरजुन ठसै बरातै
एक कोस रेगों दुसर कोस रेगों
तिसर म परगे मइलाने
कोन देसुरा म बाजा बजत है
घटपट आथे बराते
किया चोराबे माठ के मठइला
किया चोराबे फुलवा के फूल
लहसत आवथे विकसत आवथे
झकथे महादेव के कंगूरा
किया तै आए बही वो बेपारी
पहुँचत हवै बराते
नोहय बही दाइ नोहय बेपारी
पहुँचत हवै महादेवै

चलौ अरोसिन चलो परोसिन
जोगड़ा के करौ परघनी
राम रसोई तुम रांधौ बहुरिया
त जोगड़ा आवधे बराते
किया भंवर के कारन मरदनिया
बला दव जोगड़ा के
आए हे बराते
आवौ अरोसिन आवौ परोसिन
जोगड़ा के करदौ टिकावन
हंउला बटलोही परथे दाइज
राम रसोई मोर चुरगे
जेन तो जोगड़ा ल, देवौ भोजन
हाथी घोड़ा के लगे पलाने
झांपी पेटी के अनलेख
आवौ अरोसिन
जोगड़ा के कर देबो बिदा
एक कोस रेगें दुसर कोस रेगें
तिसर म परगे मइलाने
तिसर कोस रेगेंव चउथ कोस रेगेंव
पाँचे मं पहुँचे अपन राजे
अपन सहर मं महादेव पहुँचे
कि दुनिया के आवथे देखइया
निकरव कइसा अपन महल ले
कि डोलवा परिखन लागव
नइ मैं निकरवं राजा अपन महल ले
कि डोलवा परिखय तोर बेटा
एक तोर परिखै
तोर भाइ भतिजवा
एक परिखै ममा के बेटा
पानी के बूंदे ओ
सउते के बोली
कइसे मं जनक पहाहै
एक मिलि रइहौ एक मिलि खइहौ
एक मिलि जनम पहाहै
एक मिलि कुटिहौ एक मिलि पिसिहौ
एक मिलि महादेव के
सेवा ल करिहौ।

इस गीत में कन्या के अपने वैवाहिक जीवन की सफलता के प्रति शंका निवारण के लिए उन्हें बताया जाता है कि एक साथ मिलकर रहना, एक साथ मिलकर खाना और एक साथ मिलकर जीवन बिताना, यही वैवाहिक जीवन की सफलता है। हाथ में लोटा और कंधे पर साड़ी रखकर चलो संगी नहाने चलें। पानी हिल रहा है, गौरी नहा रही है। महादेव की छाया उनके ऊपर पड़ गई। सात समुद्र पार से तुम दौड़ते आये हो। क्या तुम कुंवारे हो? महादेव कहते है कि मैं कुंवारा नहीं हूँ। मैं पुत्र की कामना से दूसरा ब्याह रच रहा हूँ। तुम्हारे बाराती कौन हैं? चंदा-सूरज मेरे बाराती हैं।

परघनी के बाद सभी बाराती कन्या के घर भोजन करते हैं। इसे 'बाराती न्योता' कहते हैं। भोजन करके बाराती जनवासा में आकर विश्राम करते हैं। दूसरे दिन सुबह कन्या को डोला में बिठाकर 'सुहाग' देने के लिए धोबिन के घर ले जाते हैं। धोबिन की 'नहडोरी' होती है। कन्या के शरीर में 'मयान' के दिन जो हल्दी मली जाती है, उसे उबटन लगाकर छुड़ाया जाता है। स्नानादि के बाद उसका श्रृँगार किया जाता है। शुभ लग्न में 'चढ़ाव' बुलाने के लिए जनवासा नेवता भेजा जाता है। इसे 'झांपी बुलाव' भी कहा जाता है इसके बाद 'पगरैत बुलाव' होता है। वर पक्ष के मुखिया के आने के बाद 'वर बुलाव' होता है। वर के साथ डेढ़हा (वर का फूफा या जीजा) रहता है। जब वर कन्या के द्वार तक आ जाता है, तब महिलाएँ द्वार पर उनकी आरती उतार कर स्वागत करती हैं। डेढ़हा वर को मंडप तक ले जाता है। इसी समय समधी बुलाव होता है। समधी के आने के बाद दोनों पक्ष के समधी आपस में गले मिलते हैं, इसे 'समधी भेंट' कहते हैं। इस अवसर पर गाया जाता है -

चंदा सुरूज दोनों सखियां हैं साहेब,
धरतिन परे है जवान हो।
पंच परमेसर साहेब अंगना म ठाढ़े,
तेरा मोरा जुतथ है सनेह हो।

फिर विवाह की रस्में पूरी की जाती है।

विवाह मण्डप में वर के आने के बाद कन्या को बुलाया जाता है। पूजा पाठ के बाद भांवर पड़ते है। भांवर पड़ते समय कन्या का भाई उसके हाथ में लाई देता है और वर उसे छुड़ाता है। भांवर पड़ते समय सिल में सात सुपारी, सात हल्दी की गठान, पीले चावल की ढेरी के साथ रखी जाती है। वर और कन्या के हर भांवर के बाद एक ढेरी को कन्या के पैर से गिराया जाता है। भांवर सात बार होता है और हर भांवर पर ढेरी को कन्या के पैर से गिराया जाता है। इसी प्रकार कन्या का भाई उसके हाथ में लाई देता है, जिसे गिराया जाता है। महिलाएँ इस अवसर पर गीत गाती हैं–

जनम–जनम गाँठ जोर दे।
ये दोषी जनम–जनम गाँठ जोर दे।
गांठे गठुरी झनि छूटे ये दोषी।
तोर दाई हारे मोर बबा जीते ये दोषी।
एक पूरा खदर ला दुइ घर छाये ये दोषी।
गाँठ गठुरी झन छूटे।

अर्थात् जन्म–जन्मान्तर के लिए यह गाँठ जोड़ दो जो कभी न छूटे। तेरी माँ हार गई मेरे बाबा जीत गये। एक पूड़ा घास से दो घर छा गये, यह गाँठ कभी न छूटे।

कामा उलोथे कारी बदरिया
काम ले बरसे बूंद
सरग उलोथे कारी बदरिया
धरती बरसे बूंद
काकर भींगे नवरंग चुनरी
काकर भींगे उरमाल
कैसे के चिन्ह व सीता जानकी
कैसे के चिन्ह भगवान
कलसा बोहे चीन्हेंव सीता जानकी
मुकुट खोपे भगवान
कामा अउ चीन्हव अटहर कटहर
मौरत चीन्हव आमा डार
चउक म चीन्हव सीता जानकी ल
अउ मटुक मं चीन्हव राजा राम
आगे आगे मोर राम चलत है
पीछे लछिमन भाई
अउ मंझोलन मोर सीता जानकी
चित्रकूट बर चले जाय।

काली बदली कहाँ से आती है? वर्षा की बूंदे कहाँ से टपकती है? स्वर्ग से काली बदली आती है। बादल से बूंदें गिरती है। किसकी नवरंग चुनरी भीग रही है? किसका रूमाल भीग रहा है? सीता की नवरंग चुनरी भीग रही है। राम का रूमाल भीग रहा हैं। सीता की क्या पहचान है? राम की क्या पहचान है? कलश सीता बोहे हुए है। राम मुकुट लगाये हुए है। आगे–आगे राम, पीछे लछमन और बीच में सीता चित्रकूट की ओर जा रहे हैं। एक अन्य गीत प्रश्नोत्तर रूप में प्रस्तुत है–

बाहिर भीती पोते धियरी मोर बड़े–बड़े भार
भीतर भीती पोते धियरी मोर लिखना चढ़ाय
कउन बिरिज तरी खिले पनवार
कउन बिरिज तरी रचे जेवनार
अमवा बिरिज तरी खिले पनवार
अमली बिरिज तरी रचे जेवनार
छूरा राय के पूतवा हो खिलै पनवार
बघेला राय के धियरी हो रचे जेवनार
हँसि–हँसि पुतवा खिलैं बनवार
हँसि–हँसि पुतवा खिलैं पनवार
लहसि–बिहँसि धियरी रचे जेवनार
लहसि–बिहँसि धियरी परोसे जेवनार
हँसि–हँसि पुतवा हो जेवैं जेवनार।

एक अन्य गीत पेश है–

कौन कोड़ावे सरवर सगरी,
कौन बंधावै पार।
कौन लगावै लख अमरैया,
कौन हवै रखवार।
राम कोड़ावै सगुरी सरवर,

लछिमन बंधावै पार।
सीव लगावै लख अमरैया,
सतगुरु हैं रखवार।

विवाह में बाराती के भोजन करते समय 'मड़वनी' गायी जाती है। इस गीत में हास-परिहास की योजना रहती है। इसे 'गारी गीत' भी कहते हैं, जो राग-द्वेष से मुक्त प्रेम की प्रतीक मानी जाती है। इस गीत का लक्ष्य समधी-समधिन, वर-वधू और लोड़हिन रहता है। समधी के लिए एक गीत-

बने बने तोला जानेंव समधी,
मड़वा में डारेंव बांस रे।
झालापारा लुगरा लाने,
जरय तुंहर नाक रे।
दार करे चांउर करे,
लगिन ला धराये रे।
बेटा के बिहाव करे,
बाजा ल डराये रे।
मेंछा हावय लाम लाम,
मुँह हावय करिया रें।
समधी बिचारा का करय,
पहिरे हावय फरिया रे।
मेंछा हावय कर्रा कर्रा,
गाल हावय तुहर खोधरा रे।
जादा झन अटियाहव समधी,
होगे हावय डोकरा रे।

समधी को लक्ष्य कर गायी गयी गालियों में उसकी आयु, वेश-भूषा और समधिन के लिए लाई गई भेंट आदि का उल्लेख होता है। समधिन के लिए भी गारी गीत गायी जाती है-

बरा खाहूं कहिथव समधिन,
कहाँ के बरा पाबे रे।
हाथ गोड़ के बरा बना ने,
टोर-टोर के खाबे रे।
खाये बर मखना पिराये बर पेट रे।
का लइका बिआए समधिन हंसिया के बेंट रे,
खीरा फरिच जोंधरा फरिच।
फरिच हावय कुंदरू रे,
समधिन दारील हम नचाबोन।
गोड़ में बांधही घुँघरू रे,
दमरू हावय दफड़ा हावय।
ओला हम बजवाबो रे,
हमर समधिन दारी ला,
बजनिया संग नचवाबो रे।

समधिन तुम बरा खाने के लिए कह रही हो, कहाँ से बरा मिलेगा? हाथ-पैर के बरा बना लो और ताड़ तोड़कर खा लो। समधिन तुमने कुम्हड़ा खाया और तुम्हारे पेट में पीड़ा हुई। तुमने हंसिये के समान बेटा पैदा किया। खीरा में फल लगा, मक्का में फल लगा, कुंदरू में फल लगा। हम पैर में घुँघरू बँधवाकर समधिन को नचवायेंगे। हम डमरू और दफड़ा बाजा बजवाकर समधिन को नचवायेंगे।

कोदो के हवै दुइ दुइ झंसा
रैला चना के दुइ दार
समधिन के हवय तीनि बहिनिया
कोन त अकल छिनरिया
बड़की ऐ लबरी
छोटकी हे बपुरी
मंझली हे छिनरिया
छोटकी रे बपुरी कुछु नइ जानय
खोजि-खोजि करे लगवारा।

कोदो के दो झांसे हैं। अरहर की दो दालें हैं। समधिन की तीन बहनें हैं। बड़ी झूठी है, छोटी बपुरी है, मंझली....गाली देती है। छोटी भोली है कुछ नहीं जानती, खोज-खोजकर सम्बन्ध जोड़ती है। एक अन्य गीत पेश है-

समधिन के टुरा खदर लुहे
आइस ओला गड़गै खदर बनके खोझ
लानि देबे तैं भैया बसुला वो बिंधना,
हेरि देबे ओखर तन के खोझ।

अर्थात् समधिन का छोकरा जंगलों को साफ करने आया था, पर जंगल का कांटा उसे चुभ गया। अतः हे मेरे भाई! जरा बंसुला-बिधना (बढ़ई के औजार जिनसे लकड़ी छिली और छेदी जाती है) तो ले आना और उनके पैर का कांटा निकाल देना।

गारी गीत में वर को भी नहीं छोड़ते। देखिए इस गीत में वर को सम्बोधित करके गीत गाया जा रहा है-

टोरउ डंड़िया हो टोरउ हो पलुकिया
देउबड़ छिनारी के टूरा ल वारी हो
अतना बेरी कस लगे रे तोला टूरा
मोर घिया गे कुम्हलाया हो।

अर्थात् वर को सम्बोधित इस गीत में कहा जा रहा है कि अरे व्यभिचारिणी के पुत्र! मैं तुझे गाली दूंगी, तुझे इतनी देर क्यों लगी? मेरी बेटी कुम्हला गई है। अब तो पालकी, छत्र, चंवर सब को तोड़ डाल। वर सफाई देते हुए कहता है-

काहे बर होरउ रे सासु डांड़ी हो पलुकिया
काहे बर देहउ मोला गारी हो
माते हथिया पलंग नइ तो सोरे
जेहि गुन भये अपरात।

मैं क्या करूँ हाथ मता गया था। उसी के कारण आधी रात हो गयी। तुम व्यर्थ ही पालकी और छत्र को तोड़ने तथा गाली देने को कहती हो। वर को संबोधित एक अन्य गीत देखिए-

करिया-करिया दिखथव दुलरू,
काजर कस नइ आंजे रे।
तोर फूफू गय पठान घर,
उही कोती के आव रे।
सुंदर हवस कहिके दुलरवा,
हमला दियेव दगा रे।
बिलवा हवय मुँह तुंहर,
नोहव हमर सगा रे।
आमा पान के पुतरी,
लिमउआ छू छू जाय रे।
दुलहन डउका दुबर होगे,
सीथा बिन बिन खाय रे।

अर्थात् दूल्हे राजा इतने काले दिखते हैं कि काजल भी नहीं दिखता। तेरी फूफी पठान से शादी की होगी, तुम भी उसी के हो। दूल्हा सुंदर है कहकर हमें धोखा दिया गया है। तेरा मुँह काला है। तू हमारे जात का नहीं है। आम का पत्ता नींबू को छू रहा है। दूल्हे राजा दुबले-दुबले हो गये है, अन्न का सीथा बिन-बिनकर खा रहे है। एक अन्य गीत में बारातियों को भी गाली देने सम्बन्धी उल्लेख है-

राती-राती आये बरतिया दिखैं कमल के फूल हो
डफड़ा बरोबर छतिया दिखत हे, घोड़ा बरन तोर मुँह हो
घोड़ा बरन तोर मुँह दिखत हे, घोड़ा बरन तोर मुँह हो
सूप बरन तोर कान दिखत हे, ऊंट बरन तोर मुँह हो।
राती राती आये बरतिया..... ।
नंदी तीर के करू करेला फर गये झोपा चर हो
समधी राजा ल डांड़ पर गै, अपन बहिनी बेचे लजाय हो
बहिनी बेचे ल गये बरतिया, बहिनी बेचे ल जायहो
राती राती आये बरतिया..... ।

अर्थात् खबर मिली भी कि कमल पुष्प जैसे रक्तिम आभा वाले बाराती आ रहे हैं। किंतु बारात आने पर विपरीत और विचित्र दृश्य देखने को मिला। नगाड़े के समान विशाल उनकी छाती है, घोड़ा और ऊँट जैसी उनकी शक्लें हैं। सूपा जैसे कान हैं। आगे कहते हैं- यही नहीं उनके चाल-ढाल भी अच्छे नहीं लग रहे। करेला गुच्छे में फले हुए हैं और उनको चुराते हुए पकड़े गये हैं। उसके अर्थ दंड चुकाने के लिए अपनी बहन को बेचने गये हैं।

दुल्हन विषयक गालियों में दुल्हन की माँ का उल्लेख कुछ इस प्रकार किया गया है-

दुलही डौकी के दाई ल लुगरा के साथ हे
ओ लुगरा के साध हे कि
गए होही कोसटा दुकाने भौजी हर
गए होही कोसटा दुकाने
ओ तो बने बने लुगरा निमारथे

भौजी हर बने बने लुगरा निमारथे
ओला लाज सरम नइतो लागे
भउजी हर चढ़े हवय कोसटा दुकाने।

दुल्हन की माँ को साड़ी की साध है और वह कोष्टा दूकान गई है। वहाँ अच्छी-अच्छी साड़ियाँ पसंद कर रही हैं। उसे कोष्टा दूकान जाते हुए लाज नहीं आई।

मण्डप के नीचे दूल्हा-दुल्हन के पैर पखारे जाते हैं और स्वजन-परिजन उन्हें उपहार देते हैं। इसे 'टिकावन' कहा जाता है। कुछ लोग इसे दहेज देना भी कहते है। दहेज के गीतों में भाभी के व्यवहार को कटुतापूर्ण दर्शाया गया है। दादाजी लिलिहंसा घोड़ा दे रहे है। माँ पाँच बर्तन (पचहर) दान कर रही है। भाई सोने की थाली दान कर रहा है, पर भौजी को इनसे क्या लेना-देना। वह इनसे अलग है। वह चार पैसे में समझा रही है।

ददा मोर टिकथे लिलिहंसा घोड़वा
दाई मोर टिकथे अचहर पचहर
भैया मोर टिकथे कनक के थार
भौजी टिकथे पइसा चार
हलर हलर मोर मड़वा हाले
खलल खलल दाइज परे
येही धरम ले धरम हे वो मोर दाई
येही धरम ले धरम हे वो
फेर धरम लइतो मिलै वो
कोन तोर टिकथे अचहर पचहर
कोन टिकै धेनु गाय हो
अवो मोर दाई कोन टिकै धेनु गाय हो
ददा तोर टिकै नोनी अचहर पचहर
वो दाई टिकै धेनु गाय हो
अवो मोर दाई टिकै थे गाय
कोन देवै मोर अचहर पचहर
कोन देवै धेनु गाय
ददा तोर दियै अचहर पचहर
अउ भइया देवै धेनु गाय
भइया देवत हे तोर कोछे के बिटिया।

आज से बेटी पराई हो जायेगी। माता-पिता, भाई-भौजाई सबके लिए वह पराई हो जायेगी। इस अवसर पर सखी-सहेलियों और परिवारजनों का मन मोह की परिधि में असहाय होने लगता है। इसीलिए कहा जाता है कि धर्म का समय है, धर्म कर लो। लग्न की बेला उतर रही है। आज अपनी माँ की दुलारी बेटी पराई हो गई। माँ पल भर के लिए उसे अपनी गोद में ले लो, फिर वह गोद भी दुर्लभ हो जायेगी। अपने पिता की दुलारी पल भर के लिए उसे गोद में ले लो। आज बेटी बिरानी हो गई। काकी की दुलारी, क्षण भर मुझे गोद में ले लो। अपनी भौजी की दुलारी, क्षण भर गोद में ले लो। आज बेटी बिरानी हो गई । देखिये गीत-

चढ़त बेरा धरम के उतरत बेरा लगिन के
धरम-धरम जस ले ले फेर धरमनइ मिले
आज बेटी भये हबे बिरान
अपन दाई के दुलौरिन बेटी
छिन भर कोरा म ले ले
हाय-हाय दाई कोरा दुलभ हो जाही
अपन ददा के राम दुलौरिन
छिन भर कोरवा म ल ले
आज बेटी भए हवे बिरान
अपन काकी के राम दुलौरिन
छिन भर कोरा म ले ले
आज बेटी भए हवे बिरान
अपन भउजी के राम दुलौरिन
छिन भर कोरा म ले ले
आज बेटी भए हवे बिरान।

इस प्रकार विभिन्न रस्मो-रिवाजों के बीच विवाह सम्पन्न होता है और कन्या की विदाई का क्षण आता है। इस क्षण ममतामयी माता-पिता और स्नेही भाई-भौजाई से बिछुड़ना असहनीय पीड़ा झेलने के बराबर होता है। बेटी की विदा में गाँव के कंकड़-पत्थर भी रो पड़ते है, फिर मानव की क्या बिसात। उस समय माँ को लगता है कि बेटी की जुदाई से तो अच्छा है, बेटी का जन्म ही न हुआ होता। देखिए गीत-

बिटिया के संचरत जान पाइतेंव

अंडी के पान ल खा लेतेंव
कोखिया ल पार लेतेंव बांझ।

काश! मुझे मालुम हो पाता कि कोख में बेटी का संचार हुआ है तो मैं जहर खा लेती या फिर अपनी कोख को बंध्या ही रखती।

बेटवा के संचरत जान पइतेंव
नौबत नगारा व बजवातेंव
करतेंव मोतिन के दान।

करुण रस में भीगे इन गीतों में बिछोह के दृश्य बड़ी मार्मिकता से व्यक्त किये गये है–

माँ–
अत्तेक दिन बेटी मोर घर रहे
आज बेटी भये हो बिरान कि हाय जू
आज बेटी भये हो बिरान

बेटी–
छिन भर डोला ल बिलमई ले कहार भइया
करि लेतेंव ददा ल भेंटे कि हाय जू
करि लेतेंव

ददा–
अत्तेक दिन बेटी मोर घर रहे
आज बेटी भये हो बिरान कि हाय जू
आज बेटी भये हो बिरान

बेटी–
छिन भर डोला ल बिलमई ले कहार भइया
करि लेतेंव भइया ल भेंटे कि हाय जू
करि लेतेंव

भैया–
अत्तेक दिन बहिनी मोर घर रहे
आज बहिनी भये हो बिरान कि हाय जू
आज बहिनी भये हो बिरान

बेटी–
छिन भर डोला ल बिलमई ले कहार भइया
करि लेतेंव भउजी ल भेंटे कि हाय जू
करि लेतेंव

भौजी–
अत्तेक दिन नोनी मोर घर रहे
आज नोनी भये हो बिरान कि हाय जू
आज नोनी भये हो बिरान

माँ–पिता, भाई और भौजाई सभी यही कहते हैं कि तू इस घर में इतने दिन रही और आज पराई (बिरानी) हो गई।

मैं परदेसिन आंव
पर मुलुक के रद्दा भुलागेंव
अउ परदेसिया के साथ
दाई कइथे रोज आबे बेटी
ददा कइथे आये दिन चार
भइया कइथे तीजा पोरा
भउजी कइथे कोन काम
मैं परदेसिन आंव
पर मुलुक के रद्दा भुलागेंव
अउ परदेसिया के साथ

बेटी विदा होती हुई कह रही है कि अब मैं परदेसिन हो गई हूँ, दूसरे देश में रास्ता भूल गई हूँ इसलिए परदेसी के साथ है। माँ कहती है कि रोज आना, पिता जी कहते हैं चार दिन में आना। भाई कहता है तीजा पोरा में आना, परन्तु भौजी कहती है कि तुम्हारा क्या काम है। अब मैं परदेसिन हो गई हूँ, दूसरे देश रास्ता भूल गई हूँ, इसलिए परदेसी साथ हैं।

मंगनी करेंव बेटी जंचनी करेंव ओ।
बर करेंव बेटी बिहाव करेंव ओ।
जा जा बेटी कमाबे खाबे ओ।
मार दिही बेटी त रिसाय जाबे ओ।
मना लिही बेटी त मान जाबे ओ।
जांवर जोड़ी संगे बुढ़ा जाबे ओ।

सुख दु:ख के रद्दा नहक जाबे ओ।

माँ विदा होती अपनी बेटी से कहती है कि मंगनी किया, जंचनी किया, विवाह किया, जा बेटी कमाना खाना। यदि कभी पति मारेंगे तो रिसा जाना और मनायेंगे तो मान जाना। पति के संग सुखी जीवन जीकर वृद्धावस्था को प्राप्त करना। यही तुम्हारा धर्म है।

उधर बेटी अपने आपको असहाय, निरीह अनुभव करती है। उसे हैरानी होती है, कि माँ–बाप के घर मैं स्वच्छन्दता पूर्वक विचरण करती थी लेकिन माँ–बाप के लिए मैं बोझ स्वरूप ही थी तभी तो मुझे दूसरे के घर धकेला जा रहा है–

दाई तोला कतेक भारी रहेंव ओ।
बालकपन म ब्याह रचाये।

माँ उसे समझाती है कि तुम मेरे लिए बोझ नहीं हो। संसार की रीति है कि बेटी को एक दिन ब्याह कर पति के घर जाना ही होता है। माँ की बातों से बेटी को संतोष नहीं होता और अपने पिता से भी यही प्रश्न करती है, लेकिन उनसे भी यही जवाब पाकर हताश हो जाती है–

नोनी मोला नइ तो भारी रहवें ओ।
संसारे के रीति चलेंव।
ददा तोला कतका भारी रहेंव गा।
बालकपन म ब्याह रचाये।
बेटी मोला नइ तो भारी रहेंव ओ।
संसारे के रीति चलेंव।

माँ–बाप इस समय उपदेश देना भी नहीं भूलते। वे कहते है कि जिस प्रकार थाली में रूई को दबाकर रखा जाता है, वैसी ही ससुराल में दबकर रहना और धीरज से काम लेना–

थरिया म रूअना के दबना।
जाहौ धियरी ओ धीर धारे।

सखी–सहेलियाँ भी इस अवसर पर गाती हैं–

नीक–नीक लुगरा निमारे ओ।
हाय–हाय! मोर दाई बिटिया पठोवत आंसू ढारे ओ।
नोनी के छटगे महतारी ओ।
हाय–हाय! मोर दाई बुता तो होगे तोर भारी ओ।
चार दिन खीझस दाई तैहर ओ।
हाय–हाय! मोर दाई मया गजब तेंहर करस ओ।
नोनी के घर आज टूटगे ओ।
हाय–हाय! मोर दाई बाहिर मा घर ला बनवाही ओ।
नोनी के जोरन तुम जोरदव ओ।
हाय–हाय! मोर दाई रोवथे डंड पुकारे ओ।
पहुँना कस नोनी अब बनगे ओ।
हाय–हाय! मोर दाई बिटिया के बिदा तुम करिदव ओ।

विदाई के इन गीतों में करुण रस की अजस्र धारा बही है। नारी की वेदना और पीड़ा को व्यक्त करने का प्रयास किया गया है। सखियाँ कह रही है कि बेटी की विदा करते समय माँ के आँसू रुक नहीं रहे हैं। नोनी अब पहुना बन गई है।

दाई के केहेंव में राम दुलारी
दाई तोर रोवय महल ओ
अलिन गलिन दाई रोवय
बहिनी बिचारी रोवत हावय
ददा रोवय मुसर ढार ओ
भाई करय दण्ड पुकार ओ
तुम धन रइहव अपन महल में
दुख ल देइहव भुलाय हो
असुवन तुम झन ढारिहव बहिनी
सबे के दुखे बिसार ओ
दुनिया के येहर रीत ये नोनी
दिये ये पुरखा चलाय ओ
दाई ददा के कोरा में रेहेन
अंचरा में मुँह ल लुकाय हो
अपन घर तुमन जावव बहिनी
झन कर सोच–विचार ओ

विदाई के समय माँ–बाप, भाई–बहन यहाँ तक की वहाँ पर सभी की आँख से आँसू बहने लगते है। बड़ा मार्मिक दृश्य

रहता है। देखिये एक अन्य गीत–

घर के दुवारी ले दाई मोर रोवतथे
आज नोनी होये बिराने ओ
घर के दुवारी ले ददा मोर रोवतथे
रांध के देवइया बेटी जाथे
अपन कुरिया के दुवारी ले भइया मोर रोवतथे
मन के बोधइया बहिनी जाथे
भीतर के दुवारी भौजी मोर रोवतथे
लिगरी लगइया नोनी जाथे
दाई मोर रोवतथे नदिया बहथे
ददा रोवय छाती फटत हे
हाय हाय मार दाई.....
भइया रोवय समझाथे
भौजी नयन कठोरे

घर के दरवाजे पर माँ रो रही है कि नोनी बिरानी हो गई। पिता रोकर कहता है कि रोटी बनाकर खिलाने वाली बेटी जा रही है। घर के दरवाजे पर भाई रोकर कहता है कि मेरे मन को बोध कराने वाली बहन जा रही है। भीतरी दरवाजे पर भौजी रो रही है– मुझे चिढ़ाने वाली नोनी जा रही है। माँ के रोने से आँसू की नदी बह रही है, पिता के रोने से छाती फटती है। भाई रोते हुए बहन को समझा रहा है, पर भौजी के नयन कठोर है। अंत में वधू किसी तरह चुप होकर कहती है–

रहेंव में दाई के कोरा ओ
अचरा में मुँह ला लुकाय ओ
ददा मोर कहिथे
कुंआ में धंसि जइतेंव
बबा कथे लेलेवं बैराग ओ बेटी
किया बरददा कुआँ में धंसि जइबे
किया बर बबा लेबे बैराग
बालक सुअना पढ़न्ता मोर ददा
मोला झटकिन लाबे लेवाय

मैं तुम्हारी गोद में रही और तुम्हारे आँचल में अपना मुँह छुपाये रहती थी। पिता जी कहते हैं कि मैं कुएँ में धंस जाऊँगा। बाबा जी कहते हैं कि वैराग्य ले लूँगा। बेटी कहती है कि पिता जी तुम क्यों कुएँ में धंस जाओगे, बाबा तुम क्यों वैराग्य ले लोगे। बचपन में जिसे तोते की तरह पढ़ाया, उसे तुम झट लेने आ जाना।

विवाह पर लाखीणो चूड़ो लाख को

डॉ. कहानी भानावत

रेशम के कीड़े की तरह लाख का भी एक विशिष्ट प्रकार का कीड़ा होता है, जो अपने अन्दर से एक प्रकार का द्रव्य बाहर निकालता है। यह द्रव्य छोटे-छोटे दानों के रूप में वृक्ष की डाली पर चिपका रहता है। दिखने में ये दानें चॉकलेटी रंग जैसे होते हैं। इन्हीं दानों को एकत्रित कर एक विशेष प्रक्रिया द्वारा लाख तैयार की जाती है। लाख का कीड़ा हर वृक्ष पर नहीं मिलता। इसके लिए केवल दो ही वृक्ष होते हैं - पीपल और बड़। इनमें पीपल मुख्य है।

लाख वृक्ष : पीपल, बड़

वृक्षों में पीपल और बड़ दोनों ही असामान्य, असाधारण, सर्वाधिक फलने-फूलने वाले, सर्वाधिक अचल, सर्वाधिक मजबूत, सर्वाधिक दीर्घजीवी, सर्वाधिक पवित्र एवं देवताओं का निवास लिए होते हैं। विशिष्ट फलदायी होने के कारण लोकजीवन में विशिष्ट अवसरों संस्कारों के साथ इनकी पूजा-अर्चना की जाती है। इनके बीज अति सूक्ष्म होते हैं। असंख्य बीजों के नष्ट होने पर एक-आध पीपल-बड़ तैयार होता है।

पीपल पूरे वनस्पति जगत में सर्वोपरि पेड़ है। इसका पत्ता ताम्रपत्र के नाम से जाना जाता है। इस पत्ते पर सेम के पत्ते के रस से लिखा जाए तो वर्षों तक सुरक्षित रहता। पीपल की जड़ों से जो पानी झरता है, वह मिट्टी में पीतल और तांबे का निर्माण करता है। इसका पुराना पत्ता पीतल वर्ण का होता है, जबकि नया ताम्रवर्ण के रूप में फूटता है। यह वृक्ष नौ लाख देवियों का भी आश्रय-स्थल कहा गया है। बुद्धि-बोध के माध्यम से निर्वाण प्राप्ति का भी यह सेतु है।

ऐसा ही बड़ अर्थात् वट वृक्ष है जो पहली बार सातवें पाताल से राजा वासुकि की बाड़ी से धरती पर लाया गया। देवियों ने इसे

दूध-दही से सींचा। इसके पत्ते-पत्ते में दूध समाया होता है। यह दूध बड़ा ही पवित्र और हर समय ताजगी लिए होता है। बेर, खोखरा, धावड़ा वृक्ष भी लाख पैदा करते हैं, पर वह लाख अपेक्षाकृत कम दमदार होती है। प्रारंभिक अवस्था में वृक्ष की पतली-पतली टहनियों पर रेंगते हुए कीड़े जो पदार्थ छोड़ता है उसे हगार नाम से जाना जाता है। यह लाख-द्रव्य कुसुमी अथवा कुसुम-सी कच्ची लाख होती है, जिसे कारखानों में ले जाकर साफ किया जाता है। स्वच्छ धुलाई से वह द्रव्य लाख के रूप में निखर उठता है।

ऐसे पवित्र वृक्षों पर पलने वाला कीड़ा, उसके द्वारा नि:सृत द्रव्य और उस द्रव्य से तैयार की जाने वाली लाख की पवित्रता, शुभ्रता और शुचिता की कल्पना सहज ही की जा सकती है। लाख की पवित्रता के कारण ही धार्मिक ग्रंथों को लिखने तथा पंचांग आदि को उसके पानी से धोने की शिष्ट परम्परा मिलती है। सोने के आभूषण-निर्माण में लाख की राख मिलाना भी उसी पवित्रता का सूचक है।

लाख का प्रचलन बहुत पुराने समय से है। पांडवों को जलाने के लिए महाभारत में लाक्ष्यागृह का उल्लेख इस बात का सूचक है कि तब लाख का प्रयोग कितने उन्नत रूप में था। पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर कहा जाता है कि पिछले पचास हजार वर्ष से मनुष्य किसी न किसी रूप में लाख का प्रयोग करता आ रहा है।

लाख शिल्पी लखारा

लाख का काम करने वाला शिल्पी लखेरा अथवा लखारा कहलाता है। लखारे का एक नाम मनघट भी है। इसे मणिहार अथवा मणिहारा भी कहते हैं। लक्षकार तथा सीसधर नाम से भी इसकी पहचान बनी हुई है। लाख की चूड़ी के लिए प्रसिद्ध लखारा, चूड़ीगर के नाम से भी जाना जाता है। किसी समय उदयपुर में लाख का कारोबार बड़ी उन्नत अवस्था में था। यहाँ का लखारा का चौक आज भी प्रसिद्धि लिये है।

लाख चूड़ा-सौभाग्य सूचक

लाख का चूड़ा सौभाग्य का सूचक है। विवाह के अवसर पर वधू को लाख का चूड़ा पहनाया जाता है, जो सावा का चूड़ा कहा जाता है। विवाह में वर पक्ष की ओर से जो पडरा भेजा जाता है, उसमें उसके पहनने की पोषाक-घाट, घाघरा, मेहंदी, लच्छा, कुमकुम, चीणों का पाँच लड़ी गले का आभूषण दोवड़ा, लच्छे में चाँदी के पतरे पर उभार देती सात पुतल्यों वाला सींग बीजासण, फूंदा चोटी के बांधने का तथा जूतियाँ, चूंदड़, हाथी दाँत का डाला तो भेजा ही जाता है, पर शकुन-सौभाग्य देता लाख की दो चूड़ियों वाला डाळा अवश्य भेजा जाता है। चंवरी में इन सबका श्रृँगार ही बहू को कुलवंती, शीलवंती, सौभाग्यवंती बनाता है। गीत है-

लखारा बेटा थूं ई म्हारो वीरो रे
थूं ई म्हारो भाई रे
चूड़लो ले आवो पडरो मोकळां।
लखीणो चूड़ो म्हारी ववुवड़ कुल वधावै
वंश वधावै सगुणी शीलवतीजी
पडरो पैरी ने बाई चंवर्‌या में सौहे
समदरियो ल्हेरै सुरंग सासरो.....

सधवा स्त्री का यह आभूषण उसके विधवा होते ही उतार दिया जाता है। चूड़ी के सैट को चूड़ा कहते हैं। चूड़ा अथवा चूड़ले का एकनाम कड़ा भी है। विवाह पूर्व वधू को विशेष संस्कार-रस्म के साथ चूड़ा पहनाया जाता है। यह लाल रंग का होता है। इस समय मंगेतर अथवा वधू को घाट-घाघरा पहनाया जाता है। पहली बार उसका सिर गूंथा जाता है। बालों की मींडिया ली जाती हैं। उन्हें गोंद की सहायता से चिपकाई जाती हैं। उन मींडियों पर सोने-पीतल की छोंत (पतरी) बांधी जाती है। चोटी में कोर गूंथी जाती है। हाथ-पाँव में मेहंदी लगाई जाती है। भुजाओं पर सोने-चाँदी का तेड़िया बांधा जाता है। पांव की अंगुलियों में चाँदी की मछियां पहनाई जाती हैं। इनके साथ ही पहली बार नाक में बांई ओर नथ पहनाई जाती है।

चूड़ा-चूड़ी के भांत

रंग-रूप के अनुसार चूड़ा-चूड़ी के भिन्न-भिन्न नाम मिलते हैं। पतले डंक वाली चूड़ी पातकी, चौड़े डंक वाली पाटला, दो या तीन अंगुल चौड़ी पढाणी, अधिक चौड़ी पट्‌ठा, डंक पर बनी रेखाओं, फूलपत्तियों तथा बूंदों अथवा बूंटियों या कि भांतों के अनुसर कांटेवाली, पानड़ीवाली, फूलड़ीदार, नगीनादार चूड़ी कही जाती है।

मोटी तथा गोल चूड़ी का अस्तर अथरेड़ नाम से जाना जाता है। इस पर मालीपन्ना लगी हो तो वह गोखरू कहलाता है। चार चूड़ियों के जोड़े को मूठिया कहते हैं। इसमें अठारह चूड़ियाँ भी होती हैं। चौदह चूड़ी वाली खांच होती है। लहरदार रेखाओं वाली चूड़ी बंटदार, हल्के रंग वाली रेशमीन, सफेद रंग की बिल्लोरी, काले रंग पर सफेद टिपकियों वाली काकी-छप्पण, लाल रंग की झलक मारने वाली धूप-छाया, अनेक रंग की बूंदोंवाली भांत-भंतीली चूड़ी कही जाती है।

सुहाग चूड़ी

सात चूड़ियों के सैट वाला चूड़ा भी होता है। ग्यारह, पाँच तथा तीन सैट का भी होता है। एक सैट गोल्या का होता है, जिसमें लाल और हरे रंग की नौ-नौ चूड़ियाँ मिली होती हैं। रंगों में बैंगनी, नीला, पीला, फिरोजी, नींबूई तथा मेहन्दी रंग के चूड़ा-चूड़ी अधिक प्रचलित हैं। चूड़ियों के मूठ्यों में आगे-पीछे पहनी गई अलग-अलग रंग की चूड़ियाँ बंद कहलाती हैं। यथा-हर्‌या बंद का चूड़ा, लाल बंद का चूड़ा। चूड़े के साथ महिलाएँ लखारे से एक चूड़ी अतिरिक्त प्राप्त करती हैं। यह सवाग अथवा सुहाग चूड़ी कहलाती है, जो नि:शुल्क होती है।

एक लोककथा के अनुसार शिव-पार्वती विवाह के समय पार्वती को लखीणी कराने की आवश्यकता हुई। तब शिवजी ने लखारी को जन्म देकर यह रस्म पूरी कराई। इसके लिए नेग रूप में पार्वती द्वारा लखारी को मोतियों का आखा (अक्षत) तथा वेश (पोषाक) दिया गया। एक लोकगीत में चूड़े का महत्त्व प्रतिपादित करने के लिए प्रियतमा अपने प्रिय से लाख रूपये का कीमती लाखीणा चूड़ा मंगवाने का आग्रह कर रही है - 'भंवर ल्यादी जोजी लाखीणो चूड़ो लाख को।'

चूड़ा और आभूषण श्रृँगार

चूड़ा सुहाग का प्रतीक है। सुहागिन महिलाएँ सोलह श्रृँगार के साथ तरह-तरह के जो आभूषण पहनती हैं, उन आभूषणों में चूड़े का महत्त्व चार चाँद लगा देता है। प्रियतमा अपने प्रियतम को कहती है कि मेरे लिए रखड़ी, झूटणा, हांसज, बिंदिया, आयल, पायल, टणका, बंगड़ी, नथ, टोटियां, भमरक्या, लंगर, तोड़े, गजरा, बिछिया, तमण्या सब कुछ लाना, किन्तु चूड़ा लाना मत भूलना। चूड़ा भी हाथीदांत का और हाथी भी कजली वन का हो। ऐसा चूड़ा चंदरी का चूड़ा कहलाता है। इसी को पहन मैं नखराली और सदा सुहागन बन पाऊँगी। मेरे केसरिया राज! मुझे ऐसा चूड़ा ला दो जिसकी सोने की टीप हो और उस टीप में मैं अपना चेहरा निरख अपने आपको धन्य मान सकूँ-

केसरिया ओ बालम मने लाई दो चूड़ो चन्दरी रो
चूड़ो चन्दरी रो ओ राज टीपां सोना री
म्हूं पेरणवाळी नखराळी ओ
चूड़ो कजली वन रे हाथीड़ा रे दांत रो।

एक अन्य गीत में बहू मणियारे की हाट जाकर लखारे से ऊँचे बहुमूल्य लाख का चूड़ा पहनती है। लखरा सात रंग का इन्द्रधनुषी चूड़ा पहनाता है। इस चूड़े पर बहुत ही सुन्दर नक्काशी का काम किया होता है। चूड़ला पहन बहू फूली नहीं समाती है। वहाँ से वह सोनी की हाट जाकर उसे मोतियों की टीप से जड़ देने का आग्रह करती है।

यहाँ से बहू अपने घर जाकर सोलह श्रृँगार से युक्त बनी-ठनी अपनी सासू माँ के पास जाकर उनके पांव छूती है। सासू अपनी सगुणी बहू को देख अत्यन्त प्रसन्न होती है और आशीर्वाद स्वरूप कहती है- बहू तू मेरे घर की चाँदनी है। तुम्हारे शील और रूप को देख मुझे सीता की याद आ गई है। तुम हमारे कुल में सीता-सी सतवन्ती, शीलवंती, लाजवंती नार हो। सीता ने जैसे सपूत पैदा किए, वैसे ही बालक को तुम जन्म दो-

सासू बोली जीवो घर री नार
म्हारो तो घर थांसू हुयो चांदणो
सीताजी सी थामे आवे दीठ
जण जो सपूत सीता सतवन्ती।

लाखीणे चूड़े

ऐसे एक नहीं अनेक लोकगीत हैं, जो चूड़े के महत्त्व को प्रतिपादित करते है। ऐसे चूड़े लाख के बनकर ऊपर जो कीमती जड़ाव से जड़े जाते हैं, उनकी कीमत ही लाख-लाख रूपये तक हो जाती है इसीलिए ऐसे चूड़े लाखीणे चूड़े कहलाए। हाथीदांत से निर्मित लाखीणे चूड़े और कीमती पोशाक तथा बहुमूल्य जेवर पहनने वाली नारियाँ सम्पन्न और बड़े घरों से सम्बन्धित रही हैं

किन्तु चूड़ा छोटी से छोटी जातियों में भी प्रत्येक नारी की शोभा लिये है। इसके साथ उसका सौभाग्य तथा पारिवारिक समृद्धि और मंगल-मांगल्य की भावना जुड़ी हुई है।

विशिष्ट वार-त्योहारों तथा मंगल उत्सवों एवं संस्कारों पर विधिपूर्वक चूड़ा धारण करने की परंपरा भारतीय समाज की उल्लासपूर्ण प्रथा आज भी प्रचलन में है। सामान्य तथा पिछड़ी कही जाने वाली जातियों में प्लास्टिक के चूड़े-चूड़ी का प्रचलन अधिक मिलता है। इसमें भी नीचे के स्तर में जीवनयापन करने वाली महिलाएँ नारियल की काँचली से निर्मित चूड़ियाँ पहनकर अपने सौभाग्य सुख का संतोषी जीवन व्यक्त करती है, किन्तु चूड़ा उनके लिए भी खासमखास आभूषण बना हुआ है।

शहरों में चूड़ों पर पक्के नग लगाये जाते हैं। ये नगवाले चूड़े विभिन्न नग-रंग लिए होते हैं। आदिवासी युवतियाँ तथा महिलाएँ बाजू में पहनने वाली चूड़ी के प्रति अधिक लगाव रखती हैं। यह चूड़ी खांच मुठिया कहलाती है। इसके अतिरिक्त छह, आठ, दस नंबर के कंगन, दो लेन की पोटली, तीन लेन की गजरी, नवरंगी नग जड़ी चूड़ी तथा लाख वाली चूड़ी का चलन जोर लिये है।

चूड़े की यह लोकप्रियता फिल्मों में भी देखने को मिलती है। चूड़े के फैशन ने जबर्दस्त लोकप्रियता प्राप्त की है। एक पटचित्र में नायिका अनारकली ने सबसे पहले एक खासा किस्म का चूड़ा पहना जो इतना लोकप्रिय हुआ कि हर महिला का श्रृँगार बना। इससे लाख का भाव भी बढ़ा और इस कला को व्यापक बाजार मिला। आगे चलकर कई फिल्मों में चूड़े की फैशन नायिकाओं के लिए जैसे अनिवार्य बन गई और इन फिल्मों की सफलता का भी सबब बना।

लाख के चूड़ा-चूड़ी ने अपना विस्तार देते हुए लाख से निर्मित अन्य आभूषण एवं सज्जा की वस्तुओं का बाजार भी बनाया। इसमें टाप्स, झूमके, बोरले, रखड़ी, अंगूठी, हार, कमरबंद, बंगड़ी जैसे आभूषण भी पर्याप्त प्रसिद्धि लिये हैं। सजावटी वस्तुओं में हाथी, घोड़े, मोर, ऊँट, खरगोश, पुतले-पुतली, सेठ-सेठानी, सुराही तथा अजन्ता-एलोरा की मूर्तियों ने आम नागरिक को आकर्षित किया है

लाख से निर्मित फूलदान, पेपरवेट, कैंडिल स्टेण्ड, चाबी का गुच्छा, बॉलपेन, सिंदूरदानी, ऐशट्रे, बटन, डिब्बियाँ, बॉक्स, कलश जैसी उपयोगी वस्तुएँ और शतरंज के प्यादे, वजीर, बादशाह, चौपड़, मोहरा, टेलीफोन जैसी कई चीजों ने अपना बाजार विकसित किया है। राजा-महाराजाओं, सेठ-साहूकारों तथा श्रीमंतों की हवेलियों तथा राजप्रासादों में लाख की तैलीय आकृतियाँ तथा कलात्मक अंकनों ने बड़ा नाम कमाया। इस दृष्टि से बीकानेर तथा जयपुर के राजमहल विशेष उल्लेखनीय हैं।

समय के बदलाव के साथ लाख के चूड़ा-चूड़ी भी बदले हैं और वे महत्त्वपूर्ण बने हुए हैं। बदलते फैशन में विभिन्न प्रांतों में भी लाख के चूड़ा-चूड़ी-कंगन फैशनेबल बने हैं। गुजरात में रतलामी कंगनों का प्रचलन ठेठ आदिवासियों तक पहुँचा है। करवा चौथ, दीवाली तथा अन्य मांगलिक पर्व-अनुष्ठानों पर सोलह श्रृँगार की शोभा में लाख के चूड़ा-कंगन ने अपनी खासी पैठ बनाई है। मेहरून, कत्थई, सफेद, लाल, चटनी रंग की चूड़ियों का बाजार बढ़त लिए है। यह माँग शहरों में रौनक लिए है, जहाँ बाहरी पर्यटक भी आकर्षित हुए हैं।

आजादी के बाद फ्रांस, इटली, ब्रिटेन, जर्मनी, डेनमार्क, आस्ट्रेलिया, स्विटजरलैंड आदि देशों में लाख की बनी चीजों की मांग बढ़ी है, तथापि गांवों में लाख का काम करने वाले शिल्पियों का धंधा ठप्प ही हुआ है।

निमाड़ी वैवाहिक परम्पराएँ

श्रीमती हेमलता उपाध्याय

भारत जनपदों का देश है, जिसकी संस्कृति अत्यन्त समृद्ध है। यद्यपि विभिन्न अंचलों में हमारी लोक संस्कृति का रूप वैविध्यपूर्ण और बहुरंगी है, किन्तु उसका मूलाधार एक है और वह एक लोक सांस्कृतिक सूत्र से परस्पर आबद्ध है। इसीलिये अनेकता में एकता और एकता में अनेकता के दर्शन होते हैं। रंग-बिरंगे फूलों से गुंथी सुंदर माला में प्रत्येक फूल और उसकी पंखुड़ियों के रूप-रंग, आकार-प्रकार में भिन्नता होते हुए भी सम्पूर्ण पुष्प एवं माला के सौन्दर्य में हर छोटी-बड़ी पंखुड़ी का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। इसी प्रकार कृषि-प्रधान भारत देश के विभिन्न जनपदों में रहने वाले लोगों के रंग रूप उनकी अपनी बोली-भाषा, खान-पान, पहनावा, रीति-रिवाज परंपरायें लोकाचार-संस्कृति भिन्न-भिन्न होते हुये भी उनमें आंतरिक एकरूपता है। तभी तो हमारी विविध रंगी संस्कृति एक सूत्र में गूंथी गई, रंग-बिरंगे पुष्पों से सज्जित सुंदर माला की तरह सुगठित है। इसी विशेषता ने भारत की राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ किया है।

हमारे पूर्वजों, चिंतकों ने वर्षों के चिंतन-मनन एवं अनुभवों के आधार पर मनुष्य जीवन को स्वस्थ, चिरायु, सुख-शांति, समृद्धिमय बनाने के लिये कुछ जीवन मूल्यों, रीति-रिवाजों परंपराओं का निर्धारण किया, जिनका पालन करते हुए लोग सांसारिक, भौतिक उन्नति के साथ ही आध्यात्मिक उन्नति के लक्ष्य भी प्राप्त कर सकते हैं। ये मूल्य व्यक्तिगत उन्नति के साथ ही सामाजिक उन्नति में परस्पर समन्वय युक्त सामन्जस्यपूर्ण शांतिमय जीवन के प्रमुख आधार हैं। इन मूल्यों, मर्यादाओं, रीति-रिवाजों, प्रथाओं परंपराओं के अंतर्गत सुनियोजित पारिवारिक जीवन की व्यवस्थाएँ भी निश्चित थी। पारिवारिक अनुशासन, क्षमा, प्रेम-विश्वास तथा समभाव और परस्पर सम्मान भाव को विशेष महत्त्व दिया गया।

किसी भी संस्कृति का परिचय वहाँ की वाचिक परंपरा की विभिन्न विधाओं से मिलता है। लोक द्वारा जीवन के सत्य एवं सार को संरक्षित करने के प्रयास में ही लोक कलाओं का जन्म होता है। लोकगीत, लोककथा, गाथा, वार्त्ताओं, लोकनाट्य भित्तिचित्र, पहेलियाँ, मुहावरें, भाषा-बोली आदि से संस्कृति का परिचय मिलता है, जिनमें जन-जन की भागीदारी होती है।

भौगोलिक दृष्टि से उबड़-खाबड़, पथरीला, भू-भाग निमाड़ ऊपर से भले ही कठोर प्रतीत हो, किन्तु नारियल की तरह उसका अंतर कोमल-मधुर एवं रसपूर्ण है, अर्थात् लोक हृदय में साहित्य और संस्कृति का अतुलनीय भण्डार है। पूर्वजों द्वारा जीवन के सोलह संस्कारों के विविध रसपूर्ण गीतों की उसके पास विरासत है। डॉ. श्रीराम परिहार का यह मत दृष्टव्य है-'निमाड़ को मुसीबतों में मुस्कराने वाले पलाश का फूल कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।'

निमाड़ से इतिहास, पुराण, महाभारत, श्रीकृष्ण, अश्वत्थामा, कण्व, खरदूषण, दण्डकारण्य, शृंग, सातवाहन, कनिष्क, आभीरों, हर्ष, चालुक्य, भोज, होल्कर, मुगलों, ब्रिटिश शासकों, मध्यभारत, मध्यप्रदेश और पूर्वी-पश्चिमी निमाड़ के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण हैं।

निमाड़ का संत साहित्य भी अत्यंत समृद्ध है- संत ब्रह्मगीर, संत मनरंगगीर, सिंगाजी आदि संतों से निमाड़ की आध्यात्मिक पहचान है। संत सिंगाजी का निमाड़ी संत साहित्य एवं लोक साहित्य निर्माण में विशिष्ट स्थान है। पं. रामनारायण जी उपाध्याय के मत में- 'निमाड़ में यदि संत सिंगाजी नहीं होते तो निमाड़ी भाषा इतनी परिष्कृत और जन-मन में नहीं होती, निमाड़ संस्कृति इतनी सहिष्णु नहीं होती और निमाड़ की आध्यात्मिकता की ऐसी अमिट छाप भी नहीं होती।' पवित्र नर्मदा, पुण्य भूमि ओंकारेश्वर, संत सिंगाजी, धूनी वाले दादा की खण्डवा नगरी, अजेय असीरगढ़ दुर्ग, ऐतिहासिक नगरी बुरहानपुर, माहिष्मती (महेश्वर) निमाड़ की पहिचान हैं।

निमाड़ में लोक गीतों की समृद्ध परंपरा है और यहाँ लोकगीतों का अक्षय भण्डार है। संस्कार गीत, पर्व-त्योहार, उत्सव गीत, घट्टी, खेल, लोरी, कथा, गाथा, संत -साहित्य, गीत, भजन, आरती मसाण्यागीत, कायागीत आदि से निमाड़ की संगीतमय पहचान है। यहाँ के लोकगीतों में आनंद, उल्लास, रस प्रवाह है तथा जीवन के सभी रंग एवं भाव समाये हुए हैं। तभी डॉ. धर्मवीर भारती जी ने कहा- जीवन के सभी रंग इन गीतों में उतर आये हैं, इनमें निमाड़ी लोक जीवन प्रतिबिम्बित होता है। इस प्रकार हर दृष्टि से भारत का महत्त्वपूर्ण अंग निमाड़ जनपद भारतीय संस्कृति को समृद्ध करने में महत्त्वपूर्ण योगदान देता रहा है। निमाड़ में भी हमारी भारतीय वैदिक संस्कार पद्धति, रीति-रिवाज तथा परंपराओं एवं लोकाचार का न्यूनाधिक अंतर के साथ अनुपालन होता रहा है।

मनुष्य को सुसंस्कृत करने के उद्देश्य से जो परम्परायें समाज द्वारा निर्धारित की गई, उन्हें संस्कार कहा गया। हमारे मनीषियों के मतानुसार संस्कार मानव जीवन के नवनिर्माण की आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक और वैज्ञानिक योजना है। व्यक्ति और समाज की उन्नति के लिये उत्तम संस्कारों की आवश्यकता है। समाज की उन्नति के लिये उत्तम संस्कारों की आवश्यकता है। हमारे देश में माता के गर्भ में जीव के आने से लेकर मृत्यु पर्यन्त संस्कार निर्धारित हैं। इन संस्कारों का उद्देश्य- दोषों का परिमार्जन कर व्यक्ति में सद्गुणों का समावेश करना है।

संस्कारों के विधि-विधान मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालकर व्यक्ति को सद्मार्ग की प्रेरणा देते हैं। हमारी ये संस्कार पद्धतियाँ, रीतियाँ, विज्ञापन एवं तर्क संगत प्रक्रियाएँ हैं, जो बुद्धि और तर्क की कसौटी पर खरी उतरती हैं। मनु के अनुसार 'संस्कार शरीर को शुद्ध करके उसे आत्मा में निवास करने योग्य बनाते हैं।' संस्कारों का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए एक विद्वान ने कहा है- 'संस्कारों की शान पर चढ़कर मानव जीवन महामणि के समान दैदीप्यमान हो जाता है।'

श्रद्धापूर्वक विधि-विधान से संस्कार सम्पन्न करने पर वे स्फूर्तिदायक एवं नवजीवन प्रदाता होते हैं। जीवन में संस्कारों का महत्त्व एक महान चिंतक के शब्दों से और भी स्पष्ट होता है। वे कहते है-'संस्कार रहित जीवन वन है, संस्कारयुक्त जीवन उपवन हैं तथा शील और सदाचार से शोभित जीवन नंदनवन है।'

हमारे मनीषियों ने मानव जीवन को श्रेष्ठता से जीने एवं सार्थक करने के उद्देश्य से जीवन की शत्वर्षीय योजना प्रस्तुत करते हुये जीवन को चार आश्रमों में विभाजित किया- ब्रह्मचर्याश्रम

–जीवन के प्रारंभिक पच्चीस वर्ष ब्रह्मचर्य के पालन से शरीर, मन, मस्तिष्क, बुद्धि को सुदृढ़ करने का लक्ष्य रखा गया। गृहस्थाश्रम –सृष्टि संचालन हेतु अनिवार्य व्यवस्था जो विवाह संस्कार से ही सिद्ध होती है। इसी आश्रम में पुरुषार्थ चतुष्टय (अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष) की प्राप्ति का लक्ष्य प्राप्त करने का अवसर है, अत: यह सर्वश्रेष्ठ आश्रम कहा जाता है। वानप्रस्थाश्रम–ज्ञानार्जन, सात्त्विक जीवन, अध्ययन–अध्यापन–चिंतन, मनन एवं जीवन मात्र के प्रति परोपकार, समाज हित, प्रभु भजन सत्संगमय जीवन की व्यवस्था। संन्यास आश्रम–संसार के कल्याण एवं स्वमोक्ष की दृष्टि से की गई व्यवस्था जिसमें सर्वस्व त्याग, तीर्थाटन, आत्मोत्थान, सहित ईश्वर उपासना में शेष जीवन जीने की व्यवस्था।

यह वैज्ञानिक तथ्य सिद्ध है कि भ्रूण पर मानव की मनोवृत्ति का प्रभाव पड़ता है। महाभारत का अभिमन्यु प्रसंग इसका एक उदाहरण है। इसीलिये हमारे पूर्वजों ने बालक जन्म से पूर्व ही उसके लिये संस्कार विधि का विचार किया। हमारी वैदिक संस्कृति में सोलह संस्कार माने गये हैं, जो प्राचीन काल से हमारे वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की आधार शिला रहे हैं। इसीलिए सांस्कृतिक गरिमा और उच्च नैतिक आदर्शों के कारण ही भारत जगत् गुरु कहलाता रहा।

संस्कारों की संख्या के विषय में स्मृतिकारों में मतभिन्नता होते हुये भी निम्नलिखित सोलह संस्कार सर्वमान्य हैं। इन संस्कारों का सम्बन्ध हमारे रहन–सहन व्यवहार और आदतों से है। हमारे यहाँ विभिन्न जातियों, धार्मिक आस्थाओं वाले समुदायों द्वारा भी लगभग इसी प्रकार या कुछ भिन्नता के साथ ये संस्कार सम्पन्न होते हैं। विशेष रूप से सनातन हिन्दू धर्मावलंबियों में इन संस्कार विधियों का पालन होता है। स्वस्थ दीर्घायु एवं सुख–शांतिमय व्यक्तिगत जीवन के साथ ही समाज, राष्ट्रहित, विश्वबंधुत्त्व और प्राणि मात्र के प्रति हित चिंतन, इन संस्कारों का मूल भाव एवं उद्देश्य है। अत: माता के गर्भ में भ्रूण आने के पूर्व से ही हमारे यहाँ संस्कारों का विधान प्रारंभ हो जाता है।

उपरोक्त सभी संस्कारों में विवाह संस्कार का सर्वाधिक महत्त्व है। विवाह गृहस्थाश्रम का प्रवेश द्वार है। इस संस्कार में माता–पिता अपनी कन्या का पाणि (हाथ) वर के हाथ में सौंपते हैं और वर जीवन पर्यन्त कन्या का पाणि थामता है। अत: इस संस्कार को 'पाणिग्रहण' संस्कार कहते हैं। पाणिग्रहण अर्थात् उत्तरदायित्व हस्तांतरण। पिता अपनी कन्या का उत्तरदायित्व वर को सौंपता है।

विवाह संस्कार द्वारा स्त्री–पुरुष पाणिग्रहण संस्कार से पति–पत्नी के रूप में परस्पर सामन्जस्य स्थापित कर नैतिक जीवन जीते हैं। ताकि समाज का सर्वांङ्गीण से विकास हो सके। भारतीय संस्कृति अनियंत्रित यौनाचार को सदैव निन्दित एवं वर्जित मानती है। वेद मंत्रों द्वारा वर–वधू एक दूसरे के लिये कामना करते हैं। विवाह भोग–विलास का अधिकार नहीं, बल्कि जीवन नौका खेने की पतवार है। अग्नि को साक्षी मानकर सभी बंधु–बांधवों, नाते–रिश्तेदारों, आत्मीय जनों की उपस्थिति में वर–वधू जीवन पर्यन्त साथ की शपथ लेते हैं। पत्नी के बिना पुरुष कोई भी धार्मिक कार्य करने का अधिकारी नहीं होता। विवाह के पश्चात् ही पत्नी के साथ सांसारिक सुखों का उपभोग एवं शास्त्रानुसार धर्माचरण कर अपने जीवन को उत्तम और सार्थक बनाता है।

मनुस्मृति में विवाह के निम्न आठ प्रकार बताये गये हैं– ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्रजापत्य, असुर, गन्धर्व, राक्षस और पिशाच विवाह। हमारे यहाँ वैदिक विवाह पद्धति विश्व की सर्वश्रेष्ठ विवाह पद्धति है, क्योंकि उसके अनुसार विवाह एक पवित्र आत्मिक सम्बन्ध है, जिसमें पति–पत्नी दोनों एक रूप होकर संसार को यथासम्भव पहले से अधिक सुखी बनाने का प्रयास करते हैं।

घर संस्कारों की जन्मस्थली हैं। संस्कारित बनने का सबसे पहला विद्यालय घर है एवं माता प्रथम गुरु है। माता गृहस्थ आश्रम से ही बनती है। गृहस्थाश्रम तप एवं परिश्रम का श्रेष्ठ आश्रय है। मनुस्मृति में कहा गया है–

यथा नदी नद्य: सर्वे सागरे यान्ति संस्थितम्।
तथैवाश्रमणि: सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितम्।।

अर्थात् जैसे सब नदियाँ समुद्र में विश्राम पाती हैं, वैसे ही सभी आश्रमी लोग गृहस्थाश्रम में विश्राम पाते हैं। मनुस्मति में ही कहा गया है–

यथा वायुं समाश्रित्य वर्त्तन्ते सर्व जन्तव:।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्त्तन्ते सर्व आश्रमा:।।

अर्थात् जैसे सभी प्राणी वायु का आश्रय लेते हैं, वैसे ही सभी आश्रमी लोग गृहस्थ का आश्रय लेते हैं। गृहस्थाश्रम में व्यक्ति अपनी समाज, राष्ट्र तथा विश्व सेवा का कर्त्तव्य पालन कर सकता है। विद्याध्ययन, आत्मचिंतन, ईश्वरोपासना के साथ ही स्वाभाविक काम वासना के नियमन का साधन भी प्राप्त करता है। संतानोत्पत्ति और प्रजापत्य धर्म का पालन करते हुये गृहस्थ मोक्षवृत्ति की सीढ़ी चढ़ते हुये देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण से भी मुक्त हो सकता है। वह पवित्र, सरल सुखमय जीवन के लिये आवश्यक है। विवाह जाति अमरत्व का भी सरल उपाय है। गृहस्थाश्रम में वैदिक पुरुषार्थ चतुष्ट्य पञ्च महायज्ञ-ब्रह्मयज्ञ, देव यज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ तथा अतिथि यज्ञ करना सम्भव है।

विशाल भारत देश की विभिन्न भौगोलिक स्थितियों एवं जलवायु से भी जन-संस्कृति प्रभावित होती है। अत: तद्नुकूल अनुभव आधारित रीति-रिवाजों, प्रथा-परंपराओं का निर्धारण होता है। अत: विभिन्न क्षेत्रों और जनपदों के रीति-रिवाज लोकाचार एवं संस्कार संपादन में थोड़ी बहुत भिन्नता स्वाभाविक है। विभिन्न धर्मावलंबियों द्वारा अपनी-अपनी विवाह पद्धतियाँ निर्मित कर ली गई हैं, जिनके अनुसार विवाह संस्कार सम्पन्न करवाये जाते हैं। विश्व की समस्त वैवाहिक पद्धतियों में हमारी वैदिक विवाह पद्धति ही सर्वश्रेष्ठ है। वैदिक विवाह संस्कार की रीति-प्रथाओं की शिक्षा को ठीक से समझकर तद्नुसार वर-वधू आचरण कर गृहस्थाश्रम को स्वर्गाश्रम बना सकते हैं। यद्यपि विभिन्न क्षेत्रों के रीति-रिवाजों में भिन्नताएँ हैं, फिर भी कुछ रीति-रिवाज सर्वत्र समान रूप से प्रचलित हैं। जैसे- स्तंभरोपण, लगन टीप लिखाना, गणपति स्थापना, मण्डप, मायरा, ममेरा, चाक पूजन, कुलदेवी, शीतला देवी पूजन, प्रात:-संध्या मंगल गीत गाना, उबटन तेल चढ़ाना, बारात के स्वागत सत्कार, वरमाला, पाणिग्रहण, अग्नि साक्ष्य, ध्रुव दर्शन, सात प्रतिज्ञा, सिंदूरदान, विदा, वर-वधू का पड़छन, कुलाचार अनुसार कंकण छुणवाना।

लगभग इसी पद्धति और रीति-रिवाजों के साथ सभी भारतीय परिवारों में विवाह संस्कार सम्पन्न होते हैं। निमाड़ भी इसका अपवाद नहीं। निमाड़ में भी लगभग इसी तरह विधि-विधानों सहित विवाह संस्कार होते हैं।

निमाड़ में विवाह किसी भी प्रकार के लेन-देन के करार या ठहराव के आधार पर तय नहीं होते, वरन् योग्यता, पारिवारिक पृष्ठभूमि, खानदान, जन्म पत्रिका मिलान, गोत्र आदि के विचार पर या दोनों पक्षों की सहमति से बिना पत्रिका मिलान के अर्थात् प्रीति सम्बन्ध निश्चित होते हैं। 'रुपया नारियल' एवं कंकू कन्या के नियम एवं सिद्धांत पर प्रतिष्ठा पूर्वक विवाह कार्यक्रम सम्पन्न होते हैं। यद्यपि आजकल भौतिकता की अंधी दौड़,दूसरों की देखा-देखी, झूठे दिखावे, ऐश्वर्य प्रदर्शन के लिये कुरीतियों का प्रवेश होने लगा है। स्वयं को दूसरों से श्रेष्ठ प्रदर्शित करने की लालसा एवं अंतर्जातीय विवाहों द्वारा प्राप्त धन दहेज के लोभ में भी कुछ दूषण निमाड़ में भी प्रविष्ट हो रहे हैं जो कि निन्दनीय, गर्हित एवं त्याज्य हैं।

मूलरूप से निमाड़ की विवाह पद्धति को आदर्श एवं अनुकरणीय पद्धति कह सकते हैं क्योंकि दहेज-दानव-हुंडा पद्धति को कोई स्थान नहीं है। माता-पिता अपनी कन्या को अपनी सामर्थ्यानुसार स्वेच्छा से नई गृहस्थी हेतु धन, वस्त्राभूषण, बर्तन आदि देते हैं। साथ ही अन्य कुटुम्बी जन, रिश्तेदार, आत्मीयजन एवं परिचित लोग भी गृहोपयोगी वस्तुएँ, राशि वस्त्राभूषण आदि देकर कन्या परिवार एवं नई गृहस्थी व्यवस्था में यथासामर्थ्य व्यवहारानुसार योगदान देकर अपने सामाजिक कर्त्तव्य का निर्वाह करते हैं, जो कि स्वाभाविक एवं उचित रिवाज है।

पहले बेटियाँ पैतृक सम्पत्ति में हिस्सा नहीं लेती थीं, वे भावनात्मक रूप से सदैव माता-पिता परिवार से जुड़ी रहती हैं और समय-समय मायके आना-जाना एवं परिवार से मिलना चाहती है एवं भाई-भौजाई के प्रेम स्नेह और आत्मीयता की आकांक्षी होती हैं। अत: पिता परिवार भी तिथि-त्योहार विवाह आदि शुभ कार्यों में उपस्थित होकर यथाशक्ति ममेरा भेंट आदि देकर उसका अप्रत्यक्ष सहयोग भी करते हैं। प्रेम भी बना रहता है और भावनात्मक तुष्टि के साथ सुख-दु:ख बाँटने और सहयोग के अवसर भी उपस्थित होते हैं।

वर-वधू दोनों पक्षों के द्वारा सहमति बनने पर पुरोहित के परामर्श एवं सहयोग से शुभ दिन सगाई एवं फलदान की रीति निभाई जाती है तथा अपनी-अपनी सुविधा आदि के विचार के पश्चात् संभावित तिथि-मुहूर्त आदि का विवाह हेतु निर्णय लिया जाता है।

लगन लिखाना

विवाह की शुभ तिथि निश्चित होने पर दोनों पक्ष पुरोहित के यहाँ जाते हैं, जहाँ विवाह कार्यक्रम के क्रम एवं शुभ मुहूर्त लिखकर पंडित जी देते हैं, इसे ही लग्नटीप लिखाना कहते हैं। दोनों पक्ष पंडित को नेग-दक्षिणा देते हैं।

लग्न टीप में गेहूँ, हल्दी की गांठ, सुपारी, कंकू, चावल, सवा रुपया रखकर नाड़े से बाँधकर दिया जाता है। लग्न टीप या तो पंडित जी के घर ही रख दी जाती है और विवाह के दो-चार दिन पूर्व ही घर लाते हैं या दोनों पक्ष अपने-अपने घर लाकर अपने देव स्थान (पूजा घर)पर रखते हैं।

लग्न टीप लिखने के बाद मरण-गरण अर्थात् अशुभ कार्य में सम्मिलित नहीं होते। यदि परिवार में ही ऐसा कुछ हो जावे तो लग्न टीप घर लाते ही नहीं हैं या विवाह स्थगित हो जाता है। लग्न टीप में विवाह के समस्त कार्यक्रमों के शुभ मुहूर्त रहते हैं तथा वर-वधू के एवं उनके माता-पिता के नाम रहते हैं। लग्न टीप वर पक्ष के लोग वधू पक्ष के यहाँ लेकर जाते हैं। जिसे वरमाता या सुवाय (सुहागन बहन-बेटी) के गोद में दिया जाता है। चौक-पाट पर रखकर उसे हल्दी कंकू से बंधाते हैं, अर्थात् स्वागत करते हैं। फिर वरमाता की गोद में दिया जाता है, जिसे वह सम्भालकर रखती है। गणेश पूजन के दिन उसे निकाला जाता है।

लग्न टीप रखने के पूर्व पाँच विवाह पत्रिकायें- गणेश, गुरु महाराज, कुलदेवी-देवताओं और अपने घर में पूजा स्थान पर दी जाती हैं। इसके पश्चात् ही पत्रिकाएँ अन्यत्र भेजी जाती हैं। सर्वप्रथम वरमाता के मायके जाकर पीले चावल देहरी पर रखकर पत्रिका देकर आमंत्रित कर विवाह में सम्मिलित होने की विनती की जाती है।

लग्न टीप अर्थात् शुभ घड़ी का आगमन होने पर दोनों पक्ष की महिलाएँ मंगलगीत गाकर उसका स्वागत करती है एवं सबका मुँह मीठा कराया जाता है-

चटपट लऊं री बधाई, हळ्द री बधाई
बधाई म्हारा अंगणा में

और वरमाता (वर-वधू की माता) अपनी सखी से कहती है-

भंवर्‌यो-भंवर्‌यों नऽ रेऽ दसरथ दरबार,
सहेली अंबो भंवरियो.....

पाँच मुहूर्त

लग्न टीप लिखाई जाने के बाद विवाह की तैयारियाँ आरम्भ हो जाती हैं। अन्न-वस्त्राभूषण एवं अन्य सभी विवाह हेतु सामग्रियों की खरीदी का शुभारंभ हो जाता है। अतः इसके लिये सर्वप्रथम पाँच मुहूर्त सम्पन्न होते हैं। घर के दामाद या भानजा बाजार से कंकू, हल्दी, हल्दी की गांठे, नारियल, मेहंदी, खड़ी सुपारी, नाड़ा एवं गुड़ खरीद कर लाते हैं और आसन पर बैठी वरमाता की गोद में देते हैं। इसे वे चावल की कोठी में रखती हैं और सामान वाले दामाद, भानजे को कंकू लगाकर गुड़ एवं कुछ राशि नेग में देती हैं। पाँच मुहूर्त के अंतर्गत पाँच प्रमुख कार्य किये जाते हैं- कंकू-हल्दी आदि सामान लाकर, चौक-पाट कर कलश-गणेश की पूजा कर एक दूसरे को कंकू लगाकर, कलाईयों में नाड़ा देकर, मुँह में गुड़ देकर गेहूँ, हल्दी, साल, कूटने-फटकने का काम करती हैं। सुवाय बधाना, बरी तोड़ना, चूल्हा-कोठी की मिट्टी लाना और चूल्हा कोठी बनाना।

इसी दिन से बहन-बेटियाँ तथा मेहमान आदि शादी घर में आने लगते हैं। सभी को मिष्ठान देकर भोजन करवाया जाता है। मंगलगीत, बधाई गीत, बन्ना गीत गाये जाते हैं, जैसे-

पाँच बधावा पियन हो, खड़ रे सुहाणा हो।

पाँच मुहूर्त के दिन सुहागनें जो गेहूँ कूटती, फटकती, पीसती हैं, उन्हें गणेश पूजा की घुघरी में मिलाया जाता है। कूटी गई साल मण्डप के दिन कुल देवी के नैवेद्य में तथा चौरी के समय सप्तपदी, कान खड़ी लगाते समय काम में ली जाती है। पाँच मुहूर्त के दिन कूटी गई हल्दी गणेश पूजा के दिन सुहागनों द्वारा वर-वधू को लगाई जाती है।

बरी तोड़ना

पाँच मुहूर्त के दिन नेग निर्मित रूप में सुहागनें बरी तोड़ती हैं। यह मूल रूप से विवाह के लिये बना ली जाती है या मोल से बनवा ली जाती है। आजकल समयाभाव, एक या दो दिन का विवाह तथा विविध प्रकार की सब्जियों के चलन के कारण शुभ-शकुन की बरी बना ली जाती है।

चूल्हे बनाना

वर के यहाँ पाँच एवं वधू के यहाँ सात टोकनियों में नाड़ा बाँधकर चौक पाट पर रखकर वरमाता उनकी कंकू हल्दी चावल से पूजा करती है और फिर महिलाएँ सिर पर टोकनियाँ रखकर गाजे-बाजे से मंगल गीत गाते हुये मिट्टी खनन हेतु जाती हैं। वास्तव में पहले के समय में गैस चूल्हे और केटरर को भोजन आदि कार्य नहीं सौंपे जाते थे। विवाह में आये हुए मेहमानों और बारातियों के लिये खाना बनाने के लिये अधिक चूल्हों की आवश्यकता होती थी। अत: यह रिवाज प्रचलित था। आजकल प्रतीक एवं शुभ शकुन स्वरूप यह कार्य सम्पन्न किया जाता है।

वधू पक्ष के यहाँ सात चूल्हे एवं दो अटायनी अर्थात् मिट्टी की थाली बनाई जाती है तथा पाँच कोठियाँ बनती हैं। वर पक्ष के यहाँ पाँच चूल्हे, नौ कोठियाँ, एक अटायनी तथा कोठियों के ढक्कन बनाये जाते हैं। मिट्टी के पाँच-पाँच मुट्ठे बनाकर गणेश के प्रतीक स्वरूप चूल्हों पर रखते है और हल्दी कंकू अक्षत से उनकी पूजा की जाती है। शुभकार्य में सहयोग मिलने के कारण उनका सम्मान किया जाता है। कार्य निर्विघ्नता पूर्वक सम्पन्न होने की कामना से हर कार्य में गणेश जी को स्मरण किया जाता है, ताकि रिद्धि-सिद्धि, शुभ-लाभ सदा साथ रहे। इस दिन आने वाली सभी सुहागनों के पैर दूध-पानी से धुलवाये जाते हैं और कंकू लगाकर गीत गाते हुये स्वागत -सत्कार, सम्मान किया जाता है। मेहमान महिलाएँ भी पैर धुलवाये जाने वाले बर्तन में पैसे डालती हैं, सुहागनों को नेग देने के लिये।

न्यूतार बधाना

सम्पूर्ण विवाह कार्य को सुव्यवस्थित ढंग से सम्पन्न करने की यह एक योजना या रीति है, जिसमें सभी को उनके कार्य आदर पूर्वक सौंपे जाते हैं। वर-वधू की विवाहित बहन या बुआ को वर माता कंकू-हल्दी लगाकर बधाती है एवं नये वस्त्रादि भेंट करती है, उसे पहली न्यूतार कहा जाता है। पहली न्यूतार ही विवाह के प्रत्येक कार्य में आरती दीपक आदि संवारना तथा आने वाले सभी मेहमानों, अतिथियों को आरती कंकू-हल्दी से बधाती और स्वागत करती है। स्वागत में यह गीत गाया जाता है-

हजार पान सुपारी डेढ़ सौ,
हां जी तुम घर न्यूतो।

लड्डू एवं गुणि बनाना

मुख्य द्वार के दोनों ओर टोकनी में सूपे से गेहूँ ऐसे भरे जाते हैं कि टोकनी भर जाने के बाद गेहूँ नीचे तक गिरे अर्थात् विवाह घर में अन्नपूर्णा का भण्डार भरा रहे। किसी भी चीज की कमी न हो। इन गेहुँओं को पैसा-सुपारी रखकर सूपों को नाड़ा बांधकर आमने-सामने बैठकर सुहागनें फटकती हैं और उन्हें कुछ देर के लिये भिगो देती हैं। फिर ओखली में मूसल से कूटती हैं, ताकि छिलके उतर जावें। इन्हीं गेहुँओं से चिकसा, गुणी, घुघरी बनाई जाती है। विवाह जैसा बड़ा एवं महत्त्वपूर्ण कार्य अच्छी तरह सम्पन्न हो सकता है।

गणेश पूजन के नैवेद्य के लिये पूजा के पूर्व ही गणेश के लड्डू एवं गुणियाँ बनाई जाती हैं। पाँच किलो गेहूँ पिसवाकर कम से कम सवा किलो लड्डू एवं ढाई किलो आटे की गुणि बनाई जाती हैं। घी में आटा भूनकर गुड़ की चासनी या गुड़ बारीक कर मिलाकर लड्डू बनाये जाते हैं। उनमें पाँच विशेष बड़े लड्डू बनाते हैं। लड्डूओं में मेवा-इलायची मिलाई जाती है। आटे को गुड़ के पानी में कड़ा सानकर छोटी-छोटी पतली (पपड़ियाँ) गुणि बनाकर तली जाती हैं, जो गणेश पूजा के अतिरिक्त वर-वधू एवं बहन-बेटियों को विदा के समय दी जाती हैं।

गुणि के लिये आटा सानते समय दो चौक बनाकर उन पर दो थालों में दो सुहागनें एक दूसरे को तथा थालों को कंकू लगाकर दोनों परस्पर थालों में गुड़-पानी डालकर दोनों मिलाकर आटा सानती हैं और बधावा गीत महिलाएँ गाती है-

जो बी पाँच बधावा रे ये भला आविया।

और देखते-देखते बन्ना-बन्नियों की धुनों पर गुणियाँ बेल कर, हल्का सुखाकर, तल कर तैयार कर लेते है। गीतों के साथ काम करने पर थकान नहीं होती और उत्साह आनंद के साथ कार्य सरलता से हो जाता है।

एल छोड़ना

बाल्यावस्था में सुरक्षा हेतु कुलदेवी, किसी देवता या मान का रक्षा सूत्र बच्चों को बाँधा जाता है, जिसे यज्ञोपवीत और विवाह के पूर्व सम्बन्धित कुल देवी-देवता के समक्ष उतारा जाता है। नाड़े

या रेशमी धागे से बनी एल बेल या रक्षा सूत्र छोड़ा जाता है, क्योंकि बाल्यावस्था की देहरी पार कर युवावस्था में वर-वधू प्रवेश कर चुके हैं। पूजा कर नारियल फोड़कर सम्बन्धित देवी-देवता को चढ़ाकर प्रसाद में गुड़-मिठाई बाँटी जाती है।

शीतला देवी पूजन

विवाह का महत्त्वपूर्ण शुभ कार्य सुख-शांति पूर्वक निर्विघ्न सम्पन्न होने के उद्देश्य से सभी देवी-देवताओं, अपने आत्मियों, बुजुर्गों, रिश्तेदारों, परिचितों को मान-सम्मान और आदरपूर्वक आमंत्रित किया जाता है। सभी के सहयोग से आशीष से सानंद अपने कार्य सम्पन्न होने की कामना की जाती है। शीतला माता की शीतल छाया सभी पर बनी रहेगी, यह आत्म-विश्वास दृढ़ होता है। हमारी संस्कृति की ही यह विशेषता है- नम्रता, उदारता के साथ सभी को मान देना।

हमारे पूर्वज जानते थे कि प्रकृति और पर्यावरण का मनुष्य से जीवन-रक्त जैसा अभिन्न सम्बन्ध है। प्रकृति के बिना मानव और जीव मात्र का जीवन दुष्कर या असम्भव ही है। हमारी मान्यता है कि कण-कण में जड़-चेतन, जीव-निर्जीव सभी में ईश्वर का अस्तित्त्व है। अतः प्रकृति के सभी अंगों या तत्त्वों, जिनसे हमें किसी भी प्रकार जीवन, आयु, स्वास्थ्य सुख-शांति लाभ मिलता है, उनके प्रति आदर, आभार, श्रद्धा रखना हमारी संस्कृति की शिक्षा है। जो अन्य धर्मावलंबी एवं अज्ञानी जन हमारे इस दर्शन और मान्यता को समझ नहीं पाते। वे ही प्रकृति, सूर्य, नदी, वृक्ष एवं मूर्ति और अनेक देवी-देवताओं की पूजा आदि का उपहास करते हैं। वे अनेकता में एकता, एकता में अनेकता, एकेश्वरवाद, द्वैत-अद्वैत का रहस्य नहीं समझ पाते, यह चिंतन-मनन अभाव एवं अज्ञानता का ही सूचक है। वे नहीं जानते कि-

अकाशात् पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्।
सर्व देव नमस्कारं केशवं प्रति गच्छति।।

यह भारतीय संस्कृति की उदारता, नम्रता एवं लचीलेपन का परिचय है। लोक गीतों में तो पशु-पक्षियों, भ्रमर, तोते, कोयल, गीब्दनी, मयूर, चिड़ियाँ, कौआ, पपीहा आदि को सम्बोधित कर आमंत्रित किया गया है एवं सहयोग माँगा गया। एक निमाड़ी बधावा लोकगीत में आम्रवन के सोगीटा सुआ कोयल को आमंत्रित करते हुये गाया गया है-

तुम तो आवजो नऽ रेऽ, अंबाबन का सोगीटा।

शीतला माता पूजन हेतु वर-वधू को चिकसा-उबटन सुवासित तेल आदि से सुहागनें मंगल गीत गाते हुये स्नान करवाकर तैयार करती हैं। वर-वधू के हाथ में नीम की टहनी दी जाती है। वरमाता सभी महिलाओं के साथ गाते-बजाते शीतला देवी के मंदिर पहुँचती है। वर-वधू को चंदोबा -रेशमी वस्त्र की छाया कर ले जाते हैं। पूजा के लिये आरती में गणेश, अन्नपूर्णा रखते हैं, साथ ही पूजा सामग्री लेते हैं-दूध-दही, कंकू-हल्दी, सिंदूर, चावल, चने की भीगी दाल, पैसा-सुपारी, कोरा सफेद कागज (ताव) मेहंदी, पीले वस्त्र, ओढ़नी, चूनर, पंच खौका, आटे के पाँच दीपक, घी-बत्ती सहित परंतु दीपक जलाये नहीं जाते, आरती में मिट्टी का दीपक तेल-बाती सहित, नारियल, दो दोनों में चिकसा, दही-भात, गुड़-घी, आटे के बने टापू आदि नैवेद्य के लिये। वरमाता दंड भरते हुये या मान देते हुये अर्थात्- साष्टांग दंडवत प्रणाम करते हुये मंदिर में प्रवेश करती है। मान गीत गाये जाते हैं-

बाबा पानड़ पानड़ दिया हो बल
शीतला माता का मढ़ तळऽ
ळीमड़ी दिन-दिन लहरया हो लेय

और पूजा करते हुये गाया जाता है-

शीतला माता का मढ़ मंऽ गई थी वो माय

सर्वप्रथम वर-वधू नीम की टहनी शीतला देवी के सामने चढ़ाते हैं तथा उनके गले की 'एल' (रक्षा सूत्र) छोड़कर देवी के सामने रखी जाती है। वरमाता वर-वधू के साथ -साथ पूजा करते हैं। पूजा सामग्री चढ़ाने के पश्चात् दही-भात, टापू-गुड़-घी का भोग लगाया जाता है। चिकसा चढ़ाया जाता है। नारियल फोड़ कर चढ़ाकर प्रसाद वितरित किया जाता है। हनुमान जी को भी एक दोने में चिकसा, नारियल और जलता दीपक रखकर उन्हें निमंत्रण दिया जाता है। नगर देवता भैरू बाबा को भी शीतला देवी के साथ पूजा जाता है। सफेद ताव भैरू बाबा के तथा पान पर स्वस्तिक बनाकर पंच मेवा भोग रखते हैं।

पूजा के बाद वरमाता हल्दी घोलकर उसके पाँच-पाँच हाते (हथेलियों छापे) मंदिर के दोनों ओर देकर उन पर कंकू अक्षत लगाती है। गाजे-बाजे से विवाह घर लौटकर मुख्य द्वार के दोनों ओर हल्दी के पाँच-पाँच हाथे देकर उन पर कंकू की टिपकियाँ लगाती है, जो शुभ कार्य एवं गणेश जी के पधारने के प्रतीक स्वरूप शुभ चिन्ह है। साथ ही विवाह घर की मंगल चिन्हों से पारंपरिक साज-सजावट भी हो जाती है।

ब्रह्मचर्याश्रम के अनुशासित, नियमनिष्ठ, सात्त्विक जीवन के पश्चात् गृहस्थाश्रम में प्रवेश सुख-भोग हेतु वर-वधू को राजा-रानी की तरह मान देकर उनकी सज्जा की जाती है। सुहागनें सुवासित तेल, उबटन-हल्दी लगाकर वर-वधू को मंगल गान सहित स्नान करवाती हैं। उबटन लगाते हुये गाती हैं-

घऊं चणा केरो ऊगसणों,
लाओ रे तिल्ली रो तेल

और स्नान करवाते हुये गाती हैं-

गाज नी गरज्यों वो सखि बाई,
मेहुळ्यो सो वरस्यो आज

स्नान के पश्चात् उन्हें दूल्हे-दुल्हन के रूप में सजाती हैं। उन्हें हर प्रकार से सुरक्षित रखने, बुरी नजर से बचाने हेतु कटार या चाकू दिया जाता है। इसे विवाह सम्पन्न होने तक अपने पास ही रखने एवं स्वच्छंद और अकेले न घूमने-फिरने की हिदायत या चेतावनी भी दी जाती है।

चाक पूजा

वरमाता और महिलायें कुम्हार के घर जाकर उसके चाक की पूजा करके कुम्हार को भी कंकू अक्षत लगाकर उसे वस्त्र मिठाई, गुड़, नारियल, पैसे-नेग देकर सम्मानित करती हैं। मिट्टी के बने गेरू-खड़ी सफेद मिट्टी, लाल-पीले रंगों से सज्जित रंगीन कलश, कुल्या, मटकियाँ, ढक्कन, दीपक आदि खरीद कर विवाह घर लेकर आती है या फिर मण्डप के पूर्व गणेश पूजन के बाद कुम्हार को उसके मिट्टी के बर्तनों सहित बुलाकर पूजा सम्मान कर आवश्यक मिट्टी के बर्तन खरीदे जाते हैं। विवाह कार्य में समाज के हर वर्ग का अपना महत्त्व, मान और सहयोग आवश्यक होता है। नाई, धोबी, तंबोली, ढोली, बाजे वाले सभी का सम्मान किया जाता है। मिठाई, राशि नेग में देकर उनके सहयोग के लिये आभार व्यक्त किया जाता है।

मिट्टी के इन मंगल कलशों को मण्डप की बेलियों के साथ स्थापित किये जाते हैं, जिसे एव भरना कहते हैं। कुल्या या करवे बारात के लिये वर सिंगार के पूर्व एवं वधू को पाणिग्रहण के लिये तैयार करते समय स्नान हेतु काम में आते हैं। उसके बाद ही वर-वधू को कंकण, वादी बाँधे जाते हैं।

खलमाटी

शुभ पाँच मुहूर्त के दिन चूल्हा कोठी की मिट्टी लेने एवं गणेश पूजा से पूर्व पंडित जी द्वारा निर्देशित शुभ मुहूर्त और दिशा से सुहागनें मिट्टी लाती हैं। जिस स्थान से मिट्टी ली जाती है, उसे भी पूजा जाता है। चौक पर कलश, पान पर पैसा-सुपारी, गौर रखकर कंकू, हल्दी, अक्षत, मौली, गुड़, नारियल आदि से पूजा की जाती है। मिट्टी खोदने के साधन-सब्बल और दामाद या भानजे को कंकू-तिलक लगाकर नाड़ा बांधा जाता है। फिर वे पाँच या सात सब्बल मारकर मिट्टी खोदते हैं। इसे वरमाता अपने पल्लू में झेलती है और टोकनियों में डालती है। दामाद को गुड़ एवं नारियल और कुछ राशि नेग स्वरूप देती है। आवश्यकतानुसार मिट्टी लाने के पश्चात् पुनः उस स्थान पर कंकू का स्वस्तिक बनाकर पैसा-सुपारी दबाकर मानो धरती माता का आभार व्यक्त कर गाते-बजाते विवाह घर मिट्टी लेकर पहुँचते हैं।

खण्डवा -खरगोर क्षेत्र में खणमट्टी मण्डप के समय जहाँ 'अंबा' बनाया जाता है, उस स्थान पर बेली के पास रखते हैं। हरदा, होशंगाबाद क्षेत्र में मण्डप के दिन रूखड़ी निवते समय गेहूँ में मिलाकर उपयोग में लेते हैं। इसी मिट्टी में 'ज्वार माता' बोते हैं, अर्थात् इस मिट्टी में गेहूँ मिलाकर मुख्य द्वार के दोनों ओर रखकर ज्वारे बो कर कलश रखे जाते हैं। इसी मिट्टी में गेहूँ डालकर मर्दली के नीचे पानी से सींचकर ज्वारे बोये जाते हैं। यह कार्य बेटी की विदा के बाद या वर की बारात विवाह हेतु विदा करने के बाद कुंभ कलश भरते समय करते हैं। मण्डप बनाते समय मर्दली रोपण के पश्चात् ही मण्डप में विवाह के सारे कार्य सम्पन्न होते हैं।

मर्दली

बाँस या जंगल से लकड़ी काटकर लाई जाती है और उसे मण्डप के दिन रोपित किया जाता है। मर्दली गणेश पूजा के दिन तैयार की जाती है या फिर मण्डप के ही दिन आम के पत्ते, जामुन के पत्ते, नाड़ा, पैसा-सुपारी, हल्दी की गांठ को पीतल या ताँबे के गिलास में रखकर लाल कपड़े में नाड़े से बाँस या लकड़ी में बाँधा जाता हैं। उसके साथ मुस्सल, मथानी और तीन बाँस इस प्रकार पाँच चीजें बाँधी जाती है। यह वंश वृक्ष के प्रतीक स्वरूप मण्डप में रोपित की जाती है, जिसका रोपण एवं पूजन वंश या घर-कुटुंब का व्यक्ति ही कर सकता है। जब तक मण्डप नहीं निकाला जाता, तब तक मर्दली के साथ बाँधे गये उल्टे मुस्सल पर प्रति दिन एवं शाम के समय दीपक तथा भोग भी लगाया जाता है। यदि वर-वधू का विवाह एक ही शहर से होता है तो बारातियों के साथ ही वर मण्डप की मर्दली के लिये भोजन वधू पक्ष की ओर से पहुँचाया जाता है। सम्भवत: वर पक्ष के सम्पूर्ण वंश पूर्वजों के प्रति सम्मान व्यक्त किया जाता है। मण्डप के साथ ही मर्दली को भी ठंडा किया जाता है, अर्थात् विसर्जित किया जाता है।

गणेश पूजा

गणपति लोक देवता हैं जो अत्यंत सरल स्वभाव, शीघ्र प्रसन्न होने वाले, विघ्न विनाशक, सिद्धिदायक हैं। आमंत्रित करने पर घर के आत्मीय बुजुर्ग की तरह झट आकर विवाह घर के समस्त कार्यों को निर्विघ्न सम्पन्न करवाते हैं। अत: शुभ कार्यों में विवाह संस्कार में गणेश पूजा का विशेष महत्त्व होता है। शीतला देवी पूजन के पश्चात् गणेश पूजन की तैयारी की जाती है। तेल, चना, दही, इत्र, हल्दी, बेसन, गेहूँ से बने सुवासित उबटन और तेल मालिश कर वर-वधू को सुहागनें मंगल सुमधुर गीतों के साथ मंगल स्नान करवाकर दूल्हा-दुल्हन के रूप में सज्जित करती हैं। हल्दी पाँच या सात दिनों की होती थी।

गणेश पूजा हेतु लीपकर चौक-सातिया बनाकर जल से भरा ताँबे का कलश उस पर पान, नारियल रखकर स्थापित किया जाता है। चौक पाट पर आम का पटिया रख उसके बीच में पान पर चावल रखकर पीतल के गणेश, पैसे-सुपारी, गौर रखी जाते हैं। आटे में हल्दी डालकर दूध से उसनकर उससे दीपक एवं गणेश बनाये जाते हैं, वर की गणेश पूजा के लिये आटे के नौ गणेश एवं सात दीपक और वधू के लिये सात गणेश तथा नौ दीपक बनाकर चावल की छोटी-छोटी ढेरियों पर स्थापित किये जाते हैं। उनके सामने चावल की ही ढेरियों पर दीपक रखे जाते है, जिनमें घी एवं लम्बी बत्तियाँ रखी जाती है। गणेश पूजा जलती ज्योत में ही की जाती है। अत: पूजा पूर्ण होने तक दीपकों के जलते रखने का विशेष ध्यान रखा जाता है। दीपक की पंक्ति वरमाय एवं वर-वधू की तरफ होती है। दाहिनी ओर गुड़, घी, आटे के बने विशेष पाँच बड़े लड्डू रखे जाते हैं।

काँसे की थाली में गणेश पूजा के लिये बनाये गये आटे, घी एवं गुड़ से बनाये गये लड्डू, गुणि (आटे गुड़ से बनाई गई पपड़ियाँ) तथा गेहूँ से बनाई गई घुघरी रखी जाती है। पाँच मुहूर्त के दिन सुहागनों द्वारा गेहुँओं को भिगोकर अच्छी तरह उबाला जाता है एवं ठंडा कर उसमें गुड़ की ठंडी चाशनी या बारीक किया हुआ गुड़, आटे की लप्सी, घी, नारियल, मेवा, इलायची मिलाकर घुघरी बनाई जाती है। यही गणेश पूजा का विशेष नैवेद्य होता है।

आरती में पाँच मुहूर्त के दिन कूटी गई हल्दी के साथ कंकू, हल्दी, अबीर-गुलाल, सिंदूर, अक्षत, दूध-दही, चाँदी की अँगूठी या चाँदी की चवन्नी, मिट्टी का दीपक, तेल-बाती, पीतल या चाँदी का दीपक रखा जाता है। गणेश पूजा प्रारंभ करने से पूर्व महिलायें मंगल गीत गाते हुए खणमिट्टी लाकर रखती हैं। इसके पश्चात् ही गणेश पूजा आरंभ होती है। वरमाता एवं वर-वधू को कंकू तिलक कर हाथ में चावल देकर आसन पर बैठाती है। वरमाता वर या वधू एक दूसरे को कंकू लगाते हैं। वरमाता अपना पल्लू से सिर ढांकती है और वर-वधू शाल या सवळया (रेशमी धोती) से सिर पर घूँघट की तरह इस तरह ओढ़ते हैं कि केवल गणेश एवं उनके दीपकों पर ही अपने सुखी-सफल दाम्पत्य जीवन के लिये उनकी दृष्टि पड़े, दर्शन हों। वरमाता वर या वधू के दोनों हाथों को अपने हाथों से पकड़कर साथ-साथ पूजा करते हैं। कलश व बीच में स्थापित गणेश, पैसा-सुपारी गौर की पूजा कर बाईं ओर से दाहिनी ओर क्रमानुसार कंकू, हल्दी, अबीर-गुलाल, सिंदूर, चावल पुष्प आदि चढ़ाती हैं, और हाथ में बची शेष पूजा

सामग्री पीतल के गणेश जी पर चढ़ाते हैं। सभी चीजें दो बार इस विधि से चढ़ाई जाती है अर्थात् पूजा दुहराई जाती है। दूसरी बार घुघरी चढ़ाते समय कुछ इस प्रकार चढ़ाते हैं कि अँगूठी गणेश जी के गले में पहुँचे या सूंड में अटके या उन पर चाँदी की चवन्नी चढ़ाई जाती है। इस समय गीत गाया जाता है-

गढ़ हो गुंडी सी बाबो गणपति आवो।

इसके पश्चात् वरमाता कांसे की थाली जिसमें गणेश के लड्डू, गुणि, घुघरी रखी होती है, उसे पल्लू से ढांक कर उठाती है और वर-वधू को 'थालवड़ी' लगाती है, अर्थात् वर-वधू के पाँच अंगों -पैर, घुटना, कमर, भुजा और सिर का पाँच बार थालवड़ी का स्पर्श करवाती है। मानों वर-वधू की नजर उतारकर गणपति के आशीष उन्हें पहुँचाते हुए, उन पर न्योछावर होती है। इसके बाद पाँच, सात, नौ, ग्यारह, तेरह अर्थात् विषम संख्या में सुहागनें कलश-गणेश की पूजा कर वरमाता, वर-वधू को कंकू, हल्दी, अक्षत तिलक कर पाँच मुहूर्त के दिन कूटी गई हल्दी वर-वधू के दोनों पैरों-अँगूठों को लगाती हैं। स्वयं के पल्लू के छोर में चावल, अक्षत रखकर वर-वधू के पीछे जाकर पल्लू का छोर उसके सिर पर रखती है। वरमाता वर-वधू के दोनों हाथों को अपने दोनों हाथों में लेती है और पीछे खड़ी सुहागन की गोद में गुणि, घुघरी लड्डू पैसे डलवाती है। सिर के ऊपर से हाथ ले जाकर दो बार में यह प्रसाद दिया जाता है। पहली बार में लड्डू, दो गुणि एवं घुघरी तथा दूसरी बार में दो गुणि, घुघरी और पैसे रखकर - *ल्यो सुवाय ढाक्या बाण* अर्थात् सुहागन! ढँका हुआ यह बाण (भेंट) स्वीकार करें, कहते हुए दिया जाता है। अंत में वर-वधू वरमाता की गोद में भी दो बार में यही प्रसाद डालते हैं। वरमाता उसे काँसे की थाली या थालबड़ी के थाल में रखती है। वरमाता वर-वधू को पाँच कौर अपने हाथ से खिलाती है और वर या वधू वरमाता को खिलाते हैं। उसी थाली में से घर-परिवार कुटुम्ब के बच्चे भी साथ में खाते हैं। थाली में जूठा नहीं छोड़ा जाता। शेष सभी जनों को गुणि, घुघरी, लड्डू का प्रसाद बाँट दिया जाता है एवं बताशे बाँटे जाते हैं। बधावे एवं बन्ना-बन्नी गीत गाये जाते हैं।

दो सुहागनें इसके बाद गणेश-दीपकों सहित पाट को अपना पल्लू लगाकर दोनों हाथों से उठा कर माता के कमरे में ले जाती हैं और दोनों हाथ मिलाकर एक दूसरे के हाथ पकड़कर ताँबे के लोटे में रखती हैं, जिसे बाद में गाय को खिला दिया जाता है या अन्य पूजा सामग्री के साथ विसर्जित किया जाता है। पाट को धोकर मण्डप के दिन उस पर कुल देवी या ईरीत की स्थापना की जाती है। पाट पर पूजा के समय रखे बड़े लड्डू बहन-बेटियों सुवासिनों को दिये जाते हैं। इस दिन से विवाह घर में धूम-धाम, मस्ती-आनंद, हास-परिहास, स्वागत-सत्कार और भोजन एवं विवाह की शेष तैयारियों की व्यस्तता के बीच नृत्य-गान-ढोलक की थाप गूंजते रहते हैं। मेहंदी रचाने, सुहागनों को चूड़ियाँ पहनाने, वस्त्राभूषण खरीदने, पहनने का दौर शुरू हो जाता है।

बाना जिमाना

कुटुम्ब -परिवार परिचित एवं रिश्तेदार इस अवसर पर वर-वधू को बाना जिमाते हैं। अर्थात् मिष्ठान आदि करवाते है और कुछ राशि देते हैं। वर-वधू के साथ छोटे भाई-बहन, सुहागनें, मित्र-सहेलियाँ भी जाती हैं। पुराने समय में पाणिग्रहण तक मीठा ही खिलाया जाता था- मिठाई या शक्कर-घी-भात विशेष शकुन के तौर पर। किन्तु आजकल रूचि अनुसार भोजन करवाया जाता है। घर की बहन-बेटियाँ, बुआएँ तथा अन्य रिश्तेदार वर-वधू को मिष्ठान एवं वस्त्राभूषण राशि आदि भेंट में देती है। चौक पाट कर वर-वधू को पाट पर बैठाकर ढोलक की थाप पर मंगल गीत बधावें, बन्ना-बन्नी गाते हुए, हास-परिहास नृत्य-गान सहित वर-वधू को भेंटादि देती हैं और सम्पूर्ण वातावरण को रसमय बना देती हैं।

मण्डप

विधिपूर्वक पंडित जी के निर्देशानुसार दामादों एवं कुटुम्बजनों के सहयोग से मण्डप खड़ा कर लिया जाता है। इस उपलक्ष्य में दामादों को तिलक कर गुड़ एवं राशि नेग में दी जाती है। मण्डप बाँस एवं बल्लियों से बनाया जाता है। इसके लिये चार प्रमुख बल्लियाँ ली जाती हैं। वर के मण्डप के लिये नौ या ग्यारह बाँस तथा वधू के मण्डप के लिये बारह या तेरह बल्लियों से मण्डप बनाया जाता है। एक मर्दली, दो बाँस तोरण के लिये रखे जाते हैं। आम, जामुन के पत्ते, कांस की रस्सी या एट अर्थात् मोथा की रस्सी, सूत, नाड़ा, मिट्टी के बर्तन एव भरने के लिये अर्थात् मण्डप के चारों ओर बल्लियों के साथ रखे जाने वाली गेरू, सफेद खड़ी मिट्टी, लाल पीले रंगों से सुसज्जित मंगल

कलश स्वरूप मटकियाँ-वर के यहाँ बारह मटके और दो ढक्कन तथा वधू के यहाँ चौबीस मटके चार ढक्कन की संख्या में लिये जाते हैं। इनके अतिरिक्त एक मीटर लाल कपड़ा, ताँबे या पीतल का गिलास, दही, सुपारी, हल्दी की गांठे, गेहूँ, चावल, ताँबे की अँगूठी, गेरू, पांच रोटियां, पत्तलें, दस करवे (मिट्टी के छोटे कलश) मौसमी फल, खारक, बादाम, काजू-किशमिश, मिश्री, घी, फूल, आरती, दो जोड़ा जनेऊ, पीपल के पत्ते, पान, कुशा, काली तिल्ली, सरसों, उड़द की दाल आदि मण्डप प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक होती है।

मण्डप के सामान तथा सामान लाने वाले को दो सुहागनें कंकू, अक्षत, तिलक से बधाती है स्वागत -सम्मान करती हैं और उन्हें नेग में गुड़ एवं राशि दी जाती है।

जहाँ मण्डप बनाया जाता है, वहाँ सुहागनें लीपकर कलश, चौक बनाकर कलश एवं गणेश रखकर उनकी पूजा करती हैं। घर के पुरुषों को कंकू तिलक करती हैं और घर के ही पुरुष मण्डप के चार गड्ढे खोदते हैं, जिनमें गृहस्वामी दही-चावल, पैसा-सुपारी, हल्दी की गांठें डालते हैं। चार दामाद चार बेलियों को लेकर खड़े रहते हैं, जिन्हें सुवासिनें मंगल तिलक कर गुड़ पैसे नेग में देती हैं और बल्लियों को कंकू लगाकर नाड़ा बांधती हैं। तब सर्वप्रथम ईशान दिशा में पहली बल्ली गाड़ी जाती है। इसके पश्चात् अन्य बल्लियाँ भी स्थापित की जाती है। जामुन के पत्तों से मण्डप छाया जाता है। मर्दली और तोरण तैयार किया जाता है। ढाई हाथ का नाड़ा लेकर उसमें आम के पत्ते लगाकर दो बाँसों से तोरण बनाया जाता है। बाँसों, मर्दली और बल्लियों को सुवासनियाँ गेरू से रंग कर सजाती हैं। तोरण घर के सामने की तरफ रखा जाता है। सुवासिनें मुँह-गालों और हाथ-पैरों में दामादों को घोली हुई हल्दी लगाती है। सुवासिनें मण्डप को साफ कर गोबर से लीपती और चौक बनाती है तथा घर-आँगन द्वार और देहरी को सजाकर साती-तोरण बाँधती हैं और इन सब मंगल कार्यों में योगदान के लिये नेग दिये जाते हैं।

पड़छन

मातृका अर्थात् नंदिनी, नलिनी, मैत्री और उमा इन प्रमुख बल्लियों-मर्दली की विधिवत् पूजा करती हैं। मण्डप में सुवासनियाँ पांच मुहूर्त के दिन बनाये गये चूल्हे पर मण्डप के नैवेद्य एवं वर-वधू को पड़छने के लिये नेग शकुन की रोटियाँ बनाती हैं। ग्यारह रोटी में से पाँच रोटी घर के पुरुष घी-गुड़ सहित मण्डप के भोग के लिये बल्लियों पर बाँधते या रखते हैं। पाँच रोटी बारात के जाने के पूर्व वर को पड़छन समय एवं पाँच रोटी बारात लौटने पर वधू के ऊपर से डाली जाती हैं।

काँस की रस्सी या मोथा की रस्सी से मण्डप सुरक्षा व्यवस्था की जाती है। मण्डप के चारों ओर सूत्र एवं नाड़ा लपेटकर उसमें पीपल के पत्ते लगाये जाते हैं। घर के दरवाजों पर आम के पत्तों को बाँधा जाता हैं। मण्डप ग्यारह, सात अथवा पाँच दिन में निकाल कर नदी में ठंडा किया जाता है।

मण्डप स्थापना के पश्चात्-मण्डप प्रतिष्ठा की पूजा होती है। इसके अन्तर्गत गणेश पूजन, कलश पूजन, विष्णु पूजन, षोडश मातृका पूजन, घृतमातृका पूजन, नवग्रह पूजन, पितृ आह्वान, नांदी श्राद्ध, गणेश एवं पूजन आदि वर-वधू के माता-पिता या परिवार के ही कोई पति-पत्नी करते हैं। ये सभी कार्य विधि-विधान से पंडित जी सम्पादन करवाते हैं। पितरों की आत्म शांति एवं गृहशांति हेतु सारे कर्मकाण्ड एवं हवन सम्पन्न करवाते हैं। हवन की अग्नि बहन-बेटी सुहागन द्वारा ही लाई जाती है। भात एवं आटे के सोलह दीपक और एक चार कोणीय दीपक हवन स्थल पर लाकर रखे जाते हैं। सुवासिनों को इसका नेग दिया जाता है।

नांदी श्राद्ध हेतु पत्तल पर पूर्व दक्षिण क्रम से कुशाओं को बिछाकर उसे संकल्प पूर्वक यथा विधि पूजन कर हाथ में जल लेकर चारों स्थानों पर प्रक्षालन पूजन, भोजन इत्यादि चढ़ाकर अर्घ्य देते हैं। फिर विसर्जन कर पत्तल लपेटकर इसे चारों ओर से बांधकर एक ओर रख दिया जाता है। इसे घर से बाहर ले जाकर या फिर चौरास्ते पर चारकोणीय दीपक सहित बिना बोले ले जाकर रखा जाता है एवं बिना पीछे देखे आकर हाथ-पैर धोकर घर में प्रवेश करते हैं। इसके पश्चात् हवन का कार्य होता है, फिर माता-पिता कुलदेवी ईरीत के चरण स्पर्श करते हैं। इस अवसर पर बहन आरती लेकर द्वार पर खड़ी रहती है और नेग मिलने पर ही द्वार से हटती है।

ईरीत बनाना

मण्डप के दिन परंपरानुसार कुलदेवी स्थापना एवं पूजन

होता है। अत्यंत पवित्रता, शुद्धता एवं श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूरा परिवार कुटुम्ब इसमें सम्मिलित होता है एवं परंपरानुसार अपने-अपने कुलाचार अनुसार पूजन एवं नैवेद्य श्रद्धापूर्वक साथ में खाते हैं। जहाँ कुलदेवी बनती है, उसे लीप-पोतकर शुद्ध किया जाता है। जिस वेदी पर कुल देवी की स्थापना की जाती है। उसके पीछे की दीवार भीगे हुये चावल पीस कर बनाये घोल से पोत कर फिर उस पर माता बनाये जाने वाला सूपा रखा जाता है। सूपे के पीछे हिस्से पर कुलदेवी बनाई जाती है। कुलदेवी बनाने के लिये सत्रह कीमड़ी (बाँस की काड़ी) से बना सूपा लिया जाता है। इसे धोकर अंदर की ओर सातिया बनाया जाता है। सवा मीटर सेन का कपड़ा धोकर सूपे पर डाला जाता है। किसी क्षेत्र में नाड़े से कपड़े को बाँध दिया जाता है, फिर हिरमची (गेरू) या कंकू घोलकर, सौंजड़ की काड़ी से कुलदेवी बनाई जाती है। कपड़े पर ऊपर चाँद-सूरज माता की पुतली कहीं काप की या कहीं बावड़ी की बनाते हैं। माता का पालना, सातिया बनाया जाता है एवं माता की कोठड़ी बनाते हैं या चावल के घोल या सफेद खड़ी मिट्टी अथवा चंदन से सफेद बिन्दी बनाकर सुखाते हैं। कलश रखा जाता हैं एवं अखण्ड दीपक प्रज्ज्वलित किया जाता है।

कुम्हार के घर से जो बर्तन लाये जाते हैं, उन्हें माता के कमरे में रखते है। मण्डप के दिन कुलदेवी स्थापित की जाती है। मण्डप के दूसरे दिन 'पड़ेला' होता था, अर्थात् बारात ले जाने की तैयारी का दिन। मण्डप के दिन-रात में पाँच सात जोड़े माता के घर में नहा-धोकर पवित्रता से रेशमी वस्त्रों में जाते हैं। पूर्व तैयारियाँ माता के कमरे में जोड़े से करते हैं, एक जोड़ा लकड़ी की चौकी में कपड़ा बिछाकर ढाई मण गेहूँ नापता है। एक जोड़ा गेहूँ पीसेगा, घट्टी को बंद नहीं होने दिया जाता है, यदि जोड़ा बदलकर पीसे तो। एक जोड़ा दाल नापता है। एक जोड़ा उड़द दाल-चावल सुधारता है। एक जोड़ा ज्वार नापता है। एक जोड़ा खिचड़ा कूटता है। ये सारे कार्य रात्रि में ही होते हैं।

प्रत्येक कुटुम्ब की देवी पूजन और विशिष्ट नैवेद्य अपने-अपने कुलाचार परम्परानुसार बनाया जाता है। नैवेद्य की सभी वस्तुएँ मिट्टी के कोरे (नये) बर्तनों में बनायी जाती हैं। जिस कुलदेवी नैवेद्य में सत्रह कर अर्थात् सत्रह चीजें बनती हैं। ढाई मण आटा जो पीसा गया था, उसके रोट बनाये जाते हैं। घर की भैंस हो तो उसके दूध से आटा सान कर बड़े-बड़े रोट बनते हैं, घी-गुड़ से उन्हें खाया जाता है। पवित्रता और शुद्धता से उन्हें पाँच-सात दिन तक खाया जाता है। कोरे तपेले में दूध उबाला जाता है जो रोट के साथ खाते हैं। कुलदेवी के नैवेद्य में चावल बनता है, जिसे घी-गुड़ के साथ खाया जाता है। दाल बनाई जाती है।

गोतामिल

कोरी मटकी में पानी उबालते हैं। उसमें इमली की डाली और कुछ ज्वार के दाने डालकर उबालते हैं। जब बारात लौटकर आती है, तब नैवेद्य के साथ वधू को ये ज्वार के दाने खिलाते हैं, अर्थात् उसे अपने गोत्र में सम्मिलित करते हैं। उड़द, ज्वार के पापड़ बनाये जाते हैं। सत्रह-सत्रह पापड़ पूजा में तल कर कुलदेवी के सामने ढेर लगाकर रखे जाते हैं। सवा किलो उड़द दाल के दही बड़े बनाये जाते हैं। मांय राब्बड़- अर्थात् कढ़ी बनती है। ज्वार के आटे से बनती है। कढ़ी सादी बिना हल्दी की छाछ से बनती है।

एक कुटुम्ब में देवी के नैवेद्य में लड़के की शादी में चार-चौकी चावल तथा लड़की के विवाह में दो चौकी चावल बनता है। इसे नदी से धोकर लाते हैं और सीधे देवी के कमरे में ले जाकर चूल्हे पर चढ़ा देते हैं। इसी प्रकार अनेक वस्तुएँ बनती हैं, जिसे देवी के कमरे में ही सबको खाना पड़ता है। अलग-अलग कुटुम्बों में अलग प्रकार का नैवेद्य बनता है। आजकल अनेक कारणों से कुलदेवी की पूजा नहीं हो पाती। उसके स्थान पर ईरीत पूजा होती है। नारियल फोड़कर उसका प्रसाद भी वहीं खाया जाता है। किसी अन्य बाहर वाले को नहीं देते। नैवेद्य कुटुम्ब के अतिरिक्त और कोई नहीं खा सकता। कुलदेवी के दीपक ज्योत के भी दर्शन नहीं करने दिये जाते। कुल या कुटुम्ब की विवाहित बेटियाँ उग्गल या उक्कले का नैवेद्य अर्थात् कुटुम्ब द्वारा और नैवेद्य-भोग लगाने के लिये तथा सबके खाने के लिये निकालकर अलग रख लेने के बाद शेष बचा हुआ भाग ढांक कर रख दिया जाता है। कुटुम्ब कुल द्वारा पूजा, आरती भोग के पश्चात् रख लेने पर सबके वहाँ से हटने पर विवाहित बेटियाँ पूजा कर अलग ढाका गया नैवेद्य खाने की अधिकारी होती हैं। सूखी चीजें व रोट आदि सम्भाल कर ढांककर रखे जाते हैं, जिन्हें बारात लौट आने के बाद भी परिवार दूध-दही, घी के साथ खाता है, जब तक

समाप्त न हो जाये। शेष चीजें जो खराब हो सकती हैं, उन्हें माता के कमरे में ही गड्ढा खोद कर गाड़ देते हैं।

माता उठाना

माता के कमरे में भात बना कर, पूजा-आरती भोग लगाकर पूरा परिवार गुड़-घी, भात का नैवेद्य खाते हैं। जिसे कपड़े मिट्टी के घड़े में रखकर नदी में विसर्जित कर देते हैं। सूपे को चाकू से काटकर या पीटकर तोड़ते हैं, ताकि कोई दूसरा उसका उपयोग न कर सके। उसे नदी, तालाब या कुएँ में विसर्जित करते हैं। मण्डप भी इसी दिन उठाया जाता है। मण्डप के बाँस मर्दली का गिलास, मूस्सल निकाल कर अलग रख लिया जाता है तथा ऐट, काँस की मोथा की रस्सी, सूत, नाड़ा, पीपल के पत्तों आदि बाँस की टोकनी में रखकर विसर्जित कर दिया जाता है।

वर-वधू को स्नान करवाकर आँख बंद कर मुँह ढांक कर कुलदेवी के कमरे में ले जाया जाता है और फिर आँखें खोल देवी तथा देवी की ज्योत के दर्शन कर पूजा कर प्रसाद खाने के लिए दिया जाता है। काम हो जाने पर उसे पूरी मात्रा होना या करना कहा जाता है। इसी समय प्रसाद नैवेद्य के साथ उसे गोता मिल खिलाकर अपने गोत्र में सम्मिलित किया जाता है। माता का नैवेद्य कर बारात वधू सहित लौटने के बाद अर्थात् शादी के दसवें दिन बनाते हैं एवं सत्रहवें दिन तक पूरा नैवेद्य समाप्त किया जाता है, तब माता उठाते हैं।

ईरीत बनाना

पवित्र माता के कमरे में दीवाल पर ईरीत बनाई जाती है। चावल भिगोकर, पीसकर बनाये घोल से दीवार पोत कर कंकू ईरीत बनाई जाती है। कंकू से माता घर का मुकुट, पालना या पालकी छत्र, चाँद, सूरज, सातिया एवं पाँच पुतलिया बनाई जाती हैं। चावल के इसी घोल से ही बेली, मर्दली, घर के दरवाजों के दोनों ओर कुल चार अंबे अर्थात् कंकू के घोल से आम्रवृक्ष के प्रतीक चिन्ह बनाये जाते हैं। ईरीत के समक्ष आम के पटिये पर चौक, सातिये पर कलश, पान, नारियल स्थापित किया जाता है एवं देवी का अखण्ड दीपक या ज्योत जलाई जाती है। माता कक्ष में पवित्रता पूर्वक भात बनाकर गुड़-घी भात का नैवेद्य लगाया जाता है और वर अथवा वधू एवं परिवार प्रसाद ग्रहण करता है।-

गाड़ी झुपी न म्हारी मंगला माता आव

और आरती यह गाई जाती है-

आरती मऽ बेल बिजोरो, आरती अजब बनी

कुलदेवी पूजन या ईरीत पूजन में वर अथवा वधू एवं कुल-कुटुम्ब-परिवार के लोग जो राशि चढ़ाते हैं, वह परिवार की सभी बहन-बेटियों को बाँट दी जाती है। किसी अन्य को यह पैसा नहीं दिया जा सकता। बहन-बेटियाँ उस पैसे से शुद्धता पूर्वक कुछ मिठाई मेवा लेकर स्वयं ही खाती हैं। अपने बच्चों या पति या अन्य किसी को भी नहीं दे सकती हैं। संभवत: बहन-बेटियों के मान हेतु माता के नैवेद्य में साथ में खाने का पराई हो जाने के कारण अधिकार न होने के विकल्प स्वरूप एवं सुहागिनों के शुभ कार्यों में उनके सहयोग के लिये सम्मान, आभार और उनकी संतुष्टि, प्रसन्नता तथा अपनत्त्व के प्रति आश्वस्तता का ही प्रतीक है, यह नियम और रिवाज। मण्डप प्रतिष्ठा एवं हवन के पश्चात् माता-पिता सर्वप्रथम कुलदेवी या ईरीत के दर्शन करते हैं, प्रणाम करते हैं।

बारात के लिये वर निकासी के पूर्व वर को एवं पाणिग्रहण के पूर्व वधू को स्नान करवाकर आँखें बंद रखकर एवं मुँह ढाँककर कुलदेवी या ईरीत के दर्शन करने जाते हैं। दामाद उन्हें वहाँ तक लेकर जाते हैं। उनकी पीठ पर सलहज (सालाहेली) मजाक, हास-परिहास स्वरूप कच्चा पापड़ फोड़ती है। वर-वधू कमरे में पहुँच आँख खोलकर सर्वप्रथम देवी तथा उनके दीपक के दर्शन करते हैं, पूजा करते हैं। वर नारियल फोड़ता है और सबको प्रसाद देता है तथा वधू गुड़-घी का भोग लगाकर परिवार सहित उस प्रसाद को ग्रहण कर पाणिग्रहण के लिये तैयार होती है। दामाद को नारियल एवं नेग राशि दी जाती है।

ममेरा -मायरा -पेरावणी

मण्डप प्रतिष्ठा के बाद भोजनादि के पश्चात् ममेरा अर्थात् पेरावणी सम्पन्न होती है। जहाँ मामा पक्ष या ममेरा ठहराया जाता है, वहाँ विवाह घर की महिलायें गाजे-बाजे सहित आरती लेकर जाती हैं, बधाती है और सम्मान पूर्वक ममेरे हेतु आमंत्रित करती हैं। सभी को कंकू तिलक लगाकर मण्डप में चलने का आग्रह करती हैं। ममेरे की महिलायें भी उनका हल्दी कंकू लगाकर

स्वागत,अभिनंदन, सत्कार करती हैं। सौंफ-सुपारी देती हैं तथा समधिनें परस्पर गुड़ सहित खोपरे की वाटकी का आदान-प्रदान करती हैं।

ममेरे वाले लाये गये वस्त्राभूषण, मेवा-मिठाई, बताशे, सौंफ -सुपारी, इत्र, गुलाल, पुष्प-मालायें, नारियल, ज्वार की धानी आदि थालों में सजाकर गाजे-बाजे से विवाह मण्डप में पहुँचते है, जहाँ उनका स्वागत सत्कार होता है। सर्वप्रथम पुरोहित मामाओं व अन्य ममेरे वाले पुरुषों को कंकू अक्षत तिलक करते हैं और सुवासनियाँ महिलाओं का स्वागत कर उन्हें यथा स्थान सादर बैठाती हैं। पंडित जी कलश एवं गणेश जी की पूजा मामा जी से करवाते हैं और पेरावणी प्रारंभ होती है। सर्वप्रथम मामा, वर या वधू के पिता को अर्थात् जीजा जी को टीका लगाकर वस्त्रादि, श्रीफल रुपये देते हैं, फिर बहन को कपड़े देते हैं। वरमाता तथा वर-वधू के पिता कपड़े पहनकर पुन: मण्डप में आकर बैठते हैं तथा पैर छूकर भाई-बहन गले मिलते हैं। इसके पश्चात् भाई परिवार के अन्य सभी पुरुषों का तथा भौजाई सभी महिलाओं को यथायोग्य वस्त्रादि भेंट देकर पांव छूती है। इसके साथ ही ममेरे में आये रिश्तेदार सम्बन्धी भी व्यवहार निभाते हैं। वर-वधू को टीका राशि नेग देते हैं। वर-वधू के भाई-बहनों को भी वस्त्र-भेंट आदि दी जाती है।

वधू को मामा घर से पाणिग्रहण के समय पहने जाने वाले कपड़े विशेष 'जवळया'-चोली तथा नाक की नथ और मंगलसूत्र एवं पाणिग्रहण संस्कार के लिये आवश्यक 'गंगाळ' (ताँबे या पीतल की विशेष बर्तन) दी जाती है। जवळया सफेद रंग की साड़ी होती है, जिसके पल्ले पर हल्दी-कंकू के स्वस्तिक एवं टिपकिया लगाई जाती हैं। संभवत: ब्रह्मचर्याश्रम के पश्चात् गृहस्थाश्रम में प्रवेश हेतु सात्विक जीवन के अनुभव अनुकरण के बाद ही सुख-वैभव श्रृँगार का महत्त्व समझा जा सकता है। अंधेरे के बाद उजाले का दु:ख के बाद सुख का अनुभव अधिक आनंददायी होता है। इसीलिये वधू को तपस्विनी की वेशभूषा में ही माता-पिता कन्यादान करते हैं। सफेद वस्त्र, पुष्पमाला, पुष्पों के ही आभूषण कंकण मामा घर का मंगलसूत्र एवं नथ पहनाई जाती है। आजकल लाल-पीली सुसज्जित महंगी साड़ी मामा जवळया के रूप में देते हैं। पहले के समय में फोटो-वीडियो आदि का चलन नहीं था। अत: आजकल पुराने उद्देश्य, आदर्शों और संदेशों की उपेक्षा कर चमक-दमक, आडम्बर, साज-सज्जा के साथ ही महंगी शादियाँ करने की कुरीति जड़ पकड़ रही है।

मण्डप

ममेरे के दिन ममेरे वालों का विशेष आदर-सम्मान होता है। सुवासित उबटन तेल लगाकर हास-परिहास एवं गीतों की धुनों पर स्नान करवाते हैं। विशेष रूप से महिलाओं को विवाह घर की महिलायें नहलाती हैं। उन्हें आग्रह पूर्वक भोजन करवाया जाता है। उस दिन उनके सम्मान में मिठाई विभिन्न व्यंजन युक्त मण्डप की पंगत होती है। गाली, निव्हाली, समधी-समधिन गीत गाये जाते हैं।

मंडप के दिन रात्रि में वर/कन्या का बाना ममेरे में ले जाया जाता है, अर्थात् महिलाएँ गाते-बजाते जहाँ ममेरा ठहराया जाता है, वहाँ वर-वधू को लेकर जाते हैं। मामी-मामा, वर-वधू को कंकू तिलक कर पैसे, नारियल, वाटकी (गोला) मिठाई देते हैं। फिर सभी ममेरा उनके साथ बन्ना-बन्नी गाते हुये विवाह मंडप में आते हैं। मंडप में वर-वधू और वरमाता तथा सभी महिलायें बैठती हैं एवं बारी-बारी वर-वधू को कंकू लगाकर 'बाना' अर्थात् पैसे अपने रिश्ते और व्यवहारानुसार देते हैं। इस समय बड़े हास-परिहास-उल्लास का वातावरण निर्मित हो जाता है। बाना रखने वाली महिलाएँ कहावतें-मुहावरे-कविताओं के माध्यम से व्याज अर्थात् बहाने से अपने पति का नामोच्चार करते हुये राशि देती हैं। सभी उनका कहावड़ा सुनना चाहते हैं, तभी उनका पैसा या बाना वर-वधू लेते हैं। वर-वधू के भाई-बहनों में से कोई सबके नाम लिखकर उनकी दी गई राशि लिखते हैं। व्यवहार उसी प्रकार निभाने के लिये बाना रखने की कहावतें सरल और मजेदार तथा दिल गुदगुदाने वाले रस की फुहारों की तरह आनंदित करते हैं। कुछ मजेदार कहावतें प्रस्तुत हैं-

सेर मेंऽ धाणी, हऊं.....(पति का नाम) की राणी
हजार की साड़ी मंऽ हजार को पदर,
.....का घर मंऽ म्हारी अधार.....
सोन्ना की कड़छी मंऽ जीरा को वधार,
..... जी म्हारा प्राण अधार.....
रेसम की साड़ी, जरी को पल्लो गळा मंऽ गळसणी,

कपाल भरी कंकू नऽ
मांग भरी सेदूंर,..... का ज कारण देखाऊं हऊं गणागऊर
– (गणगौर)

गणेश पूजा के बाद लग्न के दिन घर में चुपचाप वर/वधू को बाना (पैसे) रखते हैं, उसे चोर बाना कहते हैं। बाने में रखी गई अर्थात् प्राप्त राशि वर/वधू वरमाता की गोद में देते हैं। वास्तव में टीका और बाने में मिली राशि पर माता-पिता का अधिकार होता है। संभवतः रिश्तेदार, समाजजन, कुटुंबी माता-पिता को अप्रत्यक्ष रूप से, वर-वधू के माध्यम से ससम्मान आर्थिक योगदान देकर सहयोग करते हैं। उनका आत्म सम्मान भी बना रहे, इस रिवाज का यही उद्देश्य प्रतीत होता है। बाने के पश्चात् वरमाता वर/वधू के ऊपर से लोन (नमक) उतारती है, अर्थात् नजर उतारती है।

बाना-विनायकी

गणेश पूजन के पश्चात् एवं मंडप के कार्यक्रमों के पश्चात् रात्रि में वर/वधू को दूल्हा/दुल्हन के रूप में सजाकर बग्घी-घोड़ा गाड़ी पर वर/वधू को बैठाकर गीत, गाजे-बाजे, नृत्य, रोशनी, आतिशबाजी करते हुये समारोह पूर्वक नगर-भ्रमण करवाया जाता है। स्थान-स्थान पर पुष्प-हारों से विनायकी नेग पैसे-भेंट आदि से वर/वधू का स्वागत लोग करते हैं। इस समय महिलाएँ बन्ना-बन्नी गाते हुए चलती हैं तथा जो नेग देते हैं, उन्हें रस भरी गीतमय गाली देते हुए गाती हैं।

नजर उतारना

सरगस-बाना या विनायकी से लौटने के बाद वरमाता मण्डप में पाट पर वर/वधू को खड़ा करके नमक से नजर उतारती है। वरमाता दोनों हाथ की मुट्ठियों में नमक लेकर ऊपर से नीचे तक सात बार वर/वधू पर से उतारती है। लोटे में पानी लेकर वर/वधू को गोद में बैठाकर बलैयां लेकर मुँह चूमती है और वे वरमाता की गोद में सरगस में मिली राशि डालते हैं।

पूर्वजों को निमंत्रण देना

मंडप प्रतिष्ठा के पश्चात् भोजनादि, ममेरा, बाना, सरगस आदि के पश्चात् रात्रि में वरमाता कुटुंब-परिवार की महिलाओं के साथ ससम्मान पूर्वजों को विवाह में सम्मिलित होने का निमंत्रण देती है, उसे ही रूखड़ी कहते हैं। यह अत्यंत मार्मिक, भावुक एवं कारुणिक क्षण होते हैं। शुभ प्रसंग उपस्थित होने पर अपने आत्मीय, स्नेही पूर्वजों की अनुपस्थिति का दुःख और कमी का अनुभव होना एवं उन्हें याद कर आमंत्रित करने का प्रयास स्वाभाविक है।

इस अवसर पर वरमाता मंडप के सामने सवळ्या (रेशमी धोती) बिछाकर उसके आस-पास कुटुंब परिवार की महिलाओं के साथ दोने में पीले चावल या ज्वार या खनमिट्टी में गेहूँ मिलाकर (हरदा क्षेत्र में) क्रमानुसार पुरुष-महिला पूर्वजों का रूखेड़ी गीत में नामोल्लेख या सम्बोधित करते हुये दाने सवळ्ये पर डालती जाती हैं। आकाश में बहुत ऊँचे उड़कर जाने वाली गीद्धनी के द्वारा पूर्वजों तक संदेश पहुँचाने का आग्रह करती हैं। रूखड़ी का यह गीत अत्यंत करुण और मार्मिक है। इसमें पूर्वज भी गीद्धनी के ही जरिये विवाह में सम्मिलित न हो पाने की मजबूरी और असमर्थता का संदेश भिजवाते हैं। इस अवसर पर अपने प्रियजनों की याद में आँखें भर आना स्वाभाविक है। इस समय मंडप के बाहर सूपे में सीधा सामान अर्थात् कच्ची भोज्य सामग्री-आटा, दाल, चावल, घी, मिर्ची, नमक, गुड़, पापड़ आदि रखे जाते हैं, जिन्हें बाद में किसी को दे दिया जाता है। शुभ अवसर पर पूर्वजों के स्मरण और उनके आशीर्वाद पाने की कामना से ही यह प्रथा प्रचलित है।

वर-वधू का स्नान

बारात के लिये वर निकासी के पूर्व एवं पाणिग्रहण के पूर्व वधू को सुवासिनें या सुहागनें मंगल स्नान करवाती हैं। मंडप में चौक-पाट रखकर सातिये पर कलश रख गणेश सहित आरती रखती हैं। वर-वधू को कंकू तिलक कर हाथ में अक्षत देकर पाट पर बैठाती हैं और उबटन-तेल-हल्दी लगाती हैं। वर-वधू के चारों ओर चार गरम पानी और चार ठंडे पानी भरे कुळ्या (करवे) या मिट्टी के कलश रखती हैं। सुवासिनें तेल-इत्र में पान के टुकड़ों को डुबोकर पाँच-सात सुहागनें वर-वधू के सिर, कंधे, कमर, घुटने और पैरों पर पाँच-पाँच बार तेल लगाती हैं। सभी सुहागनें वर-वधू के चारों ओर रखे करवे पर सूत एवं नाड़ा सात बार लपेटती हैं। करवों में पैसा, सुपारी, धनिये, चने एवं सिंघाड़े

डाले जाते हैं। सुवासिनें एक साथ करवे उठाकर वर-वधू पर डालती हैं। वर-वधू को पहले ही सिखा दिया जाता है कि अचानक गरम-ठंडा पानी एक साथ शरीर पर पड़ने पर मुँह से कोई आवाज न निकालना, अर्थात् भावी जीवन में सुख-दुःख, उन्नति-अवनति, आपद-विपद में विचलित नहीं होना, यही उद्देश्य इसका प्रतीत होता है। करवे उठाकर पानी डालने के साथ ही वर-वधू के आसपास लपेटा गया सूत नाड़ा हाथ में ले लिया जाता है और उससे कंकण बनाती हैं। वर-वधू के अच्छी तरह स्नान कर लेने के पश्चात् रेशमी वस्त्र से मुँह ढांक कर आँखें बंद कर देवी के दर्शन-पूजन के लिये दामाद (जीजा जी) द्वारा ले जाया जाता है। पूजा और नैवेद्य के बाद बहन-बुआएँ उन्हें वस्त्राभूषण पहना कर सजाती हैं। उन्हें हर प्रकार से सुरक्षित रखने, बुरी नजर से बचाने के लिये कटार या चाकू देती हैं, जिसे विवाह सम्पन्न होने तक अपने साथ ही रखने एवं स्वच्छंद और अकेले कहीं भी न जाने की हिदायतें भी दी जाती है। उनको राजा-रानी की तरह सजाया जाता है और मान दिया जाता है।

कांकन दोरा

मंगलस्नान के कूल्यों में लपेटे गये सूत एवं नाड़े को भांज कर इत्र लगाकर तांबे की अँगूठी (पहले तांबे का छेद वाला पैसा लिया जाता था) एवं सात पान, इत्र एवं नहलाने में निकले वर-वधू के बाल सहित सात पान का बीड़ा दो गांठों से कस कर बांधते हैं तथा वर-वधू के दाहिने हाथ में बांधकर दस गठानें कस कर बांधी जाती हैं।

कंकण बनाने के साथ ही नाड़े को चोटी की तरह गूंथकर वादी बनाई जाती है। वरमाता दूल्हे के दाहिने हाथ में बांधती है। वादी में दस गठानें लगाई जाती है। वादी वधू के गले में पाणिग्रहण के पूर्व बांधते हैं। यह देवी का रक्षा सूत्र स्वरूप विवाह निर्विघ्न संपन्न होने के संकल्प के साथ बाँधा जाता है।

वर का सिंगार

बारात ले जाने के लिये वर को उसकी बहनें एवं जीजा जी सजाते हैं। कपड़े, सूट, टोपी/पाग, कटार, मौड़, मोजे-जूते रूमाल आदि वर सिंगार की सारी वस्तुयें, वे ही उनकी ओर से खरीदते हैं और पहना कर तैयार करते हैं। पूरी तरह तैयार करने पर पीला कपड़ा या अंगोछा कमर में बाँधा जाता है और कंकण, वादी बांधी जाती है। मौड़ बांधा जाता है।

वर को पड़छना

तोरण में वर को पाट पर तथा वरमाता कलश एवं गणेश की पूजा कर बारात ले जाने के लिये विदाई पड़छ कर देती है। पड़छना अर्थात् स्पर्श करना, नजर उतारना और कुदृष्टि से बचाना। नजर उतारने के लिये वह पड़छती है तो कुदृष्टि से बचाने के लिये उसकी आँखों में काजल लगाती है।

पड़छने के लिये एक सूपे में मंडप के दिन सुहागनों द्वारा में बनाई गई पाँच रोटियाँ निमाड़ के खंडवा-खरगोन क्षेत्र में दो-दो पान की रोटियाँ तह बनाकर रखी जाती हैं। चावल और राख के पाँच-पाँच मुट्ठे बनाकर रखते हैं। इसके अतिरिक्त रोस्या या कांस घास की जुड़ी लपेट कर रखते हैं। रई (मथानी) मूसल, तकली भी रखी जाती हैं। पूर्ववत् निकटता एवं अप्रत्यक्ष दूरी का आभास कराने वाला स्नेह और कोमलता भरा छीना पारदर्शी पर्दा अर्थात् 'अन्तर पट' (रेशमी वस्त्र) लगा कर माँ अपना सहपल्ले का छोर प्रत्येक वस्तु पर बारी-बारी से लगा कर पाँच-पाँच बार वर के सिर, कान, कंधा, कमर, घुटने और पैरों को स्पर्श करवाती है तथा सभी वस्तुओं को मंडप पर रखते जाते हैं। रोटियों पर चावल-राख के मुट्ठे दोनों हाथों में लेकर हाथ का क्रास बनाकर अर्थात् दाहिने हाथ की वस्तु बाईं ओर तथा बायें हाथ की चीज दाहिनी ओर वर के कंधों से पीछे फेंकती है। दो बार दो-दो रोटियाँ और तीसरी बार में एक रोटी एक हाथ में और दूसरे हाथ की खाली मुट्ठी से फेंकती अर्थात् एक हाथ खाली रहता है और उसकी मुट्ठी पीछे खोलती है। अंत में सूपे से भी पड़छती है। वर के मुँह में मिठाई देती है, काजल लगाकर पैसे न्यौछावर कर गले मिलती है और बलैयां लेकर भीगी आँखों से प्रसन्नतापूर्वक विवाह हेतु विदा करती है। नव जीवन में प्रवेश के आशीष देती है। यह अत्यंत मार्मिक प्रथा है। विदा के क्षण तो सदैव पीड़ा-दायक ही होते हैं, परंतु इस अवसर पर सुखी सपनों एवं अभिलाषाओं की पूर्त्ति के क्षणों के स्वागत हेतु प्रिय भी होते हैं। माँ तोरण से विवाह हेतु पुत्र को विदा करती है। इस प्रथा द्वारा वह अपने स्नेह-प्यार एवं एकाधिकार में से बहू को अपने बेटे पर अपनत्व और अधिकार सौंपकर परिवार को जोड़ती है। तोरण से अकेले विदा

होने वाला पुत्र अब अपनी वधू के साथ तोरण में आयेगा। बहू लाने का सुख और बेटा किसी और का हो जाने की कल्पना माँ को व्याकुल कर देती है, फिर भी माँ स्नेहाशीष सहित हरक कर पड़छते हुये स्वागत करती है, इसीलिये लोक कहावत है-'अब तक तो मांड़ी (माँ) को, अवं लाड़ी (बहू) को। और माँ अपनी सखी से एक लोक गीत द्वारा अपनी इस विचित्र मनोदशा का वर्णन करते हुये कहती है-

'हऊं तो अचरज मन मंऽ नीऽ जाणती सई वो..... '

वरबेड़ा

तोरण से विदा कर दूल्हे को जनवासे में ले जाते समय शुभ-दर्शन एवं मंगलकारक कलश जो जल से भरा एवं फूल-पत्तों और नारियल से सुसज्जित (लोटे पर लोटा) होता है, सिर पर रखकर दूल्हे के सामने शुभ-शकुन हेतु कन्या खड़ी हो जाती है और दूल्हा भी प्रसन्नता पूर्वक उसमें नेग स्वरूप रुपये डालता है। इसी प्रकार बारात जब वधू के द्वार पर पहुँचती है, तब वहाँ भी कन्या वरबेड़ा लेकर खड़ी होती है। दूल्हा उसमें नेग के रुपये डालने के पश्चात् ही मंडप-तोरण की ओर बढ़ पाता है।

जनवासा

दूल्हे को तोरण से विदा कर महिलाएँ बधावे गाते हुये जनवासे में ले जाती हैं। जनवासा अर्थात् कोई भरे-पूरे परिवार में बैठाते हैं, ताकि विश्राम भी हो सके और सभी बाराती एक स्थान पर एकत्रित हो जायें और ले जाने की सभी सामग्री रखी जाने की आश्वस्तता हेतु दूर यात्रा पर निकलने के पूर्व विश्राम एवं निश्चिंतता के लिये जनवासा दिया जाता है।

जनवासे में गादी-बिछायत पर दूल्हे को बैठाकर गुड़-घी के शकुन के पाँच कौर वरमाता खिलाती है। वर की गादी के नीचे पैसा-सुपारी-कंकू-अक्षत शुभेच्छा एवं आभार स्वरूप रखते हैं। शुभ कार्य हेतु दूर प्रस्थान से पूर्व जिस घर में विश्राम एवं स्थान, स्नेह और सम्मान मिला, उसके प्रति आभार व्यक्त कर दूल्हा बारात के साथ प्रस्थान करता है। प्रस्थान से पूर्व वर नारियल फोड़कर उसका पानी वाहन के चक्कों पर डालता है एवं नारियल सबको दिया जाता है। बाबा एवं सभी देवी-देवताओं को प्रणाम कर बारात आगे बढ़ती है।

महिलाएँ जनवासा स्थल से विवाह-मंडप में लौटती हैं और वरमाता तथा कम से कम पाँच सुहागिनें नृत्य करती हैं। वरमाता बर्त्तन में दूध-पानी लेकर सुहागिनों के पैर धुलवाती हैं और धानी, गुड़-बताशे सबको बाँटती है।

ज्वार मात्रा

खणमाटी की मिट्टी में गेहूँ मिलाकर उसे मर्दली और मुख्य द्वार के दोनों ओर रखकर पानी से सींचते हैं, अर्थात् ज्वारे बोये जाते हैं। वर-वधू के मंगल स्नान में उपयोग में आये कुल्या या करवे में पानी भरकर एक के ऊपर एक इस प्रकार द्वार के दोनों ओर चार-चार करवे या कुल्या रखे जाते हैं। ऊपर वाले कुल्या में नाड़ा बांधते हैं। यदि कुल्या न हो तो दो-दो लोटों में पानी भरकर रख देते हैं इन्हें 'कुंभ-कलश' कहते हैं। इसी प्रकार पाणिग्रहण के बाद वधू की विदा के बाद भी कुंभ भरकर रखते हैं। वर/वधू की माता विदा के बाद आकर इसी कुंभ-कलश के पानी से अपनी चीकट की साड़ी के पल्ले के दोनों छोर धोती है, इसे ही चीकट धोना कहते हैं।

रुप्पा खौका

ससुराल पक्ष की ओर से दुल्हन को वस्त्राभूषण, मेवा-मिठाई, फल आदि दिये जाते हैं, जो दोनों पक्षों के लिये गौरव एवं सम्मान का अवसर होता है। उस अवसर पर घराती-बाराती एवं सभी मेहमानों की उत्सुकता एवं खुशी चरम पर होती है। रुप्पा से वर पक्ष की आर्थिक-स्थिति, हैसियत, प्रतिष्ठा, प्रभाव आदि का अनुमान लगाया जाता है।

यद्यपि माता-पिता अपनी लड़की को सुन्दर वस्त्राभूषण से सज्जित कर ही विदा करते हैं, किन्तु वर पक्ष भी उनसे अधिक वस्त्राभूषणों की भेंट, सौंपकर स्नेह-आशीर्वाद सहित उसे अपने परिवार में सम्मिलित करता है। वास्तव में वधू को अपना बनाने के लिये स्नेह, प्रेम, अपनत्त्व और आशीष बहुमूल्य भेंट देकर किया जाता है। प्रियजन से मिलने पर हम आत्मीयता पूर्वक कुछ न कुछ भेंट देते ही हैं। वास्तव में यह स्त्री धन है, जिस पर उसका अधिकार होता है। यह उसका सुरक्षाधन होता है। वधू के भावी जीवन की आर्थिक सुरक्षा और सम्मान के लिये यह प्रथा और लोकाचार प्रचलित है। स्त्री तो स्वभाव से आभूषण प्रिय होती है

और आभूषण उसके सौन्दर्य को द्विगुणित करते हैं। भला कौन अपनी वधू को सुंदर व खुश देखना-दिखाना नहीं चाहता।

रुप्पा खौका या चढ़ावे में दुल्हन के लिये पाँच-सात-नौ-ग्यारह-तेरह-इक्कीस जोड़ी कपड़ों के अतिरिक्त दो जोड़ी शर्ट, दो जोड़ी रूमाल-टावेल-अंगोछे, टोपी आदि तथा वधू के छोटे-भाई-भतीजे-भतीजियों के लिये भी वस्त्र रखे जाते हैं। लहंगे, ब्लाउज, सप्तपदी, चौरी और सुहागन बनाने की हाता-साड़ी, खोल साड़ी (विशेष कीमती बनारसी साड़ी अर्थात् बड़ी साड़ी, छोटी साड़ी, दो जांगड़ या चार चौक की साड़ी, सेन्द्राड़ी-चुड़ा-चुटकी की माड़ी चुनरी आदि विशेष साड़ियाँ, एक मीटर मैरून कपड़ा भी रखते है।) पाँच आभूषण आवश्यक रूप से रखते हैं और आगे अपनी स्थिति अनुरूप।

नारियल की तेरह वाटकियाँ गुड़ सहित, पाँच प्रकार के मेवे पाँच प्रकार के फल तथा पाँच प्रकार की मिठाइयाँ रखी जाती हैं। इनके अतिरिक्त दो लाख के छड़े, काली पोत, दो रंगीन कंघियाँ, नाड़े के दो बंडल, गुड़-सिंघाड़े, चणा-धणा, रुपये-सिक्के, नारियल, सेन्द्राड़ी, लगन टीप, कोरे रंगीन कागज, कंकू-मेण की दो लाल डिब्बियाँ, मेहंदी, चिकसा, इत्र, कागज के मुड़े, श्रृँगार-पेटी, वर की कमर में बाँधा जाने वाला पीला अंगोछा जो गड़जोड़ा गठबंधन के काम में आता है, आदि रखे जाते हैं। बाँस की चार सुसज्जित टोकनियाँ, वधू की चप्पल, लाल कपड़े में सिंघाड़े, एक सिक्का और नारियल बाँध कर रखे जाते हैं। चार बाँस वाली टोकनियों में से एक में वधू के लिये मौड़, दूसरी में सेन्दुणी, लगन टीप, काली पोत, कंघी, कंकू-हल्दी-सिंदूर की डिब्बी, लाख जोड़ी, दोने में सुवासित इत्र, चिकसा, फुलेल और पान के टुकड़े रखे जाते हैं। तीसरी टोकनी में लाल कपड़े में बंधा (सिंघाड़े आदि) सामान रखते हैं एवं चौथी टोकनी में वधू की चप्पलें रखी जाती हैं। बारात के साथ रास्ते में पड़ने वाले मंदिरों में चढ़ाने के लिये कम से कम दस नारियल भी रखे जाते हैं।

रुप्पा चढ़ने के बाद सुवासिने वधू को अंदर लाकर वरमाता की गोद में बैठाती हैं। वरमाता उसे मिठाई खिलाती है, चूमती है, बलैयां लेती है, बेटी और उनके परिवार में शुभ घड़ी जो आई है। इसके बाद परिवार की अन्य वरिष्ठ महिलाएँ उसे गोद में बैठा कर मिठाई खिलाकर आशीष और बधाई देती हैं।

कन्या को पाणिग्रहण के लिये तैयार करने के लिये वर के समान ही सुवासिनें रुप्पा में आये तेल-फुलेल-चिकसा लगाकर चौक पाट पर बैठाकर, कलश-गणेश पूजन कर, चार कुल्यों में गरम पानी और चार कुल्यों में ठंडा पानी भर कर वधू के चारों ओर रखकर कच्चा सूत एवं नाड़ा लपेट कर डाला जाता है। उस समय विचलित होकर मुँह से कोई प्रतिक्रिया प्रकट न करने की पूर्व में शिक्षा दी जाती है। फिर वधू ठीक से स्नान करती है एवं कुल्यों पर से लिये गये सूत और नाड़े को बट कर उसमें तांबे की अँगूठी, सात पान के बीड़े में इत्र तथा वधू के कुछ बाल लपेट कर दो गांठे बाँध दी जाती हैं। वधू के दाहिने हाथ में वरमाता बाँधती है, जिसमें दस गठानें लगाती है। सुवासनियाँ नाड़े से चोटी की तरह गूंथ कर वादी बनाकर वधू के गले में बांधती हैं। बांधने में दस गठानें लगाई जाती हैं।

स्नान के पश्चात् मुँह ढांककर, आँखें बंद की हुई वधू को घर के दामाद देवी या ईरीत के कमरे तक पहुँचाते हैं और आँख खोल देवी और अखंड ज्योत के दर्शन कर, पूजा कर वधू गुड़-घी का भोग लगाकर खाती है एवं साथ में पारिवारिक सदस्य भी रहते हैं। पाणिग्रहण हेतु वधू को मामा घर की दी हुई विशेष साड़ी (जवक्या) पहनायी जाती है। मामा द्वारा दिया गया मंगलसूत्र (कम से कम एक कटोरी दो दाने सोने के) नाड़े में बाँधकर गले में तथा नाक में नथ पहनाई जाती है। अपने घर के कान में टाप्स-झुमकी आदि पहनाई जाती है। यदि इनके अतिरिक्त माता-पिता को कोई और आभूषण दिये जाने हैं तो वे भी पहनाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त रुप्पा में ससुराल से आई काली पोत और लाख का छड़ा पहनाया जाता है। मोड़ बाँधा जाता है।

कन्यादान या पाणिग्रहण के लिये पिता सहपत्नी गठजोड़े सहित मंडप में पश्चिम मुख होकर बैठते हैं एवं परम्परा अनुसार उनके पीछे दादा-दादी, ताऊ-ताई, काका-काकी, मामा-मामी, भाई-भौजाई आदि कन्यादान का व्रत रखे हुये सभी बैठते हैं। कन्यादान के व्रत के फलाहार की व्यवस्था मामा पक्ष से होती है। पुराने समय में उस दिन की पंगत बारातियों के सम्मान में मामा-नाना की ओर से होती थी, जिसे कुँवारी की पंगत कहते थे। वास्तव में मामा-नाना अपने बेटी दामाद को ससम्मान विवाह कार्य में सहयोग एवं योगदान देते थे। कुँवारी की पंगत में बाराती, घराती एवं रिश्तेदार सम्बन्धियों को भी आमंत्रित किया जाता था।

आजकल यह रिवाज लगभग समाप्त हो गया है। समय और आवश्यकतानुसार सहयोग का स्वरूप बदल गया है।

बारात का स्वागत

जैसे ही बारात विवाह-समारोह स्थल पर पहुँचती है, वधू पक्ष के पुरोहित घोड़ी पर सवार दूल्हे को कंकू-अक्षत का टीका लगाकर स्वागत करते हैं। वर सामने खड़ी कन्या के मंगल कलश वरबेड़ा में रूपये डालता है और फिर सभी बारातियों का भी स्वागत किया जाता है। वधू के पिता एवं परिवार, कुटुंबीजन, आत्मीय रिश्तेदार बारातियों का पुष्प मालाएँ पहनाकर गले मिलकर स्वागत करते हैं। पहले महिलाओं के बारात में जाने का रिवाज नहीं था, किन्तु कुँवारी बहनें-भानजियाँ-मौसी-बुआएँ जा सकती थीं। परन्तु आजकल इस नियम में शिथिलता आ गई है। अत: बारातियों में महिलाओं का स्वागत, विवाह घर की महिलाएँ करती हैं। आरती लेकर सुहागनें कंकू-हल्दी-पुष्पमाला, पुष्प गुच्छ-इत्र-गुलाब जल से स्वागत कर गले मिलती हैं। समधनें परस्पर गुड़ भरी खोपरे की वाटकी का आदान-प्रदान करती हैं। आवभगत पूर्वक ससम्मान महिलाओं को लाकर यथा स्थान सादर बैठाती हैं। इस प्रकार मिला भेंटी का कार्य सम्पन्न होता है।

द्वार पूजा

विवाह स्थल के प्रवेश द्वार पर कन्या के 'वरबेड़ा' मंगल कलश में वर द्वारा नेग डालने पर वरमाता अन्य महिलाओं सहित मंगल सूचक आरती उतार कर स्वागत करती है।

अतिथि सत्कार

विवाह स्थल पर सभी बारातियों का मिष्ठान एवं विभिन्न रूचिकर पेय पदार्थों और व्यंजनों से अतिथि-सत्कार किया जाता है। दूध-पुष्प मिश्रित पवित्र जल से वधू के पिता एवं अन्य परिवार जनों द्वारा सभी बारातियों के पैर धुलवाये जाते हैं, ताकि उनकी यात्रा की थकान दूर हो। सेवा, आदर के प्रतीक स्वरूप यह परंपरा परस्पर प्रेम-भाव को बढ़ाने और दो परिवारों को निकट लाने में सहयोगी है।

पड़छना

दूल्हा जब लग्न स्थल पर पहुँचता है तो तोरण में खड़े होने पर तोरण मण्डप के सामने कमरे में बैठी वधू को दूल्हे की झलक दिखाकर मिठाई या शक्कर खाने के लिये दी जाती है। यह शुभ दर्शन मानों वधू द्वारा हृदय से स्वागत एवं शुभ-घड़ी, शुभ-दर्शन के आनन्द की अभिव्यक्ति है। वर की माता तोरण में खड़े वर का स्वागत पड़छकर करती है। सूपे में रखी पड़छने की सामग्रियों से उसी तरह वधू की माता पड़छती है जैसे बारात लाने के पूर्व वर की माता ने तोरण में पड़छकर विदा दी थी। वधू की माता वर को मिठाई खिलाकर वर के हाथ की वादी खोलकर गणेश जी के समक्ष रखती है। पड़छन सामग्री मण्डप पर रखी जाती है। वधू की माता पीले अंगोछे या सोने की चेन या आभूषण को वर के कमर या गले में लगाकर तोरण से अंदर लाती है और वर जूते उतार कर पूर्वाभिमुख होकर निश्चित स्थान पर बैठता है। इस अवसर पर हास-परिहास और आनंद हेतु दूल्हे के जूतों को चुराने की एक रूढ़ि प्रचलित है। इस अवसर पर वर के भाई, दोस्त और वधू की बहन, सहेलियों व छोटे भाईयों के बीच एक गुदगुदा देने वाला सुखानन्द युद्ध चलता है। बड़ी सक्रियता, सतर्कता, फुर्ती, चौकन्नेपन की परीक्षा ही होती है। अंत में स्वाभाविक रूप से वर के साले-सालियों की ही विजय होती है। वड़ीलों और वरिष्ठों के हस्तक्षेप से क्योंकि वर से छोटे साले-सालियों को नेग दिलवाने में उन्हें भी आनन्द आता है और यह वर पक्ष की शान और प्रतिष्ठा के प्रदर्शन का अवसर है। भला वर पक्ष की हैसियत कम तो नहीं। मण्डप में चौक-सातिया पूर कर कलश, गणेश, पैसा-सुपारी, गौर रखकर मामा द्वारा दी गई तांबे/पीतल की गंगाल में दूध-पुष्प मिश्रित पवित्र नदियों का जल भर नाड़ा बाँध कर वर-वधू के बीच चौक पर रखी जाती है, जिसमें पाणिग्रहण संस्कार होता है। पड़छने का अर्थ है स्पर्श करना, नजर उतारना एवं कुदृष्टि से बचाना, साथ ही जीवन में सीख का संदेश भी मिलता है कि सूपे की तरह गुण ग्रहण कर थोथी या व्यर्थ बातों को छोड़कर पड़छने की अन्य चीजों के गुण-धर्म के अनुरूप आचरण बनायें।

मधुपर्क

वर-वधू सद्गृहस्थ बनने जा रहे हैं। अत: वर को पूज्यनीय मानकर वधू के पिता वर के पैर धोकर गंध, कंकू-अक्षत, पुष्प रखकर पद प्रक्षालन करते हैं एवं मधुपर्क का सेवन करवाते हैं, जिसमें दही, शहद एवं घी मिश्रित होता है। वर के आरोग्य एवं

शक्तिवर्धन की कामना वधू के पिता ईश्वर से करते हैं। परिवार एवं कुटुंबीजन भी पद प्रक्षालन कर मधुपर्क का सेवन करवाते हैं। वधू के पिता वर को कंकू अक्षत लगाकर वस्त्र, सवळ्या (रेशमी धोती), शाल व स्थिति अनुसार आभूषणादि भेंट देते है, साथ ही रुपया-नारियल भी दिया जाता है।

पाणिग्रहण

वर एवं वधू के बीच रेशमी वस्त्र का अन्तरपट लगाया जाता है, ताकि पाणिग्रहण के पश्चात् ही वर-वधू एक-दूसरे को शुभ मुहूर्त में देखें और नेत्रों द्वारा वे एक दूसरे को स्वीकार कर वरण करें। एक कोमल झीने पर्दे के एक ओर पिता की गोद में बैठी कन्या अगले पल पर्दे के उस ओर बैठे वर की सदा के लिये होगी और माता-पिता के लिये पराई। पाणिग्रहण संस्कार के लिये उसे माता-पिता के बीच बैठाया जाता है। पुराने समय में छोटी आयु में जब विवाह होते थे, तो कन्या को पिता की गोद में बैठाया जाता था। हरदा क्षेत्र में कन्या की विवाहित बुआ तेल का बड़ा दीया जलाकर जिसे खूँट का दीया कहते हैं, कन्या के दाहिनी ओर हाथ में लेकर बैठती है। कन्या गणेश, कलश, पैसा-सुपारी, गौर अर्थात् देवी की पूजा करती है। वर एवं वधू की हथेलियों में कंकू लगाते हैं एवं सवा रूपये के सिक्के रखते हैं। कहीं-कहीं हल्दी से हाथ पीले कर कंकू रखा जाता है।

पाणिग्रहण संस्कार का शुभारम्भ मंगलाष्टक के साथ प्रारंभ होता है। पण्डित एवं वर-वधू पक्ष के कुटुंबीजन, आत्मीयजन वर-वधू के मंगलमय सुखद भविष्य की कामना मंगलाष्टक द्वारा ईश्वर से करते हैं। पाणिग्रहण का निश्चित मुहूर्त होता है, तब तक मंगलाष्टक बोले जाते हैं।

शुभ लग्न की शुभ घड़ी उपस्थित होते ही अन्तरपट हटा देते हैं एवं पुरोहित वर-वधू की हथेली लगाते हैं, अर्थात् वर के हाथ में वधू का हाथ दिया जाता है। पिता-माता जो कन्या का हाथ थामें हुये थे, पल भर में अपने हृदय के टुकड़े अर्थात् कन्या वर को सौंप देते हैं और अपनी पुत्री को अपनी गोद से नीचे उतार देते हैं। उपस्थित सभी जन तालियाँ बजाकर वर-वधू का स्वागत करते हुये उनकी प्रसन्नता में सम्मिलित होते हैं, बाजे बजते हैं। उपस्थित जन वर-वधू पर अक्षत एवं पुष्प वर्षा करते हैं। पुरोहित वर-वधू का हाथ पानी भरी गंगाल पर रखते हैं। कन्या के माता-पिता गंगाल का पानी वधू के हाथ पर डालते हैं एवं वर-वधू के हाथों पर कंकू, हल्दी, अक्षत और सिक्के या पैसे रखते हैं। इसके बाद कन्यादान करने वाले सभी सम्बन्धी बारी-बारी से वर-वधू को टीका लगाकर हाथों पर पानी, कंकू-हल्दी, अक्षत व पैसे डालते हैं और गंगाल का जल छोड़ते हैं। जिस प्रकार पवित्र गंगा-जमुना-सरस्वती-नर्मदा का जल मिला देने पर एक हो जाता है, उसी प्रकार वर-वधू का हाथ मिलकर उन्हें एक किया जाता है। जैसे उन नदियों का जल अलग नहीं किया जा सकता, वैसे ही ये दो हृदय कभी विलग नहीं होंगे। यही भावना, कामना व आशीर्वाद सभी उपस्थित जनों के होंगे। लग्न या पाणिग्रहण के पश्चात् वधू माँ दीपक लेकर बैठी वधू की बुआ को कंकू लगाकर धन्यवाद, आभार के प्रतीक स्वरूप सम्मानित करती है। माता-पिता उस स्थान से उठ जाते हैं।

ग्रंथिबंधन

वर के दुपट्टे का एक छोर एवं वधू की ओढ़नी के पल्लू से गठजोड़ा पण्डित जी मंत्र बोलते हुये, पैसा-सुपारी, कंकू-अक्षत रखकर गांठ बांधते हैं। इस समय में पण्डित जी मंत्र बोलते हैं।

गठबन्धन द्वारा वर-वधू को संदेश दिया जाता है कि अब आप दोनों संयुक्त रूप से गृहस्थ धर्म का निर्वाह मिल-जुलकर करें, इसी में वैवाहिक जीवन की सार्थकता है।

जयमाला

लग्न संस्कार सम्पन्न होने के पश्चात् वर-वधू एक दूसरे को उपस्थित मेहमानों, देवी-देवताओं, सत्पुरुषों, कुटुंबीजनों एवं माता-पिता के समक्ष पुष्पहार पहनाते हैं, अर्थात् एक-दूसरे को स्वीकारते हुये परस्पर सम्मान व्यक्त करते हैं।

गोत्रोच्चार

इसके पश्चात् पण्डित जी वर एवं वधू दोनों पक्षों को गोत्रोच्चार के लिये बुलवाते हैं और मण्डप में वर पक्ष के पीछे एवं वधू पक्ष के पीछे पीली ज्वार या चावल अथवा गेहूँ लेकर खड़े होते हैं। पण्डित जी सभी को कंकू का टीका लगाते हैं। गोत्रोच्चार के पूर्व संकल्प किया जाता है। गोत्र उच्चारण के समय वर पक्ष वर पर

तथा वधू पक्ष वधू पर अक्षत डालते हैं। दोनों ओर के व्यक्ति तीन बार गोत्र, वेद, शाखा, प्रवर, प्रपितामह, पितामह तथा पिता के नाम का उच्चारण कर वर-वधू का नाम कहते जाते हैं।

गोत्र का उच्चारण तीन बार वर-वधू पक्ष द्वारा किया जाता है। गोत्रोच्चार के द्वारा दोनों पक्ष एक दूसरे के वंशजों से परिचित होते हैं तथा वर्जित सगोत्रीय विवाह होने की त्रुटि से बच जाते हैं। स्वास्थ्य एवं संतानोत्पत्ति की दृष्टि से हमारे यहाँ सगोत्रीय विवाह वर्जित हैं। इस विधि द्वारा कन्या को वर पक्ष अपने गोत्र-परिवार-कुटुंब में सम्मिलित कर अपना बनाते हैं।

इसके पश्चात् पुरोहित जी सभी को आशीर्वाद देते हैं। दोनों ओर के दो-दो दामादों को बैठाकर वर-वधू को तिलक करने के लिये कहा जाता है। वर पक्ष के दामाद वर-वधू के मौड़ से रुपये छुआकर आरती में डालते हैं और दोनों पक्षों के दामाद स्नेह पूर्वक भेंट-मिलाप करते हैं।

पुरोहित वर-वधू के हाथ छुड़ाते हैं और उन्हें नेग दिया जाता है। इसके बाद सुवासिनें वर-वधू को कुलदेवी या ईरीत देवी के दर्शन के लिये माता के कमरे में ले जाती हैं। दर्शन के पश्चात् वर वहाँ पैसा-सुपारी रखता है।

सगुण

वर-वधू को वहाँ कमरे में आमने-सामने बैठा दिया जाता है और गुड़-घी-भात से शकुन करवाया जाता है। पहले वधू वर को पाँच कौर खिलाती है और फिर वर वधू को पाँच कौर खिलाता है। लाल कपड़े में रुप्पा में आये सिंघाड़े खिलवाये जाते हैं। यह रीति मनोरंजक , वर-वधू की निकटता, परिचय और अपनत्व एवं परस्पर आकर्षण-जिज्ञासा की संतुष्टि के लिए प्रतीत होती है। विवाह कार्यक्रम की थकान दूर करने का उपाय है। ये जीवन के मधुर क्षण मन-मस्तिष्क में अमिट रूप से अंकित होकर पति-पत्नी में प्रेम बढ़ाकर सुखी दाम्पत्य की सुदृढ़ नींव रखते हैं। खेल में वधू के घर वर को और वर के घर वधू जिताया जाता है। हास-परिहास आनंद के लिये वर-वधू एक दूसरे को पाँच कौर खिलाते समय सुवासिनें बाधा खड़ी करती है और वर-वधू उन बाधाओं से बचते हुये अपने लक्ष्य प्राप्त कर ही लेते हैं। इन खेलों से जीवन को सुख-शांतिमय बनाने की सीख दी जाती है। व्यवस्थित तरीके से गृहस्थी चलाना, आय-व्यय का संतुलन बनाना, परस्पर प्रेम भाव रख सहमति से घर की समस्याओं को समझ कार्य करना, एक दूसरे को महत्त्व और सम्मान देना, सेवा करना जैसे संदेश इन खेलों द्वारा दिये जाते हैं।

सगुण के पश्चात् वधू की माता वर को चाँदी की सिलक अर्थात् दाँत-कान खोरनी देती है। उठते समय वर आसन के नीचे पैसा-सुपारी रखता है। कुछ समय के लिये वर-वधू को विवाह के कार्यक्रमों से विश्राम दिया जाता है। भोजनादि और आये हुये अतिथियों में मिल-जुलकर पुनः वर-वधू चौरी, सप्तपदी, फेरे आदि कार्यों के लिये उपस्थित होते हैं। मंडप में तब तक सुवासिन से आवश्यक व्यवस्था करवाकर पंडित जी चौरी फेरे की तैयारी करवा लेते हैं।

चौरी या सप्तपदी

चौरी नाम से ही स्पष्ट है- चार फेरे। चौरी में पहले गणेश-पूजन, कलश-पूजन, षोडश-पूजन, नवग्रह-पूजन कराया जाता है। अग्नि स्थापना, अग्नि-पूजन, वराहुति, गणेश, गौरी व सभी देवताओं का आवाहन, लाजाहोम, वर-वधू प्रतिज्ञा, ध्रुव-दर्शन, स्वाकृति होता है।

अग्निकुंड के दक्षिण भाग में ब्राह्मण के लिये शुद्ध कुश का आसन और पात्र में जल भरकर रखा जाता है। हवन का सामान-घी, आम की लकड़ी, गंध, अक्षत, कपूर, पान। एक पान पर सुपारी रखकर कंकू , चंदन, चावल, पुष्प, दक्षिणा रखते हैं। गणेश, कलश, मातृका, गृहों की स्थापना की जाती है। सूपा, चावल, शमी के पत्ते, पत्थर-अश्मारोहण, पत्तल पर चावल की सात ढेरियाँ जमा कर रखते हैं एवं उस पर पत्थर।

हवन कुंड में प्रज्ज्वलित अग्नि के चारों ओर सात फेरे फिरते समय वर-वधू आदर्श दाम्पत्य जीवन निर्वाह का संकल्प लेते हैं। अग्नि को साक्षी रखकर सात फेरे फिरते हुये जो वचन लिये जाते हैं, वर-वधू जो प्रतिज्ञायें लेते हैं, उनका वर-वधू दोनों पर अमिट प्रभाव आजीवन परस्पर बंधनबद्ध होने का अनुभव करते हैं। धार्मिक पृष्ठभूमि, देवताओं की साक्षी, अग्निदेव के सान्निध्य, स्वजन एवं सम्बन्धियों की उपस्थिति एवं पुरोहित द्वारा

सम्पन्न कराये जाने से वर-वधू को सुख-दु:ख में सदैव साथ रहने की प्रेरणा मिलती है।

किसी पात्र या वेदी पर अग्नि, कपूर जलाकर हवन कुंड में अग्नि स्थापित की जाती है। आम की सूखी लकड़ी और कपूर रखकर अग्नि प्रज्ज्वलित की जाती है। पुरोहित द्वारा समस्त देवाताओं के आवाहन, पूजन एवं हवन में आहुतियों के पश्चात् फेरों का कार्य प्रारंभ होता है। कुछ क्षेत्रों में प्रथम चार परिक्रमाओं में वधू आगे रहती है और वर पीछे। शेष तीन में वर आगे एवं वधू पीछे रहती है।

एक सूपे में चावल, धान रखी जाती है। शमी के पत्ते रखे जाते हैं। वधू का भाई सूपा लेकर खड़ा रहता है। सूपे में चावल के चार भाग रखे होते हैं। उसमें से एक भाग बहिन के हाथ में भाई देता है। वधू पुरोहित के मंत्रों द्वारा एक ही भाग की तीन आहुतियाँ देती है।

सूपे में चार भाग धान के करते हैं। तीन बार कन्या आगे रहती है तथा एक बार फेरे के समय वर आगे रहता है। कन्या अपने हाथ के धान को तीन बार में तीन आहुतियाँ मंत्रोच्चार के साथ हवन कुंड में डालती है। इस प्रकार नौ आहुतियाँ तीन फेरों में तथा अंत में वर के साथ पूर्ण आहुति डालते हैं। इस प्रकार कुल दस आहुतियाँ तीन फेरों में तथा अंत में वर के साथ पूर्ण आहुति डालते हैं। इस प्रकार कुल दस आहुतियाँ प्रचलित हैं। निमाड़ में हरदा क्षेत्र में भी कुल चार फेरे होते हैं, जिसमें आगे दो फेरे में कन्या तथा दो आखिरी फेरों में वर आगे रहता है। कन्या का भाई सूपे में धान, सुपारी, नाड़े का बण्डल, सेन्द्राड़ी तथा नारियल रखे होता है। (ये सभी सामग्री ससुराल से सिंघाड़े के साथ बंध कर आती है, किन्तु धानी या धान मायके की होती है।)

कन्या के हाथ में पंडित सूपे में से धान देते हैं, उसके ऊपर पैसा-सुपारी रखते हैं। वर अपना दाहिना हाथ कन्या के हाथ के नीचे रखता है और फेरा फिरते हैं। फेरा पूरा होने पर पंडित पैसा-सुपारी उठा लेते हैं एवं वर-वधू मिलकर धान की आहुति डालते हैं। इसी प्रकार दूसरे फेरे में नाड़े का बण्डल, तीसरे में सेन्द्राड़ी तथा चौथे में नारियल रखते हैं। इस प्रकार फेरे पूरे होते हैं।

लाजाहोम विधि में खीले युक्त साल की धानी के प्रयोग द्वारा कन्या को शिक्षा मिलती है कि जिस प्रकार साल के बीज जिस स्थान पर बोये जाते हैं, उनके पौधे उत्पन्न होते हैं फिर उन तैयार पौधों को उखाड़ कर, दूसरे स्थान पर रोपित करने पर ही धान की फसल से साल रूपी बीज-अनाज उत्पन्न होता है। उसी प्रकार कन्या का जन्म माता-पिता के यहाँ होता है, किन्तु विवाहोपरान्त पति कुल में जाने पर सन्तति उत्पन्न होती है, अर्थात् वह फलती-फूलती है।

लाजाहोम के अंतर्गत भाई का कार्य यह संदेश देना है कि गृहस्थाश्रम धर्म का पालन ही अब बहन का कर्त्तव्य है। पिता के उत्तरदायित्व को बहिन के ससुराल जाने पर भाई सम्भालेगा। वह यह बोध कराता है कि जब भी मायके आओगी, मैं तुम्हारे प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन करूँगा। लाजाहोम विवाह की अत्यन्त प्रमुख संस्कार विधि है। लाजाहोम की आहुतियाँ डालते समय वर-वधू कामना करते हैं। वधू कामना करती है- पिता कुल से दूर होने पर सदा पति कुल में सम्मान से रहूँ। मेरा पति दीर्घायु हो और हम सदा धन-धान्य से सम्पन्न रहें। हम पति-पत्नी में परस्पर दृढ़ अनुराग रहे और पति कामना करता है कि मेरी पत्नी के साथ सारा जीवन सुख-शान्ति एवं उन्नतिमय हो।

शिलारोहण

सप्तपदी में पत्तल पर चावल की सात ढेरियाँ रखी जाती हैं, ऊपर पत्थर रखते हैं। उन ढेरियों की पूजा की जाती है एवं हर फेरे के बाद कन्या उन पर पैर रखती है और वधू के पैर चावल पर से उठाते हैं। वर वधू के दाहिने पैर का अँगूठा पकड़ इन ढेरियों को हटाता है, अर्थात् मुसीबतों के सात पहाड़ पार कर परस्पर सहयोग, सहायता से जीवन-संग्राम को जीतते हैं।

शिलारोहण के इस कार्य का सन्देश या अभिप्राय यह है कि पति-पत्नी से कहता है कि गृहस्थाश्रम धर्म पालन में शिलावत दृढ़ रहना, अपने कर्त्तव्य से विचलित न होना। पति-पत्नी द्वारा ली गई प्रतिज्ञाएँ पत्थर की लकीर की तरह अमिट रहेगी और पति-पत्नी

सप्तपदी में सन्देश है कि पति-पत्नी मिलकर कार्य करते हुये परस्पर उचित एवं न्याय संगत योगदान करें, क्योंकि अकेले पुरुष या अकेली स्त्री गृहस्थी के कार्यों को संपादित नहीं कर सकते।

वर-वधू की प्रतिज्ञाएँ

प्रतिज्ञा के समय वर-वधू के हाथ में पुष्प, अक्षत एवं जल रखते हैं। वधू से पाँच प्रतिज्ञाएँ करवाने के पश्चात् उसे वामांग बैठाते हैं और वर से सात प्रतिज्ञाएँ करवाई जाती हैं।

वधू

1. अपने पति की अर्द्धांगिनी बनकर नये जीवन की सृष्टि करूँगी।
2. पति-परिवारजनों को अपना अभिन्न अंग मानकर सभी के साथ शिष्टतापूर्वक एवं मधुर, कोमल व्यवहार रखूँगी एवं उदारतापूर्वक सेवा करूँगी।
3. मितव्ययी बनकर गृहस्थी का संचालन करूँगी एवं अनुशासित रहकर सद्गृहस्थ के धर्म का पालन करूँगी।
4. वधू जो पति के पूज्य एवं श्रद्धापात्र हैं, उनकी सम्मान पूर्वक सेवा करूँगी।
5. पति के प्रति श्रद्धाभाव रखते हुये सेवा एवं पतिव्रत धर्म का पालन करूँगी। कभी पति का अपमान नहीं करूँगी, ना ही उन्हें अपमानित होने दूँगी।

वर

1. आज से ही मैं पत्नी को अर्द्धांगिनी घोषित करता हूँ। उसके साथ अपने व्यक्तित्व को मिलाकर एक नये जीवन की सृष्टि करूँगा। अपने शरीर के अंगों की तरह अपनी धर्मपत्नी का ध्यान रखूँगा।
2. मैं आज से ही पत्नी को गृहलक्ष्मी का अधिकार सौंपता हूँ एवं उसके परामर्श को महत्त्व दूँगा।
3. मैं पत्नी का मित्र बनकर रहूँगा और पूरा-पूरा स्नेह दूँगा। इस वचन का पालन पूर्ण निष्ठा एवं सत्य के आधार पर करूँगा।
4. पत्नी के लिये जिस प्रकार पतिव्रत धर्म पालन की मर्यादा कही गई है, उसी प्रकार पत्नीव्रत धर्म का चिंतन और आचरण में दृढ़ता से पालन करूँगा।
5. गृहकार्य व्यवस्था में धर्मपत्नी को प्रधानता दूँगा एवं आय-व्यय का क्रम उसकी सहमति से करूँगा।
6. देवताओं, अग्नि एवं सत्पुरुषों की साक्षी में वचन देता हूँ, पत्नी के प्रति सहिष्णु और मधुरभाषी बन श्रेष्ठ व्यवहार करूँगा।
7. पत्नी की असमर्थता को देखते हुये भी अपने कर्त्तव्य का पालन करूँगा। मधुर प्रेमयुक्त चर्चा, सद्व्यवहार तथा दृढ़ पत्नीव्रत धर्म पालन का वचन देता हूँ।

सप्तपदी एवं वर-वधू की प्रतिज्ञाओं के बाद वधू को वामांग अर्थात् वर के बायें हाथ की ओर बैठाते हैं। इसका आशय है कि अब गृहस्थाश्रम धर्म के पालन में प्रथम स्थान पत्नी को दिया जाता है। तभी तो देवी-देवताओं के भी नाम लक्ष्मी-नारायण, उमा-महेश, सीता-राम, राधा-कृष्ण इस प्रकार लिया जाता है। पति वास्तव में गृहस्थी के अधिकार का पत्नी को हस्तांतरण करता है।

यदि सूर्यास्त के पूर्व विवाह संस्कार सम्पन्न हो जाता है तो वर-वधू को सूर्य के दर्शन इस उद्देश्य से कराये जाते हैं कि जीवन में सूर्य के समान आगे बढ़ने, जीवन उद्देश्यों को सूर्य की तरह सबसे ऊँचा रखें एवं सूर्य की तरह नियमित एवं समय के पाबंद रहें।

विवाह पश्चात् उत्तर दिशा में ध्रुव तारे के दर्शन करवाये जाते हैं, ताकि वे ध्रुव की तरह अपने आदर्शों पर अटल रहें, उनका दाम्पत्य जीवन अखंड रहे।

अरुन्धती दर्शन के द्वारा यह आश्वासन पत्नी देती है कि जिस तरह वशिष्ट नक्षत्र के सन्निकट होते हुये भी उनका मार्ग अवरुद्ध नहीं करती, वैसे ही पत्नी भी मनसा-वाचा-कर्मणा पति की सहयोगिनी रहेगी एवं कार्य में बाधा नहीं बनेगी।

वर सिक्के या सोने की अँगूठी से वधू की माँग कंकू या सिंदूर से भरता है और कामना करता है कि वधू सदैव सौभाग्यवती रहे एवं सदैव पत्नी को श्रृँगारित रखेगा और उसका सौभाग्य बढ़ायेगा ही।

वधू वर के मस्तक पर मंगल सूचक कंकू का तिलक इस

आशय से करती है कि वह सदैव पति का सम्मान करेगी एवं पति के गौरव में वृद्धि करने के लिये तत्पर एवं सन्नद्ध रहेगी।

वधू के माता-पिता मंगल कलश का जल वर-वधू के मस्तक पर आशीर्वाद स्वरूप छिड़कते हैं। कामना करते हैं कि विवाह के अवसर पर जो संस्कारों के बीज रोपित किये गये हैं, वे पल्लवित, पुष्पित होकर वर-वधू का जीवन कल्याणप्रद एवं सफल हों।

वर-वधू एक दूसरे के हृदय को अपनी हथेली से स्पर्श करते हैं। इसका आशय है कि वर-वधू का हृदय-पटल कोरे कागज की तरह है, जिस पर विवाह संस्कार सम्बन्धी विधियाँ एवं प्रतिज्ञाएँ अंकित हो गई हैं। उनसे वे सहमत हैं और जीवनभर उनका पालन करेंगे। इस बात के लिये मानों विवाह की रजिस्ट्री पर अँगूठे नहीं, बल्कि सम्पूर्ण हथेली की छाप रूपी हस्ताक्षर कर रहे हों।

स्वाष्टिकृत होम

अशुद्धता के प्रति प्रायश्चित स्वरूप होम करवाया जाता है, जिसमें वर दक्षिणांग बैठकर करता है। इसके अंतर्गत मिष्ठान्न की पाँच आहुतियाँ दी जाती हैं।

इसके पश्चात् वर पक्ष के दो दामाद बड़ी साड़ी अर्थात् विशिष्ट सी बनारसी साड़ी लेकर आते हैं और वधू को देते हैं। इसी साड़ी में विदा होती है। रुप्पा में आई लाख की चूड़ियाँ, काली पोत, कंकू-हल्दी आदि सौभाग्य सामग्री पल्लव में रख वधू विदा होकर ससुराल जाती है।

पाँव पखलाई

मंडप में वर-वधू को पूर्वाभिमुख बैठाकर गणेश, कलश पूजन कर वर को वस्त्र एवं साथ में रूपये-नारियल दिया जाता है। पिता घर की काँसे की थाली में या वाटकी में दूल्हे के दाहिने पैर का अंगूठा तथा वधू के दोनों पैरों के अंगूठे रखकर पानी, हल्दी, कंकू से पूजा कर सभी बड़े एवं अन्य रिश्तेदार अपनी इच्छा, सामर्थ्यानुसार उपहार भेंट में देते हैं। उसका आचमन वर-वधू को पूज्य मानकर करते हैं।

इस रीति से भी परिवारजन एवं रिश्तेदार नव-दम्पत्ति की गृहस्थी जमाने में योगदान देते हैं और अपने सामाजिक कर्त्तव्य का पालन करते हैं।

हाता साड़ी

वर-वधू के स्थान पर वर पक्ष के दो दामाद एवं वधू पक्ष के दो दामाद बैठाये जाते हैं। एक थाली में हल्दी घोलकर रखी जाती है। वधू गणेश एवं कलश, पैसा-सुपारी, गौर की पूजा कर चारों दामादों को तिलक लगाती है। वर हल्दी की थाली पकड़े रहता है, दामादों की पीठ पर जवक्या डाल दिया जाता है वधू दामादों की पीठ पर हल्दी के चार एवं सिर पर एक इस प्रकार पाँच-पाँच हाथे या हथेलियों के छापे लगाती है और हल्दी के हाथे और कंकू की टिपकियाँ लगाती है। पुरोहित जी दामादों के हाथों में गुड़ व सिक्का देते हैं, जिसे वे वधू-वर की पीठ पर व सिर पर कुल पाँच हाथे (हथेलियों के छापे) देती है और वर-वधू को गुड़ देता है। इस रीति-विधि के बाद वधू को सुवाय या सुवासिनी होने का सौभाग्य मिलता है।

सुहाग मांगना

बारात ले जाने के पूर्व जिस प्रकार वर के यहाँ गवरनी (सुहागनें) मंडप में भोजन करती हैं, उसी प्रकार वधू की विदा के पूर्व मंडप में गवरनी जीमने या 'सुहागभात' मांगने का कार्यक्रम होता है। वधू की माता ईरीत के पास से घी की धार देकर मंडप में अपने दाहिने हाथ की तरफ से घी लाकर बिना घी की धार टूटे सभी पत्तलों के गुड़भात पर दो बार डालती है। वधू की माँ बीच की दोहरी पत्तल उठाकर वधू के हाथों पर रखकर उसकी कमर के दोनों ओर से अपने हाथ निकालकर वधू के हाथ के नीचे रखकर पत्तल पकड़ने व सुहागभात लेने में सहयोग करती है। दोनों प्रत्येक सुहागन के पास जाकर कहती हैं- 'सुहागवन्ती सुहाग द्यो' और सुहागनें गुड़-घी-भात को मिलाकर- 'सुहागवन्ती सुहाग ल्यो' कहते हुये पाँच-पाँच कौर वधू की पत्तल में देती हैं। माँ-बेटी एक दूसरे को पाँच-पाँच कौर खिलाती हैं तथा साथ में सभी सुहागनें अपनी पत्तलों का भात खाती हैं। अंत में सभी पत्तलें एकत्रित कर मंडप पर रख दी जाती हैं। इसके बाद वधू घर के अंदर नहीं जाती। इसके तत्काल बाद अंबा सींचने का कार्यक्रम होकर विदाई होती है।

समाज के सहयोग से ही वधू को सुहाग मिला है, अत: वह समाज की ऋणी एवं आभारी है। उसे मांगकर जीवन का सुख मिलता है, बदले में उसे भी इस उपकार का ध्यान और मान देकर समाज सहयोग और उन्नति के कार्यों में योगदान देना चाहिये। यही इस रिवाज का संदेश है।

अंबा सींचना

आम्र सिंचन या 'अम्बा सींचना' अत्यंत मार्मिक एवं महत्त्वपूर्ण रीति है। प्रतीकात्मक रूप से यह विधि वर-वधू एवं दोनों पक्षों के सुख-समृद्धि की एवं शुभ मंगल-भावना व्यक्त करती है। साथ ही विवाह की इन लौकिक रीतियों के पश्चात् विदा के मार्मिक क्षणों की सनातन रीति का पालन किया जाता है। आमवृक्ष घना, छायादार, सुखद, शीतलता, सघनता, गहराई, रस, आनंद एवं पवित्रता, वंश वृद्धि तथा दीर्घायु का प्रतीक है। यह मनुष्य जीवन के लिये अत्यन्त लाभदायक है, अत: उसे शुभ की प्रतिष्ठा प्राप्त है। हमारी संस्कृति में प्रकृति के विभिन्न उपादानों को महत्त्व एवं मान-सम्मान दिया गया है। जीवन के प्रत्येक कार्य और पल में प्रकृति हमारे साथ होती है।

मंडप में मंगल कलशों पर, विवाह घर के दरवाजे के दोनों ओर एवं मर्दली तथा वधू को दिये जाने वाले बेड़े (पानी भरने के बर्तनों घड़ा-बटलोई-चरवा) एक के ऊपर एक रखकर भीगे चावलों के घोल से लीप कर उस पर कंकू घोल कर आमवृक्ष का प्रतीक बनाया जाता है। मंगल कलश या बड़े बर्तन पर बनाये गये अंबे के सामने गणेश, पैसा-सुपारी-गौर पान पर रखे जाते हैं। मंडप में मर्दली बेली के दाहिनी तरफ रखी जाती है। गणेश, कलश-पैसा सुपारी-गौर की पूजा कर वधू अंबा की पूजा करती है। वधू के माता-पिता, वर-वधू एवं वधू की बहन-जीजाजी जोड़े से अर्थात् गठजोड़ा बांधकर अंबे की पाँच कहीं सात परिक्रमा करते हैं। सबसे आगे पिता तांबे के लोटे या कलश में पानी लेकर सींचते हुये (हल्की पानी की धार गिराते हुये) चलते हैं, उनके पीछे वधू की माता कच्चा सूत लपेटते हुये चलती है। उनके पीछे वधू हाथ में 'दीवी' (दीवट) अर्थात् विशेष प्रकार का दीपक जो लोहे की पतली पट्टियों से बनाया जाता है, उसमें सामने की ओर दीपक बना रहता है और ऊपर उसे पकड़ने का हुक रहता है। दीवी रंगीन, चमकीले कागजों से या हल्दी कंकू, सफेद खड़ी रंग आदि से सज्जित किया जाता है। आटे का दीपक रखकर घी बत्ती रखी जाती है। यह दीपक या दीवी वंश का प्रतीक होती है अर्थात् वधू के सन्तानवती होने, उसके वंश की वृद्धि, सुख-शांति, समृद्धि, दीर्घायु की कामना की जाती है। हरदा क्षेत्र में वधू इस दीपक को जलता हुआ लेकर परिक्रमा कर तोरण में उपस्थित होती है। जब तक उससे विदा के लिये मिला-भेंटी होती है, उस दीपक को वर संभाल लेता है एवं विदा होते समय वह जलते दीपक को सावधानीपूर्वक जनवासे तक ले जाती है। किन्तु खंडवा क्षेत्र में बिना दीपक जलाये दीवी लेकर वधू चलती है तथा ससुराल के विवाह मंडप के तोरण में पहुँचती है। अंबा सींचते समय वर-वधू के कंधे पर हाथ रखकर चलता है और उसके पीछे वधू की बहिन आरती लेकर चलती है तथा उसके पीछे जीजा जी आयरण या एरण की टोकनी लेकर चलते हैं। यह टोकनी वधू के साथ उसके ससुराल जाती है।

अंबा सींचते हुये मानो पिता उसे जीवन में सरलता-तरलता एवं निरंतर गतिमान बने रहने की शिक्षा प्रतीक रूप में देते हैं और माता उसे बताती है कि दाम्पत्य जीवन का पथ कच्चे सूत की तरह होता है। अत: सावधानी और सतर्कता पूर्वक अपने दाम्पत्य एवं पारिवारिक जीवन की रक्षा करने के दायित्व का भान कराती है तथा बहन-बहनोई अपने आदर्श प्रेममय दाम्पत्य जीवन का उदाहरण देते हुये शुभ और मंगल की कामना करते हुये सहयोग का आश्वासन देते हैं।

बाँस की बनी रंगों से सजी टोकनी में चरका-चोखा-ताँबे के लोटे में चावल भरकर रखते हैं। गुड़ एवं रूपये, गिलास, सिंगाड़े की पोटली सामान सहित, मिठाई, जवक्या (मामा घर की पाणिग्रहण वाली साड़ी), एक लाल थैली, जिसमें ससुराल पक्ष से मिले नारियल के गोले और पैसे आदि वधू रखती है। इन सामानों सहित टोकनी पर कंकू से सातिया बना हुआ कोरा सूपा और लाल कपड़ा ढांका जाता है। उस पर आटे का बना चौमुखी दीया घी-बाती सहित रखा जाता है (चार बत्तियों सहित)। अंबा सींचने के पश्चात्, तोरण से विदा कर जनवासे तक वधू पक्ष का दामाद अर्थात् वधू के जीजा जी इस टोकने को ले जाते हैं और जनवासे पहुँचकर वर पक्ष के दामाद को सौंपता है। मालवा तरफ इस टोकनी में दुल्हन की सास के लिये भी साड़ी रखी जाती है। पाणिग्रहण के पूर्व भी 'सासू साड़ा' अर्थात् वधू की सास की साड़ी दी जाती है।

कूख पूजन

अंबा सींचन के बाद वधू की माता वर-वधू के साथ मंडप में बैठते हैं। वधू पिता की गोद में बैठती है। वधू की हथेली पर दही लगाया जाता है और वह माता के पेट के दाहिनी ओर कूख वाले स्थान पर 'हाथे' देती है, अर्थात् हथेली का पूरा दही का छापा इस प्रकार देती है कि पेट की तरफ वधू की उंगलियों के निशान बनें। वर हाथ में आरती लिये खड़ा रहता है, वह माता के पेट पर दिये गये दही के हाथे पर कंकू-हल्दी-अक्षत लगाता है, कहीं-कहीं वधू ही हल्दी कंकू लगाती है।

विदाई

कूख पूजन की रीति के बाद विदा के लिये वर-वधू को तोरण में खड़ा किया जाता है। वे दोनों गणेश, कलश, पैसा-सुपारी गौर की पूजा करते हैं। वर नारियल फोड़कर चढ़ाता है। दूरी और निकटता सूचक कोमल रेशमी अंतरपट लगाया जाता है (अपने बेटी-दामाद हैं, परंतु पराये हैं।) वधू की माता वर-वधू को काजल लगाती है, वर-वधू पर पैसे न्यौछावर करती है, बलैया लेती है, चूमती है और आशीष देती है। बिछोह के अवसर पर किसी का रोना रोके नहीं रूकता। माँ गले लगाती है और दिल कड़ा कर वहाँ से हटती है। इसी प्रकार परिवार के सभी जन एवं कुटुंबी, रिश्तेदार दूल्हा-दुल्हन से मिलते हैं।

मंडप वरसाणा

वर-वधू के हाथों में हल्दी से पीली की गई ज्वार, सिंघाड़ा, सुपारी-पैसे दिये जाते हैं, जिसे वर-वधू तोरण में से इस तरह उछालते हुये फेंकते हैं कि मंडप से होते हुये कुछ दाने घर के अंदर तक भी पहुँचे, अर्थात् विदा होती हुई बेटी अपने मायके की सुख-समृद्धि एवं परिवार के सदस्यों के स्वस्थ दीर्घायु जीवन की कामना एवं आशीष व्यक्त करती है। इसके पश्चात् वर अपने एक हाथ से तोरण एक ओर से खोल देता है। मानों पत्नी को ब्याह कर अपने साथ ले जाने की घोषणा करता है। वर के शुभ आगमन से स्वागत एवं शुभ विवाह के सम्पन्न होने की कामना से बांधा गया तोरण कार्य पूर्ण होने एवं लक्ष्य प्राप्ति तथा विवाह कार्य समाप्त होने के प्रतीक स्वरूप छोड़ देते है। महिलायें आरती सहित विवाह स्थल के दाहिनी ओर किसी भरे-पूरे परिवार में या धर्मशाला-मंगल परिसर के कमरे वर-वधू को जनवासा देती है।

जनवासा

विश्राम एवं मानसिक भावनात्मक परिवर्तन एवं वधू के ससुराल जाने के लिये मानसिक रूप से तैयारी के लिये संभवत: कुछ देर मायके वालों के पास, स्वजनों के साथ रहने के क्षण देने के लिये, बारात को सामान-सहित प्रस्थान की तैयारी का अवसर देते हुये ठहरने की व्यवस्था होती है। यहाँ वर-वधू को शकुन करवाया जाता है, अर्थात् गुड़-घी के पाँच-पाँच कोर वर-वधू एक-दूसरे को खिलाते हैं। सिंघाड़े खिलवाये जाते हैं, अर्थात् मनोरंजन, हँसी-मजाक का वातावरण बनाकर वर-वधू को हँसते-गाते विदा करने की लोक रीति है। जनवासे में भी महिलायें दुल्हन को लोक गीतों के माध्यम से जीवन-व्यवहार की सीख देती हैं। वरमाता से अपनी कन्या अर्थात् वधू का ध्यान रखने, स्नेह देने एवं त्रुटि होने पर क्षमा कर उचित शिक्षा देने की विनती भी करती हैं।

इसके पश्चात् महिलायें वर-वधू को छोड़ वापस विवाह मंडप में आती हैं। मंडप में सर्वप्रथम वरमाता नृत्य करती है और फिर पाँच सुहागनें नृत्य करती हैं- कन्या के हाथ पीले कर निर्विघ्न विवाह कार्य सम्पन्न होने पर एवं बेटी के बिछोह जनित व्याकुलता दु:ख से स्वयं को निकालना और स्वस्थ चित्त हो पुन: शादी पश्चात् के कार्यों को सम्पन्न करने की मानसिकता व वातावरण बनाने के लिये यह रिवाज है। वरमाता सुहागनों के दूध मिश्रित जल भरे बर्तनों में पैर धुलवाती हैं, उनके सहयोग के लिये मान पूर्वक मानों आभार व्यक्त करती है, उनकी थकान दूर करने का प्रयास करती हैं। गुड़, बताशे और मेवा बांटती हैं तथा मंडप पर धानी डालती हैं। इस कामना से कि उनकी फूल जैसी कन्या की तरह प्रसन्न रहे, अपने और उसके घर में सुख-शांति-समृद्धि की बरसात होती रहे, उसका जीवन पथ फूलों की तरह खिला हुआ, सुवासित और सबको प्रिय रहे। वर के बारात लाने के बाद जैसे वर माता ज्वार-मात्रा-कुंभ कलश जवारे विवाह घर के द्वार पर रखती हैं, वैसे ही वधू की विदा के बाद वधूमाता भी कुंभ-कलश के जल से चीकट की साड़ी के पल्ले के दोनों छोर धोती है-अर्थात् चीकट धोती है। महिलायें बधावे गीत गाती हैं।

बाराती अपने जनवासे अर्थात् जहाँ बारात ठहराई गई थी, वहाँ वर-वधू को ले जाते हैं। बारात के जनवासे में बारात के वरिष्ठ व्यक्तियों में से दो व्यक्ति वर-वधू को गोद में बिठाते हैं। वर को मामाजी और वधू को उसके ससुरजी गोद में बिठाकर नारियल वाटिकी, गुड़ और सिक्का वधू की गोद में देते हैं, अर्थात् वधू को अपने परिवार का सदस्य बनाकर उसका स्वागत करते हैं एवं प्रतीक रूप में मेवा, मिठाई व धन देते हैं। वधू के मुँह में वे मिठाई देते हैं।

वर-वधू को ईरीत के पास जाकर सास नव-वधू का हाथ पकड़कर के पाँच मुहूर्त के दिन बनी मिट्टी की कोठियों जिनमें से एक-एक कोठी में गेहूँ, दाल, चावल, चने की दाल, मूंग की दाल बीच में एक खाली कोठी और बाकी कोठियों में दही-घी रखा रहता है। बहू के हाथ बारी-बारी एक-एक कोठी में हाथ डलवाकर पूछती है- भर्‌यो कि रीतो?' अर्थात् भरा है कि खाली? वधू को मायके से पहले ही इस रिवाज के लिये सिखा दिया जाता है कि सबको यहाँ तक की खाली कोठी को भी 'भर्‌यो' अर्थात् भरा हुआ है- ऐसा उत्तर देना है और वह ऐसा ही कहती है। ससुराल पक्ष में सदैव सम्पन्नता बनी रहे, हरा-भरा परिवार रहे और ससुराल के सम्मान का हमेशा ध्यान रहे, यही मायके से सीख दी जाती है।

हाते देना

दही और घी की कोठियों में रांझण-कांजण की चाँदी या ताँबे की अंगूठियाँ रहती हैं, जिन्हें वधू से निकालने को कहा जाता है और सास उसे पहनाती है फिर दही का एक हाथा और एक घी का हाता ईरीत के पास वधू को लगाने को कहा जाता है। घी का हाथा ईरीत के ऊपर से इस तरह लगाने के लिए कहा जाता है कि ऊँगलियाँ नीचे की तरफ रहे और घी की पाँच धारायें ईरीत पर से फूट कर ईरीत पर से बहते हुये नीचे देवी के पाट तक आयें, अर्थात् रिद्धि-सिद्धि-वृद्धि, सुख-शान्ति और समृद्धि सदैव बनी रहे। ईरीत की पूजा के पश्चात् वर-वधू को शकुन करवाकर (परस्पर गुड़-घी खिलाकर) सिंघाड़े खिलवाये जाते हैं। इसके पश्चात् भोजनादि कर विश्राम किया जाता है।

चरका चोखा

दूसरे दिन वधू के साथ आये एरण (आयरण) की टोकनी के चावल दहेज के तपेले (भगोनी) में बनाकर वहाँ की परात या बड़े थाल में दामाद उलट कर रखता है। वर-वधू गठजोड़े सहित उस तपेले की पूजा करते हैं एवं उसकी तीन परिक्रमा अर्थात् तीन फेरे लेते हैं, जिसमें दूल्हा आगे-आगे और दुल्हन पीछे चलती है। इस प्रकार विवाह के सात फेरे पूर्ण होते हैं, अर्थात् वधू के मंडप में चार फेरे और वर के मंडप में आकर तीन फेरे होते हैं।

जोड़े जीमना

फेरे लेने के बाद दामाद तपेले को सीधा करते हैं और उन्हें नेग दिया जाता है। उसके बाद वर-वधू तथा मंडप में जितने भी संभव है, उतने जोड़े अपनी एक पत्तल में वही गुड़, घी, भात एक साथ खाते हैं। पति को पत्नी एवं पत्नी को पति पाँच-पाँच कौर खिलाते हैं और ननद-भौजाइयाँ, सालियाँ उन्हें एक दूसरे को खिलाने में बाधा पहुँचाती हैं, अर्थात् खिलाते हुये हाथ को झटका देकर भात गिराने की कोशिश करती हैं और वे कुशलता पूर्वक बचाते हुये एक दूसरे को खिलाने का लक्ष्य प्राप्त करते हैं। हास-परिहास आनंद के क्षण होते हैं, सभी जोड़ों को अपने-अपने विवाह की मधुर यादें गुदगुदाती हैं।

चूड़ा-चुटकी

मंडप में चौक पाट कर कलश गणेश रखकर गणेश-कलश-पैसा-सुपारी-गौर की पूजा करवाकर सास वधू को पाट पर बैठाकर कंकू लगाकर लाल चुनरी देती है और वधू उसे पहनती है, फिर उसे बिछिया, लाख पहनाती एवं गोल कंकू लगाती है। विवाह प्रारंभ होने पर दुल्हन को खड़ा तिलक लगाया जाता है। सास उसे गोल बिन्दी लगाती है। विवाह के पूर्व वधू का लहंगा-ओढ़नी में पल्ला खोंसा नहीं जाता या उल्टे पल्ले की साड़ी नहीं पहनती हैं, परंतु सासू जी सीधे पल्ले की साड़ी पहनाकर पल्ले के छोर में सवा रूपया बांध कर पल्ला खोंसती है। इस प्रकार कुंवारी कन्या की वेशभूषा में परिवर्तन कर उसे विवाहित स्त्री या बहू के रूप में संवार देती है। कुंवारी के अल्हड़पन को छोड़ उसे विवाहित सुगृहणी के रूप में ढाल कर मर्यादित जीवन की आदत डाली जाती है।

कंकण छोड़ना

पाणिग्रहण वाली तांबे की गंगाल में दूध, पुष्प मिश्रित जल भर मंडप में चौक-सातिया बनाकर पाट बिछाकर आमने-सामने वर-वधू को बैठाया जाता है। विवाह जैसा बड़ा और महत्त्वपूर्ण कार्य निर्विघ्न संपन्न होने के उद्देश्य से वर-वधू को संकल्प स्वरूप कांकण बांधे जाते हैं। विवाह संपन्न होने के बाद वर-वधू एक दूसरे का कंकण खोलते या छोड़ते हैं। कंकण बांधते समय उनमें दस गाँठे लगाई जाती हैं। वर को एक हाथ से वधू का कंकण खोलना पड़ता है एवं वधू को दोनों हाथों से वर का कंकण खोलने की सुविधा होती है। स्त्री क्योंकि प्रकृति सी ही सुकोमल होती है, अत: लगाई गई गाँठें मानों जीवन में आने वाली विपरीत परिस्थितियों, परेशानियों और बाधा स्वरूप हैं। इन्हें धैर्य पूर्वक, कुशलता, बुद्धिमत्ता से पार करना और कच्चे धागों से बांधे गये दाम्पत्य जीवन को सुरक्षित रखना एवं अपने-अपने कर्त्तव्यों का पालन जागरूकता से करने की शिक्षा, संदेश और प्रेरणा देने वाली रीति-विधियाँ-परंपरायें हैं। कंकण खोल कर गंगाल के जल में डाल दिये जाते हैं और पानी में उन्हें गोल-गोल घुमा दिया जाता और वर-वधू को एक साथ ढूँढने के लिये कहा जाता है। जो पहले ढूँढता है वह विजयी होता है। पाँच बार ढूँढने की प्रक्रिया होती है, यथासंभव बहू को जीतने के अवसर दिये जाते हैं। हँसी-मजाक के साथ ही गृह-लक्ष्मी को सुखी रखने की प्रेरणा दी जाती। प्रसन्न रहने पर वह सुख-शांति पूर्वक अपने कार्य रूचिपूर्वक करेगी और घर-परिवार में घुल-मिल जायेगी। एक-दूसरे को आगे बढ़ाना, सहमति से निर्णय लेना, सुखी गृहस्थी के लिये आवश्यक है। परिवार के सभी लोग इस समय हार-जीत के इस मैच को देखने के लिये उत्सुक और आतुर रहते हैं।

बाद में काकन-डोरे नर्मदा, कुआँ या जहाँ मान ली गई हो वहाँ अथवा अपनी कुलदेवी के स्थान पर छोड़ी जाती है या विसर्जित की जाती है।

पाँव लागणी

चूड़ा, चुटकी, चिपली, लाख और लाड़ी चूनड़ी पहनने तथा कंकण छोड़ने के बाद ही वर-वधू किसी के पाँव छूते हैं, क्योंकि विवाह प्रारंभ होने पर वर-वधू को राजा-रानी, सीता-राम या लक्ष्मी-नारायण की तरह मान दिया जाता है। सर्वप्रथम वधू सास के पैर छूती है और सास उसे नेग एवं भेंट या पाँव लगणी देती है। इसके पश्चात् रिश्तेदार, परिवार जनों के चरण-स्पर्श करती है। वे आशीर्वाद के साथ नेग, भेंट, सोने-चाँदी के आभूषण आदि देते हैं।

अच्छा दिन मुहूर्त देखकर नववधू से रोटी (खाना) बनवाने का शकुन करवाया जाता है। चूल्हे तथा गणेश व अन्नपूर्णा देवी की पूजा कर सर्वप्रथम पूरण पोली (पूरण भरकर रोटी) बनवाई जाती है। निमाड़ में पूरण पोली विशिष्ट व्यंजन है, जिसे शुभ समझा जाता है। नववधू की पाककला में दक्षता की परीक्षा पूरण पोली बनवाकर करने का पुराना रिवाज है, जिसका पालन आज भी होता है। नव वधू सभी को परोसती है और उसे सभी नेग आशीर्वाद देते हैं।

शुभ-विवाह निर्विघ्न सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में ईश्वर के प्रति आभार स्वरूप वर-वधू से श्री सत्यनारायण व्रत एवं पूजा करवाई जाती है। दाम्पत्य जीवन के प्रारंभ में सभी देवी-देवताओं, वरिष्ठों के आशीर्वाद की छत्र-छाया आवश्यक है। पुरोहित विधि-विधान से सत्यनारायण जी का पूजन तथा कथा श्रवण और हवन करवाते हैं। प्रसाद वितरण के पश्चात् भोजन का कार्य और नव वधू से परोसवाने का लोकाचार भी संपन्न होता है।

ईरीत उठाना

अपने-अपने कुलाचार अनुसार कुटुंब के लोग वर-वधू सहित पूजा कर, श्रद्धा और पवित्रता पूर्वक बनाये गये नैवेद्य के पश्चात् मंडप के दिन स्थापित की गई कुलदेवी, ईरीत को विधिवत् विदा कर ठंडा करते हैं, अर्थात् विसर्जित करते हैं। इसे ही माता उठाना कहते हैं। यद्यपि अलग-अलग नियम एवं अवधि हैं। ईरीत दस दिन में ठंडी की जाती हैं, किन्तु पहले कुलदेवी को सत्रह दिन, सवा महिने, सवा साल तक सेवा कर विभिन्न नैवेद्य बनाकर विदा देकर ठंडी करते थे।

कुटुंब-परिवार के लोग नववधू को आमंत्रित करते हैं। अत: सासू जी बारी-बारी से अपने परिवारों में नई बहू को ले जाती हैं और परिवारजन बहू का यथोचित सत्कार करते हैं। व्यवहार एवं रिश्ते अनुसार नई बहू को मिठाई के साथ ही वस्त्रादि व अन्य स्नेह भेंट भी देते हैं। यह रिवाज भी अपने कुटुंब-परिवार को पहचानने और आत्मीयता बढ़ाने का प्रयास ही है।

विवाह पश्चात् विदा होकर वधू जब बारात के साथ आती है तो वधू के छोटे भाई-बहन भी आते हैं, उन्हें 'ढेड्या' कहते हैं। मजाक में उन्हें कहा जाता है। ये बहन जीजा के साथ ढेड्या अर्थात् कौआ उड़ाने आई हैं। सभी हँसी-मजाक के साथ मनोरंजन कर प्रसन्न होते हैं। वास्तव में उन्हें बहुत लाड़-प्यार किया जाता है, उनका सत्कार किया जाता है, उनका विशेष ध्यान रख उन्हें खुश रखा जाता है। लौटते समय उन्हें वस्त्रादि तथा अन्य उपहार भेंट में दिये जाते हैं। नव वधू जब पहली बार ससुराल आती है तो उसे नये स्थान, वातावरण और ससुराल में अनजान, नये, अपरिचित परिवार और लोगों के साथ रहना होता है। उस वातावरण में अपनों को पाकर उसे अच्छा लगता है। इसके अतिरिक्त अपनी आवश्यकता व अन्य कार्यों में वह ससुराल के लोगों से कुछ कहने-मांगने में संकोच करती है, अत: छोटे भाई-बहनों से मदद ले लेती है। इस प्रकार दोनों परिवार के सदस्यों में जान-पहचान से आगे बढ़कर आत्मीयता, निकटता बढ़ती है। इस रीति से पहले जब छोटी उम्र में कन्याओं के विवाह होते थे, तब यह प्रथा बहुत उपयोगी थी। बच्चों के द्वारा बेटी के परिवार, लोगों के स्वभाव का परिचय मिल जाता था। आजकल भी यह रिवाज प्रचलन में है।

मांडा झांकना

विवाह के एक-दो दिन बाद या पुरोहित जी द्वारा सुझाये गये शुभ दिन वर-वधू विवाह मंडप अर्थात् दुल्हन के घर लौटते हैं, इसे ही मांडा झांकना या चार-चौक कहा जाता है। बेटी-दामाद का स्वागत सत्कार होता है। सत्यनारायण जी का व्रत और पूजन होता है। परिवारजन और रिश्तेदार सभी वर-वधू के साथ खाना खाते हैं और भोजन में अन्य विविध व्यन्जनों के साथ 'पूरण-पोली' विशेष रूप से बनती है। चौक पाट पर मण्डप में वर-वधू को बैठाकर कंकू-तिलक कर वस्त्र, पैसे, नारियल, वाटकी, गोला आदि माता-पिता एवं अन्य सभी परिवार-कुटुंबी जन, रिश्तेदार देते हैं। वधू को माता लाल चूड़ियाँ पहनाती है एवं चाँदी की तीन-तीन बिछिया पहनाती है। सास ने जो लाख के चूड़े-छड़े पहिनाये थे तथा पैरों में चिपली चुटकी अर्थात् चाँदी की पट्टियों से बनी विशेष प्रकार की बिछिया पहनाई गई थीं। उन्हें बदलकर स्थाई रूप से शुभ-मुहूर्त में पहनाई जाती हैं। रूप्पा में आई हुई चार-चौक की साड़ियाँ वधू को दैनिक जीवन में उपयोग करने के लिये दी जाती हैं, क्योंकि विवाह में दोनों पक्षों से महंगी और भारी तथा सज्जित साड़ियाँ दी जाती हैं, जो पहनने में असुविधाजनक होती है। साथ ही वधू की माता भी सासू माँ के लिये साड़ी देती है।

इस परंपरा से दामाद से सभी को मिलने-समझने का अवसर मिलता है। विवाह के समय तो रस्मो-रिवाज की व्यस्तता में संभव ही नहीं रहता। दामाद भी अपने ससुराल के लोगों से परिचित होते हैं। वधू को भी जल्दी ही अपने माता-पिता, भाई-बहन, परिवारजनों और सहेलियों से मिलने का सुख मिलता है। ससुराल में सबके स्नेह भरे व्यवहार, महत्त्व, भेंट आदि से अभिभूत वधू अति उत्साह से प्रसन्नता पूर्वक परिवार के लोगों के स्वभाव आदि की प्रारंभिक जानकारी देती है। उसके उत्साह-खुशी के आधार पर उसके सुखी-संतुष्ट होने का आभास पाकर माता-पिता, परिवार जन निश्चिंत, आश्वस्त और संतुष्ट होते हैं और उनकी आशंकाओं को विराम मिलता है। धीरे-धीरे स्वाभाविक रूप से 'अपनी' पराई हो जाती है और ससुराल में घुलमिल कर पूर्णत: उसके अपने घर की ही बन जाती है।

चार चौक या मांडा झांकने (या पगफेरे) के लिये आते समय अन्य सामान एवं मिठाइयों के साथ सासू माँ द्वारा दी रोटियाँ गोद में (खोले) में लेकर आती है और मायके के घर के दरवाजे के दाहिनी ओर रखती है। ससुराल की सम्पन्नता की तरह बहू के मायके में भी अन्न-धन का भंडार सदा भरा रहे। उस घर की बेटी उनके घर की गृह लक्ष्मी बनकर जो आई है। इसी सद्भावना और शुभकामना के प्रतीक स्वरूप यह प्रथा है। इसी प्रकार जब वह पुन: मायके से लौटती है तो वधू की माता अन्य व्यंजन-मिठाइयों के अतिरिक्त गुड़पापड़ी (प्रसाद, कसार) शुभ-शकुन स्वरूप अवश्य रखती है। यह घी में भुना हुआ गेहूँ के आटे से बनाया जाता है, जिसमें बारीक किया हुआ गुड़-शक्कर (पिसी शक्कर या बूरा शक्कर) नारियल, मेवा, इलायची मिलाई जाती है।

इसके पश्चात् ही दोनों पक्षों के मंडप उतार कर विधि-पूर्वक ठंडे किये जाते हैं। विभिन्न पूजा-पाठों व सामान, वादी-कंकण,मौड़ आदि को विसर्जित किया जाता है।

संस्कार रूपी जीवन का शिखर है-विवाह संस्कार। विवाह में कन्या का दान कर देने के बाद भी, पराई हो जाने के बाद भी पितृ कुल का स्वत्व, अपनेपन का अधिकार बना रहता है। यहाँ कन्यादान का विशेष महत्त्व है। इसीलिये श्रीमती ऐनी बिसेन्ट ने

भारत के विवाह संस्कार के सम्बन्ध में अपनी पुस्तक में लिखा है-'भू-मण्डल में किसी भी देश में, संसार की किसी भी जाति में एवं किसी भी धर्म में विवाह-संस्कार को इतना महत्त्वपूर्ण एवं पवित्र बन्धन नहीं माना है, जैसा भारत के हिन्दू धर्म में माना गया है।'

हम सभी जानते हैं कि गरम और ठंडे पानी के बर्तन पास-पास सटाकर रखने पर दोनों के तापमान में कुछ परिवर्तन होता है, परन्तु उनकी अपनी ठंडक या ताप पूर्णतः समाप्त नहीं होता। उसी प्रकार विभिन्न जनपदों, प्रांतों की संस्कृतियाँ भी अपनी मौलिक विशेषताओं को अविकल रखते हुये परस्पर कुछ विशेषताओं को आत्मसात् कर लेती हैं। जैसे विभिन्न नदियाँ गंगा-यमुना-सरस्वती मिलकर संगम में एक हो जाती हैं। अतः प्रवाहवती सरस्वती गंगा की धवलता और यमुना की श्यामलता को ओढ़ कर मानों अपना भिन्न अस्तित्व ही प्रदर्शित नहीं करती, बल्कि दूर से उनके निकट आगमन एवं विलय को अनुभव किया जा सकता है और सूक्ष्म अंतर भी स्पष्ट होता है। इसी तरह भारत की विभिन्न क्षेत्रीय संस्कृतियाँ अपनी मूल विशेषताओं के साथ परस्पर घुलमिल कर भारतीय संस्कृति की इन्द्रधनुषी छटा बना देती है।

लोकगीतों में विवाह

हमारा भारत जनपदों का देश है, जिसकी संस्कृति अत्यन्त समृद्ध है। यद्यपि विभिन्न अंचलों में हमारी लोक संस्कृति का रूप वैविध्यपूर्ण और बहुरंगी है, किन्तु उसका मूलाधार एक है और वह एक लोक सांस्कृतिक सूत्र से परस्पर आबद्ध है। गाँव लोक-संस्कृति के केन्द्र हैं। गाँव के निरक्षर किसान के पास उसकी अपनी सांस्कृतिक परम्पराएँ हैं, जो उसे पीढ़ी-दर-पीढ़ी विरासत से मिलती रही हैं। उन पर उसका अटूट विश्वास है और यही लोक विश्वास जीवन की कुन्जी है। इसी से लोक संस्कृति में जन भागीदारिता होती है।

किसी भी संस्कृति का परिचय उसकी वाचिक परम्परा की विविध विधाओं से मिल जाता है। लोक-साहित्य में लोकगीतों का अक्षय भण्डार है। लोक-साहित्य में लोकगीत लोक जीवन की धड़कने हैं। वे समय और शब्द के महत्त्वपूर्ण दस्तावेज हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोकगीतों को वेद की संज्ञा दी है।

वास्तव में गीत मनुष्य का स्वभाव है। हमारे कृषि प्रधान देश का किसान गाते हुए हल चलाता है और मजदूर कुदाल चलाता है तो गाता है। स्त्रियाँ चक्की चलाते, दही बिलोते गाती जाती हैं। निरन्तर प्रवहमान लोकगीतों की अजस्र धारा जीवन को आनन्ददायी बनाती है और जीवन स्वयं एक संगीत प्रतीत होता है। लोकगीत संस्कृति के संवाहक और परिचायक होते हैं। इनमें जीवन की प्रत्येक गतिविधियों के दर्शन होते हैं। इनमें जीवन के सुख-दुःख, जन्म-मरण, सगाई-विवाह, पर्व-त्योहार, रीति-रिवाज, धर्म-कर्म, अतीत और वर्तमान के संस्कार मिलते हैं। ये गीत किसी एक व्यक्ति की रचना नहीं, वरन् समूह द्वारा रचे गये हैं और इनमें व्यक्तिगत नहीं समष्टिगत अभिव्यक्ति होती है। हर अवसर के गीत बना देने की शक्ति केवल लोक में ही होती है।

यों तो शास्त्रों में हमारे षोडश संस्कारों का उल्लेख है, किन्तु जीवन में कुछ प्रमुख संस्कारों का सम्पादन किया जाता है, जिनमें विवाह-संस्कार जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और आवश्यक संस्कार है, इसे अत्यन्त उल्लास पूर्वक मनाया जाता है। हमारे देश के विभिन्न प्रान्तों में विवाह-संस्कार के कार्य थोड़े बहुत अन्तर के साथ सामान्य रूप से एक जैसे सम्पन्न होते हैं। विवाह-संस्कार के हर अवसर के अलग-अलग गीत होते हैं। वैवाहिक गीतों का वर्ण्य विषय विविध रंगी और विस्तृत होता है। इन गीतों में हमारे पारिवारिक जीवन की उदात्त कल्पनाएँ संजोई गई हैं।

वर एवं वधू पक्ष द्वारा विवाह तय होने पर पण्डित द्वारा विवाह तिथि तथा विवाह के अन्य कार्यक्रम एवं उनके शुभ मुहूर्त लिखकर दिये जाते हैं, जिसे लगन-टीप या लगन पत्री कहते हैं। लगन-टीप के स्वागत में उत्साह से महिलाएँ गा उठती हैं- *चटपट लौंग री बधाई, हलळ बधाई-बधाई म्हारा अंगणा में आई।*

इसके बाद ही शुभ-विवाह हेतु पाँच मुहूर्त के कार्य होते हैं। सर्वप्रथम लोकदेवता विघ्न विनाशक, कार्यसाधक श्री गणेश की स्थापना व पूजन करके बरी तोड़ना, गेहूँ-धान फटकना और हल्दी कूटना तथा चूल्हे-कोठी की मिट्टी लाना, चूल्हे कोठी बनाना, लड्डू, गुणी-घुघरी बनाने के कार्य उत्सव और नृत्य-गान सहित किये जाते हैं। इस अवसर पर गाया जाने वाला बधावा गीत देखिए-

जो बी पाँच बधावा रे ये भला आविया.....

विवाह की निमन्त्रण पत्रिकाएँ रिश्तेदारों और आत्मीयजनों को भेजने से पूर्व श्रीगणेश व कुलदेवी को दिया जाता है। सहृदय गणेश जी तो तत्काल विवाह समारोह में सम्मिलित होकर सारे मांगलिक कार्य निर्विघ्न सम्पन्न करवाते हैं। उनकी पूजा का यह भी गीत बहुत प्रसिद्ध है–

दोंद दोंदाल्यों रे गणपति सदा मतवाळो
कई चलो गणेस अपुण सोनी घर जावां।।
कई गयणा घड़ाई बेगा अवां न रे,
म्हारो गणेस धोंदाल्यों।।

विवाह के शुभ अवसर पर ससुर, पिता, जेठ–भाई और कोख को बधाई दी जाती है जिसके कारण यह शुभ दिन को पड़छती है। पड़छना याने दूल्हे की सुरक्षा करना, बुरी नजर से और किसी प्रकार की अलाय–बलाय से। पड़छते समय महिलाएँ गीत गाती हैं–

सखि हो पड़छो भीम घर की नार,
सांवळ्या हरि की आरती।
सखि हो असो म्हारा यहाँ नित नवोहोय।।

और फिर बारात प्रस्थान करती है, तब उत्साह और आनन्द के स्वर गूँजने लगते हैं, महिलाएँ गाती हैं–

कूण माई न हलदुली मोल करी हो,
सुन्दर वर ललना।
कूण माई न खरच्या छे दाम,
श्याम सैयजादी बहना।।

बारात को जनवासे तक छोड़ महिलाएँ बधाइयाँ गाते हुए वापस मण्डप में आती हैं। विदा का कोई भी क्षण हो वह दु:खी कर देता है। वास्तव में विवाह पूर्व तक पुत्र पर माँ का पूर्ण अधिकार होता है, किन्तु परिणय के बाद पुत्र का लगाव और प्रेम माँ और पत्नी के बीच बँट जाता है। माँ बड़े लाड़–प्यार और जतन से पुत्र को पाल–पोसकर बड़े अरमानों से उसका विवाह करती है और खुशी–खुशी अपना पुत्र बहू को सौंप देती है। इस समय माँ के मन की बड़ी विचित्र दशा होती है। वह अपनी सखी से अपनी इस मनोदशा का वर्णन करते हुए कहती है–

हऊं तो पचरन जी मन मं नी जाणती,
सई तो हम घर आणन्द बधावणो।
हऊं तो पुत्र परणाऊं बेऊ चार बइणी,
वो तो वऊवर आया पुत्र लई गया।।
म्हारो पुत्र परायो होय,
बइणी वो हम घर आणन्द बधावणो।।

अर्थात् सखी, मैं नहीं जानती कि अचानक मेरा मन ऐसा कैसा हो गया कि मुझे आनन्द भी हो रहा है और दु:ख भी। मैंने जो बाग लगाया था, उसके फूल मालन ले गई। आम की केरियाँ जैसे कोयल ले गई वैसे ही विवाह करने पर बहू ने मेरे पुत्र को ले लिया और मेरा पुत्र पराया हो गया। इसका मुझे दु:ख हो रहा है और उसका विवाह कर मैं आनन्दित हो रही हूँ।

वधू के द्वार पर बारात पहुँचने पर द्वाराचार, स्वागत–सत्कार, मिलन–भेंट का कार्यक्रम होता है। वधू की सखियाँ उसे घर की छत से वर की शोभा निहारने का सुझाव देते हुए गाती हैं–

दादाजी रा मैहल चढ़ी झाँकी ल,
ओ दिल मोहन बन्दड़ी।
कसा बण्या न सरदार,
ओर दिल मोहन बन्दड़ी।।

ऐसे ही एक अन्य भोजपुरी गीत में सखियाँ कहती हैं–

इमरत आवे मिथिलेस के भवनवा, हाय रे जियरा।
दूल्हे का रूप अनमोल, हाय रे जियरा।।

वर–पक्ष की ओर से वधू को चढ़ावा या रूप्पा चढ़ता है। तदनन्तर कन्यादान या पाणिग्रहण का सबसे महत्त्वपूर्ण संस्कार सम्पन्न होता है। इसे मन्त्रोच्चार तथा विधि–विधान पूर्वक सम्पन्न करते हैं। माता–पिता अपनी कन्या का हाथ (पाणि) वर को सौंपते हैं और क्षण भर में ही उनके कलेजे का टुकड़ा पराया हो जाता है। लगन पूर्व वर को वस्त्र–आभूषण आदि देते समय भी गीत गाये जाते हैं–

बना का सासरिया सी हो,
बनाजी पागा आई राज।

कन्यादान के इस करुण किन्तु सुखद क्षणों में महिलाएँ अत्यन्त मार्मिक गीत गाती हैं–

नीच्ची उच्ची सखरिया री पाल तो,
साजन–साजन जुआँ खेल जी।
खेलत जो खेलत पड़ी गयो डोल तो,
कूण हार्‌यो न कूण जीत्याजी।
हार्‌या–हार्‌या लाड़कली रा पिताजी तो,
गढ़वा हो साजन जीती गया जी।।

कन्यादान के पश्चात् विवाह के दो विधि–विधान अत्यन्त प्रसिद्ध और आवश्यक हैं–सप्तपदी और सिन्दूर दान। सप्तपदी याने भांवरों के समय प्रज्ज्वलित अग्नि के वर–वधू सात फेरे लेते हैं और परस्पर–प्रेम एवं दाम्पत्य–जीवन के कर्त्तव्य–पालन की प्रतिज्ञाएँ करते हैं। सिन्दूर–दान के अन्तर्गत–

हो बन्नी पूछ बनाजी सी वात,
रायवर कांई हो गया था।

और बन्ना भी मज़ाकिया अन्दाज में बनी को चिढ़ाते हुए कहता है–

हो बन्नी गया था सोनी दुकान,
वहाँ गयना घड़वाई रह्‌या था।
अरे वहाँ सोनी की छोरी मज़ेदार,
वही रे बिलमाय गया था।

ऐसे असंख्य सरस–मधुर बन्ना–बन्नी गीत गाते हुए दूल्हा–दुल्हन का बड़े धूमधाम से समारोह पूर्वक बाना (विनायकी) निकाला जाता है। घोड़े तथा बग्घी के पीछे–पीछे महिलाएँ गाते हुए चलती हैं। स्थान–स्थान पर वर–वधू का स्वागत–सम्मान किया जाता है। इस अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में से एक प्रसिद्ध गीत सुनिए–

सड़क पर आफू की क्यारी,
सड़क पर केसर की क्यारी।
नवल बनाजी को रथ सिंणगार्‌यो
हवा करो प्यारी, रे हवा करो प्यारी।

विवाह में मण्डप बनाना और छाना एक अत्यन्त प्रमुख और महत्त्वपूर्ण अवसर है। विवाह के शेष सभी कार्य फिर मण्डप में ही सम्पादित होते हैं। इस अवसर पर गाये जाने वाले मंगल गीत में वरमाता अपनी सखी से कहती है–

भवर्‌यो संवर्‌यो न रे दशरथ दरबार,
सहेली अम्बो भंवरियो।

अर्थात् जैसे आम वृक्ष में मोर आ गये हैं, वह फलने योग्य है, वैसे ही मेरा पुत्र भी अब युवा होकर विवाह योग्य हो गया है, सखी आनन्द का अवसर उपस्थित हुआ है।

मण्डप स्थापना के बाद उसकी प्रतिष्ठा व नवग्रह शान्ति पूजा अत्यन्त श्रद्धापूर्वक की जाती है। मण्डप के दिन मामेरा एक अत्यन्त मार्मिक व महत्त्वपूर्ण अवसर रहता है। गृहस्वामी को उसके कुटुम्बीजनों सहित वर–वधू के मामा पक्ष के वस्त्रादि भेंट दिये जाते हैं। भाई द्वारा बहिन की कुटुम्ब सहित पेरावनी से वह सम्मानित और आनन्दित होती है। इस अवसर पर अनेक भावपूर्ण, सरस–मार्मिक गीत गाये जाते हैं। वरमाता का मन गा उठता है–

अंगणा मंड वाज जंगी ढोल,
महळ बाजा बाजिया जी।

तथा

आज तो सांवलियों वीरो,
मायरो लई आयो माई।

सुख के ऐसे क्षणों में अपने पूर्वजों की याद आना अत्यन्त स्वाभाविक है। उनकी याद में बरबस आँसू आ ही जाते हैं और इस दिन वरमाता अपने कुटुम्बीजनों सहित पूर्वजों को विवाह में सम्मिलित होने का निमन्त्रण उच्चाकाश में उड़ने वाली गीधनी के द्वारा पहुँचाती है और पूर्वजों का उत्तर भी गीधनी लाती है। इस कार्य को रूखड़ी न्यूतना कहते हैं। इस अवसर का यह गीत अत्यन्त करुण और मार्मिक है–

सरग भवन्ति ओ गिरधनी, एक सन्देसी लई जाव।
सरग का मोठा भाई सी यू कयजो, तुम घर नाती को ब्याव।

और पूर्वज उत्तर देते हैं–

जेम सर रे ओम सारजो, हमारो तो आवणूं नी होय।

ताला जड्या बन्द का,जड़ी दिया वजीर किवाड़।

अर्थात् तुम इस कार्य को जैसा सधे वैसा निपटा लो, हमारा आना सम्भव नहीं, क्योंकि मृत्यु रूपी विशाल दरवाजे बन्द हैं, जिनमें लोहे की बड़ी-बड़ी अरगलाएँ पड़ी हैं। सभी परिवारजन पूर्वजों और बिछुड़े प्रियजनों की याद में व्याकुल हो जाते हैं और सबकी आँखों से आँसू झरने लगते हैं। वास्तव में इस गीत में हमारे मन की मजबूरियों का सजीव चित्रण है।

शुभ-विवाह के इस करुण-प्रसंग के उपरान्त पुनः हास-परिहास, आनन्द का वातावरण निर्मित होता है। रिवाज के अनुसार वरमाता का नृत्य और महिलाओं के मंगल-गान होते हैं-

म्हारा हरिया मण्डप माय,
जड़को लाग्यो रे दुई नैना सी.....

और फिर देर तक गाना-बजाना और नृत्य तथा हास-परिहास चलता रहता है। अगले दिन बारात सजधज कर वर-वधू के साथ घर जाने के लिए तैयार होती है।

साड़ी लम्बी उठारो वे,
बाबुल केहड़े देस जाना।।

निमाड़ और मालवा की कन्याओं की व्यथा और शिकायत भी सुनिए-

काहे ख पालई रे बाबुल, काहे ख पोसी।
काहे पिलायो काचो दूध जी.....
माया ख पालई रे बाबूल, माया ख पोसी,
ममता पिलाओ काचो दूध जी.....

विदा कर जनवासे पहुँचाते हुए महिलाएँ बेटी से कहती हैं-

पछाफिरो पछाफिरो लाड़ी बाई,
पिताजी ख देवो असीस।

और बेटी जाते-जाते अपने पिताजी को आशीर्वाद देते हुए कहती है-

खाजो-पीजो पिताजी राज करजो।
जीवजो ते करोड़ बरीस।

जनवासे तक पहुँचाते हुए माता कन्या को सीख देते हुए कहती है-

मात कहे बात भली सुण सुन्दरी,
लक्षधरी बात न निभावजे वो स्याणी।
कुल न लजवाजे।

और आगे समझाती चलती है-

ठण्डा लीमड़ा री छाया, वसी माता-पिता की माया।
माया तोड़सुं पड़से कि सासर जाणूं पड़से।
भला किसकी आँखों में आँसू थम पाएँगे?

इस राजस्थानी गीत की मार्मिकता तो देखिए-

थारी छोटी बैनड़ रोवे अकेली,
थारो वीरो सा फिरे उदास।।

अन्त में कन्या की माता दामाद और उनकी माँ से प्रणाम सहित निवेदन करती है कि मेरी बेटी अभी नादान है, उसकी गलतियों को क्षमा करना, उसे सखियों के साथ खेलने देना, उसे भूख जल्दी लगती है सो कृपापूर्वक जल्दी कलेवा देना और काम भी अभी अधिक मत करवाना जी। गीत के बोल हैं-

जाई न नन्दजी राणी ख,
म्हारोपगा लागणो कयजो,
म्हारी राधिका भूख की आकलई,
जल्दी कलेवो ओख दीजो जी।।

वास्तव में विदाई के ये गीत करुण-रस के स्वर्ण कलश हैं। जिनसे सरसता छलक पड़ती है। क्षेत्रीय बोली और भाषा की दृष्टि से भिन्न होने पर भी भावनाओं के स्तर पर वे एक ओर अभिन्न रहे हैं।

बारात दुल्हन लेकर घर लौटती है तो उत्साह और उमंग का सागर उमड़ पड़ता है और चारों ओर आनन्द में बधाई बजने लगती है। महिलाएँ स्वागत करते हुए गा उठती हैं-

आज सखि श्याम सुन्दर ब्याही,
आज सिया राम की बधाई.....

व्यवस्थाओं ने पैशाच विवाह की घोर निन्दा की, किन्तु कन्या के हित को ध्यान में रखते हुए उन्होंने इस विवाह को मान्यता दी। संयुक्त कन्या को अपनी धर्मविहित पत्नी स्वीकार करने पर विवश न किया जाता, उस स्थिति में कन्या का सम्पूर्ण जीवन व्यर्थ हो जाता। एक ओर वह निर्दोष कन्या समाजत्यक्ता होकर किसी अन्य के पाप कर्मों का फल भोगती और दूसरी ओर पापी व्यक्ति समाज के विधि-निषेधों से अपने दुराचरण की पुनरावृत्ति करता। मनु ने उस दुराचारी के लिए दुराचरण के पश्चात् उस निरीह कन्या को होम तथा सप्तपदी आदि धार्मिक क्रियाओं के साथ अपनी पत्नी बनाने की व्यवस्था की है। याज्ञवल्क्य ने इस मत का समर्थन किया था। प्राचीन व्यवस्थाकारों ने इस दुराचार को आश्रय नहीं दिया, वरन् निरीहता की सहानुभूति एवं उदारता के साथ रक्षा की। समाज में प्रचलित होने के कारण अप्रशस्त होने पर भी इन विवाहों को समाज की रक्षा एवं शान्ति की दृष्टि से मान्यता प्रदान की गई। चरित्र की पवित्रता पर जोर देने वाले समाज में इन विवाहों को मान्यता देना आवश्यक था।

विवाह के कुकड़ा और साँजुली गीत

डॉ. सुमन चौरे

शादी-व्याह शब्द एक लम्बे आनन्द मंगल का परिचायक है। लम्बे समय तक चलने वाले हर्षोल्लास का नियामक है यह संस्कार। बहुत सारी नानाविध परम्पराओं, लोकरीतियों और लोक-रूढ़ियों का सरोवर लहराता नज़र आता है इस अवसर पर। अगर संस्कार की ही बात करें, तो पाणिग्रहण संस्कार और सप्तपदी, दोनों ही निश्चित अवधि में सम्पन्न हो जाते हैं; किन्तु इसके आगे-पीछे कई परम्पराएँ होती हैं, जो संस्कार को ऐसे आच्छादित कर देती हैं कि मुख्य संस्कार गौण नज़र आने लगता है।

विवाह मुहूर्त जिसको 'लग्न टीप' कहा जाता है, इसमें पाणिग्रहण संस्कार के साथ बहुत-सी परम्पराओं का उल्लेख रहता है। लग्न टीप में इनके समय-घड़ी, दिन-मुहूर्त तक अंकित रहते हैं। मृदा पूजन और उत्खनन, देवी पूजन, गणेश पूजन, मण्डप प्रतिष्ठा, पाणिग्रहण, विदाई, पुनरागमन आदि तक का मुहूर्त लिखा रहता है। जिन कार्यों का उल्लेख लग्नटीप में नहीं होता, वे हैं- परभात्या या कुकड़ा (प्रभाती) और साँजुली गीत। मांगलिक अवसरों पर प्रभातकाल में गाए जाने वाले गीतों को 'परभात्या' या 'कुकड़ा' गीत कहते हैं तथा इन्हीं अवसरों पर संध्याकाल (साँझ) में गाए जाने वाले गीतों को सांजुली (सांझुली) गीत कहते हैं। कारण, सूर्य तो आदिदेव हैं, उनसे ही तो मुहूर्त तय होते हैं। फिर उनके लिए मुहूर्त की क्या आवश्यकता है? सूर्यदेव के प्रति उपकृत भाव प्रकट करने वाले गीतों को ही 'परभात्या' कहते हैं।

मध्यप्रदेश के निमाड़ जनपद में जिस दिन लग्न टीप लिखकर आती है, उसके दूसरे दिन ऊषाकाल में ब्रह्ममुहूर्त से ही सूर्यस्तुति के गीत शुरु हो जाते हैं। इन गीतों में विलक्षण रचना कौशल पाया जाता है। सूर्योदय से पूर्व कुकड़ा (मुर्गा) का बोलना, सबको जगाना, मंगल का प्रतीक माना जाता है। सूर्योदय से पूर्व का चित्र इन गीतों का वर्ण्य विषय है। कहीं सूर्य बैड़ा (टेकरी) की किनार से उदित होता

है, तो कहीं झुरमुट से सूर्य की लाली छिटककर प्रभात का लालित्य बिखेर देती है। सुपर्ण अपने पंखों में रंग भर लेना चाहते हैं। कोयल, मोर और मुर्गे बोलकर जीवन का मंगलमय भाव उत्पन्न करते हैं।

प्रभात होते ही ईश्वर का स्मरण करना, हमारी संस्कृति का मूल भाव है। महिलाओं के कंठ चारों धाम के अपने देवी-देवताओं को जगाने के लिए फूट पड़ते हैं। गीत है -

शुक्रभान कुकड़ों सारऽ बोलऽ
कोयळऽ शब्द सुणावियाऽ
कुकड़ा ते चारई देवऽ बोलऽ बचनऽ काऽ रेऽ कूकड़ाऽ--
इनी बद्रीनाथऽ का बद्री विशालऽ जागियाऽ
रामेश्वर का रामेश्वरऽ देवऽ
बोलऽ वचनऽ काऽ रेऽ कूकड़ाऽ
इनी द्वारका काऽ द्वारकादीस जागिया
पुरी काऽ जगन्नाथऽ देवऽ
बोलऽ वचनऽ काऽ रेऽ कूकड़ाऽ..... ।

शुक्रभान मुर्गा बोलकर सबको जगा रहा है। जीवन का सारांश सुना रहा है। कोयल मधुर शब्द सुना रही है। रे मुर्गे! तेरे बोलने से सब जाग गए हैं। चारों धाम के चारों देवता जाग गए हैं। बद्रीनाथ के बद्रीविशाल जाग गए हैं। रामेश्वर धाम के रामेश्वर भगवान् शिव जाग गए हैं। द्वारकाधाम के द्वारकाधीश एवं पुरी के जगन्नाथ स्वामी जाग गए हैं।

इसी प्रकार महिलाएँ अपने परिवार के पुरुषों, बहुओं, बेटियों और दामादों के नाम गीत में जोड़-जोड़ कर उन्हें जगाती हैं। कूकड़ा का सार यही है कि देव जागेंगे तो नियति की गति सुचारू रूप से चलती रहेगी। कुकड़ा- परभात्या गीतों को ध्यान से सुनें तो इनकी गति बड़ी चंचल होती है। रात्रि के विश्राम के पश्चात् सूर्य देवता आए हैं, नव जागृति, नव चेतना लेकर धरती ने आँख खोली है। इन गीतों में लक्षणा शब्द शक्ति मौज़ूद है।

कुंकुम काऽ वरणऽ कईं सूरिमलऽ उँग्योऽ
मोतीऽ काऽ वरणऽ अम्बो मौरियो जीऽ... ।

कुंकुम के वर्ण की लाली लिए हुए सूर्य देवता उदयाचल से उदित हो गए हैं। मोतीवर्णी रूप लेकर आम्रवृक्ष बौरा गया है। बौराना शब्द आनंदातिरेक का परिचायक है, द्योतक है।

सूर्योदय के साथ धरती का रक्तिम रूप मन मोह लेता है। इन गीतों में कहीं-कहीं भ्राँति भाव भी नज़र आते है, जैसे

ऊँग्यो-ऊँग्यो सूरियाभानऽ
रंगऽ कुसुमलऽ हुई रह्यो जीऽ
भरया-भरया रतन तळावऽ
रंगऽ कुसुमल हुई रह्यो जीऽ... ।

सूर्य की लालिमा ने धरती को मोहक और मनोहारी बना दिया है। चारों ओर लाली पसर गई। तालाब का जल भी लाल हो गया है। उस लाल रंग से मोठा भाई की पागा (पगड़ी) रंग दो और मोटी बहू की साड़ी रंग दो।

सूर्य की लाली ने जल को लाल कर दिया और इससे सभी का जी ललचा गया। गीत में उस रक्तिम वर्णी तालाब के जल में मोटा भाई की पाग एवं मोटी बहू की साड़ी रंगवाने की अरज करते हैं। इसके साथ एक प्रभात्या गीत उदात्त प्रकृति का है, जिसमें घर की गृह-स्वामिनी परिवार को जगाकर, उन्हें दान धर्म करने की बात करती है। वहीं घर की छोटी बहुओं को प्रेम से जगाती है।

सुघड़ऽ भयो परभातऽ
मोटा भाई तुमरी अटारी परऽ मोरऽ बोळऽ,
सूरिया रथऽ हाकी आया।
मोठा भाई जागो, ळेवो सिरी रामऽ को नावऽ।
तुम न्हाओ गंगा स्नान, करो गौआ को दानऽ।
जागो नानी वबूऽ, चीरऽ सम्हाळो,
भूज बंदऽ पर देवो ववूवरऽ कीळऽ जीऽ।

सुन्दर प्रभात हुआ है। महिलाएँ गीत में कहती हैं- मोटा भाई तुम्हारी अटारी पर मोर बोल रहे हैं। तुम जागकर श्रीराम का नाम लो। गंगा स्नान करो और गौ-दान देकर अपने राजपाट के काम में लग जाओ। वे बड़े स्नेह से छोटी नादान बहुओं को जगाती हैं और कहती हैं- 'हे बहू! जागो, अपने अस्त-व्यस्त वस्त्रों को सुव्यवस्थित करो, तुम्हारे हाथ के भुजबंध खुल गए हैं, उनकी कील लगाकर आभूषण धारण कर लो। सुन्दर प्रभात हो रहा है। मनोहारी प्रभात हो गया है।

साँझ के समय पर गाये जाने वाले गीत सांजुली (साँझुली)

कहलाते हैं। सांजुली गीत दीपक की लौ के मानिन्द मंथर गति से चलते हैं। इनकी लय भी तरल एवं माधुर्य भाव की होती है। साँजुली गीतों का माधुर्य मन को मोह लेता है। दिन भर के श्रम-परिश्रम को विश्राम की आवश्यकता होती है। स्वयं सूर्य भी अस्ताचल को विश्राम के लिए चले जाते हैं। दिनभर के बिछड़े, सभी के मिलन का अवसर लेकर आती है संध्या-गौचारण से रम्भाती गाय से बिछड़े बछड़ों का मिलन; पति-पत्नी का मिलन; ये मिलन सृष्टि का संचरण करते हैं; दीपक और बाती का मिलन अंधकार का नाश करता है, यही मिलन भाव के गीत हैं-

साँझऽ भई दिनऽ आथणऽ लाग्यो,
दीया बत्ती हुयो रेऽ मिलाप
बयलड़ी साँझुली।
राजा राणी हुये रेऽ मिलापऽ
बयलड़ी साँझुली।
गौआ बछुवा हुयो रे मिलाप
बयलड़ी साँझुली।

साँझ हो रही है, दिन धीरे-धीरे अंधकार के आँचल में समा रहा है। दीपक और बाती का मिलन हो रहा है। यह संध्या सुहावनी आ गई है। राजा रानी का मिलन हो रहा है। गाय बछड़े का मिलन हो रहा है। सुहावनी संध्या आ गई है।

इस गीत में प्रतीकों के माध्यम से जीवन के विभिन्न आयामों के दर्शन होते हैं। दीपक-बाती का मिलन जीवन का शाश्वत स्वरूप है। राजा-रानी का मिलन सृष्टि की निरंतरता का प्रतीक है, वहीं गाय- बछड़े का मिलन ममता और वात्सल्य का बोधक है। इन गीतों में पारिवारिक सौहार्द्र का सरोवर लहराता है। एक गीत और है, जिसमें आम्रवन की कोयल से पूछा जाता है कि तेरा रसिक सोगीटा कहाँ है और कोयल उत्तर देती है -

दिनऽ सोगिटड़ो अम्बा वनऽ
रातऽ पीयू म्हारा जोणऽ...
हाँऊँ तमनऽ पूछू म्हारी वबू ओ लाड़ी वबू
थारो छैव्वों साहेबऽ काँऽ छेऽवो
दिन साहेबऽ जीऽ कचेरी सिधाऱ्या
रातऽ छप्पर पलंगऽ परऽ,
वो म्हारी बादल वर्णी वो
सगुणी साँझुली आवऽ... ।

हे कोयल! मैं तुम से पूछती हूँ, तुम्हारा सोगीटा कहाँ हैं?, वह कहती है-दिन में सोगीटा वन-उपवन में गया, रात को मेरे पास है। हे बहू! मैं तुमसे पूछती हूँ कि तुम्हारा प्रियतम कहाँ है? बादल वर्णी श्याम सलोनी संध्या आ रही है। दिन में प्रियतम अपने काम में व्यस्त रहते हैं; किन्तु रात को मेरा साहेब मेरे साथ छप्पर पलंग पर रहता है। श्यामवर्णी सर्वगुणी संध्या आई है। छप्पर पलंग पति-पत्नी के मिलन का स्थान आनन्द का परिचायक है।

साँजुली गीतों में ऐश्वर्य और सम्पन्नता के दर्शन भी होते हैं। जहाँ दीपक को गढ़ने वाला इन्द्र का लुहार होता है, देखें-

जी होऽ यहीऽ रेऽ दिवळो इन्द्र लुहार घड़्योऽ
जेऽ मऽ पुरव्यो सवा घड़ो तेलऽ
सोहनऽ डाँडी दिया रेऽ वळऽ
जी होऽ यही रेऽ दिवळो मंदिरऽ मंऽ धऱ्यो
जहाँ बठऽ म्हारऽ गणपत देवऽ...

मेरे घर दीये जल रहे हैं। इन दीपकों को स्वर्ग के राजा इन्द्र के लुहार ने बनाए हैं। इसमें सवा घड़ा तेलभर दिया है। इन दीपकों को रखने के लिए सोने के खम्ब लगे हैं। दीपक घर के विभिन्न कक्षों, मंदिर और आँगन में रखे गए हैं। जहाँ घर के मुखिया बैठे हैं।

साँजुली गीत बड़े रसिक भी होते हैं। इन गीतों में पति-पत्नी के हास-परिहास, विनोद और नोक-झोंक के गीत भी मिलते हैं। प्रस्तुत गीत में यही भाव हैं -

हऊँ अगवाड़ऽ लगाऊँ अम्बा आमली।
पिछवाड़ऽ नऽ हो असी नागर बेळऽ
कि रंगभरी दीवळो संजोवती...
वो तो हँसी रळई पूछऽ पीयूजी....
थारो रेऽ वालैयो कूणऽ...
ओऽ तो प्रथमऽ वाऽ लैलो म्हारा पिताजीऽ

हे प्रियतम! मैंने आगे आँगन में आम-इमली के वृक्ष लगाये हैं, और पीछे के आँगन में नागर बेल (पान की बेल) लगाई है।

मैंने श्रृँगार कर लिया है। दीपक संजोए हैं। पति पूछते हैं- 'हे प्रियतमा! तुम्हारा वाली (स्वामी) कौन है?' पत्नी उत्तर देती है?- 'मेरा वाली मेरे माता-पिता, भाई-भौजाई-बहन हैं।'

पत्नी की इस बात को सुनकर पति नाराज हो पत्नी को मार देता है। पत्नी समझ गई कि पति को विनोद भी समझ में नहीं आता, तब वह समझदारी से उत्तर देती है, 'उसका वाली उसके सास-ससुर, देवर-जेठ और स्वामी हैं।' तब पति अपनी पत्नी से खुश होकर कहता है -

गोरी थाराऽ यही होऽ
वचनऽ का कारणऽ
घड़ाइसऽ हो तुखऽ नवलखऽ हारऽ
कि रंगभरी दीवलो संजोवती

'हे प्रियतमा! तुम्हारी इसी समर्पण भावना के कारण, मेरे परिवार को आदर देने के कारण, मैं तुम्हें नौसर का नौलखा हार घड़वा दूँगा। मैं तुमसे खुश हूँ।' इस गीत के भाव में बड़ा ही गूढ़ार्थ छुपा है। जब पत्नी अपने पीयर के सदस्यों को अपना रखवाला बताती है, तो पति कुपित हो पत्नी को मार देता है; किन्तु जब पत्नी पति के परिवार को अपना रखवाला कहती है, तो पति प्रसन्न हो उसे नौलखा हार घड़वा देता है। गीत के बोल में रहस्य छुपा है कि परिवार में अन्य लोगों के दखल से पारिवारिक सुख-शांति भंग होती है।

साँजुली, प्रभात्या गीत विवाह के आनन्द की रसानुभूति हैं। रात्रि और दिवस का मिलन संक्रमण काल; आनन्द मंगल का द्योतक है।

बधावा गीत

फुलड़ा की अँगिया सिवाड़ऽ

आम-अमराई, बाग-बगीचे, कुआँ-बावड़ी, नदी-पनघट, ये सब हमारे संस्कार स्थल हैं और यहीं से उपजी है हमारी सांस्कृतिक धरोहर - लोकगीत। ये स्थल ऐसे होते हैं, जहाँ मनुष्य रम जाता है। उसके अंतस में आनंद की हिलोरे उठने लगती हैं। लोकगीत चित्त के आनन्द से निःसृत अनुभूति ही तो है।

प्रकृति, पशु-पक्षी, रीति-रिवाज़, जीवन मूल्य और नाते-रिश्तों से हमारा रूप, रस, गंध का सरोकार रहता है। हमारी प्रकृति और संस्कृति, दोनों परस्पर पूरक हैं। विवाह अवसर पर भोर में ब्रह्ममुहूर्त में मुर्गे की बाँग (आवाज़), सुहावना प्रभात और मंगल कामना के बधावा गीत गाए जाते हैं। एक गीत है -

सूरज भानऽ कुकड़ोऽ सारऽ बोलऽ
कोयळऽ शबद सुणावियाऽ
पीयूजी आजऽ म्हारा घरऽ सोयळोऽ।
कुंकुम का वरणऽ कईं सूरिमलऽ ऊँग्योऽ... हो
मोती का वरणऽ अम्बो मवरियो जीऽऽऽ... ।
आमुलड़ा रीऽ डाळऽ सिंगासणऽ जाई गड़जो
गड़जो लाड़ी वऽ चोळई पातऽ कीऽ जीऽऽऽ।।

सूर्यभान कुकड़ा (मुर्गा) जीवन का सार सुनाकर सबको जगा रहा है। कोयल मधुर गीत सुना रही है। हे प्रियतम! आज मेरे घर शुभ मंगल लेकर प्रभात आया है। कुंकुम के रंग की लाली लेकर सूर्य उदित हो रहा है। मोती के रंग का बौर आम्रवृक्ष को आच्छादित कर रहा है। हे प्रियतम! आम्रवृक्ष की लकड़ी से सिंघासन गढ़वा दीजिए और जो कोमल सुकोमल नवपल्लव हैं, उन स्निग्ध पातों से मेरी लाड़ली बहू की चोली सिलवा दीजिए।

विवाह के हर अवसर के हर बधावा गीतों में गूढ़ अर्थ है। अपने अक्षर के नाम पर निरक्षर महिलाओं की कल्पनाशीलता एवं आशावादिता के ये अनुपम उदाहरण हैं। कहीं गृह-स्वामिनी अपनी बहू के लिए पान की चोली सिलवाने की कल्पना करती है, तो कहीं फूलों से लदा वृक्ष देखकर उनसे अंगिया सिलवाने का लोभ संवरण नहीं कर पातीं। एक बधावा में पत्नी पति से कहती है- अपने आँगन में चम्पा वृक्ष बौरा गया है। फूल के भार से डाली झुक गई है। फूल का अन्त पार नहीं है। फूलों का रस ज़मीन पर चू रहा है। यह सब देख वह इतनी बावली हो उठी कि उसने वे सब फूल गोद में भर लिए और पति से अर्ज करने लगी- इन फूलों की मेरे लिए अंगिया सिला दीजिए। पति समझाता है, तुम नादान मत बनो, फूलों से पोशाक कैसे सिल सकेगी?' पर पत्नी की ज़िद के आगे लाचार हो वह दर्जी की दूकान पर चल दिया -

आगऽ डोलो नऽ पाछऽ मारुणी,
दोयऽ मिल दरजी क्याँऽ जायऽ... ।
दरजी को डोठो म्हारो माड़ी जायोऽ

फुलड़ा की अँगिया सिवाड़ऽ
खणऽ मसरू होयऽ तो बेवतऽ करूँ
फुलड़ा को बेवतऽ नी होयऽ.. ।

दर्जी की दूकान पर जाकर पत्नी कहती है– हे दर्जी भाई! तू मेरे माँ जाया जैसा भाई है, तू मेरे लिए इन फूलों की अँगिया सिल दे। दर्जी अपनी लाचारी बताते हुए कहता है– खणऽ, मसरू हो तो मैं उस कपड़े का नाप लेकर अँगिया सिल दूँ, पर फूल का तो नाप भी नहीं ले सकता, ना ही तुम्हारे नाप का वस्त्र काटकर अँगिया सिल सकता हूँ। वस्त्राभूषण नारी के सौन्दर्य के प्रतिमान हैं।

प्रत्येक नारी की यही लालसा होती है कि वह सामान्य से हटकर श्रृँगार करे। कुछ बधावा गीतों में सूर्य की लाली से चूँदड़ रंगने की बात है, तो कहीं धूप की सुनहरी किरण जड़ने की बात बधावा गीतों का वर्ण्य विषय रहा है। लाल रंग शुभ और मंगल–सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है। प्रभात्या गीत में सूर्य की लाली से वस्त्र रंगने के भाव मिलते हैं –

ऊँग्यो–ऊँग्यो सूरिया भानऽ
रंग कुसुमलऽ हुई रह्योऽ जीऽ
भरया भरया रतनऽ तळावऽ
नीरऽ कुसुमळऽ भरी रह्याऽ जीऽ
रंगोऽ रंगोऽ दुल्लवऽ भाई की पागऽ
लाड़ी वउ की चूँदड़ीऽ जीऽ...

सूरज देवता उदित हो रहे हैं। सभी दिशाओं में लाली फैल गई है। रत्न तालाब लाल जल से भरा हुआ है। इस लाल रंग से दुल्लव भाई की पागा रंग दो और नई दुल्हन बहू की चूँदड़ रंगवा दो।

प्रकृति के सान्निध्य में रहने का सुख शाश्वत है। कभी–कभी जलती तपती दोपहरी में भी आम्रवन की स्मृति मात्र से मन को शीतलता का एहसास होने लगता है। कभी हरी गदराई अमिया में धँसी सुवा की लाल चोंच देखकर मन होता था, इस सुवा को घर ही क्यों न ले चलें। फिर इसे चुगने को दें, इसकी अनुपम छटा मनोमुग्धकारी, मनोहारी होगी। वही भाव बधावा गीतों में हैं। ऐसा ही एक बधावा गीत –

तुमऽ तो आवजो नऽ हो अम्बावन का सोगीटड़ाऽ..
आजऽ मोठाजी भाईऽ घरऽ सोयळो,
तुमरी चोंचऽ नऽ हो हीरा रत्न जड़ावाँऽ..
बोलो तो लागोऽ सुहावणाऽ
तुमराऽ पंखऽ नऽ हो झिलमिल मोती जड़ावाँऽ
उड़ो तोऽ लागोऽ सुहावणाऽ ।
तुमराऽ चुगणऽ खऽ हो साचा मोती देवांऽ
चुगो तो लागो सुहावणाऽ ।

हे आम्रवन के सुवा (तोता) ! तुम मेरे घर आओ। मेरे मोठा भाई के घर मंगलकार्य है। हे सुवा! तुम्हारी चोंच को हीरा आदि रत्नों से जड़वा दूँगी। फिर तुम बोलोगे तो तुम बहुत सुहावने लगोगे। तुम्हारे पंखों पर झिलमिल मोती टकवा दूँगी, फिर उड़ोगे तो तुम्हारा रूप मनोहारी हो उठेगा। तुम्हें खाने को सच्चे मोती दूँगी। चुगोगे तो तुम्हारा रूप से लावण्य छलकने लगेगा।

बधावा गीत बड़े ही सरस एवं रम्य होते हैं। यूँ तो विवाह ही मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा मांगलिक अनुष्ठान है, फिर उसके गीतों की तो महिमा ही न्यारी है। निमाड़ी के जितने भी बधावा गीत हैं, उनकी एक विशेषता है– उनमें आम, जामुन, इमली, केल, कोयल, मोर, सोगिटा (मिट्ठू), किसी न किसी रूप में, किसी न किसी भाव में विद्यमान हैं। बहू अपने पिता के घर विवाह में जाना चाहती है, वह अति आनन्दित है, पर इस आनन्द को वह स्वयं अभिव्यक्त नहीं कर सकती। यहाँ वह कोयल से तादात्म्य भाव स्थापित कर अपनी बात अपने पति से कहती है, यहाँ पति के लिए सुवा संबोधन भी है–

अम्बा जोऽ वनऽ पिया नऽ होऽ
कोयळऽ बोल्या होऽ
चलो सुवाऽ, चलो सुवाऽ, अम्बा वनऽ आमलीऽ
वरसऽ नऽ रह्यसा पिया नऽ होऽ
मासऽ नऽ रह्यसाऽ होऽ
काचाऽ ते पाकाऽ वनऽ फळऽ गदऽरह्याऽ
माची बसन्ता पिया नऽ मोठी बईणऽ बोल्यो होऽ
चलो पियाऽ, चलो पियाऽ वीरा जीऽ घरऽ पावणाऽ
चारऽ जो दिनऽ का वीराजी घरऽ पावणाऽ ।

आम्रवन की कोयल कहती है- हे सुवा! चलो, हम आम-इमली के वनों में चलते हैं। हम वहाँ वर्ष, मास नहीं रहेंगे, अपितु गदराये फल खाकर लौट आयेंगे। आसन पर बैठी मोठी बहन अपने पति से कहती है- हे प्रियतम! भाई के घर मंगल कार्य है। उन घर मेहमान बन कर चलेंगे। ज्यादा दिन नहीं रूकना है, चार दिन के ही मेहमान बनकर जायेंगे। विवाह सम्पन्न होते ही अपने घर प्रस्थान कर देंगे।

हम जितने अधिक प्रकृति के साथ रहेंगे, उसके करीब रहेंगे, उतने ही अधिक हममें प्रकृति के प्रति नैसर्गिक प्रेम उपजेगा। सही मायने में हमारे गीत, प्रकृति की ही देन हैं। जहाँ हम मर्यादा पुरुषोत्तम राम की बात करें, तो वहाँ भी वे अपना दु:ख बाँटने, सीता की खबर पाने के लिए तरु-पल्लव-लताओं खग-मृग से बात करते हैं, वैदेही की खबर पूछते हैं, तो कहीं भौरों से बात करते हैं -हे खग-मृग! हे मधुकर श्रेणी! तुम देखी सीता मृगनैनी। कहीं शकुन्तला, लता-पल्लव, हिरण शावकों से बात करती है। निमाड़ी लोकगीतों में तो उससे भी अधिक उदात्त भाव हैं, विराट की कल्पना संजोये हैं। तोता-मैना, मोरला, मिट्ठू-कोयल संवाद तो गीतों को विस्तार देते ही हैं; किन्तु भौंरे से संवाद की कल्पना, कितना सूक्ष्म अवलोकन है निमाड़ की लोक नारी का, जो सिर्फ़ गुन-गुन में ही अपनी बात करता है; उससे संभाषण भाव, कैसा अनोखा पहलू है- जहाँ भाषा नहीं, भाव ही काम करते हैं, बधावे गीत अद्वितीय हैं, जो संसार के समस्त सुखों का निचोड़ तो बताते ही हैं, साथ ही शिक्षा भी देते हैं। एक गीत में संदेश है, अपने देश में ही सब सुख हैं, अन्यत्र भटकने की आवश्यकता नहीं-

हाऊँ तमनऽ पूछूँ वाड़ी का भवरूलाऽ
सब रसऽ काहें को होयऽ,
रटणऽ रटोऽ रे अपणा देशऽ मऽ
रसऽ अम्बो नऽ रसऽ आमली
सबऽ रसऽ लिम्बू को होयऽ
रटणऽ रटोऽ रे अपणा देशऽ मऽ
हाऊँ तमनऽ पूछूँ वाड़ी का भवरूलाऽ
सबऽ सुखऽ काहें को होयऽ...
रटणऽ रटोऽ रे अपणा देशऽ मऽ
सुखऽ सासरो, सुखऽ मायक्योऽ
सबऽ सुखऽ कूकऽ को होयऽ

हे बाड़ी के भौंरे! मैं तुझसे एक सवाल करती हूँ। तू मुझे बता सब रस किसमें होता है? भौंरा कहता है- रस आम का भी है, रस इमली का भी है, किन्तु नींबू का रस सर्वोत्तम है- हे भवरूला (भौंरा)! तू मुझे बता दुनिया का सबसे बड़ा सुख कहाँ है? भौंरा कहता है- सुख ससुराल में भी है, सुख पीयर में भी है, पर असली सुख, सच्चा सुख कोख का अर्थात् माँ बनने का है, संतान का है। मातृत्व भाव ही सांसारिक सुख में सर्वोत्कृष्ट है। पर भौंरा कहता है- तुम अपना देश छोड़कर मत आना। तुम्हारा मान आदर तुम्हें अपने देश में ही मिलेगा। मातृ भूमि को नहीं छोड़ना चाहिए। सब सुख अपने देश में ही हैं।' निमाड़ी बधावा गीतों में राष्ट्र भक्ति की शिक्षा भी सन्निहित है।

बधावा गीतों में जहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य बिखरा पड़ा है, वहीं उनमें माँगलिक द्रव्यों, पशु धन-धान्य, सुख, ऐश्वर्य, समृद्धि, पारिवारिक और सामाजिक एकता, आदि के भी अनुपम उदाहरण मिलते हैं। ऐसा ही एक गीत है-

जीऽ होऽ असो रेऽ बधाओ म्हारघा आवियोऽ
जीऽ हो म्हारघा चारई भाई की जोटऽ,
देराणीऽ जेठाणीऽ को झुमकोऽ
जीऽ होऽ म्हारघा गौरेऽ भैंस्याँऽ को ठाटऽ
सोहनऽ डाँडी बिलोवणोंऽ।

जी हो! मेरे घर चारों भाइयों में मेल-मिलाप और एकता है। देवराणी-जेठाणी में एकता है। वे एक झुमके जैसे शोभायमान हैं। मेरे यहाँ गाय-भैंसों से बाड़े भरे हैं और स्वर्ण खम्ब के साथ दही मथने की बिलौनी टिकी हुई है।

पारिवारिक एकता, सुख, पशुधन से सम्पन्नता का बिम्ब रस बधावा गीतों की चार पंक्तियों में समायोजित है। कितने परिमार्जित और परिष्कृत विचारों ने खोजे हैं, निमाड़ के बधावा गीत; शब्द सम्पदा, अर्थ सम्पदा, भाव सम्पदा का अक्षय भण्डार हैं। यदि हम प्रकृति से न जुड़े होते तो हमारे लोकगीतों का जन्म ही नहीं होता।

बघेलखण्ड में विवाह संस्कार

डॉ. निशा जैन

भारतीय समाज का जीवन बहुत कुछ परम्पराओं और रीति-रिवाजों पर आधारित है। यह पुरातन परम्पराएँ उसे समाज से विरासत के रूप में मिली हैं। भारतीय समाज में परम्परा की यात्रा बराबर चलती रही है, जो आधुनिक काल में भी देखी जा सकती है। समाज की इन परम्पराओं ने समय के साथ क्षेत्र विशेष में अपने स्वरूप को संवारा एवं परिवर्तित किया है। हिन्दू समाज की पुरानी परम्पराएँ, रीति-रिवाज और लोकाचार बघेल क्षेत्र में पल्लवित और पुष्पित हुई। उन्होंने अपना एक विशेष स्वरूप ग्रहण कर लिया था। अपने इस रूप के कारण उन्हें बघेली परम्पराओं के नाम से जाना जाता है।

बघेल समाज में परम्पराओं, रीति-रिवाजों और लोकाचारों की झलक समाज के हर पहलू में दिखाई पड़ती हैं। बघेलखण्ड की सामाजिक संस्थाओं में विवाह का अपना महत्त्व है। विवाह एक सर्वव्यापी और सार्वभौम संस्था है, जो सभी समाजों में विद्यमान है। इससे वंश-कुल तथा परिवार की निरन्तरता बनी रहती है। हिन्दू धर्म-शास्त्रों में विवाह को धार्मिक संस्कार माना है। इसमें देवताओं का आवाहन करके वर और वधू को वैवाहिक बंधन में बांधा जाता है तथा यह बंधन अत्यधिक पवित्र, अटल और अविच्छेद माना जाता है। बघेलांचल में विवाह के उपर्युक्त स्वरूप परम्परागत रूप से विद्यमान है- ब्रह्म, देव, आर्ष और प्रजापत्य आदि विवाह। परन्तु मुख्यत: सर्वज्ञ सजातीय विवाह सर्वाधिक प्रचलित थे। विवाह जाति, पिण्ड, गोत्र के अतिरिक्त वर-वधू की वयक्तिक गुणात्मक योग्यता पर विचार करने के बाद तय किए जाते हैं। विवाह के बाद 'गवना' करने का विशेष रिवाज था, जो आज भी प्रचलित है। समाज में एक पत्नी विवाह की परम्परा सर्वाधिक है। परन्तु राजा-महाराजा या बड़े-बड़े सामन्त बहुपत्नी विवाह भी करते थे। बघेलखण्ड के सभी बघेल नरेशों की बहुपत्नियाँ होना, इस बात का प्रमाण है।

बघेल समाज में विवाह के लिए एक निश्चित आयु का निर्धारण पारम्परिक रूप से नहीं दिखाई पड़ता। बघेल राजाओं ने 19 वीं शताब्दी में विवाह के लिए बालक-बालिका की उम्र निश्चित कर दी थी। परिणामस्वरूप 18 वर्ष से कम आयु के बालक तथा 15 वर्ष से कम आयु की बालिका का विवाह करना प्रतिबंधित था। पारम्परिक तौर पर पति-पत्नी का सम्बन्ध अत्यन्त सुखद, पावन और पवित्र माना जाता था।

बघेल समाज में सोलह संस्कारों में से केवल सात संस्कार सर्वाधिक प्रचलित दिखाई पड़ते है-जन्म, पसनी, उपनयन, कर्णभेदन, चूड़ाकरण, विवाह तथा अन्त्येष्टि। बघेलखण्ड में विवाह अधिक धूमधाम से मनाया जाता है। विवाह संस्कार का शुभारंभ वरिच्छा के दिन से होता है और परछन के साथ ही विवाह की सारी प्रक्रिया सम्पन्न हो जाती है। बघेली समाज में विवाह जिस रीति, परंपरा और लोकाचार के साथ संपन्न किया जाता है और विवाह के विभिन्न रस्मों-रिवाजों के अवसर पर जो गीत गाये जाते हैं, उनका वर्णन निम्नानुसार है।

वरिच्छा

इस दिन कन्या पक्ष के लोग कुछ रूपया, हल्दी, चावल, तथा नरियल लेकर वर पक्ष के यहाँ आते हैं। इसी समय विवाह की तिथि पक्की करते हैं। तिलक की तिथि भी इसी दिन तय की जाती है। वरिच्छा परम्परा लगभग सभी जातीय समुदायों में प्रचलित है।

तिलक

पूर्व निश्चिय तिथि के दिन कन्या पक्ष के लोग भाई तथा पण्डित तिलक चढ़ाने आते हैं। तिलक में नारियल, चंदन, हल्दी, रूपया, थाल, वस्त्र, आभूषण लाने की प्रथा है। तिलक, विवाह के निश्चय का संकल्प है।

पान का पठयों दुलहे दुलेरूआ कहना रह्याउ वेलमाय।
की बेलम्या तुम राजा दरबरिया की बेलम्या ससुरार।
ना हम बेलमन राजा दरबरिया ना बेलमेन ससुरार।
हम तो बेलमेन आजा बगैचा कोइली गहागह लेय ।
हम तो बेलमेन पिता के बगैचा जहाँ कोइली गहागय लेय।
हम तो बेलमेन काका के बगैचा जहाँ कोइली गहागय लेय।
हाथ कै हिरौधी मैं तोही देहों फंसिया कोइली पकरि लै आव।
डर-डर बउड़े फंसिया बेटउना पत-पत कोइली लुकाय।
कोइली पकरि के जंघ बैठाइन पूछै कोइलिया से बात।
काहे मंढ़ाऊं तौर अंखना रे पखना काहे मढ़ाऊं तोर चोच।
रूपवा मढ़ावा मोरे अंखना रे पखना सोनवा मढ़ावा मोरी चोच।

लग्न पत्रिका

तिलक की रस्म के पश्चात् इसी दिन विवाह की लग्न बनती है। लग्न पत्रिका हल्दी चूने से लिखी जाती है। उसमें सुपारी, दूब, पैसा, चावल रखकर सूत में लपेटकर कन्या पक्ष के पास भेजा जाता है।

भृत्तिका मंगल कृत्य

इसे बघेली में 'मटिमगरा' कहते हैं। यह कृत्य वर तथा कन्या दोनों पक्षों में किया जाता है। स्त्रियाँ एकत्र होकर घर के पूर्व या उत्तर की ओर मिट्टी खोदने जाती हैं। उस समय कुदाली, झोवा और पृथ्वी की पूजा होती है। इसी दिन हवन के लिए आम की लकड़ी मंगवाई जाती है।

अरगा

मटिमगरा के पश्चात् वर पक्ष की ओर से वधू के लिए साज-श्रृँगार की सारी सामग्री जिसमें खास तौर पर मेहंदी भेजी जाती है, जो मण्डप के नीचे वधू को बैठाकर लगाते है एवं श्रृँगार किया जाता है। यह रस्म वर-वधू दोनों पक्षों में होती है। इस अवसर पर गाया जाने वाला गीत-

बेगि करा तैयार बनरा को बेलमायों रे।
आजी ने बेलमायी बनरा आजी अंग लगायो रे।
जल्दी करा तैयार बनरा को बेलमायों रे।
अम्मा ने बेलमायों नरा दाऊ अंग लगायों रे।
जल्दी करा तैयार बनरा को बेलमायों रे।
काकी ने बेलमायों बनरा काकी अंग लगायो रे।
जल्दी करा तैयार बनरा को बेलमायों रे।
भौजी ने बेलमायों भैया अंग लगायो रे।
बेगि करा तैयार बनरा की बैलमायों रे।

× × ×

जैसे सेधौरी मां सेन्दुर झलकै जैसे गंगा जल पानि।
तैसे झलक दै के निकरी लड़ेलिदेई चौके मां बैठी आय।
काहे बेटी अनमन काहे बेटी उनमन काहे बेटी बदन मलीन।
मैं तोसे पूछौ बेटी तोर सोनवा मलीन धौ रूपवा है खोट।
ना माया मोर सोनवा धूमिल ना रूपवा है खोट।
हम धन गोर पिया मोर सांवर ये गुन बदन मलीन।
सांवर-सांवर ना करा बेटी सांवर है भगवान।
संवरे कन्हैया मुख मुरली बजावै मोहि रहे संसार।
माया के कोख कुम्हार के आंवा कोउ करिया कोउ गोर।

मंडवा

इसी दिन मण्डप बनाया जाता है। बघेली में इसे 'मड़वा' कहते हैं। इसमें सत्रह खंभे रहते हैं। ऊपर जामुन या नीम की पत्ती होते है, मण्डप के बीच में सवरी और मगरोहन गाड़ते हैं। अहीरों के यहाँ मूसल गाड़ने का प्रचलन है। मड़वा वर तथा कन्या दोनों के यहाँ गाड़ा जाता है।

बिनौरी निकालना

वर को वधू पक्ष की तरफ से आई श्रृँगार सामग्री एवं वधू पक्ष को वर पक्ष की ओर से आई श्रृँगार सामग्री से श्रृँगार कर उनकी बिनौरी निकाली जाती है और उन्हें मंदिर ले जाया जाता है। रास्ते में सम्बन्धित रिश्तेदारों या समाज के लोगों के घर पड़ते है, वो उन्हें रोककर उनकी गोद में बताशा, चावल, नारियल-पैसा-वस्त्र इच्छानुसार देते हैं। माथे पर टीका लगाते हैं और मुँह मीठा करते हैं। घर वापस लौटने पर माँ दरवाजे पर पानी उतारती है। उसके बाद वर एवं वधू को भोजन कराया जाता है, जिसमें खटाई नहीं दी जाती है। यह मान्यता है कि इनका दाम्पत्य जीवन सुखमय रहे। कभी इनके जीवन में, इनके रिश्ते में खटास उत्पन्न न हों। इस अवसर पर महिलाएँ यह गीत गाती हैं-

बखरी तो भली बनवाया हो कउन सिंह,
सुरिजन मुंहे का दुआर।
ओही व्है के निकरी हैं बेटी को कउन कुंवरि,
गोरे बदन कुम्हिलाय।
कहा तो मोरी बेटी छत्र तनाई,
कहा तो सुरिज अलोप।
काहे का मोरे दाऊ छत्र तनइहा,
काहे का सुरिज अलोप।
आजि कै राति दाऊ तुम्हारे मड़ये तरी,
काल्हि विदेशिया के हाथ।

× × ×

राजा बना बेगि चले आबा तुम्हें बिना अच्छा न लागैं,
राजा बना अपने बब्बा के प्यारे।
आजिउ के प्रान अधार- चला सखी देखन चलिये,
राजा बना बेगि चले आवा।
तुम्है बिन अच्छा न लागइ..
राजा बना अपने दाऊ के प्यारे ।
मम्मा के प्रान अधार-चला सखी देखन चलिये,
राजा बना बेगि चले आवा।
तुम्है बिना अच्छा न लागइ..
राजा बना अपने कक्का के प्यारे।
काकिउ के प्रान अधार-चला सखी देखन चलिये,
राजा बना बेगि चले आवा।
तुम्है बिना अच्छा न लागइ..
राजा बना अपने भइया के प्यारे।
भाभिउ के प्रान अधार-चला सखी देखन चलिये,
राजा बना बेगि चले आवा।
तुम्है बिना अच्छा न लागइ....

तेल चढ़ना

मड़वा के दिन ही लड़के-लड़की को तेल चढ़ाया जाता है। तेल तीन या पाँच कुँआरी कन्याएँ चढ़ाती हैं। इसके अनन्तर मातृपूजा का कार्य सम्पन्न होता है। इस दिन पहले गणेश पूजा होती है।

माता पूजन

इस दिन मड़वा के लिए गाड़े गए सोलह स्तंभ, मगरोहन, सवरी तथा पीढ़ा की पूजा होती है। तत्पश्चात् कोहबर तथा दरवाजे पर बने चित्रों की पूजा होती है। इसी दिन 'माय' बनाकर उसकी पूजा की जाती है। विपदाओं को उपस्थित करने वाली शक्तियों को उसके अंदर बंद कर दिया गया है। यह माय विवाह सम्पन्न हो जाने के बाद खोली जाती है। माता पूजन के दिन शंकर-पार्वती, राम-कृष्ण, कुल देवता, पितृदेव अन्य देवी-देवताओं को निमंत्रित

किया जाता है। इसी दिन से अपने-अपने सम्बन्धियों को दोनों पक्ष निमंत्रण देते है।

बहियन मा गनेश जिभियन मां बैठी माई शारदा
घर आये मेहमान नहीं जननी कउन रे कहां के
बेंदी चमकै लिलार कजरा कै बड़ी ....आय
खूब मिला है इनाम जाबइ जहाँ तहों कहबै

चीकट पहनाना

बारात निकासी के एक दिन पहले वर एवं वधू के ननिहाल से मामा उनकी माँ के लिए भात लेकर आते है। मण्डप के नीचे चौक बनाकर चौकी रखते है, उस पर माता-पिता को बैठाते हैं। मामा अपने साथ लाए कपड़े तिलक लगाकर उन्हें पहनाते है। फिर माँ भाई को तिलक लगाकर शकुन रुपये देती है। मण्डप के नीचे सभी मानदान वाले जितने रिश्तेदार होते हैं, सभी का तिलक कर शकुन के रूपये देते हैं।

महिर भरना

वर व वधू के यहाँ मेहर कच्चे हरिश की लकड़ी तथा वर पक्ष का मेहर खन्ता कर बनाया जाता है। इसे सनौरी से ढका जाता है। मेहर के नीचे छः छोटे-छोटे मिट्टी के बर्तन रखे जाते है, जिसमें मसूर की दाल व चावल बराबर मात्रा में मिला कर भरा जाता है। इसे मेहर की खिचड़ी तथा उन बर्तनों को करई गागर कहा जाता है, तथा एक बड़े घड़े में भरकर पानी रखा जाता है, जिसमें हल्दी डालकर उसकी पूजा की जाती है, जिसे विवाह सम्पन्न होने के बाद मोर छठ के दिन सिरा दिया जाता है।

हल्दी लगना

मण्डप के नीचे वर और वधू दोनों पक्ष अपने-अपने मण्डप के नीचे बैठते है, जहाँ सुहागनों द्वारा हल्दी लगाई जाती है। पान के पत्तों से सात बार हल्दी में डुबोकर वर एवं वधू को हल्दी लगाई जाती है। वर पक्ष में इस दिन लड़के को पुनः तेल चढ़ाया जाता है तथा बनरा गीत गाए जाते है। तत्पश्चात् लड़के का 'नहछू' होता है। फिर उबटन लगाकर नहलाकर महावर लगाते है। इसी समय मान कंकन भांजते है। इसी मण्डप के नीचे बारातियों का सामूहिक भोजन होता है और इस अवसर पर यह गीत गाये जाते हैं-

काहे का सेयों हरदी का बिरवा।
काहे का मैन मजीठ।
काहे का सेयों धेरिया कुंवरि।
पिअरी का सेयों हरदी बिरवा।
कच्चे का सेयों हरदी का बिरवा ।
चुनरी का मैन मजीठ।
धरम का सेयों धेरिया कवन कुंवरि।
कच्चे दूध पिआय।
खोरवन दुधवा कटोरवन पानी।
आजी ओखी लीन्हें ठाढ़।
एक नन्चू दुधवा पिया मोरी नातिन।
फेर चौके मा जाव।
तब नहि दुधवा पिआया मोरी आजी।
जब रह्यो बारि कुंवारि।
अब कैसे दुधवा पिओ मोरी आजी।
ठाढ़ विदेशिया दुआर।
खोरवन दुधवा कटोरवन पानी ।
माया ओखी लीन्हें ठाढ़।
एक नन्चू दुधवा पिआ मोरी बेटी।
तब नहि दुधवा पिआया मोरी माया।
जब रह्यो बारि कुंवरि।
अब कैसे दुधवा पिओ मोरी माया।
जब ठाढ़ विदेशिया दुआर।

बारात निकासी

बारात प्रस्थान करने से कुछ समय पूर्व दूल्हे को सजाया जाता है। उसका जामा जोड़ा, मोर और टिहरी सब कुछ देव को समर्पित किए जाते हैं, फिर बड़े-बूढ़ों का आशीर्वाद लेकर दूल्हे को पहनाए जाते हैं। दूल्हे की बहन दूल्हे को काजल लगाती है, जिसका उसे नेग मिलता है।

परछन

दूल्हे के सजने के बाद परछन होता है। दरवाजे पर चौक बना कर उस पर चौकी रखते है, जिस पर दूल्हा खड़ा होता है। लड़के के फूफा एवं जीजा दुपट्टा के चारों कोनों को चारों ओर से पकड़ते है, जिसके नीचे दूल्हा खड़ा होता है। वर की माँ दुपट्टा के ऊपर से सात बार मूसल, सात बार मथानी घुमाकर निकालती है, फिर वर को दूध का कुल्ला करवाती है। मीठा मुँह कर राई नमक

से नजर उतारती है। मंदिर में भगवान के दर्शन कर बड़े-बूढ़ों के आशीर्वाद के साथ धूमधाम से बारात विदा होती है।

बारात आगमन (द्वार चार)

कन्या पक्ष में बारात आगमन के दिन की तैयारियाँ की जाती हैं। गोधूलि में द्वारचार होता है। नाई नई मशाल तथा छाता लेकर लड़के को पालकी से उतारता है। इसके लिए उसे नेग मिलता है। इसके बाद दूल्हे को धूमधाम से द्वार पर लाया जाता है। वहाँ पर पहले गणेश पूजा होती है। स्त्रियाँ द्वारचार के गीत गाती हैं। इसी समय वर को कमटी छुआने का विधान है। उसी समय वधू आकर वर पर चावल फेंकती है। इसके बाद वर को लहकउर खिलाया जाता है। वहाँ पर उसके पैर धुलाए जाते हैं। और इस अवसर पर यह गीत गाये जाते हैं-

बनरा के सिर सेहरा मोतियन से गुहे हैं
आवा हो मालिन बैठा दुलैचा
करा मौरी कैर मोल हो- मोतियन से गुहे हैं
बनरा के सिर सेहरा हो- मोतियन से गुहे हैं
नौ लख बाबा मोल किहिन हो
दस लाख अम्मा दीन हो- मोतियन से गुहे हैं
बनरा के सिर सेहरा हो- मोतियन से गुहे हैं
मौरी बांधे दूलहे कउन सिंह
बांधि ससुररिये जाय हो- मोतियन से गुहे है
वा ससुररिया कै सांकर गलिया
अरझ मौरिया कै झोप हो- मोतियन से गुहे हैं
बनरी बिआहि बना घर आये
झुकि-झुकि करत सलाम हो- मोतियन से गुहे हैं
बनरा के सिर सेहरा हो मोतियन से गुहे हैं

चढ़ावा चढ़ना

चढ़ावा में वर पक्ष की ओर से वधू को विवाह के वस्त्र एवं सुहाग के जेवर चढ़ाए जाते हैं। गणेश पूजन होता है, पूजा के बाद बरायन गौरा और करीमाठ की पूजा होती है। चढ़ावे के समय वधू को सात अंजुरी भराई जाती है। लड़की अपने हाथ से सिन्दूर लगाती है। इसी समय सोहाग गीत गाए जाते हैं। चढ़ावा चढ़ने के बाद मण्डप के नीचे बरातियों को भोजन कराया जाता है, इस अवसर पर यह गीत गाये जाते है-

चिरई रे सोवई चुनगुन रे सोवई
सोइ गे नगरवा के लोग
राजा के सोहागवा
एक नहीं सोये हैं अजवा कउन सिंह
जेखे घरे नतिनी कुंवारि
राजा के सोहागवा
चिरई के सोवई चुनगुन रे सोवई
सोइ गे नगरवा के लोग
एक नहीं सोये हैं बपवा कउन सिंह
जेखे घरे बिटिया कुंवारि
राजा के सोहागवा
चिरई रे सोवइ चुनगुन रे सोवई
सोइ गे नगरवा के लोग
नहि सोये हैं भ एकइया कउन सिंह
जेखे घरे बहिनी कुंवारि
राजा के सोहागवा

विवाह एवं कन्यादान

शुभ मुहूर्त पर कन्यादान का विधान है। हवन कुण्ड बनाकर उसमें अग्नि प्रज्ज्वलित कर कुल पुरोहित द्वारा कन्यादान के साथ भांवर पड़ती है। दूल्हा-दुल्हन से अग्नि के सामने सात वचन बुलवाए जाते हैं। एक दूसरे को वर माला पहनाई जाती है। उसके बाद दो परात लेकर एक परात में वधू तथा दूसरी परात में वर के पांव रखकर उसमें जल डालकर धुलवाते हैं। वधू पक्ष के सभी लोग वर-वधू के पांव पखारते हैं, साथ ही उन्हें नेग देते हैं। इसके बाद वर-वधू को कोहबर में लाया जाता है। और इस अवसर पर यह गीत गाया जाता है-

पहिली भंवरि फिरि आयउं बाबा,
अबहूं तुम्हारी हौं हो।
दूसरी भंवरि फिरि आयउं बहूं,
अबहूं तुम्हारी हौं हो।
तिसरी भंवरि फिरि आयउं बाबू,
अबहूं तुम्हारी हौं हो।
चौथी भंवरि आयउं भइया,
अबहूं तुम्हारी हौं हो।
पंचई भंवरि फिरि आयउं काका,

अबहूं तुम्हारी हौं हो।
छठई भंवरि फिरि आयउं नाना अबहूं,
अबहूं तुम्हारी हौं हो।
सतई भंवरि फिरि आयउं माया,
अब मैं भयउं पराई हौं हो।

कुँअर कलेऊ

कोहबर में वर-वधू से कुल देवता की पूजा करवाते हैं। इसके बाद काठ के पैला में अनाज भरकर सात बार गिराने की रस्म होती है। फिर बाती मेरबाई होती है। वर घी की दो बत्तियों को एक कर देता है। उसके बाद वधू की माँ कांसे के कटोरे में खीर लाती है, जिसे अपने हाथों से वर को खिलाती है जिसके लिए वर उनसे नेग लेता है।

समधौरा

कुँअर कलेऊ के पश्चात् वधू पक्ष के सदस्य वर पक्ष के साथ मनोविनोद करते हैं। विवाह के मण्डप के नीचे 'मुँह मड़ई' का नेग करते हैं। वे अपने समधियों का स्त्री स्वांग बना हल्दी एवं रंग लगाती है, इसी के साथ वधू पक्ष की महिलाएँ वर पक्ष की समधियों को अपने यहाँ आमंत्रित करती हैं। सभी समधियों को शरबत पिलाकर सामर्थ्यानुसार सोने अथवा चाँदी की हाय, साड़ी, रूपये, मिठाई, फल आदि भेंट स्वरूप देती है। इसे समधौरा देना कहा जाता है। जो वधू पक्ष की ओर से वर पक्ष के मान-सम्मान में दिया जाता है। और इस अवसर पर यह गीत गाये जाते है-

अंगने मोरे नीम लहरिया लेय
अंगने मोरे हो
जहना कउन सिंह गाड़े हिंडोलना
गाड़े हिंडोलना
अरे उन कर दिद्दा हरसिया झूलि-झूलि जायें
अंगने मोरन नीम लहरिया लेय अंगने मां
जहना कउन सिंह गाड़े हिंडोलना गाड़े हिंडोलना
उन कर फुफू हरसिया झूलि झूलि जायं
अंगने मां नीम लहरिया लेय-अंगले मां

× × ×

काटे कूटे पान लयाये
खोखली सुपारी रे
बापौ पूत बिआहन आये
लंगड़ी महतारी रे
कहना रे सोन उपजे कहना रे रूप उपजै
कहना रे उपजी है धेरिया लड़िल देई
मथुरा रे सोन उपजे गोकुला रे रूप उपजे
माया की कोख उपजै लड़ेलि देई
लड़ेलिरी कै जज्ञ रोपई हो
कहना रे उपजी है धेरिया लड़लिसी देइ
लड़ेलिरी कै जज्ञ रोपई हो।

विदाई

कुँअर कलेऊ के बाद विदा की तैयारी होती है। वधू की माँ वर की अंगुली पकड़कर मण्डप तक लाती है तथा वर के द्वारा मण्डप पर पंखा मारा जाता है। उसके बाद दूल्हा-दुल्हन को दरवाजे पर खड़ा कर माँ के द्वारा उनकी आरती उतारी जाती है। बहन धान का थाल लेकर दुल्हन के साथ चलती है, उसके पीछे माँ अपना आंचल फैला कर रखती है। वधू थाल से धान उठाकर सात बार पीछे फेंकती है, उसके बाद दरवाजे पर भैया भेंट होती है। वर पक्ष की ओर से वधू के भाई का टीका कर एक नारियल दिया जाता है और भाई-बहन से भेंट कर उसके सुखी दाम्पत्य का आशीष देता है। उसके बाद दुल्हन के साथ बारात विदा हो जाती है-

कउन सिंह की धेरिया की बड़ी-बड़ी अंखियां
ओठवन चुयै ओगार
कउन सिंह के पुतवा कै मउरी सजति है
भंवरी लेत बसेर
एक चिठियाँ लिखि भेजई हो कउन कुंवरि
दिहा राजा दूलहे के हाथ
तुम्हरे मउरी मां भंवरी बसति है
हमूं जोगिन व्है जाब
एक चिठियां लिखि भेजई कउन सिंह
दिया रानी कन्या के हाथ
बन केरी भंवरी बनै उड़ि जइहैं
हमरा तुम्हारा होय विआह
कौन आय दूलहे कउन दुल्ह भइया
कउन आयं दुलहे के बाप

छोटी मोटी हथिनी संवारी साजी
सोनवा मढ़ाये ओखे दांत
सोनेन हउदा कसाये आवई
आई आय दुलहे के बाप
जमुना के ईरे तीरे घोड़िला कुदावै
बांधे बैजन्ती रंग पाग
सिर ऊपर कलंगी चमकत आवै
ओई आय दुलहे के भाइ
छोटी मोटी डड़िया सम्हारी
छोटेन लगे कहार
माथे मौर सिर झमंकत आवड़
औई आय दुलहे दमाद

बारात घर पहुँचने पर पुनः वर-वधू का दरवाजे पर चौक बनाकर दो चौकी रखी जाती है, जहाँ दोनों का परछन होता है। और इस अवसर पर यह गीत गाये जाते है। वहाँ माँ द्वारा करवा में रखी राई व नमक मूसल से फोड़े जाने का दस्तूर होता है। थाल में हल्दी घोलकर दरवाजे के दोनों ओर वधू से हाथे लगवाए जाते हैं, तब पानी उतारकर वधू को गृह-प्रवेश कराया जाता है। दूसरे दिन मोर विसर्जन एवं मण्डप छोड़ने की क्रिया सम्पन्न होती है।

लाला खोला-खोला केमरिया हो
मैं देखौं तोरी धना
धौं सांवरि हैं धौं गोरि
देखौं मैं तोरी धना
लाला खोला केमरिया हो
मैं देखौं तोरी धना

आधुनिक सभ्यता के परिणाम स्वरूप, संचार के साधनों के विस्तार की वजह से बघेलखण्ड में समाज की परम्परागत संस्थाओं के रीति-रिवाजों में परिवर्तन एवं गतिशीलता देखने को मिल रही है। हिन्दू विवाह के आधार पर बघेल समाज में भी वैवाहिक परम्पराओं, रीतियों एवं लोकाचारों में परिवर्तन दृष्टिगत हो रहे हैं।

मालवा में वैवाहिक लोकाचार

राधाकृष्ण बावनिया

प्रत्येक देश में विवाह जाति, धर्म, समुदायों में अलग-अलग रीति-रिवाजों के अनुसार होते हैं। प्राचीन भारत में स्वयंवर और गंधर्व विवाह का प्रचलन अधिक था। किन्तु अब माता-पिता द्वारा लड़का-लड़की का विवाह निर्धारित किया जाता है। इसमें विवाह की पूर्ण रस्में होती है। सर्वप्रथम सगाई में लड़के वाले लड़की के घर जाकर फलदान करते हैं। जिसमें अनेक प्रकार के फल, मिष्ठान, सुहाग की चीजें जैसे- कँकू, मेहंदी, हल्दी, चूड़ियाँ, लड़की के लिए वस्त्र, जेवर गुड़, बताशे, नारियल इत्यादि चढ़ावा चढ़ता है। सर्वप्रथम गाजे-बाजे के साथ इष्ट मित्र तथा समाज के लोगों के साक्ष्य में इस संस्कार को सम्पन्न करते है। ठीक इसी प्रकार लड़की वाले लड़के के घर जाकर यही रस्म लड़के के लिए निभाते हैं। सगाई का अर्थ होता है विवाह की बात पक्की करना।

मालवा जनपद के धार क्षेत्र में बहुत से समाज में सगाई से लेकर विवाह तक की रीति-रिवाजों में कुछेक परिवर्तन के साथ रस्में सम्पन्न की जाती है। यहाँ सगाई में मेहमानों के आगमन पर भोजन के समय साजन गाए जाते हैं-

साजन आता अंजा मारूणी जानती
वाट वखेरती हो साजन
अब कणी कूँख ना वरजा साजन पलणा
साजन आओ बेठो बेठणा जाजम रळई
थूली रंदाणा साजन लचपची
उपर गाया रो धी

चोखा रंदाणा नख छोल्या हो साजन
उपर हरिया मूँग की दाळ
लाडू वंदाणा वाजण्या
उपर खड़क देवाडाँ
पोली पोवाड़ा नरब छोली
उपर घी भैंस्या को साजन
तारा तोड़ी ने वड़ी करी
उपर लोंगा नो बदार हो साजन
आओ साजन जीमो जीमणा

सगाई के बाद जब मेहमान भोजन करते हैं, तब समधनें-समधियों को कुछ-न-कुछ बुलवाकर उनका गालियों से स्वागत करती हैं-

बोल उठ्यो बोल उठ्यो बोल उठ्यो रे।
रामेश्वर छिनाळ को बोल उठ्यो रे।
भूख लागी भूख लागी भूख लागी रे।
जीजी छिनाळ का के भूख लागी रे।
टुकड़ा लाखो टुकड़ा लाखो टुकड़ा लाखो रे।
जी जी छिनाळ का के टुकड़ा लाखो रे।
तीस लागी तीस लागी तीस लागी रे।
जी जी छिनाळ का के तीस लागी रे।
सरबत पव सरबत पव रे।
जी जी छिनाळ का के सरबत पव रे।
नींद अई नींद अई नींद अई रे।
जी जी छिनाळ का के नींद अई रे।
उकेड़े लोटव उकेड़े लोटव रे।
जी जी छिनाळ का के उकेड़े लोटव रे।

सगाई की रस्म पूरी होने के बाद विवाह करने की तिथि तय की जाती है और शुभ लग्न का मुहूर्त निकाला जाता है। जिसे लग्न लिखाना कहते हैं। लग्न लिखवाते समय नाड़े की आँटी, हल्दी की पाँच गाँठे और शकुन का गुड़ लड़के वाले अपने साथ ले जाते हैं। कहीं-कहीं लड़की वाले ये सब चीजें पंडित को उपलब्ध करवा देते हैं। लग्न लिखाई के पश्चात् पंडित को दक्षिणा दी जाती है। यदि लड़की वाले धर्म में शादी करते हैं तो वे ही पंडित, बैंड-बाजे घोड़ी आदि का खर्च वहन करते हैं।

चालो हो गजानन जोशी क्याँ चाला
ने अच्छा-अच्छा लगना लिखाओ गजानन
गजानन कोठारी गादी पे नोबत बाजे।
नोबत बाजे इंदरगढ़ गाजे
तो झीणी-झीणी झालर बाजे
गजानन कोठारी गादी पे नोबत बाजे।
चालो हो गजानन बजाजी क्याँ चालाँ
ने अच्छी-अच्छी हलदी मुलाओ
गजानन कोठारी गादी पे नोबत बाजे।
चालो हो गजानन तम्बोली क्याँ चालाँ
ने अच्छा-अच्छा बिडला मुलाओ
गजानन कोठारी गादी पे नोबत बाजे।

लग्न (टीप) लिखाने के बाद पंडित, लड़की वाले को दे देते हैं और लड़की वाले लड़के वालों को टीप झेला देते है अर्थात् उनकी गोद में दे देते हैं। लग्न टीप लेने के बाद लड़के वाले बिना रूके सीधे अपने घर जाते हैं और टीप एक कलश में रखकर देव स्थान या मंदिर के पुजारी को सौंप देते हैं। बाद में गाजे-बाजे के साथ लड़के के घर की महिलाएँ अपने रिश्तेदारों के साथ जाकर अपने घर ले आती हैं। टीप लेने के लिए पंडित को दक्षिणा या सीधा (आटा, शक्कर, दाल, चावल, नमक, मिर्च, घी, गुड़ और नगद) देने का प्रावधान है।

राय बनीजी कागज मोखलिया।
राय बनाजी का देस बनड़ीजी ने कागज मोखलिया।
राय जोशीजी टीप लई ने आया बनाजी ना देस।
नवल बना ना देस।

लग्न (टीप) घर लाने के बाद शीतला माता का पूजन किया जाता है। शीतला माता पूजने के एक दिन पहले रात में चौका लगाकर पूरी, शीरा भजिए, गुणी और चावल के साथ दही जमाते हैं ठंडा शीरा, दही-चावल का भोग लगाकर शीतला माता का पूजन करती है। महिलाएँ शीतला माता का गीत गाती है तथा शीतला माता पूजन के पूर्व विवाह की एक थाली तैयार की जाती है, इस थाली में नारियल, तीर, तराक (सूवा) कंघी, कलश और पिंगाणी जिसमें हल्दी, कंकू और चावल रखे जाते है।

इस नगरी में कूण-कूण राजा।

इस नगरी में नरेन्द्रजी रई राजा तो माता सारू,
भम्मर घड़ाओ म्हारी माता।
पीपल बांध्यो पालनो तो रेशम लम्बी डोर म्हारी माताओ,
हल्वे हल्वे हींचो म्हारी माता।
इस नगरी में कोई है राजा इस नगरी में प्रवीण रई राजा तो,
माता सारू चूड़लो मुलाओ म्हारी माताओ
इस नगरी में कोई हे राजा इस नगरी में शुभम रई राजा तो,
माता सारू पूजा पूड़ी मुलाओ म्हारी माता।
पीपल वांध्यो पालनो तो हल्वे-हल्वे हींचो म्हारी माता।

इसी प्रकार गुणा बाबजी का गीत भी गाया जाता है। मान्यता है कि शीतला माता और गुणा बाबजी भाई-बहन हैं, इसीलिए इनकी भी वंदना की जाती है-

गुणा भाई शीश री पागा सवा लाख की
पेंचा री अदब सरूप म्हारा वीरा रे
गुणा भाई पाय बाजे घुँघरा हाथ चटियो ने
पग पावड़ी सेर्या में रमवा पधारो वीरा म्हारा रे
आगे बेन्या ने पाछे वीरा म्हारा सेर्या में रमवा पधारो।

शीतला माता पूजन पश्चात् खड़मटी (खनमाटी) लाते हैं। खन का शाब्दिक अर्थ जमीन से खनन करना है। कुम्हार के घर माटी और चाक का पूजन चाक पर दीया रख गुड़ -घुघरी का भोग लगाकर कंकू-चावल, नाड़ा, पान-सुपारी, बताशे चढ़ाते हुए होता है। साथ में लाये सीधा सामान भी कुम्हार को देते हैं। इस कार्य हेतु सुहागिनें और कुँवारी कन्याएँ जाती हैं। पूजन के पश्चात् सात टोकनी में खड़माटी भरकर कन्याएँ सिर पर रखकर घर लाती हैं। इस माटी को सरावले में रखकर ज्वारे (गेहूँ) बोये जाते हैं। यह कुल देवी के सामने रखे जाते हैं। एक बड़ा व चार छोटे चूल्हे बनाये जाते हैं। खड़माटी लेने जाते हैं, तब इस गीत को गाते है-

कुमारिया सुतो के जागे नचीत
म्हारा तो घरे पेली बरदड़ी जाय जगाय
गोरी लाड़ली खड़माटी लई वेगी आवो
म्हारा तो घरे पेली वरदड़ी
कुमारिया सुतो के जागे, म्हारा तो घरे पेली वरदड़ी

जिस घर में विवाह होता है उस घर में गणेश पूजन के पूर्व नमक, हल्दी का मुहूर्त करते है तथा मंडप के लिए चूल्हा बनाया जाता है। जिसको पाँच सुहागिनें बनाती है। शास्त्रानुसार मंगल कार्य करने के पहले सर्वप्रथम श्री गणेशजी की पूजा करते हैं। गणेश पूजा में नैवेद्य के लिए दाल-भात (चावल), थूली (लापसी) के साथ गेहूँ को उबाल कर घूघरी बनाई जाती है। साथ ही थूली के पाँच लड्डू बनाते है। इसमें एक लड्डू बड़ा बनाया जाता है, जो श्री गणेशजी को चढ़ाते हैं। घूघरी का प्रसाद न केवल परिवार में अपितु इष्टमित्र, पड़ोसियों को भी बाँटा जाता है।

श्री गणेश पूजन हेतु सुहागिनों द्वारा आटे में हल्दी डालकर कच्चे दूध से आटा गूँथकर पाँच गणेशजी व आटे के ही पाँच दीये बनाती हैं और दीये में बाती बनाकर घी डालते हैं, अर्थात् घी के दीये जलाते है।

श्री गणेश की स्थापना करने के पूर्व स्थापना स्थान पर या तो लीपते हैं या पोंछा लगाकर उस पर चौक पूरकर (आटे का स्वस्तिक) बाजोट (पाटला) के उपर लाल कपड़ा बिछाकर नागरबेल के पाँच पान रखकर गणेशजी को नाड़े की जनेऊ पहनाकर पाँचों पान पर गणेशजी स्थापित करते हैं तथा पाँचों पान पर एक-एक सुपारी रखते हैं। इसके उपरांत पाँचों सुहागिनें एक दूसरे को हल्दी कंकू लगाकर हाथों में नाड़ा बाँधती है तथा लाड़े/लाड़ी (दूल्हा-दुल्हिन) की माँ पाँचों सुहागिनों को लाख का चूड़ा पहनाती है। फिर थाली संजोकर गणेशजी की पूजा करती है। थाली में पाँच लड्डू, घूघरी, थूली(लापसी) और नारियल रखती है। नारियल को गणेशजी के सामने रखते हैं। इसी के साथ बाजोट के सामने नीचे गेहूँ के ऊपर मिट्टी का कलश बुजारे(ढक्कन) सहित रखते हैं। फिर एक-एक सुहागिन हल्दी कंकू चढ़ाकर पूजा करती है तथा दीप प्रज्ज्वलित कर धूप देती है।

गणेशजी की पूजा के बाद सुहागनें दो नये सूपड़े में धान(साल) रखकर आसट-पासट करती है, अर्थात् एक सूप से दूसरे सूप में साल झटककर डालती है। इस प्रकार से पाँचों सुहागनें यह कार्य बारी-बारी से करती है। पाँच सुहागिनें मूसल से पाँच बार सुपड़े में धान(साल) कूटती है फिर प्रत्येक सुहागिनें पाँच-पाँच साल के दाने लेकर उसमें से चावल निकालती है और गणेशजी को चढ़ाती है। इसके पश्चात् लाड़े/लाड़ी से पूजा करवाते हैं तथा

पाँचों सुहागनें लाड़े/लाड़ी की माँ की गोद में गणेशजी सभी सामग्री झेला देते है या रख देते है। इस प्रकार गणेश पूजा की जाती है । इसी प्रकार गंगा माताजी को भी बाने बिठाते है, क्योंकि हमारे देश में गंगा को बहुत पवित्र माना गया है। यह हिन्दू धर्म में जीवन का एक अंग है। महिलाएँ गणेशजी का गीत गाती हैं और ढोल के साथ नाचती है।

तम वेगा वेगा चालो गणेश तम बिन घड़ी नी सरे।
तमारा शीश मोटेरा गणेश तेल सिन्दूर चड़े।
तमारा कान मोटेरा गणेश सुवागण पंखा ढुव्ले।
तमारी आंख मोटेरी गणेश झग मग दिवलो बळ्े।
तम वेगा वेगा चालो गणेश तम बिन घड़ानी सरे।
तमारा दांत मोटेरा गणेश सुवागण चुड़िला पेरे।
तमारी सुंड मोटेरी गणेश देवळ नाग झुले।
तमारी पीठ मोटेरी गणेश अम्बावाड़ी अजब खुले।
तमारा पांव मोटेरा गणेश देवल खम्वा गढ़े।
तमारी पूंछ मोटेरी गणेश बनड़ा पे चवर ढुले।
तम वेगा वेगा चालो गणेश तम बिन घड़ी नी सरे।

श्री गणेश पूजा करने के बाद पाँच सुहागनें लाड़े-लाड़ी को हल्दी लगाती है और बाने बिठाकर गाने गाती है। उसकी खोळ सफेद रूमाल में भराती है, जिसमें एक रूपया, नारियल रखकर पाँच बार थोड़े-थोड़े गेहूँ रखते है। हल्दी लगाते समय यह गीत गाया जाता है-

तू तो पीळो रे लाड़ा पीळो काय गुण्यो,
थारी माता ए छटी रे जगाई हल्दी को रूप घणों।
तू तो पीळो रे लाड़ा, पीळो काय गुण्यो,
थारी काकी ए छटी रे जगाई हळदी को रूप घणों।
तू तो पीळो रे लाड़ा पीळो काय गुण्यों,
थारी बुआ ए छटी रे जगाई हळदी को रूप घणों।
तू तो पीळो रे लाड़ा पीळो काय गुण्यो।

इसके बाद कुँवासी जहाँ लाड़े/लाड़ी को चौक पर बिठाते हैं उस पाट को हटाकर उसी चौक पर ढोल के साथ नाचती और गाती है-

किसने वजाई रंग सीटी
बनो तो म्हारो जमना किनारे
ताँबे के हण्डे में ताता सा पानी
न्हावन में जादू किसने डाला
बनो तो म्हारो जमना किनारे
सोने की थाली में भोजन परोसा
जीमन में जादू किसने डाला
बनो तो म्हारो जमना किनारे
सोने की झारी गंगाजल पानी
पीवन में जादू किसने डाला
बनो तो म्हारो जमना किनारे
किसने बजाई रंग सीटी
बनो तो म्हारो जमना किनारे

इसके पश्चात् छाना-बाना निकालते है, अर्थात् लाड़े को घर से बाहर निकालकर सुहागनें कुछ दूरी तक ले जाती है। वापस आने पर लाड़े को घर के दरवाजे पर खड़ा करके बहन नजर उतारती है। नजर उतारने में राख के चार पिंड्ये बनाकर लाड़े के उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिम में वे पिंड्ये फेंकती है।

विवाह में जितने बाने (दिन) होते है। उतने ही दिन चौक पाट होता है। परबातिया गाये जाते हैं, गुड़ बताशे बाँटे जाते है। साथ ही ढोल के साथ नाचना-गाना होता रहता है-

झरमर-झरमर मेवळो वरसे रई रमेशजी घर कैसे आया
ऊँची मेड़ो लाल दरवाजो दिवळो वळे बत्तीस्यो
रई हो अशोकजी तमारा घर कैसे आया
धार नगर नी तू वो मालनियो
रई चम्पालालजी घर कैसे लाया
ऊँची मेड़िया लाल दरवाजा, किंवड़िया दिवळो बले बत्तीस्यो

गणेश पूजन होने के उपरांत लाड़े-लाड़ी को हल्दी लगा दी जाती है। उसके दूसरे दिन से प्रातः प्रभाती (परबातिया) गाई जाती है। परबातिया में घर और आस-पास की महिलाएँ इकट्ठी होकर प्रभाती गाती हैं-

उठो म्हारा गोरा हो लाड़ा, दातणिया समाळो
जलभरी झारी जायढ़ ली का दातण
ऐसो दातण हो तमारा, नावीड़ो मुलावे
उठो हो म्हारा गोरा लाड़ा, तिलकिया संमारे

कंकू हो पिंगाणी हो, अखत मोतिका
ऐसा हो तिलखिया हो तमारी बेनियाबई संमारे
उठो म्हारा गोरा हो लाड़ा भोजनिया समारो
लचपची लापसी हो लाड़ा, ऐसा हो भोजनिया हो लाड़ा
तमारी माताबई जिमाड़े
उठो म्हारा गोरा हो लाड़ा बिड़ला समाळो
कत्था, सुपारी हो लाड़ा, नागरवेल का पान
ऐसा बिड़ला तमारा जीजाजी संमाले

इसी क्रम में परबातिया के अनेक गीत गाए जाते हैं। उनमें से ये एक है–

यो सूरज उगो हो, केवड़ा री पड़छे के वाणोल्या भल उगिया।
तम जागो हो सूरज जी हो देव के वाणोल्या भल उगिया।
तम जागो हों चंद्रमाजी हो देव के वाणोल्या भल उगिया।
तम जागो हो गजाननजी हो देव के वाणोल्या भल उगिया।

प्रभाती गाने के साथ एक दूसरे को महिलाएँ हल्दी लगाती है और ढोल के साथ नाचती गीत गाती हुई विवाह का आनंद लेती हैं। लाड़ा–लाड़ी को बाने बिठाते हुए कितने दिन की शादी होती है, यह तय की जाती है बाने से। कोई तीन, कोई पाँच, कोई सात और कोई ग्यारह बाने लेते हैं तथा शादी का ऐसा ही उत्सव चला करता है, किन्तु आजकल एक दिन की शादी भी होती है।

लाड़े/लाड़ी के बाने बिठाने के बाद रिश्तेदार या इष्टमित्र द्वारा इनको भोजन के लिए (बाना झेलना कहते है) अपने घर बुलाते हैं। वहाँ नाच गाना भी होता है किन्तु बाने वाले घर जाते समय लाड़ा/लाड़ी के साथ कुंवासियाँ भी ढोल के साथ बना गाती जाती है–

धूप पड़े धरती तपे रे बना,
चंद्र बदन कुमलाय।
मैं जो होती काळी बादली रे बना,
सूरज लेती छुपाय।
धूप पड़े धरती तपे रे बना,
चंद्र बदन कुमलाय।

इसी प्रकार इस अंचल में बाने में इस गीत का भी बड़ा प्रचलन है। कुंवासिया बहुत आनंद लेती है–

नौ सौ कलियों का बने के गले हार है।
सीस बना को पागा सोवे पेंचो की बहार है।
नौ सौ कलियों का बने के गले हार है।
गले बना के डोरा सोवो लड़ियों की बहार है।
नौ सौ कलियों का बने के गले हार है।
हाथ बना को कड़ा सोवे अंगूँठी की बहार है।
अंग बना को जामा सोवे दुपट्टे की बहार है।
नौ सौ कलियों का बने के गले हार है।

बाने बिठाने से लेकर मंडप तक प्रतिदिन शाम को लाड़ा/लाड़ी का चौक पाट करते हैं और रात को बाना निकालते हैं। चौक पाट करते समय लाड़ा/लाड़ी को मुँह में कोल दिये जाते हैं। कोल गुड़/बताशे या मिठाई के दिये जाते हैं। कोल देते समय कुँवासियाँ लाड़ा–लाड़ी से हँसी–ठिठोली करती हैं, जो इस गीत से स्पष्ट होता है–

म्हारो नानो सो बनड़ो कोळया जीमे रे।
वी का मेरे बेठी बेन्या ढूकी रई रे।
वेन्या अरच–करच सब बिणी खाजे वो।
बेन्या गज–गज धरती खोदी खाजे वो।
बेन्या बाजोट्या हेटे छिपी रे जे वो।
बेन्या पड़तो सो कोळयो झेली लीजे वो।
म्हारो नानो सो बनड़ो कोळया जीमे रे।

बाने बिठाने से बाने की समाप्ति पर मंडप का कार्यक्रम होता है। यदि गंगामाता का पूजन करना हो तो दो मंडप तैयार किए जाते है। एक लाड़ा–लाड़ी के लिए और दूसरा गंगामाता के लिए होता है।

मण्डप के लिए शुभ मुहूर्त देखा जाता है। एक मंडप बनाने के लिए दस बाँस के छोटे–छोटे टुकड़े लिए जाते हैं। चार बाँस खड़े गाड़ते हैं। उस पर चार बाँस पाँच फुट की ऊँचाई पर चारों खड़े बाँस पर आड़े बाँधकर दो रखे जाते हैं। जिस पर जामुन और आम के पत्ते, कड़ब राड़े (जुवार की पिंडी) रखते हैं। साथ ही इसके चारों ओर सुतली या नाड़े आदि से आम के पत्तों का तोरण बनाकर (लिग्गी) बाँधते हैं। मंडप के बीचों–बीच दो दीये छेद कर नाड़े से उल्टे–सीधे जिसे तड़तड़िया कहते हैं, बाँधे जाते हैं तथा नागरबेल का पान भी बाँधा जाता है। मंडप की सभी सामग्री

घर के दामाद (कुंवासे) लाते हैं, और मंडप छाते हैं। चिरकली यानी पीले कपड़े के टुकड़े में पीले चावल पूजा सुपारी नाड़े से बाँधी जाती है। इसी प्रकार की एक पोटली में चावल के साथ पूजा सुपारी रखकर माणक स्तम्भ पर बाँधी जाती है। माणक स्तम्भ लकड़ी का बनाया जाता है, जिसे घर के बाएँ दरवाजे के पास रोपा जाता है। मंडप बनाने वाले कुंवासों को श्रद्धा-भक्ति अनुसार नेग दिया जाता है और मंडप बनाने के पहले उन्हें तिलक लगाते हैं। मंडप बन जाने के बाद कुंवासियाँ मंडप के गीत गाती हैं, जिसमें मंडप लाने का वर्णन होता है-

कैलाशजी जाजो हो, लाजो पाका पान
मोतिया छायो मांडवो
बाई वो अनवड़ी ढूँढी, पनवड़ी ढूँढी, कोई नी लादा पाका पान
राधेश्याम जी धार का आगे अमझेरो हे तो वाँसे लाजो
पाका पान, मोतिया छायो मांडवो।

मंडप छाने के बाद महिलाएँ माणक खंब (स्तम्भ) और पीली चिरकली के गीत गाती है-

बई वो क्याँ से आई पीळी चरकली
ने क्याँ से आयो माणक खंब
इंद्रासन से आई पीळी चरकली
ने डंगरपुर से आयो माणक खंब
ने काँय वदावाँ माणक खंब
ने काँ बदावा पीळी चरकली
मोतिड़े वदावाँ माणक खंब
ने कुंकुड़े वदावाँ पीळी चरकली
ने काय उतारा माणक खंब
ने काँय उतारा पीळी चरकली
कँवळे उतारा माणक खंब
ने माण्डवे उतारा पीळी चरकली
काई ओड़ावाँ माणक खंब
ने काई ओड़ावा पीळी चरकली
लाल ओड़ावा माणक खंब
ने पीड़ली ओड़ावा पीळी चरकली
ने काई जिमावा माणक खंब
ने काई जिमावा पीळी चरकली
लापसी जिमावा माणक खंब
ने चावल जिमावा पीळी चरकली

मंडप होने के बाद उसी मंडप में एक नया चूल्हा रखकर उसकी कंकू-चावल से पूजा करते हैं और फिर कुंवासियाँ उस चूल्हे पर हाथ से चार रोटियाँ बनाती है, जिसमें दो मंडप की और दो माणक खंब की होती है। बाद में चावल की लापसी बनाते हैं, फिर घी-गुड़ और थूली-चावल से लाड़ा-लाड़ी से धूप लगवाते हैं। इसके बाद गोत्र के लोग बाद में कुंवासा- कुंवासी लाड़े के साथ मंडप में भोजन करते हैं। और लाड़ा-लाड़ी का चौक पाट करते हैं। और महिलाएँ नाचती गाती हैं-

मैं तो सूती थी लाल पलंग पे
बिच्छू खई गयो गोरा बदन में
म्हारा ससरा ने जल्दी बुलव रे
बिच्छू खई गयो गोरा बदन में
म्हार जेठ, देवर ने बुलव रे
बिच्छू खई गयो गोरा बदन में
म्हारा सायब जी ने जल्दी बुलव रे
बिच्छू खई गयो गोरा बदन में
वे तो बिच्छू उतारेगा
बिच्छू खई गयो गोरा बदन में

मंडप के दूसरे दिन जिसे घर विवाह कहते हैं और इसी दिन वर निकासी भी होती है। इस दिन प्रातः महिलाओं द्वारा परबातिया (प्रभाती) गाया जाता है-

पाँच सुपारी ने पान का हो बिड़ला,
तो तम घर नोतो, सूरजजी वाड़े वेगा आवजो।
सूरज जी घोड़ी ले हो बई राधा हो पलकड़ी,
थारा नाना मोटा बैठ सिंगासन वाडे वेगा आवजो।
गणपतिजी हो बाई रिद्धि सिद्धि हो पलकड़ी,
थारा नाना मोटा बेठ सिंगासन वाड़े वेगा आवजो।
कैलासजी घोड़ी ले हो बाई गुड्डी हो पलकड़ी,
थारा नाना मोटा बैठ सिंगासन वाडे वेगा आवजो,
पाँच सुपारी ने पान का हो बिड़ला।
तो तम घर नोतो, सूरज जी वाडे वेगा आवजो।

परबातियाँ गाने के बाद के कार्यक्रम में एक कार्य और होता है उकेड़ी पूजने का अर्थात् विवाह में अपने पितरों या पूर्वजों को विवाह में आने का निमंत्रण देना होता है। यह कार्यक्रम जिस रास्ते से वर निकासी होगी, उसी रास्ते पर होती है। इसमें एक लोहे के पळे में कपास्या के बीज भरकर उसमें लम्बी बत्ती बनाकर तेल डालकर बत्ती जलाते हैं। गोतियों या कुटुम्बियों के हाथों में चावल को हल्दी डालकर पीले किये जाते हैं। जिस स्थान पर उकेड़ी पूजी जाती है, वहाँ सफाई कर गोबर को थाप देते हैं और उस पर कंकू का स्वस्तिक बनाकर उसके ऊपर डंठल वाला पान-सुपारी, हल्दी-मेहंदी, बतासा और नाड़ा रखा जाता है। यदि गंगामाता का पूजन है तो गंगाजल का लोटा भी ले जाते हैं, साथ ही एक मिट्टी का दीया जलाया जाता है। फिर कुटुम्बियों के हाथों में पीले चावल देते हैं। इन चावल को प्रत्येक पितरों के नाम लेने पर जो पूजा का स्थान बनाते है, उस पान-सुपारी पर चढ़ाते जाते हैं-

सरग भवन्ति साँवळी एक संदेसो लेती जाय
जाय भेरूजी झुझारजी ने अऊँ की जो
जाय सती माता ने अऊँ की जो
हमारा तो आँवणा नी होय
हमें घरे वरदड़ी होय
वरद करो रे ने विवा करो
हमारा तो आँवणा नी होय
काचा सुतारो पालनो (बाँद्यो)
बाँद्यो सरग दुवार
ताला जड़्या हो, बीजड़ तार का
जड़्या बजड़ किंवाड़, जिमें सारे ऐसो सार
जो हमारा तो आँवणां नी होय
जव तिल, घी से होम करो, धुँवों जाय आकाश
जाय भागीरथजी ने अऊँ की जो
जाय भूल्या चुक्या छोटा बड़ा ने अऊँ की जो
हमारा तो आँवणा नी होय।

इस गाने में पितरों के नाम ले-लेकर पीले चावल चढ़ाए जाते है। इसके पश्चात् लाड़ा/लाड़ी के द्वारा उकेड़ी को हाथ से उठाकर थाली में रखकर घर लाते है जो पितरों का प्रतीक होता है। गोबर को तो पेड़ के नीचे रख देते हैं और चावल की पुड़िया बाँधकर मंडप के एक कोने में रख देते हैं। महिलाएँ उकेड़ी पूँजकर घर आती है और गीत गाकर नाचती हैं। यदि लाड़ी का घर होता है तो यह गीत गाया जाता है-

तू तो लड़े मति सासू अलग कर दे।
थारा छोरा लई ले ने थारी छोरी लई ले।
म्हारा बाप का जमई म्हारा आगे कर दे।
तू तो लड़े मति सासू अलग कर दे।

और यदि लड़के का घर हो तो यह गीत गाया जाता है-

जेपुर का बजार में जी, कई पड़्यो पेमली बोर,
नीचे नमी ने उठावा लागी, आयो कमर में जोर।
बुगला दाँणा ने चुग जा जे रे,
मे मतवाळी नार बेवड़ो भरवा दीजे रे।
जेपुर का बजार में जी।

इसके पश्चात् कुम्हार के यहाँ मायटला (मायटला में पाँच कलश, चार दीये, कुंडा, चार बारिया, एक मिट्टी की दाथरी) लेने जाती है, वहाँ यह गीत गाया जाता है-

ओ म्हारी लाल कुमारण गद्दा भूखे
तू तो भम्मर की सावली तू तो बुजारो पेर ले वो
ओ म्हारी लाल कुमारण तू हसली की साबली
तू तो काठलो पेर ले वो
ओ म्हारी लाल कुमारण शालू की साबली
तू तो गुणिलो ओड़ ले वो

मायटला लेकर जब कुम्हार के घर से अपने घर आती है, तब यह बधावा गाया जाता है-

रई हो नरेन्द्रजी तमारा चोक में हो राज।
टूट्यो म्हारो नवसरियो हार म्हारा राज।
मोती वे राणा चंदन चोक में हो राज।
केसे वीणा ने केसे सोरसिया हो राज।
चिमटी वीणा ने पल सोरसिया हो राज।
मुखड़ा से करूँगा जुपाप महारा राज।
मोती वे राणा चंदन चोक में हो राज।

कुम्हार के यहाँ से मायटला लाने के बाद जहाँ कुल देवी पूजते हैं, वहाँ गेहूँ की दो ढेरी बनाकर उस पर मिट्टी के दो-दो

कलश रखकर उसमें एक-एक कलश में बिना बनी थूली, दूसरे में चावल, तीसरे में गुड़ और चौथे में नारियल रखकर उस पर सरावले (बड़े दीये) रखते हैं। उसमें घी डालकर बत्ती बनाकर उसे प्रज्ज्वलित करते हैं। इन कलशों के सामने कपड़े या दीवार पर मायमाता (कुलदेवी) माँडते हैं। मायमाता माँडने में जिस प्रकार नवरात्रि में जिस तिथि पर कुल देवी का पूजन करते हैं, जैसे पंचमी या नवमी को उस कपड़े पर उतने ही चौकोर मांडकर सिर, हाथ और पैर बनाते हुए चाँद, सितारे भी बनाते हैं। इसी कपड़े या दीवार पर माताजी के ऊपर जितने चौखट बनाते हैं, उतने ही पीपल के पत्ते एक नाड़े में बाँधकर कील से लटकाते हैं और माता का पूजन करते हैं। लाड़े को वर निकासी के पहले हल्दी लगाकर बारात के लिए नये वस्त्र धारण करवाकर मायमाता का पूजन करवाते हैं। गुड़, घी, थूली, चावल लेकर लाड़े और उसके गौत्र वालों से धूप दिलवाई जाती है तथा नेवेद्य ग्रहण करते हैं। मायमाता पूजन के पूर्व मंडप में शाम को लाड़े को पाँच कुंवासी द्वारा हल्दी लगाई जाती है।

मायमाता पूजन के पूर्व मंडप में लाड़ा-लाड़ी को चौक पाट पर बिठाकर तेल चढ़ाते हैं, अर्थात् हल्दी लगाते हैं। तेल चढ़ाते हुए महिलाएँ यह गीत गाती है-

मे तने पूछूँ म्हारी तेलण राणी
काय की घाणी ने काय को तेल
लकड़ी की घाणी ने अलसी को तेल
लाड़ी-लाड़ा ने तेल चढ़ाओ
तू तो तुलसी रामजी की राणी तेल चढ़ाओ
काय की घाणी ने काय को तेल
लाड़ा-लाड़ी ने तेल चढ़ाओ

हल्दी लगाते समय पाँच कुंवासी हाथ में हल्दी लेकर पाँव, हाथ, कंधे और सिर पर लगाते हुए तड़तड़े पर हाथ लगाती है। यही क्रम उल्टा भी करती है। फिर सारे बदन पर हल्दी लगाती है और गीत गाती है-

तू तो पीळो रे लाड़ा, पीळो काय गुण्यो
थारी माता ये छटी रे जगाई, हल्दी को रूप घणो
तू तो पीळो रे लाड़ा, पीळो काय गुणे
थारी काकी ये छटी रे जगाई, हल्दी को रूप घणो
तू तो पीळो रे लाड़ा, पीळो काम गुण्यो

लाड़ा-लाड़ी के तेल चढ़ाकर हल्दी लगाने के बाद उन्हें गरम पानी से नहलाते हैं। इनको नहलाते समय यह गीत गाया जाता है-

अळखळ अळखळ नदी वहे जी,
गोरो लाड़ो नहावण बैठो हो राज।
राज बनड़ी पूछे सुणो हो दुलईया,
काय रा कारण आया हो राज।
थारा दादाजी रा बोल वचन हम,
काँकड़ देखण आया हो राज।
काँकड़ रो कई देख दुलईया,
काँकड़ हळिड़ा ने रूँद्यो हो राज।
बनड़ी पँछे सुणो हो दुलईया,
काय रा कारण आयो हो राज।
थारा जीजाजी रा वोल वचन,
हम माण्डवो देखण आया हो राज।
अळखळ अळखळ नदी वहे जी,
गोरो लाड़ो नहावण बैठो हो राज

इसके पश्चात् एक सूत सूतने का काम होता है। सूत सूतने का काम लाड़े के जीजाजी करते हैं। इसके पश्चात् लाड़े को नहलाकर उसे सफेद चादर से पूरा ढँक देते है और कुंवासियाँ लाड़े को घेरकर अपने हाथ में हल्दी लेकर खड़ी रहती है, फिर लाड़े का जीजाजी सूत सूतने का काम करते है, अर्थात् कच्चे सूत की गट्टी लेकर कुँवासियों को पाँच बार घेरता है। जब कुँवासा (जीजा) सूतने का काम करता है, तब कुँवासियाँ उसकी पीठ पर हल्दी के छापे लगाती है। फिर वे मिट्टी के पाँच-पाँच लोटे (वारिया) में जिसमें एक में रूपया, दूसरे में लाख, तीसरे में धणा, चौथे चणा और पाँचवें में नाड़ा रखकर गीत गाती हैं-

तू तो रूपयो ले रे लाड़ा,
रूपवंतो होजे।
तू तो लाख ले रे लाड़ा,
लाखावंतो होजे।

तू तो धणा ले रे लाड़ा,
धनवंतो होजे।
तू तो चणो ले रे लाड़ा,
चंदवंतो होजे।
तू तो नाड़ा ले रे लाड़ा,
नवरतन बंतो होजे।

इसके पश्चात् सूत के पाँच फेरे को इकट्ठा करते हैं, जिससे कांकन डोरा बनाया जाता है, जो लाड़ा-लाड़ी के हाथ में बाँधते है। लाड़े को मंडप से उठाकर जीजा मंडप की ओर मुँहकर के अर्थात् उल्टा होकर मायमाता के वहाँ ले जाकर बिठा देता है और लाड़ा मायमाता के सामने रखी चाँदी की वस्तु देखता है और फिर माताजी के दर्शन करता है। यहीं पर गुड़, घी, थूली, चावल की धूप देता हैं। इसी के साथ उसी गोत्र के लोग भी धूप देते है और नैवेद्य ग्रहण करते है। फिर लाड़े को बारात के लिए नये वस्त्र पहनाकर तैयार करते हैं। लाड़े को वस्त्र पहनाकर साफा-पगड़ी बाँधकर उस पर मोरपंख बाँधते हैं तथा लाड़े की भाभी लाड़े को काजल लगाती है। लाड़े के हाथ में तलवार और कमर में कटार बाँधी जाती है। गले में छेड़ा गाठण (गठबंधन) के लिए एक उत्तरीय डालते हैं, जिसमें एक मुँह पर इत्र लगाया जाता है। इसके पश्चात् कुंवासा लाड़े को मण्डप में लाकर पाट पर बिठाते हैं। पाट पर बिठाकर उसके सामने एक पाट और रखा जाता है। जिस पर एक थाली रखते हैं, जिसमें स्वस्तिक बनाया जाता है। फिर लाड़े के रिश्तेदार अपनी शक्ति अनुसार (नोट) डालते हैं, अर्थात् सौ-दो सौ-हजार रूपये थाली में डालते हैं। इसके पीछे विवाह में उनके योगदान की भावना रहती है।

इसके साथ मामेरा भी होता रहता है। मामेरे में लाड़े के मामा कुटुम्ब के लिए पेरावणी लाते हैं। जब मामेरे वाले आते है, तब लाड़े की माँ उन्हें (भाई-भौजाई) बधाते है याने उनका स्वागत करते हैं। तिलक लगाते हैं साथ ही कपड़ों की थाली को भी बधाते है और गीत गाकर उन्हें मण्डप के स्थान पर लाते हैं-

रे वीरा रमक-झमक म्हारा घर आजे।
म्हारी रखड़ी रतन जड़ाजे।
रे वीरा रमक-झमक म्हारा घर आजे।
वीरा आप आजो ने भाभज लाजो।
सिरदार भतिजा लारा लाजो।
रे वीरा रमक झमक म्हारा घर आजो।
वीरा गळा री कंठी घड़ाजो।
हीरा रतन जड़ाजो।
रे वीरा रमक-झमक म्हारा घर आजो।

भाई-भौजाई को बधाकर लाड़े की माँ लाती है, इसके पश्चात् भाई-भौजाई, लाड़े की माँ, पिता और कुटुम्ब के लोगों को पेरावण (कपड़े) करते है। इस रीति के बाद लाड़े की बारात जाने के लिए घोड़ी पर बिठाते हैं। लाड़े को घोड़ी पर बिठाने के पूर्व लाड़े की माँ लाड़े का पड़छन करती है, अर्थात् माँ सफेद कपड़े से सिर ढँककर आरती की थाली में रखे तीर, तराक (सूवा), कंघी और बैल से जुड़े जो सरकंडे का होता है, उसे बारी-बारी से लाड़े की माँ मोड़ को छूकर पड़छन करती है। घोड़ी पर बैठने के बाद लाड़े की माँ स्तनपान कराती है, किन्तु आजकल गिलास से दूध पिलाती है। इसी के साथ बहन कुँवासियाँ घोड़ी को तिलक लगाती है। भाभी घोड़ी का (सिर) माथा गुंथती है और लाड़े की काकी अपने आँचल में चने की दाल रखकर घोड़ी को खिलाती है और मेहंदी लगाती है। माँ द्वारा दूध पिलाने के पीछे यह भावना है कि हे बेटे! तू मेरे दूध की लाज रखना और दुल्हन (लाड़ी) को लेकर आना। लाड़े के हाथ में तलवार और कटार इसीलिए दी जाती थी कि यदि लड़ना भी पड़े तो ये हथियार तेरे पास है, लड़कर लाड़ी जरूर लाना। लाड़ा जब बारात के साथ रवाना होता है तो ढोल बाजे घोड़ी के आगे बजते चलते हैं और बाराती लाड़े के आगे और महिलाएँ पीछे-पीछे गीत गाती है और नाचती चलती है-

बनाजी थें तो चढ़ चाल्या मज आधी रात,
म्हारी सूती नगरी औचकी रे बनड़ा।
बनाजी थारी घोड़त्री ने घूँघरमाल,
हाथां की मेंदी राचणी रे बनड़ा।
बनाजी थारे खांदे नकसी बंदूक,
घोड़ी तो चमकी जाये रे बनड़ा।
बनाजी थारी घोड़ी ना पाव में जेवर वाजव्या रे बनड़ा,
बनाजी थें तो चढ़ चाल्या मज आधी रात,
म्हारी सूती नगरी औचकी रे बनड़ा।

गाँव में इस प्रकार लाड़े का बाना निकालते हैं और जनवासा

देते हैं। दूसरे दिन बारात रवाना होती है। जब बारात लाड़ी के गाँव की काँकड़ (सरहद) पर जाती है, तब लाड़े के हाथ से एक नारियल काँकड़ पर फिंकवाते है, जिसे कुँवासे लेकर आते हैं और फोड़कर प्रसाद सबको बाँटते है। इसी प्रकार शादी के बाद जब बारात लौटती है, तब लाड़ी के उसी काँकड़ पर टीप (लग्न पत्रिका) को जमीन में भरते (गाड़ते) है, फिर बारात आगे बढ़ती है।

लाड़ी के घर जाने के पहले एक स्थान पर बारात ठहराते हैं, जिसे जनवासा ही कहते हैं। जनवासे में लाड़े के लिए कुँवर कलेवा लाड़ी के घर से भेजा जाता है, जिसमें चावल और थूली में अच्छा घी डालते हैं, जिसे लाड़ा और कुंवासे जीमते हैं। शेष बाराती लाड़ी के घर जीमने चले जाते हैं। कुंवर कलेवा के बाद लाड़ी (दुल्हन) के लिए कपड़े, जेवर, चूड़ी, बिछिया, टीकी अर्थात् लाड़ी के श्रृँगार की सभी वस्तुएँ भेजी जाती हैं, जिसे पड़ला कहते हैं। पड़ला ले जाते समय यह गीत गाया जाता है–

पड़ला लायो हो बनीजी मयल में आवा दे।
लग्ना लायो हो बनीजी मयल में आवा दे।
म्हारो हल्दी भरियो अंग मयल में आवा दे।
म्हारा मुखड़ा में पाका पान मयल में आवा दे।
म्हारा मेहंदी भरिया हाथ मयल में आवा दे।
म्हारा कांकण बंध्या हाथ मयल में आवा दे।
म्हारा क्यों तरसावे जीव मयल में आवा दे।

जब लाड़ी इन कपड़ों को पहनकर तैयार हो जाती है, तब दूल्हा (लाड़ा) बरातियों के साथ तोरण मारने लाड़ी के घर जाता है, किन्तु इस बीच लाड़ी के परिजन बारातियों से मिलनी करते हैं जिसे समेला कहते हैं। इसमें लाड़े को तिलक लगाकर हार पहनाते है, फिर बारातियों से गले मिलते हैं और शरबत पिलवाते हैं। इसके बाद लाड़े को घोड़ी से नीचे उतारकर पंडित की उपस्थिति में लाड़ी के बड़े-बुजुर्ग लाड़े के पाँव पखारते है। पाँव पखारज में एक थाली पर लाड़े के अंगूठे रखे जाते हैं। थाली में नागरबेल का पान रखते हैं, दूध अंगूठे पर डालते है, फिर पानी से धोकर नये कपड़े (पंछे) से पाँव पोछते हैं। महिलाएँ यह गीत गाती हैं–

थारी सांकड़ली सेरिया में धोड़िला फेरेगा,
होजी देस परायो रईवर आवेगा।
थारा दादाजी का होंश उड़ावेगा,
होजी देस परायो रईवर आवेगा।
थारी हवेली का कवेलू उड़ावेगा,
होजी देस परायो रईवर आवेगा।
थारा पिताजी का होंश उड़ावेगा,
होजी देस परायो रईवर आवेगा।

पाँव पखारने के बाद लाड़े को घोड़ी पर बिठाते हैं और लाड़े को तोरण मारने के लिए ले जाते हैं। वह घोड़ी पर बैठकर तोरण मारता है, अर्थात् मंडप में बना तोरण अपनी तलवार या कटार से छू देता है। पाँव पखारने के बाद जब लाड़ा तोरण मारने के लिए घोड़ी पर बैठता है तथा बाराती लाड़ी के घर जाने की तैयारी करते हैं, तब लाड़ी की तरफ की महिलाएँ यह गीत गाती हैं–

वर रे वर थारी माता नो वरियो, आसूरो क्यों आयो।
थारी माता कांकड़ व्यांणी, खुरिया खेंचण रयो तू।
आसूरो क्यों आयो।
मांग्या तुंग्या वाजा लायो, कई करे लटको।
सात सुपारी रे लाड़ा, सिंगोड़ा नो सटको।
मांग्या तुंग्या जान्या, घोड़ी लाया कई करे लटको।
आसूरो क्यों आयो।

तोरण मारने के बाद द्वाराचार होता है, जिसमें लाड़ी की माँ तिलक लगाकर लाड़े को पड़छन कर एक सफेद कपड़े को लाड़े के गले में डालकर उसे घर में ले जाती है। जहाँ मायमाता के सामने लाड़ा-लाड़ी को बिठाकर पंडित हथीवाला जुड़ाता है, अर्थात् लाड़ी का हाथ लाड़े के हाथ में दे देता है और मंगलाष्टक पढ़ते हैं। हथीवाला होते समय यह गीत गाया जाता है–

पीपल पान झड़ाझड़ बोले
लाड़ा का दादाजी फड़ाफड़ बोले
लाड़ी का पिताजी गूँगा हो
हाथी वालो जोड़ सहेली
मैं कैसे जोडूँ म्हारा दादाजी हो देखे
थमारा दादाजी हो गोरी, म्हारा दादा ससरा हो गोरी
कैसे जोडूँ हथिवाळो
पीपल पान झड़ाझड़ बोले
हाथी वालों जोड़ सहेली

फिर लाड़ी का मामा हथीवाला छुड़वाता है, अर्थात् लाड़े के हाथ से लाड़ी का हाथ अलग करता है और लाड़े को नेग में कोई न कोई आभूषण रकम देता है।

हथीवाला छुड़ाने के बाद लाड़ा-लाड़ी को मंडप में चौक पर बिठाते हैं, किन्तु लाड़ी-लाड़े के दाहिनी ओर बैठती है। मंडप के चारों खड़े बाँस (खंबे) के सहारे चँवरी लगाई जाती है। चँवरी में मिट्टी के पाँच बर्तन होते हैं। नीचे सबसे पहले बड़ा-सा मटका फिर छोटे, उससे छोटे, फिर कलश और कलश के ऊपर बुजारा (ढक्कन) वह भी मिट्टी का होता है। किन्तु आजकल किराये के पाँच बर्तन चँवरी बनी बनाई लगाई जाती है। लाड़ा-लाड़ी के सामने एक हवन कुण्ड बनाया जाता है। इसमें आम की सूखी लकड़ी को प्रज्ज्वलित करते हैं और लाड़ा-लाड़ी के द्वारा घी, जौ, तिल आदि की आहुति दी जाती है। हवन की क्रिया समाप्त होने के बाद चँवरी फेरे होते हैं। फेरे पंडित करवाता है। फेरे फिरते समय चार बार लाड़ा आगे रहता है और तीन बार लाड़ी आगे होती है। फेरे फिरने के पहले पंडित लाड़े के दुपट्टे से लाड़ी की साड़ी की गठजोड़ करता है। फेरे के बाद लाड़ी-लाड़े के बाँयी ओर बैठती है अर्थात् वह वामांगी हो जाती है। पंडित अग्नि को साक्षी बनाकर दूल्हा-दुल्हन से सात वचन दिलवाता है-

कन्या द्वारा

1. यदि आप तीर्थ-यात्रा, व्रत-उद्यापन, यज्ञ-दान जैसे कामों में मुझे साथ रखोगे, तो मैं वाम अंग आऊँ।
2. यदि आप होम, यज्ञादि, श्राद्ध, तर्पण कर पितरों को पूजो, तो मैं वाम अंग आऊँ।
3. कुटुम्ब की रक्षा, भरण-पोषण करो तथा गाय, भैंस आदि पशुओं का पालन करो, तो मैं वाम अंग आऊँ।
4. धन-धान्य कमाने और लाभ खर्च करने में तथा दूसरे के घर में कोई सम्पत्ति मेरे बिना पूछे न रखो, तो मैं वाम अंग आऊँ।
5. कुआँ, बावड़ी, तालाब, स्कूल आदि जैसे जनहित के कार्य करो या उनके बनाने में सहयोग करो, तो मैं वाम अंग आऊँ।
6. देश-विदेश से धन कमाकर लाओ, तो मैं वाम अंग आऊँ।
7. परस्त्री के सम्पर्क में न रहो, तो मैं वाम अंग में आऊँ।

वर द्वारा

हे भार्या! मेरे मन के अनुसार मेरी आज्ञा का पालन करोगी और पतिव्रत धर्म का पालन करोगी तो मैं तुम्हारा कहा पूरा करूँगा।

इन वचनों के आदान-प्रदान के बाद मंडप में ही लाड़ा-लाड़ी को भोजन कराते हैं, जिसे कसार कहते हैं। कसार अर्थात् मीठी थूली जिसमें घी-शक्कर की भरमार रहती है। लाड़ा-लाड़ी के अतिरिक्त कुँवासे और परिजन के छोटे बच्चे भी उनके साथ जीमते है। इस समय यह गीत लाड़ी वाले गाते हैं -

छोटी थूली मोटो रवो जिमजे रे लाड़ा।
थारी माता जाय न्हाटी म्हारी माता लाए पाछी।
सुणजे रे लाड़ा।
थारी काकी जाय न्हाटी म्हारी काकी लाए पाछी।
सुणजे रे लाड़ा।
थारी बुआ थारी बेन्या जाय न्हाटी,
म्हारी बुआ महारी बेन्या लाए पाछी सुणजे रे लाड़ा।

इसी के साथ समधनों से मजाक करने और आनंद लेने के लिए इस प्रकार का गीत गाया जाता है-

सुण-सुण रे लाड़ा बात कराँ
थारी दादी मोटी क्यों रे हम लाज मरा
सुण-सुण रे.....
थारी बुआ नकटी क्यों रे हम लाज मरा
सुण-सुण रे.....
थारी बेन्या डेबरी क्यों रे हम लाज मरा
सुण-सुण रे.....
थारी बुआ लाम्बड़ क्यों रे हम लाज मरा
सुण-सुण रे.....

कसार जीमने के बाद मंडप में ही सिचावणी (कन्या दान) करते हैं। जिसमें जिसकी जैसी शक्ति हो वह उतनी रकम या रूपये लाड़ा-लाड़ी के सामने रखी थाली में रखते है या लाड़ी को तिलक लगाकर हाथ में रकम रखते हैं। सबसे पहले लाड़ी की माँ और पिता कन्या दान करते हैं। कन्या दान के बाद पेरावणी (कपड़े करना) करते हैं। पेरावणी में दुल्हन की ओर से दूल्हे को और

परिजनों को कपड़े देते हैं। कपड़े अर्थात् पेरावणी करने में सबसे पहले लाड़े को पेरावणी देते है–

तमारा सासरिया से पागा आया जी,
तम पेरो क्यों नी राज बना कई हठ लाग्या।
तमारा सासरिया से धोती कुरता आया जी,
तम पेरो क्यों नी जी राज बना कई हठ लाग्या।
तमारा सासरिया से झेला मुरकी लाया जी,
तम पेरो क्यों नी जी राज बना कई हठ लाग्या।

लाड़े की पेरावणी के बाद लाड़े के पिताजी और कुटुम्ब के लोगों को पेरावणी दी जाती है–

कुण रई पेरावे, हो कुण रई पेरे सा
कालूरामजी पेरावे, हो भागीरथजी पेरे सा
राखी म्हारी मांडवा की सोभ
झालर बाजे, गरासियो वीरो दूध पिये
कुण बई पेरावे, हो कुण बई पेरे सा
पाँचू बई पेरावे, हो नन्दी बई पेरे सा
राखी म्हारा माण्डवा की सोभ
झालर बाजे, गरासियो वीरो दूध पिये

पेरावणी के बाद बारात की विदाई की जाती है। बारातियों को तिलक लगाकर भेंट दी जाती है, किन्तु लाड़े की जुवारी की जाती है। जुवारी अर्थात् लाड़ी घर की महिलाएँ लाड़े को तिलक लगाकर रूपया नारियल देती हैं, इसके बाद लाड़ी, हल्दी के छापे पिताजी, छोटे भाइयों और परिवार के सदस्यों की पीठ पर लगाती है। माँ को कंकू का छापा उसकी कोंख पर लगाने का प्रचलन है। इस समय यह गीत गाया जाता है, जो लाड़ी की पीड़ा बताता है–

पिताजी छोड़ाया ने ससरा बताया म्हारा बनड़ा
नई बोला, रेसम का रेंजा, नई बोला मुगदल का कूँदा नई बोला
माताजी छोड़ाई ने सासू बताई म्हारा बनड़ा
नई बोला, रेसम का रेंजा, नई मुगदल का कूँदा नई बोला
सगवाल छोड़यो ने नौगाँवो बतायो म्हारा बनड़ा
नई बोला, रेसम का रेंजा, नई बोला मुगदल का कूँदा नई बोला

जब लाड़ी की विदाई होती है तो न केवल लाड़ी अपितु सारा परिवार बहुत दु:खी होता है। पर लाड़ा–लाड़ी को सम्बोधित कर अपने साथ चलने को कहता है और लाड़ी अपनी मजबूरी बताती है–

बनी चलो हमारा देस, नारंगी ले लो रस की भरी
बना पिताजी तो छोड्या नी जाय, माता तो म्हारा जीव की जड़ी
बनी चलो नी हमारा देस, नारंगी ले लो रस की भरी
केसे चलूँ बना थारा देस, दादाजी म्हारा उबा उबा देखे
बनी दादाजी तमारा ने ससरा हमारा, चलो नी हमारा देस
नारंगी ले लो रस की भरी
कैसे चलूँ बना मैं थारा देस, माताजी म्हारी उबी उबी देखे
बनी माताजी तमारी ने, सासूजी हमारी, चलो नी हमारा देस
नारंगी ले लो रस की भरी।

इसके बाद लाड़ा–लाड़ी अपने परिजन के साथ जनवासे पर जाते हैं, जहाँ दूल्हा–दुल्हन को आपस में शरम तोड़ने के लिए एकी–बेकी खिलाते है। इसमें सिंघाड़े या बताशे मुट्ठी में बंद कर एक दूसरे से पूछते हैं कि ये एकी है कि बेकी अर्थात् बताशे इकाई में है कि दहाई में। इस कार्यक्रम के बाद लाड़ी के यहाँ से जो महिलाएँ आती हैं, लाड़ी को वापस उसके घर ले जाती है, जहाँ डेली (देहरी) पुजाते हैं और फिर वापस जनवासे छोड़ देते है।

जब बारात लौटती है तो लाड़ी के परिवार की महिलाएँ समधियों को गीत में राम–राम कहती हैं–

रामाजी ने कीजो हमारी राम–राम।
उसाल्यो मुसाल्यो, दुसाल्यो हमारी राम–राम।
अणा कान्हाजी ने कीजो हमारी राम–राम
उसाल्यो मुसाल्यो, दुसाल्यो हमारी राम–राम।

जब किसी की बेटी विदा होती है तो सबसे अधिक यदि किसी को दु:ख होता है तो उसकी माँ को। माँ की ममता किसी से कब छुपी है। यह गीत उसी भावना को प्रदर्शित करता है–

ओ सासू दुखेड़ो मति दीजो, वो म्हारी राई आँगण को रमत्यो
पापड़ दई ने पोड़ाई हो, लाड् दई ने लाड़ लड़ाया
ओ सासू दुखेड़ो मति दीजो, वो म्हारी नादान सायर बनड़ी
कोठी पे का ढेलड़ा, बाई तो चाल्या परदेस
सम्पत होते लाजो नी तो रेवा दीजो बई रा देस

ओ सासू दुखेड़ो मति दीजो, म्हारी राई आंगण को रमत्यो
सम्पत थोड़ा ने रण घणा, बई तो चाल्या परदेस

जब बारात जनवासे से अपने गाँव घर जाती है, तब लाड़े-लाड़ी को घर वाले बधाते हैं और वे अपनी प्रसन्नता इस गीत के माध्यम से व्यक्त करते हैं-

आज तो सोना नो सूरज, उगियो रे लाड़ा,
पूत परणई ने घर आया।
थारी माता को मन हरख्यो रे लाड़ा,
पूत परणई ने घर आया।
थारी दादी को मन हरख्यो रे लाड़ा,
पोतो परणई ने घर आया।
थारी बेन्या को मन हरख्यो रे लाड़ा,
वीरो परणई ने घर आया।

जब लाड़ा-लाड़ी अपने लिए बने कक्ष में जाते हैं तो लाड़ी लाड़े को अपने साथ न आने के लिए दिखावटी गुस्सा करती है, तब लाड़ा उसे रिझाने के लिए लालच देता है-

बनी-म्हारा मेंदी भरिया हाथ, मयल में आवा दे।
बनी-म्हारा हल्दी भरिया हाथ, मयल में आवा दे।
भमर लायो वो बनी, मयल में आवा दे।
ठुस्सी लाया वो बनी, मयल में आवा दे।
तू क्यों तरसावे वालो जीव, मयल में आवा दे।

गंगाजी का मंडप, लाड़े के मंडप के साथ ही किया जाता है। अपनी खुशी के लिए जब बेटा विवाह कर बहू को लाता है तो उन्हीं के हाथों गंगा माता का पूजन करवाया जाता है। गंगामाता पूजन के लिए गंगाजल से भरे लोटे को नये लाड़ा-लाड़ी आरती की थाली में रखकर हार, फूल, कंकू, अक्षत चढ़ाकर परिवार और समाज के लोगों के साथ किसी कुएँ, बावड़ी पर जाते हैं और जल भर लाते है। इसमें तेरह या सोलह लोटे या कलश लड़कियों और महिलाओं के सिर पर रखते हैं। कलश सिर पर रखने के पहले गंगा माता की आरती करते हैं। गंगाजल के लोटे की पूजा भी कुएँ या बावड़ी पर करते हैं, जहाँ से महिलाएँ सिर पर लोटे धरती हैं। लोटा या कलश सिर पर रखने के लिए लाल-सफेद कपड़े की चूमली बनाई जाती है। प्रत्येक कलश में थोड़ा-थोड़ा गंगाजल भी डालते हैं तथा अपने घर की ओर गंगा जी की जय बोलते हुए चल पड़ते है। महिलाएँ यह गीत गाती है-

यो तो धोळो धोळो कई रे के वाय।
यो तो धोळो फूल चम्पा को के वाय।
यो उगतो उजास वरण्यो।
आथम तो सिंदूर वरण्यो।
गाय गळावण छूटन लाग्या।
पंछिड़ा दोई मारग लाग्या।
सरस गंगामाई की आरती के वाय।
यो रामो रे रामो कई रे के वाय।
यो रामो रे फूल गुलाब की के वाय।
यो तो उगतो उजास वरण्यो।
आथम तो सिंदूर वरण्यो।
गाय गळावण छूटन लाग्या।
पंछिड़ा दोई मारग लाग्या।
सरस गंगामाई की आरती के वाय।
माता जसोदा पोळी पोवे।
श्रीकृष्णजी जीमण बैठ्या।
राधा रूकमा, थाल परोसे।
सरस गंगामाई की आरती के वाय।

× × ×

सीस को भम्मर अदे बण्यो जी,
लाल रो अदव सरूप गंगाजी री जै बोलो।
काना रा करणफूल अदे वण्यो जी,
टोटी रो अदव सरूप गंगाजी री जै बोलो।
गळा री कंठी अदे बण्यो जी,
गळसनी को अदव सरूप गंगाजी री जे बोलो।
जैजै करता निसरियाजी कई गंगाजी री जे बोलो,
जै बोलो सब लोग लुगाई गंगाजी री जे बोलो।

गंगा माताजी पर जितने नारियल चढ़ाते है या बदाते है, उनको शक्कर मिलाकर प्रसाद सब लोगों में वितरित किया जाता है। इसके पश्चात् गंगाजी का मण्डप पूर कर उस पर कलश और कलश पर एक-एक कपड़ा रखते हैं। फिर मामेरा का कार्यक्रम होता है और कलश उनको दे देते हैं। जिसने वह सिर पर उठाया।

संध्या समय मंडप के नीचे कांकण छुड़ाए जाते हैं। लाड़ा-लाड़ी एक दूसरे का कांकण छोड़ते है और कुंवासियाँ दोनों का आनंद लेती है क्योंकि एक हाथ से ही कांकण की गठान खोलनी होती है। यहाँ गीत गाती है-

इना डोयड़े दस गाठण रे लाड़ा, डोयड़ो नी छूटे।
थारी माता ने बुलई ले रे लाड़ा, डोयड़ो नी छूटे।
थारी बेन्या ने बुलई ले रे लाड़ा, डोयड़ो नी छूटे।
इना डोयड़े दस गाठण रे लाड़ा, डोयड़ो नी छूटे।
थारी माता ने बुलई ले रे लाड़ी, डोयड़ो नीई छूटे।

कांकड़ डोरा छोड़ने पर उस कुंडे में जो मायमटला के साथ लाते हैं उसमें थोड़ी छाँछ (मट्ठा) और पानी से भरकर उसमें कांकण और एक वीटी (अँगूठी) डाल देते हैं। हँसी-मजाक के लिए उस अंगूठी को ढुँढवाते हैं। वीटी उस कुंडे में से दोनों ढूँढते है। जो पहले ढूंढ लेता है, वह जीत जाता है। इस प्रकार पाँच बार कुँवासियाँ उस वीटी को कुंडे में डालती है और दूल्हा-दुल्हन उसे ढूँढकर लाते हैं। तब यह गीत गाया जाता है-

रायाँ को जित्यो रे ढेड्या को हार गयो।
ढेड्या को जित्यो रे रायाँ को हार गयो।

माँडवा बड़ा करते है, माँडवे के पत्ते, धूप, चिरकली आदि लाड़ी के सिर पर रखकर नदी या तालाब में विसर्जित करवाते हैं। मांडवा बड़ा करने के साथ दो कलश ले जाते हैं, जिसे एक के ऊपर एक बेड़े जैसा पानी भरकर लाड़ी अपने सिर पर रखकर लाती है। लाड़े के पिताजी द्वार पर लाड़ी को नेग देकर बेड़ा उतारते हैं। इस बेड़े (कलश) का पानी परिवार वाले थोड़ा-थोड़ा पीते हैं-

बाई कुँभ कलश सिर बेडलो,
भरियो हो सूरजजी दरबार
राधा रा भरतार जस जीतो
महारी नणद वदावो
वई कुंभ कलश सर बेवड़ो
वई भर्यो हो राधेश्यामजी
दरबार वऊ लाड़ीरा दरबार
जस जीतो म्हारी नणद वदावणो।

नई दुल्हन द्वारा लाये गये पानी पीने के बाद एक बार फिर से लाड़ा-लाड़ी का गठजोड़ (गठबंधन) कर ढोल के साथ कुंवासियाँ गाँव के देवी-देवताओं को धोक (पाँव पड़ते) देने जाते हैं। वहाँ नारियल बधाते है। जब लाड़ा-लाड़ी देवी-देवताओं के पाँव पड़ते हैं, सिर नवाते हैं, तब बड़ी कुंवासियाँ उनकी पीठ थपथपाती हैं और कहती हैं- 'जोड़ो अम्मर रे' अर्थात् सुहागन बनी रहे। तब कुंवासियाँ ये गीत गाती है-

लगना तो लाया जोशी देस ना,
बना धीरे चालो।
लगना तो लाया जोशी देस ना,
बनड़ा धीरे चालो।
लगना तो लाया जोशी देस ना,
बना-बनड़ी धीरे चालो।

मालवा की सांस्कृतिक बयार

डॉ. शशि निगम

भारतीय संस्कृति में जिन सोलह संस्कारों का उल्लेख किया गया है, वे सर्वविदित है। 'विवाह संस्कार' अर्थात् उस अंचल विशेष की एक भव्य सांस्कृतिक झाँकी। बालक के जन्म के पश्चात् से ही भावनात्मक रूप से कल्पना में बाँध लिया जाने वाला अवसर। विवाह अत्यंत उत्साह पूर्वक दो आत्माओं का पवित्र भावों से दो परिवारों द्वारा समाज के समक्ष बनाया जाने वाला, अनेक रीति-रिवाजों, लोकाचारों से बँधा एक सांस्कृतिक अनुष्ठान है। इस दौरान अनेकानेक लोकगीतों में इस रीति-रिवाजों के दर्शन होते है। नारी कण्ठ से निकला मधुर स्वर इस अवसर को अत्यधिक सरस आत्मीय व आनन्दमयी बना देता है।

जातिगत व स्थानीय अंतर के कारण इन रीति-रिवाजों, लोकाचारों में आंशिक अन्तर किन्तु उद्देश्य और भावनात्मक रूप से लगभग समानता दृष्टिगोचर होती है। मालवांचल में सम्पन्न होने वाले विवाह सम्बन्धी रीति-रिवाज, लोकाचार व परम्पराएँ इस प्रकार हैं-

जब कन्या एवं वर पक्ष के मध्य वैवाहिक रिश्ता तय हो जाता है तो इसे औपचारिक एवं मूर्तरूप देने के लिए 'सगाई' की रस्म की जाती है। बात पक्की हो जाने पर किसी भी शुभ दिन कन्या के पिता या प्रतिनिधि वर के घर जाकर तिलक करके भेंट स्वरूप 'रुपया-नारियल' देते हैं। मालवा में यह प्रथा 'रुपया-नारियल झेलना' के नाम से प्रचलित है। बाद में वर-पक्ष की ओर से सुविधानुसार कन्या को ओढ़नी ओढ़ाकर खोल भरने (साड़ी के आँचल में नारियल पताशे, सूखे मेवे आदि भेंट करना) का लोकाचार पूर्ण किया जाता है। रुपया नारियल झेलना कन्या पक्ष के प्रस्ताव का सूचक है। ओढ़नी ओढ़ना, खोल भरना वर-पक्ष की ओर से स्वीकृति का परिचायक है।

वर और कन्या पक्ष की ओर से विवाह के लिए सगाई सम्बन्ध निश्चित हो जाने के पश्चात् कन्या के यहाँ से वर के लिए उपहार स्वरूप वस्त्राभूषण आदि प्रेषित किए जाते हैं, इस प्रथा को 'टीका' कहा जाता है। सम्पन्न लोग टीके में परिवार के सदस्यों हेतु भी वस्त्र उपहार आदि लाते हैं। वधू के लिए वर की ओर से प्रेषित वस्त्रालंकार आदि को चूनड़ी ओढ़ाना या ओढ़ना कहते हैं। लोकाचार के अनुसार इस रिवाज को विवाह के पूर्व ही सम्पन्न हो जाना आवश्यक है। सगाई के दौरान सजन गीत गाये जाते हैं। जैसे-

लाडू बंधाऊँगी बाजवणा, खाजा की खड़क देवाय,
पियाश हो साजना।
लापसी रंधाऊँगी लचलची, ऊपर बूरारी खाँड,
पियारा हो साजना।
भैंस दुवाऊँगी बाखड़ी, दुदली रंधाऊँगी खीरा,
पियारा हो साजना।

टीप का तात्पर्य है लग्न पत्रिका एवं झेलना का तात्पर्य है 'प्रेषित करना'। टीप में कन्या पक्ष की ओर से कन्या के घर होने वाले सम्पूर्ण वैवाहिक कार्यक्रम का उल्लेख रहता है। टीप की दो प्रतियाँ तैयार की जाती है। एक प्रति पूर्ण रूपेण पचरंगी नाड़े से बँधी होती है, जो कि 'पाणिग्रहण संस्कार' के समय दूल्हा-दुल्हन की हथेलियों के मध्य रखी जाती है। दूसरी प्रति के द्वारा वर पक्ष के लोग वधू पक्ष के वैवाहिक कार्यक्रम का विवरण देखकर बारात प्रस्थान तथा अन्य कार्यक्रम की योजना बनाते हैं। टीप को शुभ मुहूर्त में ब्राह्मण या नाई के द्वारा वर के यहाँ प्रेषित किया जाता है। वर पक्ष की महिलाएँ आदर पूर्वक टीप बधाती है, अर्थात् स्वागत करती हैं। इस अवसर पर गणपति के पाँच गीत अवश्य गाए जाते हैं। टीप प्रायः शुक्ल पक्ष में प्रेषित की जाती है। टीप झेलना एक प्रकार से वधू के द्वारा वर को भेजा जाने वाला आमंत्रण भी है।

दूल्हा -दुल्हन का विवाह दोनों पक्षों की सहमति से सम्पन्न हो रहा है, इस बात की सुनिश्चितता समाज के समक्ष प्रकट करने हेतु दूल्हा-दुल्हन की हथेलियों के मध्य टीप रखने का रिवाज प्रतीत होता है।

बन्याक या बिन्दायक शब्द विनायक (गणेश) का अपभ्रंश है। भारतीय संस्कृति में प्रत्येक शुभ कार्य या अनुष्ठान का प्रारंभ गणपति वंदना से ही किया जाता है, क्योंकि विनायक ऋद्धि-सिद्धि के दाता हैं। विवाह में सब कार्य निर्विघ्न सम्पन्न हो, इसलिए गणपति को प्रथम निमंत्रण दिया जाता है।

गणानान्त्वा गणपति हवा महे प्रियनान्त्वा प्रिय पतिं हवा महे।
निधनान्त्वां निधि पति हवामहे। - यजुर्वेद

गणपति पूजन की औपचारिक विधि को पुरोहित आकर सम्पन्न कराते हैं। इस दिन मंगल कलश स्थापित किया जाता है तथा वैवाहिक लोकाचारों का प्रारंभ हो जाता है। भगवान गणेश का ऋद्धि-सिद्धि युक्त चित्र दीवार पर स्थापित कर उन्हें गुड़-घी, घुघरी, लापसी आदि का भोग लगाया जाता है। गणपति के गीत गाए जाते हैं। उनसे प्रार्थना की जाती है-

चालो गजानंद जोसी के या चालाँ,
तो आछा-आछा लगना लिखवाँ,
गजानंद कोटरी गादी पर नौबत बाजे।
नौबत बाजे इन्दरगढ़ गाजे,
तो झीणी-झीणी झालर बाजे,
गजानंद कोटारी गादी पर नौबत बाजे।

गणेश स्थापना के साथ ही 'मायमाता' भी स्थापित की जाती। दीवार पर खड़ी या चूना पोतकर (चौकोर आकृति) गेरू की रेखाओं से परंपरानुसार मायमाता का अंकन किया जाता है। मायमाता को कुलदेवी के रूप में श्रद्धापूर्वक पूजा जाता है। उनके सम्मुख मिट्टी के कलश एवं उस पर दीपक स्थापित किया जाता है।

गणपति स्थापना के पूर्व महिलाएँ कुम्हार के घर जाकर मिट्टी के पात्र बनाने वाले 'चाक' (वह चक्र जिस पर मिट्टी के पात्र बनाए जाते हैं) की पूजा करती हैं। यह प्रथा 'चाक नौतना' कहलाती है। कुम्हार अपने चाक के द्वारा अनेक कलश, दीपक आदि का निर्माण करता है। मांगलिक कार्यक्रम में इनका बड़ा महत्त्व है। वंश परम्परा के चक्र को निरंतर जारी रखने हेतु विवाह संस्कार किए जाते हैं। आयोजन के पूर्व ब्रह्मा की समता रखने वाले लौकिक प्रजापति को सम्मान देना नैतिक दृष्टि से भी आवश्यक हो जाता है।

भाई-बहन का स्नेह सर्वविदित है। जब भी बहन के घर विवाहादि जैसे मांगलिक कार्य हों, वह अपने भाई को प्रथम निमंत्रण देना नहीं भूलती है। मालवांचल में भाई के घर 'बत्तीसी झेलना' अर्थात् बत्तीसी भेजने का रिवाज विशिष्ट निमंत्रण का ही पर्याय माना गया है। बत्तीसी के अंतर्गत एक सफेद कोरे कागज पर मायके के सभी सदस्यों के चित्र बनाए जाते हैं। दोनों ओर चाँद-सूरज तथा मध्य में बत्तीस पंखुड़ियों वाला कमल का फूल बनाया जाता है। इस चित्रमय कागज के साथ रुपया नारियल तथा बत्तीस-बत्तीस सूखे मेवे, बताशे आदि बहन द्वारा भेजे जाते हैं। इस समय प्राय: 'गणेश' और 'बीरा' के गीत गाए जाते हैं। एक बहन द्वारा अपने भाई एवं माता-पिता इत्यादि के प्रति अत्यंत आत्मीय भाव अभिव्यक्त हुए हैं-

बीरा! छाब भरी छोछा नारेला री,
बीरा आ रे बत्तीसी म्हारा पिताजी घर दीजो।
म्हारी सैंयो जामण रो जायो कदे मिल?
पिताजी से मिलता म्हारा नैन झरा झर लागा।
माताबाई से मिलता म्हारो हिवड़ो उमग्यो।

वैवाहिक लोकाचारों के दौरान 'माता पूजन' (शीतला पूजन) वर एवं वधू दोनों के यहाँ किया जाता है। वैसे माँ शीतला 'माता' एवं 'चेचक' की देवी मानी जाती है तथा प्रतिवर्ष शीतला सप्तमी को पूजन-अर्चन किया जाता है। विवाह में इस पूजन करने का उद्देश्य है कार्य सिद्धि एवं रक्षा की भावना। माता को अपने पुत्र-पुत्री प्रिय होते हैं, और उनके विवाह में किसी तरह की कोई बाधा न आए, साथ ही हर प्रकार से सुरक्षा रहे।

माता पूजन के एक दिन पूर्व रात्रि में तैयारी कर ली जाती है। घुघरी, लापसी, गुणी, पूरी, भजिए, चावल, ढोकले इत्यादि का भोज (ठण्डा सीला) तैयार कर लिया जाता है। छापे लगाने हेतु चावल पीसकर 'एपण' बनाया जाता है। प्रात:काल सूर्योदय से पूर्व महिलाएँ ढोल-ढमाके सहित वर-वधू को साथ लेकर शीतला माता के थानक (देवालय) पर जाती हैं। दूध-दही एवं जल से स्नान करवाकर कंकू, चावल, हल्दी, मेहंदी, नारियल, पुष्प आदि से पूजन किया जाता है। इस अवसर पर माता के वही गीत गाए जाते है जो अन्य अवसरों पर गाए जाते हैं। माता पूजन करते हुए रक्षा की कामना की गई है-

कंकू भरियो चंगेसरो बऊवड़ थें क्याँ चाल्या आज।
आज रजला की राणी आसन बैठ्या यो मड़ पूजन जोग,
माता म्हारी एक बालूड़ो दो।
एक बालूड़ा के कारणे म्हारा सासूजी बोले बोल।
माता म्हारी एक बालूड़ो दो।
अटसन बादू पालनो माता पटसन बाँदू रेसम डोर
माता म्हारी एक बालूड़ो दो।
तू रच्छा करने माता म्हारी पूजन करने आस,
माता म्हारी एक बालूड़ो दो।

बाने बैठाने का व्यावहारिक आशय यह होता है कि वर-वधू को अन्य समस्त कार्यों से मुक्त रखकर केवल वैवाहिक कार्यक्रमों में ही पूर्वत: संलग्न रखना। वास्तव में इसका अर्थ 'शोभा यात्रा' से लिया जाता है। विवाहोपरान्त प्राय: पाँच, सात, नौ एवं पन्द्रह दिनों तक किया जाता रहा है। गणेश पूजन के उपरान्त बारात के पूर्व तक के सम्पूर्ण समय को एक यात्रा के रूप में प्रतीकात्मक रूप से माना जाता है। इस शोभा यात्रा का प्रारंभ बाने बैठाने अर्थात् शोभा यात्रा प्रारंभ करने से किया जा सकता है। माता पूजन के पश्चात् वर-वधू को दूसरे या तीसरे दिन बाने बैठाया जाता है। इसके अंतर्गत कुछ लोकाचार पूर्ण किए जाते है-

सूखे आटे से चौक पूरकर उस पर लकड़ी की चौकी (काष्ठ वेदिका) रखकर उस पर लाल कपड़ा बिछाकर आटे के पाँच गणपति बनाकर स्थापित किए जाते हैं, जिनमें एक गणपति का आकार बड़ा होता है। बड़े गणपति के पेट में एक सिक्का चिपका दिया जाता है एवं कमर में पचरंगी नाड़ा बाँधा जाता है। पाँचों गणपति के सम्मुख पाँच लड्डू रखे जाते हैं और गीत गाए जाते हैं।

उसके पश्चात् पाँच मिट्टी के बड़े आकार के दीपक में 'ज्वारा' बोने के बाद महिलाएँ हाथ में दो सूपड़े और मूसल लेकर साल (धान), पाँच सुपारी, पाँच हल्दी की गाँठे, पाँच सिक्के और पाँच सिंघाड़े लेकर एक सूप से दूसरे सूप में झेलती हैं तथा मूसल से कूटने का अभिनय करती हैं। ज्वारे बोते समय गीत गाते हैं-

जऊका जवारा ने कंकू का क्यारा,
जऊ म्हारा लेर्या ले जी।

कुँण बऊ वाया ने कुण बऊ सींच्या?
जऊ म्हारा लेर्‌या ले जी।
सूरज जी वाया ने राँदल बऊ सींच्या,
जऊ म्हारा लेर्‌या ले जी।

इसके पश्चात् वर-वधू की माता की साड़ी के पल्लू (आँचल) में गणपति झेलाये जाते हैं। वहीं पाट पर वर-वधू को बैठाकर हल्दी लगाई जाती है। पाँच कुँवासिन दूल्हा अथवा दुल्हन को गुड़-मिठाई से कौल्या (कोरटू) जिमाती है, इस समय गीत गाये जाते हैं-

म्हारो नानो सो लाड़ो-लाड़ी कोल्या जीमें रे।
वी तो मेरे बेठा लाड़ी की भुवाजी टुँगी रथा रे।
भुवा बाजोट्‌या नीचे छिपी रेता वो।
म्हारा पड़ता सा कोल्या झेली लेना दो।

इसके पश्चात् वर अथवा वधू को घर के मुख्य द्वार के बाहर ले जाया जाता है। आरती उतारकर घर के अंदर प्रवेश करवाते हैं। इन सभी लोकाचार में कुछ हेतु छिपे हैं- साल झटकना या ज्वारे बोना यह समृद्धि के द्योतक है। कृषि प्रधान देश में यह मंगल के चिन्ह है। वर-वधू को राजा-रानी या देवतुल्य समझ कोल्या कराना उनके महत्त्व को प्रतिपादित करता है, चूँकि वे अपने नवजीवन में पदार्पण कर रहे है। लूण उतारने की प्रथा एक लोकभावना से लिप्त है, जिसमें अमंगल व दुरात्माओं से बचाने की कामना है।

शोभा यात्रा के विश्राम, भोजन एवं स्वागत के रूप में प्रतिदिन बाना झेलने का आयोजन भी होता है। इसमें व्यवहारिक रूप से प्रतिदिन परिचितों व रिश्तेदारों द्वारा निमंत्रित किया जाता है। जिसमें विदा करते समय बताशे, चावल, नारियल आदि गोद में दिये जाते है। रात्रि में घोड़ी, बैलगाड़ी, पैदल आदि सुविधानुसार बाजे के साथ बाने के रूप में बनौला-बनौली निकालते है। इस समय गीत गाते हैं-

बना की घोड़ी रमझम करती जाय।
गुलाल गिरद उड़ाती जाय।
पतासा मेह बरसाती जाय।
बानो तो म्हारो रामचन्द्र अवतार।
दुलो तो म्हारो कृष्ण अवतार।

एक कटोरी या पात्र में मीठा तेल लेकर हरी दूर्वा को तेल में डुबोकर दोनों हाथों से क्रमशः वर-वधू के दोनों पैरों के पंजों, घुटनों, हाथों, कंधों एवं सिर पर तेल चढ़ाते हैं। पुनः सिर से पैरों के पंजों तक यही प्रक्रिया पाँच बार दोहराते हैं। यह क्रिया कुँवासिनों द्वारा सम्पन्न की जाती है। गीत भी गाए जाते हैं-

गोरा अरूण कुमारजी पूछे बालरिया
गोरी चूनड़ चीगस काँ भरिया?
गोरा लोड़ा/ लाड़ी के तेल चड़ावतियाँ,
म्हारी चूनड़ चीगस वाँ भरिया।

उसके पश्चात् काकी, भाभी, बहन एवं अन्य कुँवासिनों द्वारा वर-वधू को हल्दी का उबटन लगाया जाता है। हल्दी लगाते समय जो गीत गाते हैं, उनमें प्रायः हल्दी कैसे उत्पन्न होती है तथा उससे सौन्दर्य वृद्धि होती है आदि का प्रायः वर्णन होता है-

हल्दी गाँठ गठीली हल्दी भोत रंगीली,
निबजे हो बेलू रेत में।
वो तो काकाजी की जो लाड़ा/ लाड़ी का
राय हो शरदलाल जी वो तमारे हल्दी मोलावे।

तेल-हल्दी के पश्चात् वर-वधू को स्नान करवाया जाता है। स्नान के गीतों में प्रायः स्नान करने से बहने वाले पानी, आँगन में होने वाले कीचड़ इत्यादि का उल्लेख होता है।

गाज्यो ने गड़ल्यो सरिवबई, मेवलो जी बरस्यो,
आँगण कीचड़ सरिवबई किने कर्‌यो?
आज दादाजी का पोता, पोती न्हावण बेठा,
आँगण कीचड़ सरिवबई उने कर्‌यो।

हल्दी लगाने की भाँति ही वर-वधू को प्रतिदिन मेहंदी भी लगाई जाती है। दोनों हाथ पैरों में लगी मेहंदी वर-वधू की विशिष्ट पहचान है। विवाह में प्रतिदिन अन्य गीतों के साथ मेहंदी के गीत भी गाए जाते हैं। इन गीतों में प्रायः उसके रंगीले, सजीले होने, उसको पीसने, देवर-भौजाई द्वारा मेहंदी तोड़कर लाने, हास-परिहास आदि का वर्णन होता है-

अचको मेंदी बचको पान, मेंदी चाली राज दुवार।
बई म्हारी मेंदी पाछी लाव।
श्यामलाल जी तम बायर आव,

बायर आव तमारी गोरी ने लाव।
ब्याज बट्टा में तमारा छोरा-छोरी लाव।
बई म्हारी मेंदी पाछी लाव।

वर-वधू को हल्दी-मेहंदी इत्यादि सौन्दर्य वृद्धि में सहायक होने के साथ ही हल्दी त्वचा को कीटाणु रहित बनाती है।

इस मान्यता के आधार पर कि हल्दी-मेहंदी लगे आकर्षक दूल्हा-दुल्हन पर दुरात्माएँ सवार होने की चेष्टा करती है, अतः उनसे बचने के लिए हल्दी -मेहंदी लगने के प्रथम दिन से ही वर को कटार एवं वधू को सुविधानुसार छोटा चाकू रखना अनिवार्य हो जाता है। इसी के साथ ही सौंफ-सुपारी सम्भवतः स्नेह भाव एवं मेलजोल में सहायक होती है। अतः यह परम्परा प्रचलित है।

माण्डव या मण्डप की निश्चित तिथि को वर और वधू के घर मण्डपाच्छादन किया जाता है। वर-वधू के माता-पिता उस दिन उपवास रखते हैं। बाँस, राड़े (सरकण्डे), आम के पत्ते, पान इत्यादि से तैयार किए मण्डप के नीचे गोधूलि बेला में पूजन करके उपवास छोड़ते हैं। दूध-भात, कढ़ी-रोटी, चावल, मीठी थूली इत्यादि से मण्डप के चारों खम्भों के निकट धूप दी जाती है, नैवेद्य लगाया जाता है। पाँच सुहागिनों को भोजनार्थ बैठाया जाता है, उसके पश्चात् सब भोजन करते हैं।

मण्डप के एक कोने में 'माणक खम्भ' स्थापित किया जाता है। यह लकड़ी का बना धन आकार का होता है। चारों ओर लकड़ी की चिड़ियाँ लगी होती हैं। यह गेरूए रंग में रंगा होता है। मण्डप के मध्य में ऊपरी ओर दो मिट्टी के दीपक तथा दो पूरियाँ झूलते हुए से बाँधे जाते हैं। नीचे जमीन पर चौक पूरा जाता है। इसी दिन मण्डप के नीचे विवाह में आई कुँवासिनों को नवीन चूड़ा-चूड़ी पहनाए जाते हैं। माण्डवा के जो गीत गाए जाते हैं, उनमें प्रायः मण्डपाच्छादन एवं उसमें लगने वाली सामग्रियों का उल्लेख होता है-

तम जाजो सुभाषलाल जी अमझेराजी,
तम लाजो काचा-पाका पान,
मोत्या छायो माँडवो जी।

लौकिक दृष्टि से इस रिवाज का यह महत्त्व है कि 'मण्डप तले' वैवाहिक लोकाचारों, कार्यक्रमों हेतु एक स्थान सुनिश्चित हो जाता है। 'मायरा', 'चँवरी-फेरा', 'पाणिग्रहण' संस्कार आदि यहीं सम्पन्न किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त वैवाहिक कार्यक्रम में समस्त देवी-देवताओं, दिगपालों, लोकपालों आदि का आह्वान करके उन्हें मण्डप में यथेष्ट स्थान प्रदान करना भी धार्मिक एवं पौराणिक दृष्टि से माना गया है।

वर-वधू के माता -पिता को इस दिन हल्दी लगाकर स्नान कराया जाता है। उसके पश्चात् दोनों ढोल-ढमाके सहित घूरा पूजन जाते हैं। मालवी में इसे 'उकेड़ी पूजा या 'उकल्ड़ी पूजा' कहते है। इसमें प्रायः पाँच पापड़, कंकूँ, अक्षत् पीले चावल, काँगसी (कंघी), घुघरी (उबले गेहूँ), लोहे की सलाई, राड़े की पगेरी आदि से पूजन किया जाता है।

घूरे के निकट गोबर से लीपकर उस पर कंकूँ का स्वस्तिक बनाया जाता है। उस पर पूर्वजों का नाम ले लेकर पीले चावल रखे जाते हैं। पीले चावल रखने का आशय यहाँ पूर्वजों को निमंत्रण देना होता है। एक गीत जिसमें स्वर्ग तक उड़ने वाली चिड़िया द्वारा पूर्वजों को विवाह हेतु आमंत्रण भेजा जा रहा है-

सरग उड़न्ती साँवली, एक संदेसो लेती जा,
जई ने बूड़ा-गल्डा ने यूँ कीजे, तम घरे बरदोड़ा हो।
ताला जकड्या लोया का ने बज्जड़ कँवाड़,
काचा सूत को पालना बँध्या हे सरग दुवार।
बरद करो बरदावणा, हमारो तो आवणो नी होय।

'उकेड़ी पूजा' के निम्नांकित आशय जान पड़ते है- सर्वप्रथम तो इसके माध्यम से पूर्वजों को आमंत्रण देना। वर-वधू पर भूत-प्रेतात्मा की कुदृष्टि न पड़े इस हेतु पूजा करके उन्हें घुघरी का भोग लगाना। भूतों का भोजन बाकला (उबला हुआ धान्य) माना जाता है। इसलिए घूरा पूजन में इसका समावेश किया जाता है। मालवा कृषि प्रधान क्षेत्र होने से खाद की दृष्टि से 'घूरा' अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। घूरे जैसे स्थान को पूजा जाना लोकाचार में विवाह पक्ष वालों के मनोविज्ञान को प्रकट करता है। जिसके यहाँ मांगलिक कार्य होता है उसे बड़ा ही विनम्र होना पड़ता है। उसके लिए यह आदर्श भावना है कि घूरे जैसी अकिंचन जगह को भी वह महत्त्वपूर्ण अवसर पर नहीं भूलता और उसे सम्मान देकर पूजता है।

घूरा पूजा के पश्चात् 'सातंग' नामक लोकाचार वर-वधू के माता-पिता गृहशांति हेतु करते हैं। पूजन करते समय माता-पिता जोड़े से बैठते हैं तथा वर-वधू को मध्य में बैठाया जाता है। इसमें पुरोहित द्वारा शास्त्रोक्त लोकाचार हवन इत्यादि सम्पन्न कराए जाते हैं। सातंग के समय महिलाएँ गीत गाती है-

सुहाग रेणा सातंग बेठा सो जणा।
बीच में बेठा रमेसलाल जी राजवी।
पाछा फिरी ने ववड़ देखजो।
बेठो सोई तमासो परवार।

'सातंग' करने का उद्देश्य है कि इस लोकाचार के अंतर्गत पुरोहित द्वारा नौ ग्रहों की पूजा एवं यक्ष-हवन करवाया जाता है । जिसका तात्पर्य नौ ग्रहों के कुप्रभाव से रक्षा के साथ ही अग्नि के समक्ष माता-पिता अपने पुत्र-पुत्री के विवाह का संकल्प भी करते हैं।

'बरद' हेतु तेरह कोरे मिट्टी के पात्र जल से भरे जाते हैं। इन पात्रों को वर-वधू के भाई-भौजाई पूजते हैं। भौजाई सिर पर जल का पात्र भर कर 'माण्डवा' के नीचे रखती है। उसके पश्चात् उसे मायमाता के सम्मुख रख दिया जाता है।

जब भौजाई बरद भरकर लाती है, तब मण्डप में रखने से पूर्व बरद के प्रतीक उस मिट्टी के पात्र को ससुर या जेठ द्वारा सिर पर से उतारा जाता है। उसके बाद ससुर या जेठ उसे 'नेग' देते हैं। बरद भरने जाते समय गीत गाए जाते हैं-

गंगा की गार मँगाव के दूध सिंचाव जी,
जी की तो बरदड़ी बणव।
गोती हमारा भरसी रे।
बरदड़ी ली वी भरसी श्यामलाल जी का भीम।
रामलालजी डोकरा रे।

मायरा सामाजिक जीवन में अनेक रिश्ते हैं, किन्तु पारिवारिक जीवन में बहन एवं भाई के आत्मीय रिश्तों की मिसाल नहीं। मालवांचल में अत्यंत भावुकता से अभिव्यक्त होने वाला, अपेक्षाओं दायित्वों, अधिकार बोध में लिप्त भावनात्मक संवेदनाओं में बुना एक गहन आत्मीय सम्बन्ध।

बहन के घर प्रत्येक मांगलिक अवसर पर भाई की उपस्थिति वांछनीय समझी जाती है। भाई अपनी बहन के लिए, उसके ससुराल वालों के लिए यथाशक्ति उपहार स्वरूप वस्त्राभूषण आदि भेंट करके उसकी प्रसन्नता को द्विगुणित करता है। मालवा में इस प्रथा को 'मायरा', 'मामेरा', 'भात' आदि कहते हैं। 'मायरा' शब्द मातृ-पक्ष द्वारा प्राप्त होने वाले वस्त्राभूषण एवं उपहार का पर्यायवायी बन गया है। वैसे मामेरा शब्द में मामा सम्बन्ध ध्वनित होता है। कोई भी पुरुष अपनी बहन की संतान के लिए मामा ही होता है। बहन के लिए न सही, बहन के बच्चों के विवाह प्रसंग पर मामा उपहार की वस्तुएँ लाता है, तो उसे 'मामेरा' संज्ञा देना सार्थक है।

विवाह में प्रचलित लोकाचारों में मायरे की प्रथा का भावनात्मक दृष्टि से विशिष्ट स्थान है। इस अवसर पर गाए जाने वाले गीतों को भी मायरा, मामेरा या बीरा के गीत के नाम से जाना जाता है। इन गीतों में नारियों द्वारा आभूषणों की अभिलाषा, भाई-बहन के सम्बन्ध, ननद-भौजाई के सम्बन्ध आदि का उल्लेख होता है। एक बीरा गीत-

माथा ने भँमर घड़ाव बीराजी,
टिलड़ी रतन जड़ाव बीराजी,
काना ने झालज घड़ाव बीराजी,
झूमणा रतन जड़ाव।
राम बी आया, ने लछमण बी आया।
ने सीता सरीखी भोजाई हो बीराजी,
मायरो पेरावा ने आया।

बारात अर्थात् वर यात्रा से पूर्व वर निकासी (निष्कासन) अर्थात् दूल्हे का प्रस्थान कराया जाता है। इस हेतु कुछ लोकाचार पूर्ण किए जाते हैं। सर्वप्रथम वर को तेल चढ़ाया जाता है, तत्पश्चात् हल्दी लगाकर स्नान कराया जाता है। इस समय भी तेल-हल्दी के वही गीत गाए जाते हैं, जो इस अवसर पर प्रतिदिन गाए जाते हैं। स्नान के बाद दूल्हे को सिर से पैर तक सफेद चादर ओढ़ाकर दूल्हे के मामा द्वारा गोद में उठाकर 'गणपति' एवं 'मायमाता' के सम्मुख बैठाया जाता है। बैठाने के पूर्व कमरे की देहरी के बाहर मामा का 'तड़तड़िया' पर पैर रखना होता है। 'तड़तड़िया' एक छोटे मिट्टी के दीपक में थोड़ा-सा नमक एवं राई रखकर वैसे ही

दीपक से ढंका होता है। इसके लिए मामा को नेग भी दिया जाता है।

वहीं पर दूल्हे को नवीन वस्त्रालंकारों से सुसज्जित कर, माथे पर केसरिया साफा, जिस पर सेहरा, माड़े, कमर में फेटा बाँधकर हाथ में कटार दी जाती है। उसके पश्चात् मायमाता का पूजन करके 'मण्डप' के नीचे लिवा जाते हैं। वहीं पर 'बान' का आशय है दूल्हे को रूपये भेंट करना। उसके पश्चात् उसे घोड़ी पर बैठाया जाता है, जिसे 'घोड़ी चढ़ाई' कहते हैं।

काकी, भाभी द्वारा घोड़ी को चने की दाल खिलाई जाती है, उसके बालों में चोटी गूँथी जाती है। उसे पश्चात् दूल्हे को उसकी माता द्वारा दूध पिलाया जाता है। गाजे-बाजे एवं बारात सहित दूल्हा मंदिर में दर्शन करके विवाह हेतु प्रस्थित हो जाता है। इस कार्यक्रम के दौरान भी 'घोड़ी', 'सेवरा' इत्यादि के गीत गाए जाते हैं। एक सेवरा गीत-

जोसीड़ा री गलियाँ होय निसर्‌या एक मालनी।
राजाजी री गलियाँ होय निसर्‌या हो मालनी।
करी गया लगना रो चाव,
हाँ वो फूलाँ मालनी, हाँ वो गेंदा मालनी।
सेवरा में चार रंग लावजो ए मालनी।
चम्पो, चमेली, मरवो मोगरो ए मालनी।
चोथो गुलदावरी रो फूल। हाँ वो फूलाँ मालनी।

उक्त मांगलिक लोकाचारों में कुछ भावनाएँ निहित है- तड़तड़िया में रखा राई-नमक अनिष्ट निवारण हेतु 'टोटका' के रूप में माना जा सकता है। बान या 'घोड़ी चढ़ाई' के समय भेंट में बड़े लोगों द्वारा शुभकामनाओं के साथ ही दूल्हे की राह खर्च देने की भावना विद्यमान है। घोड़ी को चने की दाल खिलाना अर्थात् वाहन भी चुस्त रहे। उसकी 'चोंटी गूँथना' की प्रथा में उसे श्रृँगारित करने की भावना निहित है। दूल्हे को काजल लगाना, अनिष्ट निवारण तथा सौन्दर्य वृद्धि हेतु। माता द्वारा स्तन पान कराना इस बात का परिचायक है कि बारात के लिए उद्यत वीर पुत्र को माता स्मरण कराती है कि वधू लेकर आना अर्थात् विजयी होकर आना, माता का दूध लज्जित न हो।

यूँ तो प्रत्येक आगंतुक का आत्मीय स्वागत-सम्मान किया जाता है। किन्तु जब होने वाला दामाद बारात लेकर आए तो यह विशिष्ट अवसर होता है। स्वागत की विशेष तैयारी होती है, तोरणद्वार सजाए जाते हैं। ढोल-ढमाका, बाजे, शहनाई इत्यादि वातावरण को और भी आकर्षक बना देते है। द्वार पर सुसज्जित घोड़ी पर जब वर राजा आते हैं तो वधू के पिता एवं परिवार के अन्य लोग स्वागत हेतु तत्पर रहते हैं।

वधू के पिता के द्वारा वर के चरण धोए जाते हैं, जिसे 'पाँव पखाळना' (पद प्रक्षालन) कहते हैं। उसके पश्चात् वर को तिलक लगाकर यथा शक्ति भेंट दी जाती है। इसी दौरान सम्पूर्ण बारातियों का स्वागत कंकूँ गुलाल, पुष्पहार इत्यादि से किया जाता है।

चरण पखारने के बाद तोरण द्वार पर लगे विशेष तोरण को वर अपनी कटार या तलवार की नोक छुआता (स्पर्श) है। जिसे तोरण मारना कहते हैं। तोरण मारते ही सम्पूर्ण वातावरण खुशी से झूम उठता है, पुष्प-वर्षा की जाती है। मंगल वाद्यों से वातारण गूँज उठता है। गीत में तोरण मारने के साथ ही सुसज्जित दूल्हे की धूमधाम से निकलने वाली बारात का बड़ा मनोहारी उल्लेख हुआ है-

बनाजी थें तो चाल्या, मझ आदी रात- मझ आदी रात।
म्हारी सूती नगरी ओचकी रे बनड़ा।
बनाजी थें तो जोसी क्याँ जाओ म्हारा राज-जाओ म्हारा राज।
लगना री पारख लावजो रे बनड़ा।
बनाजी तमारा हाथा में, हरिया रूमाल हो हरिया रूमाल।
पाँवा री मेंदी राचणी रे बनड़ा।
काँधा पे नखसी बंदूक, तलवार्‌याँ तोरण मारोजी बनड़ा।

'पाँव पखाळना' के रिवाज में दूल्हे को देवतुल्य मानते हुए परम्परानुसार पदप्रक्षालन करके श्रद्धा एवं सम्मान व्यक्त किया जाता है।

तोरण मारने के पश्चात् वहीं पर वधू की माता द्वारा वर को पड़छा जाता है। पड़छने की प्रक्रिया में सूप (अनाज फटकने का सूपड़ा) रई (दही मथने की मथानी), पान, मूसल, राड़े की बनी बैलगाड़ी की जूड़ी इत्यादि आवश्यक होते हैं। बारी-बारी से प्रत्येक वस्तु पर साड़ी का पल्लू रखकर वर के माथे को स्पर्श कराती है फिर अपने माथे को। इस प्रकार पाँच-पाँच बार यह

प्रक्रिया पूर्ण की जाती है। पड़छते समय एक-एक वस्तु का नाम लेकर वर को पड़छने का वर्णन है गीत में -

लाओ रे साल का खाँडना, इना वर ने पड़छो रे।
लाओ रे साल का झटकणा, इना वर ने पड़छो रे।
लाओ रे घोरी का जूड़ा इना वरने पड़छो रे।
लाओ रे रई का बिलोवणा, इना वर ने पड़छो रे।
लाओ रे नागर बेल का पान, इना वर ने पड़छो रे।

तोरण मारना वीर योद्धा द्वारा किला फतह करने का प्रतीक है। पड़छने का तात्पर्य यहाँ परीछन या परिक्षण जान पड़ता है। वर को पड़छने की सामग्री से परिचित कराकर गृहस्थ एवं आर्थिक जीवन के प्रति सजग होने की भावना प्रदर्शित करता है। इस प्रक्रिया में बैलगाड़ी की जुड़ी, सूपड़ा एवं मूसल कृषि व्यवसाय से जुड़ी प्रमुख वस्तुएँ हैं, जबकि रई उन्नत पशुधन तथा पान उत्तम आर्थिक स्थित को दर्शाने वाली वस्तुएँ इसमें सम्मिलित हैं।

प्रत्येक नारी की यह कामना रहती है कि उसका पति उसके प्रभाव में रहे एवं उसके परिणय जीवन में प्रेमाधिक्य से कभी वंचित न रहे। मालवांचल में विवाह के अवसर पर वधू के भावी जीवन को आनंदमय बनाने की कामना से कुछ लोकाचारों का आयोजन किया जाता है, जिसे 'कामण' कहते हैं। कामण शब्द कामना (इच्छा) का ही पर्यायवाची प्रतीत होता है। इसमें टोना-टोटका के भाव निहित होते हैं। इसके सम्बन्ध में यह धारणा है कि कामण एवं उसके गीतों को गाने से वर-वधू के वश में हो जाता है।

वर पक्ष के लोग बारात लेकर आते हैं, तब तोरण मारने के पश्चात् वर जैसे ही वधू मण्डप में प्रवेश करता है, कन्या पक्ष की महिलाएँ नाड़े (पचरंगी डोरा) से वर की लम्बाई नाप लेती हैं। वर की लम्बाई का प्रतीक यह नाड़ा वधू के लहँगे की नाड़ी बनाने के काम में लिया जाता हैं। प्राय: चतुर बारातियों द्वारा यह लोकाचार पूर्ण नहीं हो पाता है, क्योंकि ये नाड़ा नापने की चेष्टा करते समय झटके के साथ तोड़ देते हैं।

कामण के गीत अवश्य गाए जाते हैं। उन्हें वशीकरण गीत की संज्ञा दी जा सकती है। इन गीतों में वशीकरण की भावना निहित होती है।

कोरी-कोरी कुलड़ी में दई ए जमायों राज।
आज म्हारा दायजी घर राईवर ने नोत्यो राज।
दायजी घर नोत्यो, म्हारी माता नात जिमायों राज।
लीली टिलड़ी लीलो सूत, बाँदो रे सासू को पूत।
बाँद बूँद कर करी सलाम।
एक सलाम लाड़ी ने दूजी सलाम।
तीजी सलाम थरा बाप का गुलाम।

कामण के गीतों की तरह 'सुहाग' के गीत भी वधू-पक्ष की महिलाएँ गाती हैं। इन गीतों में कन्या के लिए अखण्ड सौभाग्य मंगल कामनाएँ एवं आशीर्वाद की भावना निहित होती है। 'पाणिग्रहण' के पूर्व विवाह में आई बहन-बेटियाँ तथा भाभी 'सुहाग' के गीतों का आयोजन करती है। गुड़-पताशें आदि बँटवाती हैं। ये गीत कन्या की विदाई के समय भी गाए जाते हैं। इन गीतों में पति को वश में करने की भावना नहीं है, अपितु प्रियतम की सहचरी बनी रहने की भावना विद्यमान होती है। एक 'सुहाग' गीत जिसमें गली-गली में तंत्र-मंत्र किए हुए हैं, बेटी से 'सुहाग' (सौभाग्य) प्राप्त करने की भावना व्यक्त की गई है-

चटा-पटा को घाघरों, लाड़ी की माता पेरे जी।
लाड़ी की काकी पेरे जी।
गली-गली में कामण लागा, सुहाग लेता जाजो जी।
चटा-पटा को घाघरो लाड़ी की भुवा पेरेजी।
लाड़ी की मासी पेरे जी।
गली-गली में कामण लागा, सुहाग लेता जाजो जी

वधू- मण्डप में पुरोहित द्वारा मंगलाष्टक गान-

लाड़ा-लाड़ी सावधान, जान बरात्या सावधान,
मंगल गाने वाली बाई सावधान, ढोल नगारा सावधान।

पंक्तियाँ उच्चारित करते हुए लग्न सम्पन्न कराए जाते हैं, इस दौरान वर एवं वधू का हस्तमिलन होता है। मालवी में इस प्रथा को 'हथलेवां' या 'हत्तीवाळो' कहते हैं। हथलेवा शब्द में वर द्वारा वधू का हस्त अर्थात् हाथ ग्रहण करने की भावना निहित है, इसलिए विवाह को 'पाणिग्रहण संस्कार' भी कहा जाता है।

वर एवं वधू की हथेलियों पर कंकूँ, केसर, मेहंदी एवं पान-कत्था पीसकर लगाया जाता है तथा हथेलियों के मध्य में

'टीप' रखी जाती है। दोनों के हाथ मिलाने (अभिवादन की एक शैली) की स्थिति में हो जाते हैं, तब पुरोहित द्वारा उस पर दुपट्टा लपेट दिया जाता है।

हस्तमिलन की इस रागमयी वस्तु को तैयारी करने का परम्परागत अधिकार कन्या-पक्ष के किसी दामाद या कहीं-कहीं बेटी-दामाद दोनों का होता है। इस कार्य के लिए उन्हें नेग भी दिया जाता है।

इस दौरान गाए जाने वाले गीतों में प्राय: नारी सुलभ लज्जा एवं हथलेवा में प्रयुक्त सामग्री का उल्लेख किया जाता है-

पीपल पाने ने नागर वेल
हाती वाळो जोड़ सेहली।
में केसे जोड़ा म्हारा सुगणा सायबजी?
मण्डप में ऊषा म्हारा पिताजी देखे।
पिताजी तमारा गोरी! ससरा हमारा,
हाती वाळो जोड़ सहेली ।

लग्न के समय दूल्हे को चाँदी की जनेऊ तथा चाँदी की अँगूठी पहनाई जाती है। दुल्हन को पीले रंग की साड़ी सफेद ब्लाउज तथा लाल घाघरी (पेटीकोट) पहनाए जाती हैं। यह वेशभूषा उसके मामा द्वारा लाई जाती हैं। विशिष्ट सौभाग्यवती महिलाओं द्वारा वधू को सौभाग्य चिन्ह धारण करवाए जाते हैं। ये वस्तुएँ वर -पक्ष की ओर से आती है। बिछियाँ, पायल, चूड़ियाँ, मंगलसूत्र, हाथ की अंगुलियों हेतु 'बाँक बीटी' (चाँदी के तार से बनी टेढ़ी-मेढ़ी अर्थात् बाँकी आकृति होने से इस अँगुठियों का नाम 'बाँक बीटी' रखा जाना प्रतीत होता है।) माँग भरने हेतु सिन्दूर इत्यादि। गले में मंगलसूत्र एवं माथे पर माँग भराई ये दोनों विशिष्ट सौभाग्य सूचक चिन्ह वर द्वारा सम्पन्न कराए जाते है। इस अवसर पर मंगलगीत गाए जाते हैं-

सिया बनी दुल्हन-दुला रघुराई।
कुण के सोवे मोर मुकुटा?
कुण की मोतियन माँग भराई? सिया बनी...
राम के सोवे मोर मुकुटा।
सियाजी के मोतियन माँग भराई। सिया बनी..।
कन्यादान एवं चँवरी

बेटी का विवाह करना ही कन्यादान का पर्यायवाची माना गया है। वैवाहिक समस्त लोकाचारों में बेटी का कन्यादान करने की रीति बहुत भावना प्रधान एवं वातावरण को करुणा से भर देने वाली होती है। मण्डप के भीतर चारों ओर किनारों पर पाँच-पाँच मिट्टी के कलश नीचे से ऊपर घटते क्रम (आकार के अनुसार) से रखे जाते हैं। सबसे ऊपर छोटा कलश होता है। इन चारों समुच्चयों को 'चँवरी' कहा जाता है। मध्य में दूल्हा-दुल्हन को बैठाकर पुरोहित द्वारा हवन कुण्ड के समक्ष अग्नि को साक्षी मानकर सप्तपदी का वाचन किया जाता है। इसके पश्चात् आदर्श गृहस्थ जीवन हेतु सात वचनों (सिद्धान्तों) के पालन हेतु दोनों से प्रतिज्ञा करवाई जाती हैं। अग्नि के सात फेरे लगवाए जाते हैं। प्रथम पाँच फेरों में दुल्हन आगे रहती है। दूल्हा उसके पीछे चलता है। छठे एवं सातवें फेरे में दूल्हा आगे एवं दुल्हन पीछे रहती है।

प्रत्येक फेरे के मध्य वधू के भाई द्वारा 'साल फुँकाई' की जाती है। एक सूपड़े पर दूल्हे के हाथ के ऊपर दुल्हन के हाथ होते है। दुल्हन की हथेलियों पर भाई एक मुट्ठी साल डालता है, जिसे दूल्हा हटाता जाता है। यह प्रक्रिया प्रत्येक फेरे के मध्य तीन बार की जाती है। भाई को नेग दिया जाता है।

वहीं पर वधू के माता-पिता द्वारा कन्यादान किया जाता हैं। वे बेटी-दामाद के पैर पूजकर आभूषण इत्यादि का दान करते हैं। उसके पश्चात् समस्त आत्मीयजन आभूषण, बर्तन, वस्त्र एवं अन्य उपहार इत्यादि भेंट करते हैं। यह रस्म 'कन्यादान' अर्थात् कन्या हेतु दिया दान कहलाती है। यह दान अत्यंत पवित्र एवं पुण्यदायी माना जाता है। इसका मालवा में अत्यधिक महत्त्व है। कन्यादान के समय गीत गाए जाते हैं। एक गीत-

धरम करो वो म्हारा धरमी दादाजी।
धरम की बेला टलिया जाय।
धरम करो तो दूणो-दूणो करजो।
फेरी बखत नी आवेगा हो राज।

फेरे एवं कन्यादान के पश्चात् दूल्हा -दुल्हन को प्रात: कालीन ध्रुवतारा के दर्शन कराए जाते हैं। ध्रुव अर्थात् अटल। ध्रुवतारा के दर्शन कराने का तात्पर्य है, वर-वधू का वैवाहिक जीवन अटल अमर रहे।

गणेश पूजा के दिन वर एवं वधू के हाथ में पुरोहित द्वारा एक विशिष्ट डोरा बाँधा जाता है, जिसे 'काँकण डोरा' कहते हैं। 'काँकण' कंकण का अपभ्रंश है। कांकण सूत्र में कोड़ी, लोहे का छल्ला, लाख का छल्ला और मेडळ का सूखा फल आदि वस्तुएँ बँधी होती है।

कन्या के घर पाणिग्रहण संस्कार हो जाने के बाद वर- वधू के आपस में कांकण डोरा खुलवाए जाते हैं। वधू को दोनों हाथों से कांकण खोलने की अनुमति होती है, जबकि वर को केवल एक हाथ से वधू का कांकण खोलना होता है। दोनों के कांकण डोरों के साथ वधू की चाँदी की अँगूठी को लेकर यह खेल खेला जाता है। काष्ठ वेदिका (बाजोर) पर रखे हुए बड़े पात्र में पानी भरकर उसमें थोड़ी हल्दी घोल दी जाती है ताकि रंगीन पानी में वस्तु दिखाई न दे। पानी के अंदर कांकण डोरा, सुपारी, सिंघाड़े एवं चाँदी की अँगूठी को किसी कुँवासी द्वारा डाल दिया जाता है। वर-वधू पानी में अँगूठी खोजने का प्रयास करते है। खोजने की प्रक्रिया में जो अँगूठी बाहर निकाल लेता है, वह विजयी समझा जाता है। इस प्रकार पाँच बार किया जाता है। हास्य एवं मनोरंजन के इस सुंदर प्रसंग में महिलाएँ प्रत्येक बार वर-वधू की हार-जीत पर गीत की पंक्तियाँ गाती है-

रायाँ की जीत गई ढेड्या को हार गयो।
लाड़ो खेल नी जाणे रे।

यदि खेल में वर जीत भी जाए तो भी कन्या पक्ष की महिलाएँ वर की प्रशंसा नहीं करती, वरन् वधू को राजकुमारी शब्द से सम्बोधित करती है-

रायाँ की हार गई, ढेड्याँ को जीत गयो,
लाड़ी खेल नी जाणे।

अब वर-वधू के कांकण डोरा आपस में बदलकर बाँध दिए जाते हैं। वर-वधू का यह खेल वर के घर खेला जाता है, वर-पक्ष की महिलाएँ वधू को भी हारने-जीतने की स्थिति में उसी गाली से सम्बोधित करती है।

कांकण डोरा के पश्चात् एक प्रकार का जुआ खेलते हैं, जिसे 'एकी-बेकी' कहा जाता है। 'एकी' विषम संख्या तथा 'बेकी' सम संख्या को कहते हैं। सुपारी, सूखे सिंघाड़े तथा बादाम, बताशे आदि के पासों को ढेर में से वर या वधू कुछ पासे मुट्ठी में लेकर पूछते हैं कि बताओं मुट्ठी की संख्या सम है या विषम? वर तो कह देता है एकी है या बेकी, किंतु वधू प्राय: लज्जावश बोलती ही नहीं बल्कि संकेत के रूप में एकी के लिए एक एवं बेकी के लिए दो सिंघाड़े रख देती है। वर या वधू अर्थात् दाव लगाने वाले की मुट्ठी में अन्य पक्ष द्वारा घोषित सम या विषम संख्या सही निकले तो दांव लगाने वाले व्यक्ति की हार मानी जाती है। और सही न निकलने पर वह विजयी समझा जाता है। इस खेल में भी जीतने-हारने पर कांकण डोरा की तरह पंक्तियाँ गाई जाती है।

उपर्युक्त दोनों खेलों में मनोरंजन एवं हास्य की भावना के साथ ही इस रिवाज का मुख्य उद्देय यह जान पड़ता है कि विवाह के पूर्व दोनों एक दूसरे के लिए अपरिचित रहते हैं। इसके द्वारा सामीप्य की भावना जाग्रत होती है, तथा जीवन साथी के प्रति संकोच की भावना भी कम हो जाती है। वधू के यहाँ काँकण डोरा का खेल पूर्ण होने पर कांकण डोरा आपस में बदलकर बाँधने के रिवाज भी सम्भवत: एक दूसरे के प्रति आत्मीय भावों में वृद्धि होने की भावना निहित है।

मालवांचल में कहीं-कहीं लग्न एवं फेरे की रस्म के बाद 'पलंग फेरा' नामक रिवाज भी किया जाता है। दहेज में दिए जा रहे पलंग पर दूल्हा-दुल्हन को आमने-सामने बैठाया जाता है। पलंग के निकट दहेज में प्राप्त समस्त सामग्री भी रख देते हैं। दुल्हन के पिता कच्चा सूत लेकर पलंग के चारों ओर सात बार फेरा लगाते हुए सूत लपेटते जाते हैं। पिता के साथ माता भी हाथ में दीपक लेकर सूत लपेटने में सहयोग करते हुए चलती है। उसके पश्चात् सात सौभाग्यवती महिलाएँ दूल्हे को तिलक करके नारियल भेंट करती हैं।

वधू अपने परिवार के समस्त सदस्यों की पीठ पर गीली हल्दी से दोनों हथेलियों की छाप लगाती है इस प्रकार पलंग फेरा का लोकाचार पूर्ण किया जाता है। इस लोकाचार का आशय यह होता है कि इस पलंग रूपी गृहस्थ जीवन में दीपक की रोशनी अर्थात् अग्नि के समक्ष सूत से (सांसारिक मर्यादाएँ) बाँध दिया है, जिसका तुम्हें भली प्रकार से आदर्श जीवन जीते हुए निर्वाह करना है। अपने पारिवारिक आत्मीय जनों की पीठ पर वधू की

हथेलियों की छाप उसकी स्मृति की अमिट निशानी के रूप में माना जाता है।

वैवाहिक रीति-रिवाजों, लोकाचारों में सर्वाधिक भावुकता एवं करुणा के क्षण 'बेटी की विदाई' के होते हैं। विवाह में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति से लेकर गाँव की अंतिम गली तक का व्यक्ति विदाई में भावात्मक रूप से सम्मिलित होकर अपने आँसू नहीं रोक पाता है। सम्पूर्ण वातावरण स्वयमेव स्तब्ध हो जाता है। बेटी के जन्म से लेकर किशोरावस्था तक के सम्पूर्ण क्षण जीवंत हो उठते हैं। यह आज सदा के लिए पराई हो गई है। फेरे होते ही विदाई के क्षणों का एहसास प्रत्येक आत्मीय के भावों में झलकने लगता है। और विवाह का सम्पूर्ण उत्साह शनै-शनै सिसकियों में बदलने लगाता है।

विदाई के समय सर्वप्रथम दूल्हा-दुल्हन को 'मायमाता' के सामने धोक दिलवाई जाती है। वहाँ पूजा के पश्चात् वर-वधू परस्पर मिठाई के पाँच-पाँच कौर कलेवा के रूप में खिलाते हैं। उसके पश्चात् 'डेली पूजा' कराई जाती है। देहरी या घर की चौखट का अत्यधिक महत्त्व है। वधू द्वारा घर के मुख्य द्वार के बाहर बैठकर घर की ओर मुख करके जल से देहरी का प्रक्षालन किया जाता है, उस पर कंकू का स्वस्तिक बनाकर अक्षत (चावल के दाने), पाँच बताशे एवं भेंट स्वरूप रूपये रखकर वह प्रणाम करती है। भाभी द्वारा वधू के मस्तक पर गीला कंकू लगाकर चावल चिपकाए जाते हैं।

यहाँ देहरी पूजन से आशय है कि जो देहरी बचपन से अब तक क्रीड़ा स्थली रही है, वह आज सदा के लिए छूटी जा रही है। इस पूजन में भाव निहित है कि हे देहरी माता! तुम मेरी लज्जा रखना। मैं अन्य परिवार में जा रही हूँ, जहाँ अपने सम्पूर्ण दायित्वों एवं मर्यादा का निर्वाह कर सकूँ। एक मुहावरा भी है 'घर की चौखट लाँघना'। इसका तात्पर्य मर्यादा से भी लिया जाता है। इस अवसर पर महिलाएँ देहरी पूजन एवं विदाई सम्बन्धी गीत गाती है-

बरसाणा में डेली पूजी,
कँई गोकुल सेर सिधार या जी।
म्हारो पगे लागणों कीजो।
बाबा नंदजी की नार हठीला,
म्हारी राधा ने दु:ख मती दीजो।
म्हारो पगे लागणो कीजो।
म्हारी नवल बनीजी चाल्या सासरे,
छोड़ी चाल्या पीयर को परवार हो, गुणवंती गिरजा।
भलो वो उजाळ्यो बाबुल बारने।

वैवाहिक समस्त लोकाचारों में वधू के यहाँ बारात आगमन से लेकर विदाई तक का समय बड़े उत्साह एवं चहल-पहल भरा होता है, लेकिन वही समय अर्थात् बारात प्रस्थान से आगमन के पूर्व तक का समय वर के यहाँ बहुत नीरस एवं सुनसान हो जाता है।

वर के यहाँ इस नीरसता को दूर करने के लिए रात्रि में मनोरंजन एवं आनंद हेतु ही किया जाता है, उसे 'टूट्या की रात' या 'टूट्या जगाना' कहते हैं।

बारात प्रस्थान के पश्चात् प्राय: घर की महिलाएँ एवं अन्य मेहमान महिलाएँ ही शेष रह जाती हैं। वे मनोरंजन हेतु अनेकानेक स्वाँग रचती हैं। जिसमें दूल्हा-दुल्हन बनकर विवाह रचाना, बारात, कन्यादान आदि प्रमुख होते हैं। इन खेलों के दौरान जो गीत गाए जाते हैं, उन्हें 'ख्याली गीत' कहते हैं-

अजी घर में घुस्यो बबाल, बहू के लटके दो चोटी।
दरवाजा में खड़ी-खड़ी, खाँदा पे धोती पड़ी-पड़ी।
अजी उकी बिंदिया लाल-गुलाल, बहू के लटके दो चोटी।
मुँह पर उके बिस्नु पावडर, अजी ऊको जूड़ो करे कमाल।

इस रिवाज से नीरस वातावरण में हास-परिहास की निर्मिति तो होती है, साथ ही विवाह के घर में रात्रि में चहल -पहल होने से घर की सुरक्षा भी बनी रहती है।

वधू के यहाँ वैवाहिक लोकाचार पूर्ण करने के पश्चात् वधू को लेकर बारात अपने घर लौटती है, तब दूल्हा-दुल्हन का स्वागत किया जाता है, जिसे 'लाड़ा-लाड़ी बदाणो' कहते हैं।

जैसे ही बारात आती है, उसे सीधे घर पर न लाते हुए किसी मंदिर में ठहराते है। उसके पश्चात् शुभ मुहूर्त में घर की सारी महिलाओं के अलावा आस-पास की गाँव की महिलाओं

को इकट्ठा करके ढोल-ढमाके के साथ उन्हें लाते हैं। इस दौरान जो गीत गाए जाते हैं, उनमें प्राय: वधू व सास के मनोभावों की अभिव्यक्ति होती है-

पिताजी छोड़ाया रे बनड़ा, सुसरा बताया म्हारा बनड़ा।
नई बोले।
माता बाई छोड़ाई रे बनड़ा, सासूजी बताई म्हारा बनड़ा।
नई बोले।
मुखदुल का फुंदा नई बोले, रेसम का रेजा नई बोलो।

वर की माता घर के मुख्य द्वार पर वर-वधू को तिलक लगाकर आरती उतारती है। उसके पश्चात् दोनों को पड़छती है। पड़छने की प्रक्रिया ठीक उसी तरह की जाती है, जैसे वधू के घर बारात आगमन पर वधू की माता द्वारा वर के लिए की गई थी।

बाण्णो रोकई का आशय होता है दरवाजे पर रोकना। माता द्वारा पड़छने के पश्चात् वर-वधू घर के भीतर प्रवेश करते हैं, तब दूल्हे की बहनें दरवाजे रोकती है, उन्हें अंदर नहीं जाने देती। इस रस्म को बाण्णो रोकई कहते हैं। बहनें मुंह माँगा नेग लेने के पश्चात् ही उन्हें अंदर जाने देती हैं।

उक्त लोकाचारों में नए घर में वधू के प्रति सम्मान एवं आत्मीयता के साथ ही उसके महत्त्व की भावना परिलक्षित होती है। पड़छने की क्रिया में दोनों को गृहस्थ जीवन के दायित्व निर्वाह का बोध कराने की भावना निहित है।

बाण्णो रोकाई में बहन के प्रति स्नेह, आत्मीयता एवं सम्मान की भावना प्रदर्शित होती है। इसके पश्चात् काँकड़ डोरा एवं एकी बेकी उसी प्रकार कराया जाता है, जिस प्रकार वधू के यहाँ वर-वधू से करवाया था। लेकिन अब कांकण डोरा को किसी जलाशय में प्रवाहित कर दिया जाता है।

जब विवाह करके नई बहू घर में आती है, तब परिवार के समस्त सदस्यों के साथ ही विवाह में आई महिला मेहमानों एवं पास-पड़ोस की सभी महिलाओं को नई बहू से मिलने की उत्सुकता रहती है।

एक विशेष समय पर स्नेही एवं परिचित महिलाएँ इस हेतु आमंत्रित की जाती हैं। हास-परिहास एवं गीतों के मध्य एक-एक करके वयोवृद्ध महिला से लगाकर गाँव की परिचित महिलाएँ नई दुल्हन का घूँघट उठाकर चेहरा देखती हैं फिर नेग तथा आशीर्वाद शुभकामनाएँ देती हैं। वह सबके चरण स्पर्श करती है।

वास्तव में यह एक अत्यंत मधुर परम्परा है, जिसके माध्यम से एक पारिवारिक माहौल की निर्मिति के साथ ही नई बहू का संकोच कम करने का प्रयास करके उसे सबसे परिचित कराया जाता है। इस अवसर पर वधू के रूप सौन्दर्य के वर्णन वाले गीतों के साथ ही 'मूँडो देखई' का उल्लेख करने वाले गीत भी गाए जाते हैं-

पिताजी को प्यारो परण घर आयोगी।
माता रानी पाया लगाई लीजो हो,
मुँडो तो दिखाई नथ दीजो।
काकाजी को प्यारो परण घर आयोजी,
काकी रानी पाणा लगाई लीजो हो।
मुँडो तो दिखाई बजट्टी दीजो।

इस प्रकार इन भावपूर्ण परम्पराओं, रीति-रिवाजों एवं लोकाचारों में विवाह संस्कार की एक भव्य सांस्कृतिक झाँकी के दर्शन किए जा सकते हैं, साथ ही मालवा की इस मधुर सांस्कृतिक बयार में आनंदानुभूति भी की जा सकती है।

मराठी विवाह गीत

डॉ. मालती शर्मा

यह चराचर विश्व युग्ममय है। द्वन्द्वमय है। नर-नारीमय है। इसमें हर एक इकाई अपने में अधूरी है। एकाकी है। मनुष्य का मन-मस्तिष्क सभ्यता के सवेरे से ही सृष्टि भर में इन्हें पूर्ण देखने के लिए प्रयत्नशील रहा है। मानव मनीषा ने अपने जीवन और चिन्तन में, धर्म, दर्शन, कला, साहित्य और संस्कृति में एकाकी इकाइयों के अधूरेपन को भरने के लिए विविध कल्पनाएँ और संरचनाएँ की हैं। इनमें सर्वोत्तम परिकल्पना है-विवाह। विवाह की परिकल्पना में उसने इकाइयों की अपूर्णता को युगनद्धता ही नहीं दी, वरन् सामाजिक धरातल पर जन्म-जन्मान्तर के संग-साथ में सृष्टि श्रृंखला की अनवरतता को स्वस्थ, पवित्र पीठिका भी दी है। इसमें दो अधूरी अपूर्ण इकाईयाँ अपने आन्तरिक और बाह्य जीवन की पुकारों के उत्तर-प्रति उत्तर और चरितार्थता पाती हैं। समाज में एक समाज रचती हैं।

एक ओर जहाँ मनुष्य के प्रेमपूरित हृदय ने चकवा-चकवी, परेवा-परेवी, सारस युगल, मोर-मोरनी जैसे अभिन्नत रंग पक्षी-युग्मों की कथा-सृष्टि की ; प्रेम काकली की गुटर गूं और व्यथा को अपने गीतों में गूंथा तो दूसरी ओर वृक्षों के गले में लताओं की बाहें डाली हैं। चंचल यौवनवती नदियों को सागर की गहन गंभीर बाहों में समेटा है। उन्हें लहरों की चूड़ियाँ, मूंगे के बिछुए, शंख-सीपियों के चन्द्रहार पहनाकर क्षितिज से उठते सूरज का सौभाग्य टीका लगा सुहागिन बनाया है। विवाह मानव हृदय का ऐसा कसूंबी रंग है, जिसमें डुबोने से उसने सृष्टि में कुछ भी शेष नहीं छोड़ा है। अपने मंगलमय आंचल तले सबको ढँक लिया है। निर्वंषी को उसने इसीलिए असगुनी माना है, क्योंकि उसका हृदय फैलना नहीं जानता।

शिष्ट-अभिजात साहित्य में शिव-पार्वती विवाह को छोड़कर अन्य कोई दूसरा प्रमुख-कथा आख्यान नहीं है, जिसमें मानवेतर जीव सृष्टि भी सहभावी होती है, लेकिन लोकसाहित्य में लोकमानस ने इस रंग के रंग में, जीवन अरुण की अरुणाई में पेड़-पौधों,

फल-भाजियों व पशु-पक्षियों सभी के ब्याह रचा कर सभी को रंग डाला है।

इस बार फरवरी के महीने में मैं महाराष्ट्र के आन्तरिक भागों के लोक-गायकों के स्वर साम्राज्यों में बसे कुछ ऐसे ही विवाहों में शामिल हुई, जो इनकी मर्मज्ञ अक्का (डॉ. सरोजिनी बाबर) के घर, नारियल-सुपारी के धवदों-घपसों की शीतल, सुगन्धित छाया में, विविध रंगी स्वर वाद्यों की धुनों में सम्पन्न हुए। तब उमंग-तरंग जैसे समा ही नहीं पा रही थी। उनमें प्रमुख हैं -

अंजीर का विवाह, पेड़-पौधों का विवाह (आम का ब्याह), मेथी (बाई) का विवाह और कुत्ते/ बारात गये, प्रथम तीन व्यवस्थित विवाह गीत हैं। चौथा अपेक्षाकृत छोटा प्रकीर्ण गीत है।

जैसा कि मैं अपने लेखों में पहले भी विवेचन कर चुकी हूँ, विवाह गीतों की संरचना में किसी भी प्रान्त-अंचल के स्थानीय रंग, वहाँ की लोकरीतियाँ प्रमुख संघटक तत्त्व होते हैं। इन्हीं से उन्हें संरचना मिलती है, व्यक्तिमत्ता और अस्मिता भी। मराठी के उपरोक्त विवाह गीतों में क्रमशः फल-पेड़-पौधों और शाक-भाजियों का अपना-अपना 'समाज' है। वंश कुल गुण-धर्म है। लोक साहित्यिक भूगोल की परिसीमाएँ हैं कि यहाँ विवरणित अनेक ऐसी वनस्पतियाँ हैं, फल-शाक-भाजी हैं, जो अन्य प्रदेशों में नहीं होतीं। अनेक ऐसी रीतियाँ हैं जो केवल यहीं की विशेषताएँ हैं। महाराष्ट्र में विवाह पूर्व वर-वधू और उसके माता-पिता को भोजन के लिये बुलाया जाता है जिसे क्रमशः केलवण व ब्याहीभोज कहते हैं। अंजीर के विवाह की शुरुआत केलवण के उल्लेख से होती हैं -

कोयरीत कोयरी केलवली,
कोयरीचं चांगुलयण, बागसरीचं मागणं।
अंजीर नवरा सुजन, तव्हा बाजत गाजत।

अर्थात् कैरी ने कैरी का न्यौता किया। बगीचा कैरी की मंगल कामना बार-बार करता रहा है, जिसे अंजीर जैसा सज्जन दूल्हा मिला है।

इसी प्रकार की एक अन्य रीति है-विवाह निश्चित होने पर लग्न पत्रिका सर्वप्रथम गणपति को देने जाना। पूना में यह मान कस्बा पेठ के गणपति को प्राप्त है। मेथी के विवाह गीत का प्रारंभ इसी रीति के उल्लेख से होता है-

मेंथी बाई चे लगीन निधाले
घाड़ा देवाला लगू पत्रिका।

अर्थात्- अरे! मेथीबाई की शादी का मुहूर्त निकल आया है। गणेशजी को लग्न पत्रिका भेजो।

उक्त गीतों में गुम्फित यही स्थानीयता यदि एक ओर लोक गायकों की कल्पना की उड़ानों को यथार्थ की धरती और विश्वसनीयता देती है तो दूसरी ओर एक विशिष्ट रंग-गंध की चित्रात्मकता भी। इन दो तारों में पिरोयी गई चिन्ता, गर्व, परस्पर मानापमान भाव, रूठना-झगड़ना, बीचबचाव, उल्लास, उमंग, सहायता इत्यादि मानवीय भावनाओं का संस्पर्श इन गीतों को अनूठी हृदयग्रहिता प्रदान करता है।

आम के ब्याह में बगीचे का चित्र है। देखें, क्या चल रहा है वहाँ -

बड़ पिपल दोघे भाई विचार करतील काही।
थोरसा पहावा तुम्हीं ब्याही आंव्याला नवरी पाहिजे।
निंब होता मोठा राजा त्यांच्या होता दोन भाजा।
खजूरी जांभूली सहजा तीची कन्या नवरी।

अर्थात् बड़ पीपल दोनों भाई कुछ सलाह-सूत कर रहे हैं। बड़ कहता है- भाई! तुम समधी भी बड़ा श्रेष्ठ देखो, पर आम को बहू चाहिये तो उसमें दिक्कत क्या है। नीम बहुत बड़ा राजा है। उसकी दो पत्नियाँ हैं-खजूरी और जामुन, उनकी कन्या कुँवारी है। बस शादी जम गई। सारे बाराती एकत्र हो गये। मंडप छब गया। खजूर वधू की माँ है और नारली (नारियल का स्त्रीलिंग) वर की माँ बनी। अब बारात का स्वागत और विवाह देखें -

ताडा हाती हेलाल परटिण बोलाबा सराटी
पायघड्या घाली नेटकी रिंमणीच्या हाती बाटी
पाय घासे डोर ली
हासत हासत पिंपली आलौ भांग सुग्रण कोठे गेली ?
तिची खीर गोड झाली चहू मुलखी नावाजली

बारात चल पड़ी। ताड़ वृक्ष के हाथ में मशालें हैं। सराटी (एक वनस्पति) धोबिन को जल्दी बुलाओ कि पाँवड़ें बिछाये। रिंगर्णा (वनस्पति) के हाथ गंध की कटोरी है, डोरली पांव धो रही

है। वह देखो, हंसमुख पोपली आ रही है। अरे! वह गृहणी भाग कहाँ गई ? उसकी खीर तो बहुत मीठी बनती है! चारों लोक में प्रसिद्ध हो गई है। अब बारात द्वार पर है –

ऐसा पांगर शहाणा वीडे वाटे अक्षी जना
सुपारी वाटे चिलाटी पांच बोर दरवले
डालिवीच्या हाती हार शिग वाजविते शिवर
भांगभरे शेवंती जाती जुईचा पटेडा
हार गुंफीतो मोगरा तुतारी वाजवी हीवर
घमाम्याची घाई थो वऱ्हाडाच्या प्रसंगी।

चतुर पांगर (लाल फूलों का पेड़) सबको पान दे रहा है। चिलाटी सुपारी। अनार के हाथ में सत्कार के लिये हार हैं। सिंहद्वार पर शहनाई बज रही है। शेवंती सिंदूर दे रही है। जूही और चमेली चोटी में लगाने का हार बनी हुई हैं। मोगरा हाथ गूंथ रहा है। हीवर (वनस्पति) तुरही बजा रहा है। बरात में ढोल ताशों का बड़ा शोर है।

विवाह का समय आया तो जोशी आया –

राजगिरा जोशी आला अंजीर वर्धावा गेला।
लग्न समय सम्पादिला आला सम्मान दिवस।

विवाह का समय जान जोशी राजगिरा और दूल्हे का भाई अंजीर आया। विवाह हुआ। अब सम्मान का समय है।

महाराष्ट्र में मण्डप तले बराती–बरातिनों का विशेष पद्धति से सत्कार कर भोजन कराया जाता है। जरा देखें कि कितनी वनस्पतियाँ कैसे यह कार्य कर रही हैं –

पेरू गेला बलवायासी पाणी तापले न्हायासी,
आपुला मानध्यावया अक्षय वऱ्हाड़ी मिलाले,
भिरवती वऱ्हाडी पुढे वाजंत्र्याची ध्वनी
नलया हांड् या सुटतील फार वऱ्हाडी येती मण्डपात।

अमरूद बराती–बरातिनों को बुलाने गया, जी पानी गर्म हो गया है नहा लें और आकर हमारा सत्कार स्वीकार करें। सारे बाराती एकत्र हुए। बारात सज गई। आगे–आगे बाजे बज रहे हैं। आतिशबाजी छूट रही है। बरात मण्डप में आ रही है। अब बारातियों का सम्मान हो रहा है –

कवठी पांघरली शेला गुलबाक्षी ने शिणगार केला
गुंज का जल कुंकूँ ल्याली मेंदी शाल पांधरली।

कैल ने उत्तरीय उढ़ाये। मुल बांस ने शृँगार किया, घुंघची ने काजल कुंकूँ लगाये। मेहंदी ने दुशाले उढ़ाये। अब बारातिनों का सम्मान हो रहा है –

वऱ्हाड़ी थेतात मण्डपात
बैसू घालते कांगणी उटणे लावी टेंभूरणी पाणी घाली वेलौवला
केस पुसे शिकेकाई ऊद घाले रामफली
ताट मांडिते पराटी पाट मांडीते बोराटी
रांगोल्या काढ़ीते येरंड मीठ वाढ़ीते करवंदी
पोलया वाढी साल फली भात वाढे बाभुली
वरण वाढीते खीरणी खिरण वाडे धार धार
अति आग्रह करिती फार इच्छिले जेवा वऱ्हाडणी।

बारातिनों के लिये कांगणी बिछौना बिछा रही है। टेभूरणी (गुड़हल) उबटन मलती हुई वक्त–वक्त पर पानी डाल रही है। शिकाकाई केश पोंछती हैं। रामफली अगर जला रही है। जिससे बाल जल्दी सूखें और सुगंधित हो जायें। पराटी (जंगली पेड़) थाल सजा रही है। बोरियाँ चौली बिछाती है। अरंडी रांगोली बना रही है। तीवरी नमक परोसती है। तुलसी अचार। करौंदी शाली पूरियां परोसती हैं। बबूली भात और खिन्नी दाल। धार–धार परोसती हुई वह बरातिनों से इच्छानुसार दावत खाने का बार–बार आग्रह अनुरोध कर रही है।

ब्याह में दूल्हे का खाने पर रूठना और पंडितों का दक्षिणा पर झगड़ना बड़े मीठे–तीखे चित्र हैं। आम के ब्याह में ये न हों, ऐसा कैसे हो सकता है? दूल्हे का थाल सजा तो उसमें लड्डू नहीं देख वह रूठ गया। उसे छोटी आमली समझा रही है –

नवऱ्याची कैली ताटुली लाडूनाहीं म्हणन रूसली।
आवली समजावे धाकुलीलाडू देतसे गोकूली।

उधर वधू का पण्डित कटहल और वर का पण्डित जवस (काले–काले बीजों का पेड़) दुशाले पर रूठ जाते हैं तो वर की माँ झगड़ा मिटाने डंडा ले उपाध्यायों की पीठ से सटा कहती है– अरे मरे ओ ! क्यों लड़ते हो –

भिलून आली वरमाय
तिनं घेतली हाती काठी
लागली उपाध्याच्या पाठी
करे मेल्यांनों भाडता?

अंजीर के विवाह गीत में निमन्त्रण देने की भागदौड़ है। वर-वधू पर हल्दी चढ़ाने आई सुवासिनों की धूम, दूल्हा-दुल्हन के भाई-बहन के ठाट जिन्हें क्रमशः वर्धावा और करवली कहा जाता है- हनुमान मंदिर में पूजा और बायना भरने के विशेष उल्लेख प्राप्त होते हैं।

कुत्ते जिस बरात में जाते हैं, उसमें बंदर परोसगारी करते हैं। मेंढकों का वाद्य वृन्द है। दूल्हा बना है खरगोश, दुल्हन है घोरपड़।

मेथीबाई के विवाह गीत में शाकभाजियों की विस्तृत नामावलि है, जो अपनी-अपनी अदाओं से झूमते-झामते बारात में शामिल होते हैं। लौकी दूल्हा बनी है पर कौनसी ? लौकी; गोलवाली, मोटे पेट की जो हास्य की सृष्टि करती है। इस विवाह में चाँदोबा (चन्द्रमा) भी उपस्थित हैं जो मंगलाष्टक शीघ्र बोलने का आदेश देता है -

चाँदोबा म्हणे लवकर चला समोर उभी केली नवरीला
मंगलाष्टके जलदी बोला!

किन्तु इस विवाह गीत की अप्रतिम पंक्ति है, चंदन बथुआ की व्यथा- अरे! हमें वहाँ कौन पूछने वाला है? सच है, धनीमानी अपने विवाह में गरीब रिश्तेदारों की उपेक्षा भी तो कर देते हैं न! मेथीबाई के ब्याह में चंदन बथुआ की उपेक्षा में वही पीड़ित हृदय पुकार उठा है-

चंदन बटवा रूसला मानाला
कोण पुसतो तिथे आम्हांला।

वैसे भी महाराष्ट्र के शाक-भाजी आस्वादकों में बथुआ प्रिय साग नहीं है। बैंगन और आलू के आगे तो कतई नहीं, यह हकीकत है, कल्पना नहीं।

'साटे लोट' विवाह

उत्तम नस्ल, अच्छी संतति-शृँखला की अक्षुण्णता के लिए भारतीय संस्कृति की विवाह रीतियों में रक्त, वंश, कुल, गोत्र आदि की क्रास ब्रीडिंग का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है। अमेरिका में तो कहीं जाकर विवाह के पूर्व वर-वधू के रक्त परीक्षण, विशेषकर जीन्स और आर.एच. फैक्टर की पूर्ण परीक्षा अपेक्षित समझी जाने लगी है, किन्तु भारत में तो चरक और सुश्रुत ने बहुत पहले ही वर-वधू की भिशक् परीक्षा पर बल दिया है। हमारी स्मृतियों में भी नाड़ी मिलने के साथ वर-वधू के गुण-धर्म मिलाने का संदर्भ आता है। मनु ने मिरगी, कोढ़, श्वांस आदि रोगों के कुल की कन्या से तीन पीढ़ी तक विवाह न करने का विधान किया है। हमारे यहाँ सामान्यतः निकट रक्त या एक ही रक्त के वंश में विवाह आरोग्य और उत्तम संतानप्रद नहीं माने जाते। विवाह में 2-3 गोत्र बचाए जाते हैं।

कहीं न बचाकर और कहीं ये गोत्र बचाकर भी भारत के कई प्रांतों में मातृ-पितृ कुल की अगली पीढ़ी में भी परस्पर विवाह सम्बन्ध होते हैं। महाराष्ट्र के सीमावर्ती प्रान्त कर्नाटक में मामा-भांजी का विवाह होता है। उत्तर भारत में भी 'बुआ की गैल भतीजी' आती है, अर्थात् स्त्री अपने भाई की लड़की का विवाह अपने देवर से करा देती है। मौसी के कुल की दूसरी पीढ़ी में भी विवाह सम्बन्ध हो सकते हैं। बस इससे अधिक निकटता नहीं मिलती।

यों भी उत्तरी प्रान्तों की अपेक्षा महाराष्ट्र के विवाह काफी हद तक झंझटों, आडम्बरों और दिखावों से मुक्त हैं। यहाँ समधी वस्तुतः समधी है। वर कन्या पक्ष समान स्तर पर ही हैं, नीचे-ऊँचे नहीं। इसके साथ ही साथ मातृ-पितृ कुलों में अंशभाव और प्रेम सम्बन्ध के सूत्रों को प्रगाढ़ और निरंतर रखने को यहाँ तीन प्रकार के विवाह होते हैं-जेठ के लड़के से छोटी बहन का विवाह, मामा की लड़की से बुआ के लड़के का विवाह, मामा-फूफी के लड़के-लड़कियों में परस्पर शादी। इसे साटे लोट विवाह कहा जाता है। राजस्थानी में एक कहावत है -

केल आलोई बलै सास सूदीऊँ लड़ै।

महाराष्ट्र ने सास द्वारा दी जाने वाली यंत्रणाओं, झगड़े-फसादों से छुटकारा ढूँढा है- मामा फूफी के लड़के-लड़कियों की शादी में। बहू सास के पीहर का अंश होती है, उसे उस पर माया आती है। इससे प्रेम सम्बन्ध आगामी पीढ़ी में भी बने रहते हैं।

पुत्र-पुत्री को देखाभाला घर, परिवेश और जीवनसंगी मिल जाता है। साथ ही अपनी साधन सम्पत्ति की सीमा में ही 'साटे लोट' विवाह निबट जाता है। धोखाधड़ी की संभावना नहीं रहती। चरित्र, स्वभाव, स्तर सब का पता होता ही है। न वर की खोज में जूता घिसाई, न अच्छी वधू पाने की चिन्ता, न विवाह का खर्च एक के सिर। दोनों कुल 'साटे लोट' विवाह के लिए एक ही शहर में एकत्र होकर एक कार्यालय ले लेते हैं। लेन-देन भी नहीं। यदि हुआ तो शोभा या रीति निर्वाह के लिए इधर का उधर, उधर का इधर रख दिया जाता है। एक सम्मिलित दावत हो जाती है। दावत, पुरोहित, रोशनी, बाजे और विवाह स्थल का सभी खर्च बाँट लिया जाता है।

शायद इसी विवाह के कारण महाराष्ट्र में सास को आत्याबाई (भुआजी) और फुईजी कहने का प्रचलन हुआ। ससुर को कहा जाता है-मामंजी। ये वस्तुतः होते भी क्रमशः भुआ और मामा ही हैं।

यहाँ अपने बेटे से विवाह हेतु भतीजी माँगने का पहला अधिकार भुआ का होता है। वह भाई से पहले ही कह छोड़ती है- 'देखो, तुम इधर उधर कहीं न भटकना। घर में लड़का है और मैं हूँ। तो तुम मेरे ही घर में अपनी लाड़ली बेटी दे देना। मेरी आँखों की पुतली होकर रहेगी। अपनी कन्या मुझे देना। सर्वोत्तम दान, चिरस्थायी उपहार होगा।'

एक कोंकणी गीत में तो भाई जब स्वयं ब्याह कर बहू लेकर आता है और बहन द्वार रोकती है तो उसी वक्त द्वार रोकने के नेग में ही बहन भाई को अपनी बेटी उसे देने के लिए वचनबद्ध कर लेती हैं। भाई की लड़की के सिवाय उसे कुछ स्वीकार नहीं है। गीत का भावार्थ है -

सात समुद्र पार एक केले का बिरवा है,
वहाँ वर नहा रहा है, बहन का भाई नहा रहा है,
मेरी सुभद्रा बहन को खबर लग गई
पहाड़ घाटियाँ लाँघ कर, भाई के बहन आ गई
नदियाँ नाले कुएँ पार कर भाई के बहन आ गई।
भाई पूछता है - बहन तुम किस कारण आई हो?
बहन- मैं आई, मैं आई, बेटी के लिए आई हूं ।
भाई- द्वार पर का नारियल का पेड़ मैं तुम्हें दे दूँगा।
बहन- द्वार का नारियल का पेड़ नहीं चाहिए।
चोर चकार नारियल ले जाएँगे।
दिया दान सफल नहीं होगा, उसकी क्या कीर्ति रहेगी?
तू मुझे अपनी कन्या दे दे।
भाई-दूँगा, बहन दूँगा, थाली और ताह्मण (तांबे का पात्र) दूँगा।
बहन- चोर-चण्डाल चुरा ले जाएँगे क्या फलेगा दान ?
भाई- दूँगा, बहन दूँगा गाय और भैंस दूँगा।
बहन- बाघ-सिंह आकर खा गए तो क्या रहेगा ?
भाई- दूँगा बहन दूँगा फूली केली दूँगा।
बहन- द्वार पर जो केली है, उसे कोई फूल नहीं।
यह सब कहने को तेरा मुँह कैसे पड़ा ?
तू तो मुझे अपनी कन्या ही दे दे।

भतीजी भाई का वस्तुतः अंश है। सच है, अपने वंश-कुल के चरित्र, स्वभाव, कला-कौशल, विद्या, शील सौन्दर्य और अस्मिता को एक सदा फूली-फली बेल के रूप में बुआ अपनी भतीजी लाकर ही अपने आँगन में लगा सकती है। अपनी आकाँक्षा, अपने स्वप्न, अपने उत्तरायण उसे सौंप सकती है। कुलशीलता का काजल उसकी आँखों में आँज सकती है। भाई इससे बड़ा उपहार सचमुच नहीं दे सकता अपनी बहन को। पर स्थिति ऐसी भी होती है। काफी पहले दोनों कुलों द्वारा इस तरह निश्चित किया हुआ सम्बन्ध यदि लड़की को पसन्द नहीं आता तो वह इन्कार कर देती है। उसे सारे सुख ठुकराना, कुँआरी रहना, धरती पर सोना, चिथड़े लपेटना, चूड़ियों की जगह चिन्दी हाथों में बाँधना मंजूर है, लेकिन बुआ के काले-कलूटे लड़के से शादी करना स्वीकार नहीं। निम्न भलरी गीत में यह पक्ष बड़ा नक्शेदार उभरा है -

म्हमईला जाईन, पुण्याला येईन,
पाताल नेसीन भी।
नको मला तुमची बांडाची लुगड़ी
उघड़ीच बसीन भी।
आत्याबाई फाटकंच नेसीन मी।
म्हमईला जाईन पुण्याला येईन,
तार बिंडल भरीन मी।
नको मला तुमची काली कांचकांडं

चिंदी च बाँधीन मी।
आत्याबाई चिंदीच बाँधीन मी।
नको मला तुमचा काला कुण्डा मुलगा
तशीच राहीन मी।
आत्याबाई तशीच राहीन मी।

भुआ कहती है –बम्बई जाकर जब पूना आऊँगी, तुझे साड़ी पहनाऊँगी। भतीजी कहती है–मुझे नहीं चाहिए तुम्हारी वह विशेष साड़ी। मैं उघाड़ी ही बैठी रहूँगी। फटी ही पहने रहूँगी। बुआ फिर कहती है बम्बई जाकर जब पूना आऊँगी, तार बिंडल चूड़ियाँ पहनाऊँगी। भतीजी कहती है, मुझे तुम्हारी चूड़ियाँ नहीं चाहिए। मैं हाथों में चिंदियाँ पहनकर रह लूँगी। मुझे तुम्हारा काला कलूटा लड़का नहीं चाहिए।

केवल लड़की ही नहीं, लड़का भी इसी तरह अपने मामा की लड़की को सारे प्रलोभनों के होते हुए –रूप, गुण, शिक्षा, रहन–सहन, किसी भी स्तर पर अस्वीकार कर देता है। लेकिन यह विवाह का पूर्व पक्ष है। एक बार जब विवाह हो जाता है तो सास–बहू दोनों का एक मायका होने से सास–बहू में सौमनस्य और घर के वातावरण में संतुलन रहता देखा जाता है। दो कुलों में स्त्री के मरने के बाद भी स्नेह सम्बन्ध प्रगाढ़ बने रहते हैं और स्त्री को भी संतोष होता है कि उसने अपने मातृकुल के लिए कुछ किया। वहाँ से एक कन्या ब्याह कर अपने भाई को राहत दी। साटे लोट विवाह में तो परस्पर सद्भाव, सद्व्यवहार का अंकुश दोनों कुलों पर रहता है। विवाह के बाद माँगों, तानों, रिश्तों का एक तरफा सिलसिला भी नहीं चलता।

पारम्परिक वैवाहिक परम्पराएँ

डॉ. वी. के. शर्मा

विवाह एक सामाजिक और धार्मिक संस्कार है, जिसे आज एक संस्थान की तरह माना जाता है। यह दो विभिन्न लिंग के प्राणियों के मध्य पवित्र बंधन माना जाता है। इसमें थोड़ा अपवाद हो सकता है। कुछ देशों में इसे वैधानिक स्तर अथवा कानून द्वारा मान्यता मिल गई है, परन्तु लगभग सभी इसे दो विभिन्न लिंग के व्यक्तियों वाले विवाह को ही अच्छा मानते है, तथा इसे ही मान्यता है।

सभी देशों तथा जातियों में विवाह एक अति लोकप्रिय प्रथा बनी हुई है। इसे भाषा और बोली के आधार पर विभिन्न नामों से जाना जाता है। विवाह एक परम्परा बनी हुई है, जिसे शताब्दियों से मानव जाति सहर्ष स्वीकार कर रही है। सभी धर्मों और देशों में इसके विभिन्न रूप हैं, परन्तु लगभग सभी समाजों में स्थानीय रीति-रिवाजों के अनुसार इसे सम्पन्न किया जा रहा है।

प्रथा का उद्‌गम

प्रजाति की निरन्तरता बनाये रखने के लिये प्रकृति ने मनुष्यों में पुरुष और महिला की रचना इस प्रकार की है कि दोनों के सफल शारीरिक सम्भोग होने पर नये जीव का सृजन होता है। इस प्रक्रिया को सम्पूर्ण करने के लिये प्रकृति ने पुरुष और महिला की शारीरिक संरचना में बहुत निर्मितता रखी है। इसे लैंगिक निर्मितता कहा जा सकता है। आचार, विचार और व्यवहार में पुरुष और महिला एक समान होते हुए भी शारीरिक रूप से निर्मित हैं।

शारीरिक विभिन्नता ही शायद प्रकृति ने एक दूसरे के प्रति आकर्षण का केन्द्र बनाया होगा। पुरुष और महिला का एक दूसरे के प्रति आकर्षण का केन्द्र बनाया होगा। पुरुष और महिला का एक दूसरे के प्रति आकर्षित होना अनादिकाल से चला आ रहा है। ऐसा

केवल मानव प्रजातियों में ही नहीं होता, अपितु पशुओं और पक्षियों में भी यह आकर्षण देखने को मिलता है। मोर अपने पंख फैलाकर मोरनी को प्रसन्न करने या मोहित करने के लिये नृत्य करता है। इस नृत्य के लिये मोर को अपने पंख फैलाने के लिये घोर कष्ट सहन करना पड़ता है। ऐसा होना स्वभाविक है और पता नहीं ऐसा कब से चला आ रहा है। इसी प्रकार कुछ कीट विशेष प्रकार की गन्ध से विपरीत लिंग वाले कीट को आकर्षित करते हैं। यह गंध उनके अपने शरीर से सृजित हारमोन के कारण होती है। एक दूसरे के प्रति आकर्षण एक अटल सत्य है।

लैंगिक विषमता के कारण पुरुष और महिला एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं तो एक दूसरे के समीप आते हैं, संवाद होता है और धीरे-धीरे घनिष्ठता बढ़ जाती है। यह घनिष्ठता जब समव्यस्क हो तो प्राय: शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने तक पहुँच जाती है, और अन्तत: नये जीव का सूत्रपात या गर्भधारण हो जाता है। समयानुसार एक नये शिशु का जन्म होता है, जिसके भरण-पोषण का उत्तरदायित्व दोनों पर होता है। ऐसा विधान शताब्दियों से चला आ रहा है और आशा है कि ऐसा ही भविष्य में चलता रहेगा।

वैज्ञानिकों के अनुसार यह प्रमाणित किया गया कि पूर्व मानव असभ्य था। तत्पश्चात् मानव ने प्रकृति से अपना सम्बन्ध जोड़ा तथा प्राकृतिक स्त्रोतों का लाभ लेने लगा। शायद इन स्त्रोतों के दोहन के कारण उसे भविष्य की चिन्ता लगी होगी और इसी क्रम में आगे चलकर मानव समाज का सूत्रपात या निर्माण हुआ होगा। ऐसा कुछ मनोवैज्ञानिकों और दार्शनिकों का विचार है।

मानव जाति को आपस में जोड़े रखने के लिए एक दूसरे की देखभाल करना, अच्छा या बुरा करना, भला अधिक करना आदि हेतु समाज की स्थापना हुई। हमारे पूर्वजों तथा ऋषि-मुनियों ने अनेक ग्रन्थों में समाज और मानव के धर्म,कर्म और कर्त्तव्यों पर विस्तृत मनन किया तथा परिणामस्वरूप समाज को एक संस्था के रूप में प्रतिष्ठापित किया। मनुष्यों को सामाजिक नियमों में बांध दिया। इसी समाज में हम आज तक बंधे हैं। इस सन्दर्भ में भारतीय परिवेश में सबसे प्रमुख ग्रन्थ स्वयंभू मनु द्वारा रचित मनुस्मृति हमारे पास है। इस ग्रन्थ में हर वर्ग के व्यक्ति के धर्म और कर्त्तव्यों का ब्यौरा दिया गया है। यही हमारी संस्कृति की धरोहर है, जिसे सारा विश्व मान रहा है।

समाज में बने नियमों के अनुसार आज विवाह लगभग एक अनिवार्य बन्धन है, जिसे सभी व्यक्ति धर्म पवित्र तथा उल्लास से मानते हैं। विवाह की पृष्ठभूमि में दो बातें विचार योग्य हैं। शारीरिक सन्तुष्टि के लिये पुरुष और महिला का सम्बन्ध तथा बाद में उत्पन्न होने वाले जीव का पालन। सभ्य समाज में यौनाचार को रोकने के लिये पुरुष और महिला को विवाह सूत्र में बांधना पहला पग था। पुरुष और महिला के सफल शारीरिक सम्बन्धों के उपरान्त शिशु का आना प्राकृतिक नियम है। अब वे पुरुष और महिला न रहकर पिता और माता बन जाते हैं।

महिला जब इस बात से सन्तुष्ट हो जाती है कि शारीरिक सम्बन्ध बनने पर वह व्यक्ति उसका तथा शिशु का भरण-पोषण करने में सक्षम है। तभी वह उस व्यक्ति को अपने आपको समर्पित करती हैं। इसी प्रकार पुरुष भी आश्वस्त हो जाता है कि महिला से उसे पूरा-पूरा सहयोग मिलेगा। यही मूलमन्त्र एक सफल विवाह का है।

विवाह

प्रचलित परम्पराओं के अनुसार विवाह प्राय: पुरुष और महिला के मध्य ही सम्पन्न होता है। ऐसा शताब्दियों से चला आ रहा है। विश्व के पुराने ग्रन्थों में विवाह के बारे में चित्रण कई प्रसंगों में किया गया है। यह एक नैसर्गिक आवश्यकता है। ऐसा माना जाता है कि समाज में यौनाचार को नियन्त्रण में रखने तथा समाज में पुरुष और महिला के पूर्ण सम्मान को बनाये रखने के लिये ही विवाह का प्रचलन है।

विवाह का मुख्य उद्देश्य सन्तति नियोजन तथा जाति की निरन्तरता बनाये रखना है। आजकल कुछ उदारवादी या सुधारवादी संगठन और व्यक्ति समलैंगिक विवाह की मान्यता चाहते हैं। इसमें पुरुष एक अन्य पुरुष से विवाह कर सकता है तथा इसी प्रकार महिला एक अन्य महिला से विवाह कर सकती है। संवैधानिक स्तर पर प्राय: सभी देशों में पुरुष और महिला के विवाह को ही मान्यता प्राप्त है। पिछले कुछ वर्षों में कुछ देशों ने इसे मान्यता देने पर सहमति दी है, परन्तु वास्तविक या धरातलीय स्तर पर वे इसके पक्ष में नहीं है। सभी जातियों, धर्मों और देशों का मत है कि विवाह पुरुष और महिला के मध्य पवित्र सामाजिक और आवश्यक बंधन है और यह मनोरंजन का साधन नहीं हैं।

विवाह के प्रकार

परम्परा और शास्त्रों के अनुसार विवाह प्राय: आठ प्रकार के माने गये हैं। ये हर देश, समाज और जाति में सम्पन्न होते हैं। इन सभी के गुण और अवगुण दोषों का ब्यौरा इस प्रकार है-

पिशाच विवाह-धोखा या छल द्वारा किसी महिला को अपनी पत्नि बनाकर रखना पिशाच विवाह कहलाता है। इस विवाह में पुरुष की भूमिका एक वीर और पराक्रमी की रहती है तथा महिला को केवल एक जीवित वस्तु माना जाता है। यह प्रथा कुछ आदिवासियों तथा पुराने शासकों और उनके सिपाहियों में प्रचलित थी।

राक्षस विवाह- महिला को बलपूर्वक अपने घर लाकर, विवाह करना राक्षस विवाह कहलाता है। इसमें महिला के घर वालों को डरा-धमका कर तथा शस्त्र के बल से पिता के घर से उठा लाया जाता है और विवाह कर लिया जाता है। कुछ आदिवासियों में यह प्रथा आज भी प्रचलित है। इस विवाह में महिला को अपने विचार प्रकट करने का कोई अवसर नहीं होता था, केवल पुरुष का पौरुष तथा पराक्रम और बल ही प्रधान होता था। महिला पर अपनी विजय का गौरव ही पुरुष का उद्देश्य होता था।

असुर विवाह- महिला या वधू के माता-पिता को कन्या के मोल के रूप में धन देकर उससे विवाह करने की विधि को असुर विवाह की संज्ञा दी गई है। इस धन राशि को मेहर कहा जाता है और इस राशि का निर्णय मौलवी या कन्या के माता-पिता करते हैं। मिस्र देश में ऐसी प्रथा अब भी चल रही है।

गंधर्व विवाह- इस प्रकार के विवाह में वर और वधू स्वयं इच्छा से विवाह करते हैं, जिसे वह सामान्य रूप में अथवा विवश होकर विवाह करने पर सहमत हों। यह इन दोनों की स्वेच्छा पर निर्भर करता है। इस विवाह में माता-पिता की सहमति का कोई ध्यान नहीं रखा जाता। वधू को भगा कर लाना और उससे विवाह रचाना भी इसी प्रथा के अन्तर्गत है। वर और वधू दोनों किसी मंदिर, पवित्र स्थान, देवता के स्थान, गिरजा घर जाकर एक दूसरे को माला पहनाकर विवाह सम्पन्न कर लेते हैं। बाद में माता-पिता से सहमति ले ली जाती है या मिल जाती है, इसलिये इसे मान्य विवाह माना जाता है।

आर्ष विवाह- कुछ अवस्थाओं तथा जातियों में वर पक्ष से कन्या का मोल तो नहीं लिया जाता, परन्तु उसके विवाह पर यद्यपि अन्य समारोहों पर होने वाले व्यय को लिया जाता है। वर पक्ष यह व्यय स्वयं ही इसे वहन करने की सहमति दे रहा है। इस प्रकार के विवाह में माता-पिता की अनुमति तथा सहमति रहती है।

प्रजापत्य विवाह- कन्यापक्ष वाले स्वयं ही कन्या के लिये योग्य वर ढूँढते हैं और पिता तथा माता स्वयं विवाह सम्बन्धी कार्य सम्पन्न करते हैं। वर ढूँढने में कन्या पक्ष वाले सभी सगे-सम्बन्धी प्रयत्न करते हैं तथा सभी की इच्छा रहती है कि कन्या विवाहोपरान्त सुखी और सम्पन्न रहे। इस तरह का विवाह लगभग प्रचलित है। इसे अच्छा माना जाता है। इसमें समाज तथा संविधान की सहमति रहती है।

दैव विवाह- वधू और वर पक्ष की सहायता और सेवा के लिये वधू पक्ष वाले विवाह के समय वधू के साथ कुछ दासियाँ भी भेज देते हैं, जो उनकी सेवा करती हैं। दासियों के लिये वस्त्रादि भी दिये जाते हैं। यह सारा व्यय कन्या पक्ष ही वहन करता है। आजकल इस तरह का विवाह केवल कुछ ही घरानों तक सीमित रह गया है। ऐसा पहले राज-घरानों में ही होता था। अब न तो राजा रहे, न ही दासियाँ या दास जो वधू पक्षकर को भेज सकें। इस विवाह में कन्यापक्ष वर पक्ष के सम्बधियों से पूर्व में ही मन्त्रणा कर लेते हैं कि क्या आवश्यक है या उनकी क्या इच्छा या मांग है। वर और वधू पक्ष वालों में सहमति रहती है। इस प्रकार के विवाह को समाज में मान्यता है।

ब्रह्म विवाह- इस प्रकार के विवाह में पिता कन्यादान करता है तथा कुछ वस्त्रादि सामान भी दहेज-प्रथा के रूप में वर पक्ष को दिया जाता है। आजकल दहेज की प्रथा लगभग बन्द हो रही है, परन्तु कन्या पक्ष विवाह से पूर्व ही दहेज का सामान वर पक्ष के घर पहुँचा देते हैं। कुछ धनाढ्य व्यक्ति वर पक्ष को धन राशि देकर कह देते हैं कि आप अपनी इच्छानुसार जो सामान उचित हो ले लेंवे।

इस प्रकार के विवाह में आज कल कुछ परिवर्तन आ गये हैं। दहेज-प्रथा सरकारी स्तर पर निषेध है । परन्तु फिर भी वर और वधू पक्ष आपस में कुछ न कुछ समझौता कर लेते हैं।

इन आठ प्रकार के विवाहों में शताब्दियों से सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक परिस्थितियों का बहुत प्रभाव पड़ा है। हिन्दू-धर्म में आज का जो स्वरूप सामने है, उसमें पारम्परिक रीति-रिवाजों तथा आदिकाल का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

चिरकाल से भारत में विवाह-प्रथा चली आ रही है। पहला विवाह कब हुआ तथा कैसे हुआ, कोई विवरण प्राप्त नहीं है। उपलब्ध विवरणों से पता चलता है कि हमारे पौराणिक ग्रन्थों के अनुसार शिव और पार्वती का विवाह एक उदाहरण की तरह प्रस्तुत किया जाता है। कुमारी ने कन्याकुमारी जो दक्षिण में समुद्रतट पर स्थित एक शहर हैं, जहाँ कुमारी का मन्दिर है, शिव को पति की तरह पाने के लिये तपस्या की। शिव हिमालय पर्वत में रहते थे। हजारों मीलों का अन्तर दोनों स्थानों के मध्य था। कालान्तर में कुमारी का विवाह शिव से हुआ। शिव की बारात में नाना प्रकार के लोग बाराती की तरह आये और पार्वती से शिवजी ने विवाह कर उन्हें अपने साथ ले गये।

एक अन्य विवाह सम्बधी उल्लेख राजा दुष्यन्त और शकुन्तला का है, जिन्होंने गन्धर्व विवाह किया। राजा विवाह करने के उपरान्त शकुन्तला को लगभग भूल गया था, परन्तु कालान्तर में उसे शकुन्तला से गन्धर्व विवाह सम्पन्न का ज्ञान करवाया जाता है।

रामायण में रामचन्द्र जी तथा सीता के विवाह का संदर्भ भी एक अच्छा उदाहरण है। उस समय राजा जनक (पिता) वर के चयन के लिये स्वयंवर का आयोजन करते थे। राजा जनक ने योग्य वरों को अपने राज दरबार में आमन्त्रित किया। एक धनुष जो शिव का कहा जाता है- को उठाकर उस पर प्रत्यंचा चढ़ाना- यह योग्य वर के लिये आवश्यक था। यह उसके बल और शौर्य की परीक्षा थी। रामचन्द्र ने इसे सफलता पूर्वक सम्पन्न किया। तदुपरान्त राजा ने सीता का विवाह रामचन्द्र से सम्पन्न किया। उनके तीनों भाइयों का भी उसी परिवार में विवाह सम्पन्न हुआ।

महाभारत काल में भाइयों ने घूमती हुई मछली की आँख पर धनुष से बाण चलाकर स्वयंवर प्रतियोगिता में विजय प्राप्त की तथा द्रौपदी से विवाह सम्पन्न हुआ। वास्तव में द्रौपदी अर्जुन की पत्नी बनी, परन्तु कुछ भ्रम के कारण उसे पाँचों पाण्डवों की पत्नी बनने हेतु कहा गया था।

एक अन्य उदाहरण राजा पृथ्वीराज और संयुक्ता के विवाह का है। ऐसे ही कई अन्य उदाहरण हमारे इतिहास में उपलब्ध है। इनसे एक बात सिद्ध होती है कि कन्या को वर चयन का अधिकार प्राप्त था और विवाह के उपरान्त वर कन्या को अपने घर लाता है। यह इस बात की ओर इंगित करती है कि वर एक प्रकार से वधू को जीत कर लाता है। वधू अपने पैत्रिक घर से श्वसुर के घर में जाकर रहती है।

आधुनिक युग में विज्ञान और तकनीक का अधिक बोलबाला होने के कारण तथा सरलता की ओर बढ़ते हुए एक परिष्कृत रूप का विवाह सामने आ रहा है। इसे संविधान की ओर से मान्यता है, क्योंकि सभी देशों ने पंजीकृत विवाहों को मान्यता प्रदान की है।

हर माता-पिता की इच्छा है कि उनका पुत्र या पुत्री का विवाह योग्य कन्या या वर से हो। इसी प्रकार वर और वधू की इच्छा होती है कि उन्हें योग्य साथी मिले। इसी में सभी परिणामों का सुख है। वयस्क होते ही माता-पिता तथा कुछ सम्बन्धी वर अथवा वधू के लिये तलाश आरम्भ कर देते हैं। अधिकतर लोग वर की तलाश में होते हैं, क्योंकि कन्या को एक अनजाने घर में जाकर स्थापित होना होता है, इसलिये लड़की के माता-पिता को अधिक चिन्ता होती है और वे योग्य वर के लिये कठिन परिश्रम करते हैं, लोगों से सम्पर्क करते हैं। कुछ दशक पूर्व इन सम्बन्धों के लिये नाई-नाईन, पण्डित तथा मुहल्ले के वयोवृद्ध व्यक्ति सहायक होते थे। आजकल ऐसा चलन नहीं है।

भिलाला जनजाति में विवाह

डॉ. गजेन्द्र आर्य

भिलाले जब सम्बन्ध जोड़ने जाते हैं, तब मार्ग में लोमड़ी और 'राजाभोज केड्यु' नामक पंछी बोलना नहीं चाहिये। मार्ग में उक्त पशु और पक्षी यदि सीधे हाथ की ओर बोले तो शुभ और उल्टे हाथ की ओर बोले तो अशुभ। लड़के और लड़की के गाँव में तो बोलना ही नहीं चाहिये। अशुभ हुआ तो तत्काल वापस लौट आयेंगे। शुभ होने पर आगे बढ़ते हैं।

घर के लोग लड़की से भी पूछते हैं कि यह सम्बन्ध उसे मान्य है कि नहीं? लड़की को यह सम्बन्ध मान्य नहीं होता तो वह स्पष्ट मना न करते हुये बहाने बनाती है। ऐसा इसलिए करती है कि वह किसी अन्य लड़के से प्रेम करती है। अपने प्रेमी को पहले ही सूचित कर देती है कि इस दिन मेरे रिश्ते वाले आ रहे हैं। प्रेमी भी सतर्क हो जाता है। जब सम्बन्ध जोड़ने वाले आते हैं, तब उक्त प्रेमी मार्ग में काँटे या वस्त्र के पुतले अर्थात् छोटे-छोटे वर-वधू बनाकर रख देता है। मार्ग के आसपास कुछ जला देता है। सम्बन्ध जोड़ने वाले समझ जायेंगे कि कुछ गड़बड़ है। इस क्रिया को 'चिड़ा' कहते हैं यानी बाधा। ऐसा होने पर सम्बन्ध वाले वापस चले जाते हैं। शुभ होने पर अपना पक्ष रखते हैं।

लड़के वाले लड़की के घर के आगे कचरा एकत्र कर आग जलाकर उसके आस-पास बैठ जाते हैं। यह यज्ञ का परिवर्तित रूप है। आग जलाने के बाद यदि उक्त पशु या पक्षी बोलते भी हैं तो कोई अन्तर नहीं पड़ता। धीरे-धीरे लड़की पक्ष वाले एकत्र होने लगते हैं। इस समय सहयोग राशि तय की जाती है। बिचौलिया अन्दर जाकर विमर्श करता है। लड़की वाले बिचौलिया के हाथ में मक्का देते हैं और एक लाख रूपये की मांग रखते हैं। बिचौलिया बाहर आकर लड़के वालों के हाथ में मक्का देते हुए सहयोग राशि बता देता है। लड़के वाले पाँच सौ रूपया बोलते हैं। इस प्रकार बिचौलिया चार बार दोनों पक्षों के पास जाता है। इन चार चक्करों में सम्बन्ध की

सहयोग राशि तय हो जाये तो ठीक, नहीं तो लड़के वाले वापस आ जाते हैं। सम्बन्ध तय हो जाने पर लड़के वालों को बैठने को खटिया दी जाती है। रात्रि को भोजन एवं ताड़ी से सेवा-सत्कार किया जाता है। इस दिन लड़की-लड़के की गोत्र की मानी जाती हैं, प्रातः लड़के पक्ष के लोग चले जाते हैं।

एक दिन सहयोग राशि लाने की तिथि निश्चित की जाती है। लड़के वाले इस दिन पुनः आते हैं। इस दिन को 'उदि बाँधजे' कहते हैं। तिथि का अपभ्रंश 'उदि' हो गया। सभी मिलकर 'सावां' की तिथि तय कर लेते है और प्रातः वापस चले जाते हैं।

जिस दिन सावां की तिथि तय की जाती है, उस दिन लड़के वाले सहयोग राशि, चाँदी, बाजरा, गेहूँ और चावल लाते हैं। सवा छह मण अन्न भी होता है। सावां अर्थात् सहयोग राशि के साथ अनाज। सावां वाले बैलगाड़ी में बैठकर आते हैं। लड़की की भाभी या बहन 'कुवासणी' बैलों एवं गाड़ीवान का स्वागत करती है। महिलायें गीत गाती हैं-

पेला बोवल्या ओदावजी,
तेरे पछल पावर काजे ओदावजी।

लड़के वाले अनाज के बोरों को अन्दर रखते हैं। गाँव की लड़कियाँ उन्हें मुक्के मारती हैं। शाम को या रात्रि को लड़के का भाई व जीजाजी एक स्थान पर बैठते हैं। इस रीति को 'बाजरे बोसाड़णो' बोलते हैं। चुथ्या नाम का पात्र बाजरे के ऊपर औंधा रख देते हैं। उसके ऊपर थोड़ा-सा बाजरा रख देते हैं। पुजारा को तिलक लगाया जाता है। पूजारा अपने ही हाथों में कुछ पैसों को इधर-उधर करता है, फिर लड़की के भाई के हाथों में थमा देता है। लड़की का भाई भी चार बार अपने ही हाथों में पैसों को इधर-उधर करके पुजारा को लौटा देता है। पुजारा पुनः वही क्रिया करता है। लड़की का जीजा तथा लड़के का भाई एवं जीजा भी ऐसी ही क्रिया करते हैं। यहाँ पर अनाज को तोला जाता है। इस समय का गीत देखिये-

आखी नदी नू वेलठो लायो तारा लाकड़ा मेलों
आखा बोजारे नू खिपरा लायो तारा लाकड़ा मेलों।

लड़के और लड़की के भाई तथा जीजा बैठे रहते हैं। लड़के के भाई पर किया व्यंग्यात्मक चित्रण अनायास ही हास्य उत्पन्न करता है-

बनी नू भाई बोठो रे जाणो वाणिलो बोठो ओ
लाड़ा नू भाई बोठो रे जाणो माकड्यो बोठो ओ।

रात्रि को गाँव के लड़के-लड़कियाँ नृत्य करते हैं। विशेष रूप से इस दिन धमेष्डू नामक नृत्य प्रस्तुत किया जाता है। नृत्य के साथ गीत भी गाये जाते हैं। प्रभात में अभ्यागत अपने गाँव चले जाते हैं। समयानुकूल दोनों पक्ष पुनः एकत्र होते हैं और विवाह की तिथि तय कर ली जाती है। चाँद के घटने या बढ़ने को घड़ी कहते हैं। भिलालों में घड़ी का महत्त्व है। नक्षत्रों को अम्बर में देखकर विवाह की तिथि तय की जाती है। मोड़ा खाटलो, बिच्छू और गान्गसुळ के सीध में चाँद नहीं होना चाहिये। ऐसा समय विवाह के लिये श्रेष्ठ नहीं होता है। विवाह तीन दिन का होता है। प्रथम दिन टुला, द्वितीय दिन पगड़ी-भेळकी और नेवताला, तृतीय दिन बारात और विदाई।

प्रथम दिन प्रभात में 'नेव कोरणों' रीति निर्वहन की जाती है। निमंत्रण के लिये सामग्री तैयार की जाती है। पुजारी और अन्य एक पत्तल आठ पत्तों से निर्मित करते हैं। दो प्रमुख पत्ते जो मध्य में होते हैं, उन्हें जेवड्या तथा शेष पत्तों को डकर्‌या कहते हैं। हल्दी की चार गाठों में बाण से छिद्र करते हैं। छिद्र करते समय जो हल्दी निकलती है, उसे चावल में मिला दिया जाता है। इसमें थोड़ा चूना भी मिलाते हैं। चार पत्तलों में उक्त सामग्री को रख देते हैं। इस सामग्री को नेवता कहते हैं। कुवासणी नेवते एवं पुजारी को तिलक लगाती है। यह नेवते उसी दिन गाँव की सीमा से बाहर हो जाने चाहिए। सभी को विवाह में सम्मिलित होने के लिए नेवता दिया जाता है। इस रीति का निदर्शन लोक साहित्य में हुआ-

एक नेवतो देजे गुणेसा घोरे, ते गणपति बाबो आवसे।
एक नेवतो देजे महादेव घोरे, ते महादेव बाबो आवसे।
एक नेवतो देजे खेड़ादेवी घोरे, ते गंगा ने गवरा आवसे।
एक नेवतो देजे थानक घोरे, ते रूळी बाबा देव आवसे
एक नेवतो देजे सबुन घोरे, ते चुकता मांडसे आवसे।

टुला के दिन मण्डप बनाये जाते हैं। वर के यहाँ दो तथा वधू के यहाँ तीन मण्डप बनाये जाते हैं। इस दिन लड़कियाँ पाँच वेन्डे अर्थात् मटकियाँ लाती हैं। कुछ लड़कियाँ हल्दी पीसती है-

हळदी पिसाये ओ हळदुली राजा ओ
हळदी ते घट्टी मा पिसाये हळदुली राजा ओ।

हल्दी को तोला जाता है, तभी तो रचना सामने आती है–

आधो किलो हळदी ने आधो किलो मेहन्दी
ताकड़े तुलाये बेना, ताकड़े तुलाये।

हल्दी कहाँ से लाये? इसका ती प्रतिपादन हुआ–

मालवे ती हळदी ते बुलाई, पुड़ी बोधाई,
मालवे ती हळदी बुलाई, ताकड़ी तुलाई।
मालवे ती हळदी बुलाई, घट्ये पिसाई
मालवे ती हळदी बुलाई, वाटके घुळाई।

इस दिन साज–सज्जा की जाती है। महिलायें वर या वधू के लिये सफेद रंग की गोदड़ी बनाती हैं। गाँव का पुजारा रूळया बाबा देव का पूजन करता है। हल्दी से झुल्या के ऊपर हाथों के चिन्ह लगाये जाते हैं। रात्रि में किशोर अवस्था के एक लड़के को नकली वर बनाते हैं। उसके सिर पर पगड़ी बाँधकर हाथ में कुसला दे देते हैं। सभी लोग फिर घर से बाहर आ जाते हैं। एक स्थान पर लीपते हैं। जीरे से स्वस्तिक चिन्ह बनाया जाता है। इस समय गीत गाया जाता है–

आयणी चोके पाड़े हेटे तारा गिणे।

कुसले को धागे से लपेट देंगे। पहले कुसले को, फिर नकली वर को, फिर पुजारी को तिलक लगाया जाता है। नकली वर, एक लड़की और भाभी मिलकर चार बार भूमि को खोदते हैं। यहाँ भी गीत गाया जाता है–

उरकेड़े जीरो वायो रान्डे
वारू कोरी रोही ओ।

गड्ढा खोदने के उपरान्त जीरे से पूजन करते हैं। नकली वर और पुजारी गड्ढे को पूर देते हैं। उस स्थान पर पुजारी गुड़, सुपारी और मदिरा डाल देता है। यहाँ से उठाकर थोड़ी दूर आगे चावल से स्वस्तिक चिन्ह बनाया जाता है।

चिन्ह बनाने के पश्चात् उपरोक्त क्रिया पुनः की जाती है। यहाँ पर भी गीत प्रकट होता है–

नीळी–नीळी डोळाटी चराओ बोचेरे
बोचेरी के पाणीला पिलाओ बोचेरे।

इतना करने के बाद सभी लोग घर के अन्दर चले जाते हैं। अब असली वर को बुलाया जाता है। एक स्थान पर चौकोर चौक बनाया जाता है तथा इस चौक पर नूतन गोदड़ी बिछा देते हैं। गोदड़ी पर नकली वर बैठ जाता है। वधू के स्थान पर नकली वधू बैठती है। यह लोग उटकुल मुद्रा में बैठते हैं। अब असली वर, नकली वर की पीठ पर टखनों से हल्के रूप से मारता और कहता है–'उठ लाड़ा मैं लाड़ो बण्यो।' नकली वर खड़ा हो जाता है। यह क्रिया चार बार की जाती है और फिर वहीं बैठा रहता है। वधू के यहाँ भी यही क्रिया होती है– 'उठ लाड़ी मैं लाड़ी बणी।'

अब घिरसर्या पुजारी और पुजारन स्नान करते है। पुजारी पुतड़ी पहनता है। पुजारन एक सर्या लुगड़ा पहनती है। दोनों अंदर जाकर पुराने चूल्हे हटाकर नये चूल्हे स्थापित करते है। दो लड़के व दो लड़कियाँ कुएँ से पानी लाते हैं। इस पानी से घिरसर्या मटके के अंदर सवा कांगण चावल बनाते हैं। चार लड़के पलास के पत्ते लाते हैं, जिनसे पत्तल और दोने बनाये जाते हैं। पुजारा धारण नाम की लकड़ी पर लाल वस्त्र बाँधता है। इस लकड़ी के नीचे जीरे व चावल से दो पुतले बनाता है। घट्टी के पुड़ को इन पुतलों के ऊपर रख देते हैं। इस दिन पुजारा और पुजारन उपवास रखते हैं।

रात्रि को कोटवाल पीपल के नौ पत्ते लाता है। एक महिला पाँच पत्ते व दूसरी महिला चार पत्ते लेती है। अन्य महिलायें तेल और पीठी लेकर खड़ी रहती है, फिर पत्तों पर लगाकर उन पत्तों से वर के बालों को चार बार मलते हैं। इसी प्रकार तेल भी लगाया जाता। स्नान के बाद झुल्या पहनाते हैं। एक पुरुष, वर को उठाकर अन्दर ले जाता है। द्वार पर महिलायें रोक लेती हैं और गीत गाती हैं–

हामू कुकड़ी नी खाता, हामू बुकड़ी नी खाता
हामू नहदी धोड़े बामण्या बोण्या रे लोल
हामू बोठी भोरी दारू ली लेसू रे लोल।

रोकने वाली महिलायें मदिरा की मांग करती हैं। वर के साथ वाली महिलायें धक्के मार के अन्दर प्रवेश कर जाती हैं। रोकने वाली महिलायें कहती हैं–

हामू कुकड़ी नी खाता, हामू बुकड़ी नी खाता
हामू नहदी धोड़े बामण्या बोण्या रे लोळ्या
जो ते कालगो दिनेश ठगोरो ठोगी लेदो रे लोल।

अन्दर जाकर वर को धारण के निकट बिठा देते हैं। वर के साथ अन्य तीन लड़कों को भी बिठाया जाता है। यहाँ घिरसरी की रीति की जाती है। चारों को एक-एक दोना दिया जाता है। इन दोनों में गुड़ या दारू रख दी जाती है। चार बार दोनों का आदान-प्रदान किया जाता है। चार पत्तलों में फीके चावल रखकर, आदान-प्रदान करते हैं। सभी मिलकर फिर भोजन करते हैं। पुजारा व पुजारन उपवास छोड़ देते हैं। अन्य कुल या गोत्र वाले यहाँ प्रवेश नहीं कर सकते। शेष भोजन और उच्छिष्ट पदार्थों को विसर्जित कर दिया जाता है। यहाँ भी गीत प्रस्तुत किया जाता है-

दिनेश ने कोह्यो ने दसु नागेड़ो दवड़्यो,
निहीं मान्यों ने चुखा खाणे दवड़्यो।

घिरसरी का मटका जमाई उठाता है। जहाँ विसर्जित करते हैं, वहाँ चावल एवं जीरे से पुतले बनाकर, गुड़ और सुपारी समर्पित की जाती है। पुजारा इन पुतलों को धो देता है। भोज्य एवं उच्छिष्ट सामग्री को नीचे गाड़ देते हैं। यह सारा कार्य करते-करते प्रभात हो जाती है। अब पगड़ी होती है। अर्थात् विवाह का दूसरा दिन। इस दिन पहले 'खुळु धोराड़णो' रीति की जाती है। मामा द्वारा अपनी बहन को यानी वर की माँ को साड़ी भेंट की जाती है। इस साड़ी में थोड़े चावल और कुछ रूपये रखकर गठान बाँध दी जाती है। इस धागे का नाम 'मुन्दी नू दुरु' है।

दोपहर को दो जमाई चवरी काटने जाते हैं। चवरी का अर्थ मण्डप की लकड़ियाँ है। काकड़ नाम के पेड़ को पूजने के बाद उसकी पाँच लकड़ियाँ काट ली जाती हैं। एक खूँटा गाड़ने एवं चार आसपास रखने के लिये। पहला जमाई तीन तथा दूसरा दो लकड़ियाँ उठाता हैं। घर आने पर स्वागत किया जाता है। एक गड्ढा खोदकर खूँटा एकदम सीधा गाड़ दिया जाता है, इस खूँटे के आसपास शेष लकड़ियाँ रख दी जाती है। यहाँ दो पाटले भी रख दिये जाते हैं-एक पूर्व तथा दूसरा पश्चिम की ओर। अब बारी आती है मेहंदी की। लड़कियाँ वर को मेहंदी लगाती हैं। मेहंदी से वर या वधू के हाथ मनोभिराम दिखने लगते हैं। यहाँ भी मधुर स्वर गूँजते हैं-

खेड़ी-खेड़ी काई रेते कोर्‌या
जड़ी गुयो मेहन्दी नू बीज
हाते रोगया ने पाँय रेग्या
रंग चुवे।

अब नेवताला वाले धूम मचाते हैं। मामा-मामी, फूफा-फूफी, मौसा-मौसी या कोई भी रिश्तेदार अपने खर्चे से दूसरे गाँव के लोगों को विवाह दिखाने लाते हैं, उसे 'नेवताळा' कहते हैं। नेवताळा गीत देखिए-

बेनांगे मामो आइयो ने काई लाइयो,
बेनांगे मामो आइयो ने ढोलगिया-फेफरिया लाइयो।

भोजन के उपरान्त वेन्डे भाभी उठाती है। वेन्डे से तात्पर्य गागर से है। विवाहित भाई गतिड़ा उठाता है। कुएँ के निकट चावल या जीरे से मानव निर्मित किये जाते हैं। उस स्थान पर सुपारी इत्यादि समर्पित की जाती है। पानी के पात्र के अन्दर तलवार से पानी को काटा जाता है। इस पानी को सभी वेन्डों में भर के गीत गाते हुये घर आते हैं।

रात्रि आठ बजे वर को हल्दी लगाकर स्नान करवाया जाता है। इस समय गतिड़ा के पानी से स्नान करवाते हैं। अगले पाटले पर वर तथा पिछले पाटले पर गतिड़ा उठाने वाले को बिठाया जाता है। पिछले पाटले पर बैठा व्यक्ति वर की आँखें बंद कर लेता है। कहते हैं कि ठण्डे पानी से वर को कंपकपी नहीं लेनी चाहिये। वर के सिर पर तलवार रखकर तीन वेन्डे एवं बैठे हुए व्यक्ति पर दो वेन्डे पानी डालते हैं। इस समय वर को आँखें नहीं खोलनी चाहिए। स्नान के पश्चात् झोल्या पहनाकर अन्दर ले जाते हैं। अन्दर थोड़ी देर बिठाते हैं और पुनः बाहर ले जाते हैं। अब वर के सिर पर पटेल पगड़ी बाँधता है। पटेल की भूमिका पर एक नजर-

बेनांगे कुणे सिनगारियो ओ
बेनांगे पटलिया सिनगारियो ओ।

वर के मस्तक पर तिलक लगाया जाता है, जिसकी शोभा निराली प्रतीत होती है-

पगा बाँधों रे बेना तिलक कुण सवारसे
तिलक गुण सवारसे, तिलक भाई सवारसे।

पगा बाँधों रे बेना तिलक कुण सवारसे
तिलक गुण सवारसे, तिलक काको सवारसे।

रात्रि में नृत्य होते हैं। नृत्य करने के लिए आसपास गाँवों के युवक-युवतियाँ भी सम्मिलित होते हैं। नृत्य के साथ गीत भी गाये जाते हैं। प्रभात में बारात जाने की तैयारी की जाती है। विवाह का यह तृतीय दिन होता है, इस समय 'ओघे' की रीति की जाती है। इसके तहत वर के माता-पिता को वस्त्र भेंट किये जाते हैं। वर को भी सुविधानुरूप भेंट दी जाती है। अब वर को कंधे पर उठाकर बाहर लाते हैं। वर से घर के ऊपर रूपये एवं चावल रखवाने एवं प्रणाम करवाने की विधि अपनाई जाती है। कमर पर बिठाकर चवरी के चारों ओर घुमाया जाता है। एक व्यक्ति वर को कंधे पर बिठाकर नृत्य करता है।

वधू के गाँव में बारात जब चली जाती है तब बाराती किसी वृक्ष के नीचे बैठते हैं, उस वृक्ष का नाम लेकर गीत गाते हैं-

लीमड़ा ने साहला मा बठो रे
मारो प्यारो बेनो,
पीपळा ने साहला मा बठो रे
मारो प्यारे बेनो।

वर को देखने के लिये भीड़ उमड़ पड़ती है। भीड़ को सम्बोधित करते हुये महिलायें कहती हैं-

बेनाने कवळी ऊमर तुसे काई भाळो रे
लाड़ी नी गड़ली ऊमर तुसे काई भाळो रे।

पटेल गाँव का प्रमुख होता है। पटेल व गाँव वाले स्वागत के लिये आते हैं। उधर से पटेल के साथ वधू पक्ष वाले आते हैं और इधर से वर पक्ष वाले जाते हैं। एक स्थान पर दोनों पक्षों का मिलन होता है। पटेल, वर एवं उसकी बहन का मुँह धुलाकर पानी पिलाता है। वधू का भाई, वर को अपने कन्धे पर उठाकर 'मण्डप' की ओर चल देता है। साथ में सभी लोग पीछे-पीछे चलते हैं। वर को मण्डप में उतार दिया जाता है। बारातियों के विश्राम के लिए मण्डप निर्मित किया जाता है। यहाँ वर पक्ष की एवं वधू पक्ष की लड़कियों में आपस में वाक्युद्ध होता है। वधू पक्ष की लड़कियाँ वर पक्ष वालों को बैठने नहीं देती। वधू पक्ष की लड़कियाँ कहती हैं-

तारे ठुकण्या माटी ने माण्डवो ओ आई
तारे ठुकण्या माटी ने माण्डवो ओ माण्डवे आई।

वर पक्ष की लड़कियाँ सफाई देती हुई कहती हैं-

आमू हजारे भोरिया ने हामू झोपेले आई
आमू हजारे भोरिया ने तारा माण्डवे आई।

अब भोजन करवाया जाता है। बाराती, गाँव वाले एवं आसपास के गाँवों से आये लोग भी भोजन करते हैं। इस अवसर पर चावल बनाते हैं। ढोलगिया-फेफर्‌या और मांदल की ध्वनि जहाँ तक भी सुनाई देती हैं, वहाँ तक के लोग भोजन में सम्मिलित होते हैं। यही कारण है कि दाल-चावल बनाये जाते हैं। इतने लोगों को सन्तुष्ट करना बहुत कठिन कार्य होता है।

वधू के यहाँ वेन्डे भरने की रीति अब निभाई जाती है। इसके उपरान्त समुधान की रीति का निर्वहन किया जाता है। समुधान से अर्थ हुआ कि वर के लिये भोजन ले जाना। वधू की माँ भोजन एवं बहन पानी ले जाती है। अरबेड़िया में गुड़ भी ले जाते हैं। ढोलगिया, फेफर्‌या या मांदल के साथ सम्मानपूर्वक ले जाते हैं। पहले मण्डप के आसपास चार चक्कर लगाते हैं, फिर वर की तलवार नीचे रखकर मुँह धुलवाते हैं। वर की माँ का भी मुँह धुलवाया जाता है। इसके बाद भोज्य पदार्थ रख देते हैं। वर पक्ष की लड़कियाँ सामूहिक रूप से भोजन पहले ही कर लेती हैं। समय का लाभ उठाते हुए भोजन सम्बन्धी बातों का उल्लेख करती हुई व्यंग्य करती हैं-

आसी कसी तेज बोताड़े ओ आयणी।
कोकेरो ने काकेरो खवाड्‌यो ओ आयणी।

वधू पक्ष को क्रोध आ जाता है। वे सोचती है कि 'उत्तम भोजन करवाने के बाद भी कहती हैं कि कंकर खिलाये।' लड़कियाँ अत्यंत अश्लील गीत गाती हैं-

काळी आम्बे ओ मोती झोझेड़ा
दुई-दुई हाथे ओ चुळे..... ।

अब वर का जीजा लाल मटके में गुड़ उठाकर अन्य लोगों के साथ वधू के घर जाता है। चवरी स्थान पर रीति होती है। गाँव का कोई भी एक व्यक्ति घूरे से जैविक खाद तगारी में लाता है।

वर-वधू के भाई व जीजा एक साथ खटिया पर बैठते हैं। इन लोगों के सामने पाँच-छः स्थान पर जैविक खाद रख दिया जाता है। इस खाद के ऊपर गुड़ से भरे कुण्डा, मटका, अरबेड़िया और लोटा रख देते हैं। इन पात्रों से गुड़ निकाल के खटिया पर बैठे लोगों को दिया जाता है। एक थाली में हल्दी घोलकर उसमें कड़ा और मुद्रिका रखी जाती है। बैठने वालों की पीठ और मुँह पर हल्दी लगाई जाती है। सिर पर पीठी लगाते हैं। इतना करने के बाद कड़ा और मुद्रिका पहना देते हैं। यह कार्य पुजारा क्रियान्वित करता है। इस रीति का नाम है कड़ा-मुन्दी। अब सभी अन्दर जाते हैं। पुनः हल्दी लगाई जाती है। इसके साथ ही मुँह भी धुला देते हैं। वर का छोटा भाई सूखा नारियल, जिसे वाटकी कहते हैं, लाल कपड़े में लपेटकर ले जाता है। धारण के पास बैठी वधू के हाथों में रख देता है। इस समय की रचना इस प्रकार है-

सूखली वाटकी लायो घोटाळा पिऱ्या
तारी आसी न सूखली मारों।

इतना सब होने के बाद वर पक्ष के लोग अपने डेरे पर लौट जाते हैं। थोड़ी देर बाद उन्हें पुनः बुलाया जाता है। वर को चवरी में अगले पाटले पर बिठा दिया जाता है। यहाँ फिर से दोनों पक्षों में नोक-झोंक प्रारम्भ हो जाती है। वधू पक्ष की लड़कियाँ कहती हैं-

लाड़ो छिनाळे लायो ने गली मोकळी रे लोल।

वर पक्ष का ताना देखिए-

लाड़ी नी बोइण छिनाळी गली साकड़ी रे लोल।

अब वर की माँ व अन्य महिलायें अन्दर जाती हैं। अन्दर जाकर वधू को वस्त्र पहनाती हैं। जब तेल लगाया जाता है, तब की रचना का अवलोकन कीजिये। वधू पक्ष की स्त्रियाँ कहती हैं-

तेली ने रोही ने तेल त लावी
तू घुणी चुपड़े ओ नाहेली बेनी।
वाण्या घोर रोही ने पुथल्या लावी
तू घुणी चुपड़े ओ नाहेली बेनी।

वर पक्ष की स्त्रियाँ बाहर बैठी रहती हैं। वे जोर-जोर से गाती हैं, ताकि अन्दर तक सुनाई दे-

इनी खोपड़ी मा वारे लागे ओ,
डाहेली लाड़ी बाहेर निकेळ।

अब वधू को बाहर ले आते हैं। वर के पास बिठा देते हैं। इस समय वर पक्ष वाली स्त्रियाँ व्यंग्य करती है-

बेना, लाड़ी ने बुलावी ले चवरी मा
दिनेश आयणिंग बुलाई ले घोरे मा।

वधू पक्ष की महिलायें वधू को अन्दर ले जाती हैं। वर वाली महिलायें पुनः वापस ले आती हैं। इस प्रकार की क्रिया चार बार की जाती है। वर एवं वधू के दाहिने हाथों में एक चावल खड़ी मुद्रा में रखते हैं। दोनों लगभग पाँच मिनट तक चावल को दबाये रखते हैं। कहते हैं कि जो कम अवस्था का होता है, वह काँपता है। इसके बाद वर सीधे पैर से वधू के दोनों पैर दबाता है। अब वधू का भाई वर को वाळा-मुन्दी पहनाता एवं बीड़ी पिलाता है, फिर वर की पीठ पर हल्के-हल्के चार बार मुक्के मारता है। यह परिचय एवं मित्रता का प्रतीक है। इसी तारतम्य में वर पक्ष की एक महिला पाटी को नचवाती है।

चवरी में व्यवस्थित रूप से डेंगरा गड़ा रहता है। इस डेंगरे के आसपास फेरे लिये जाते हैं। चार बार वर आगे रहता है, फिर चार बार वधू आगे रहती है। इस प्रकार आठ बार फेरे लिये जाते हैं। वधू पक्ष द्वारा अब वर को लक्ष्य बनाया जाता है-

बेनी डेगरा काटी आले ओ
बेनो टेके-टेके जाय।

वर पक्ष की महिलायें वर को आश्वस्त करती हुई कहती हैं-

चार फेरा फिरजे बेना
आपणी लाड़ी छे।

फेरे फिरने के बाद वर-वधू को उस स्थान ले जाया जाता है, जहाँ प्रथम दिन नकली वर ने छोटा-सा गड्ढा खोदा था। इस स्थान पर वर-वधू चावल समर्पित करते हैं। दोनों हाथ धोते हैं एवं चारों दिशाओं में प्रणाम करते हैं। पहले पूर्व में, फिर उत्तर, फिर पश्चिम दिशा में और फिर दक्षिण दिशा में प्रणाम किया जाता है। यहाँ किसी देवी-देवताओं का नाम नहीं लिया जाता। तात्पर्य स्पष्ट

है कि चारों दिशाओं में व्याप्त निराकार परमपिता परमेश्वर को प्रणाम किया जाता है। वनवासी समाज में वैदिक परम्परा के दर्शन कहीं न कहीं मिल ही जाते हैं।

अब उस स्थान पर जाते हैं, जहाँ नकली वर ने दूसरा गड्ढा खोदा था। जहाँ सुपारी एवं पैसे पूर्व से ही नकली वर द्वारा दबाये हुये रहते हैं, उन्हें निकाल लिया जाता है। उस गड्ढे में पानी भर दिया जाता है। पुजारा उसमें सुपारी एवं पैसे छोड़ देता है। वर-वधू उस गड्ढे में हाथ डालते हैं, जिसे जो मिले वह वस्तु निकालते हैं। यह क्रिया चार बार करते हैं। यह रीति थोड़ी देर के लिये मनोरंजक स्पर्धा बन जाती है।

उपरोक्त रीति सम्पन्न होने के बाद वर को उनके डेरे पर ले जाते हैं। इसके उपरान्त ईहाई पगड़ी एवं भाई पगड़ी की रीति की जाती है। पहले वर-वधू के पिता आपस में एक दूसरे को पगड़ी बाँधते, फिर दोनों के भाई भी यही कार्य करते हैं। फिर सभी लोग आपस में बीड़ी पीते हैं। इस समय वर-वधू ही नहीं उनके माता-पिता, भाई-बहन सभी स्नेह सूत्र मे बंध जाते हैं। दोनों पक्षों की महिलायें घर के अन्दर एकत्र होती हैं। वर-वधू की माताएँ भी एक दूसरे को साड़ी ओढ़ाती हैं। वर पक्ष वाली महिलाओं को अन्दर भोजन भी करवाया जाता है।

भोजन करने के बाद महिलायें अपने डेरे में चली जाती हैं। वर के लिये वधू की माँ एवं बहन सेंवईया एवं गुड़ खाने के लिये लाती हैं। इस रीति को सामुधान कहते हैं। वर पक्ष की महिलायें बदला लेती हैं। इधर महिलाओं में नोंक-झोंक, मनोरंजक रूप में चलता रहता है और मण्डल में दोनों पक्षों के लोग ढोलगिया, फेफर्‌या एवं मांदल के सुर-तालों पर थिरकते रहते हैं।

अब वर को पुनः चवरी में लाया जाता है। वर पक्ष की स्त्रियाँ अंदर जाकर वधू को भी इस स्थान पर लाती हैं। यहाँ वधू को उसका भाई तथा वर को वर का भाई कंधों पर बिठाकर चवरी में चार बार घुमाते हैं। अब वधू के हाथों में चावल और सवा रूपया देकर घर के ऊपर रखवाते हैं, वधू प्रणाम करती हैं। कहते हैं कि चावल और सवा रूपया नीचे नहीं गिरना चाहिए। अब वर-वधू को चावल मारता है। वधू अपने घर पर चावल फेंकती है। दोनों को उठाकर नृत्य भी किया जाता है। अब विदाई का समय आ जाता है। अब बारात वापस लौटने की स्थिति में होती है। बैलगाड़ियाँ तैयार हो जाती हैं। वर-वधू हाथ धोकर नारियल फोड़ते हैं। इस क्रिया के बाद वर-वधू को गाड़ी में बिठाया जाता है। गाँव की महिलायें वधू से कहती हैं-

नीळी तुवेर पेळो फूल ओ मारी नानी बेनी
तारो सोसेरो लाम्बी दूरे ओ मारी नानी बेनी
लाम्बी वाटे छोटी गाड़ी ओ मारी नानी बेनी
आदी उजाड़ आदी माले ओ मारी नानी बेनी।

जाते-जाते दोनों दलों में एक बार पुनः झड़प हो जाती है। इस बार की झड़प गीतों को लेकर होती है कि किसने कैसे गीत गाये? किसके गीतों में दम था? गीत गाने में हमसे टक्कर मत लेना, इत्यादि। यहाँ आकर विवाह सम्पन्न हो जाता है। बाद में कुछ छुट-पुट रीतियाँ की जाती हैं। दूसरे दिन आणा वाले आते हैं। तीन-चार दिन तक आणे की रीतियाँ की जाती हैं।

भीली विवाह

डॉ. (श्रीमती) गुलाब सोलंकी

भील जनजाति का इतिहास और विकास ही भिलाला और बारेली जनजाति का इतिहास और विकास है। भील जनजाति संख्या की दृष्टि से भारत वर्ष में तीसरे स्थान पर आती हैं- गौंड और संस्थाल के बाद। भीलों के प्रमुख केन्द्र मध्यप्रदेश और राजस्थान हैं। भीलों की अपनी विशिष्ट बोली भीली हैं। भीली पर राजस्थानी, गुजराती और मराठी का प्रभाव है। जैसे मध्यप्रदेश के धार जिले के भीलों द्वारा प्रयुक्त भीली बोली पर मालवी बोली का प्रभाव तथा निमाड़ अंचल में निमाड़ी का प्रभाव भी भीली पर परिलक्षित होता है।

पश्चिमी निमाड़ के भीलों में होने वाले विवाह सम्बन्ध हिन्दुओं की भाँति ही होते हैं। उनके विवाह में आर्थिक विपन्नता बाधक नहीं है। यद्यपि वे ऋण लेकर भी विवाह करते हैं, इनका विवाह एक सामाजिक बंधन होने के साथ ही सामाजिक सम्मान प्राप्त करने का एक माध्यम भी है।

भील समाज में विवाह के माध्यम से यौन-सम्बन्धों की स्वतंत्रता को नियंत्रित किया जाता है। इनके अपने जनजातीय आदर्श नियमों के आधार पर जीवन साथी का चुनाव होता है। इनका अन्य जनजातियों तथा अपनी ही उपजातियों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध वर्जित है। ये अपनी ही जाति में विवाह करना उचित समझते हैं। इनमें दो प्रकार के विवाह प्रचलित हैं - सामान्य विवाह, अपहरण या गंधर्व विवाह।

सामान्य विवाह परिवार माता-पिता एवं समाज के रीति-रिवाजों के अनुसार होता है। गंधर्व या अपहरण विवाह लड़के-लड़की का प्रेम या कहीं भाग जाते हैं, जिसमें झगड़ा आदि रस्म द्वारा विवाह को मान्यता दी जाती हैं। भील समाज में वधू पक्ष को नगद राशि, अनाज, गुड़ आदि देने की प्रथा है। यह सब वर पक्ष की आर्थिक स्थिति पर निर्भर है। प्राचीन समय में जब बाराती खाना खाने बैठते थे,

भोजन एक ही बार में परोस दिया जाता था, दूसरी बार नहीं मांगा जाता था। यदि बाराती भूखे रह जाते थे तो वर पक्ष अपने साथ भोजन या खाद्य सामग्री ले जाते थे और बारातियों को खिलाते थे। किन्तु अब आर्थिक स्थिति के अनुसार बारातियों को बुलाना एवं भोजन की व्यवस्था करना एक परम्परा हो गयी है।

पश्चिम निमाड़ के भीलों में सामान्य विवाह होने पर रस्म अदायगी होती है और गीत गाये जाते है। वर पक्ष और वधू पक्ष के खड़माटी और गणेश पूजन के गीत समान होते हैं। शेष गीतों में कतिपय अंतर होता है। क्रुक ने लिखा है कि स्थानीय जनश्रुति के अनुसार भील किसी समय राजपूताना, सेन्ट्रल इण्डिया तथा गुजरात की शासक जाति थी। ऐसा विश्वास किया जाता है कि उन्हें राजपूताना, मालवा तथा गुजरात राज्यों ने अपने अधीन कर लिया था।

निमाड़ के भीलों में होने वाले विवाह सम्बन्ध हिन्दुओं की भाँति ही है। वर पक्ष से पैसे, अनाज, गुड़ आदि लेने की परम्परा है। भीलों की एक विशेषता है कि यहाँ दहेज नहीं है। कुछ निर्धारित वस्तुएँ थाली, लोटा, बेड़ा आदि ही अनिवार्य है। विवाह की शुरुआत खड़माटी से होती है, जिसमें चुला, चक्की, कोठी बनायी जाती है।

महिलाएँ चूल्हा-कोठी बनाने के लिए मिट्टी खोदने हेतु सामूहिक रूप से गीत गाते हुए जाती हैं-

चलोऽ चलोऽ मारी सईया ओ खड़माटी खोदावा
अड़ धड़ राक्या पड़ धड़ राक्या बमारा लाड़ लड़ाया वो आ
चलो मारी सई वो घणा-घणा हो रसजियो
म्हारा निन्यावी बमारा लाड़ लड़ाया रे।

विवाह अवसर पर गणेश पूजा का विशेष महत्त्व है, जिसमें महिलाएँ गीत के माध्यम से कहती हैं- हमारे घर गणपति बाबा आए हैं -गढ़वो-गुड़ी वे बाबो गणपति आयो/ वो पूछतो-पूछतो बाबो गली म आयो/ वो सेयरी म आयो वो पूछे जगन भाई को घर कहां/ वो गढ़बो-गुड़ी वो बाबा गणपति आयो/ वो पूछतो-पूछतो-पूछतो

विवाह चार,पाँच या सात दिन का भी हो सकता है। दूल्हा-दुल्हन को रोज हल्दी लगाकर नहलाया जाता है-

गादी पर बैठो बना थारा हल्दाय महकाय रे,
गादी का लाग्या रूपया साठ रे।
नादान बना थारा हल्दाय महकाय रे।

हे दूल्हे राजा! तुम्हारी हल्दी से खुशबू आ रही है। जिस गादी या पटले पर बैठे हो, उसके लिए पैसे खर्च किए गए हैं।

झील मील पाणी गरम लाड़ा रे
तुम नावों कि नयऽ रे
नव का टेम होय ग्यो रे
झील मील पाणी गरम लाड़ा रे
तुम नावों कि नयऽ रे।

नहाने का पानी गरम हो गया है, तुम स्नान करोगे या नहीं। सुबह के नौ बज गए हैं, इसलिए- हे दूल्हे राजा! स्नान कीजिए।

तातो तपेलो पाणी ठंडो हो सरयोवो
बनड़ा तू त नावीलव वो
तातो तपेलो पाणी ठंडो हो सरयोवो।

हे दूल्हे राजा! नहाने के लिए तपेले में गरम पानी रखा है स्नान कीजिए।

मण्डप के दिन मुवाड़या न्योता होता है। मण्डप में महिलाएँ गीत गाती हैं -

लाड़ा थारो माण्डवो ऊचों लेरीया लयवो
ऊचों लेरिया लयवो सीता बाई रा वन म
ओ लाड़ा थारो माण्डवो ऊचों लेरीया लयवो।

हे दूल्हे राजा! तुम्हारा मण्डप हरा-भरा दिखाई दे रहा है।

भील जनजाति में दूसरे,चौथे या पाँचवीं रात महिलाएँ परिवार के सदस्य एवं गाँवों के बच्चे जलती मशाल, जंगी ढोल, दूल्हा घोड़ा-साइकिल या अन्य सवारी का उपयोग कर गाँव की गलियों में निकलता है।

अड़वड़ ऊपर घुंघरू रे बना
धीरा चालो गेरया बोलो ना।
हजारी बना धीरा चालो रे
अड़वड़ ऊपर घुंघरू रे बना।।

रास्ते में घुँघरू की आवाज आ रही है। हे दूल्हे राजा! धीरे-धीरे चलिए।

इन्दौरयारी लाम्बी रे सड़क।
लाम्बी रे सड़का बनो म्हारो पढ़ने को जाय।
माता पिता करलो विचार लायदो रे किताब।
बनो मनरो पढ़ने को जाय।
भाई भाभी कर लो विचार लाय दो किताब।
बनो मारो पढ़ने को जाय।

दूल्हे राजा पढ़ने जा रहे हैं। माता-पिता, भाई-भाभी विचार कर रहे हैं कि दूल्हे को पुस्तकें खरीद कर दी जायें।

होटल परऽ लडडू मारा बना ने बनवाया,
बनो खाई न बनी तरसे वो।
होटल परऽ चाय मारा बना ने बणवायी,
बनो पियो न बनी तरसे वो।

दूल्हे राजा ने होटल पर लड्डू और चाय का आर्डर दिया है। वह लड्डू खा रहा है और चाय पी रहा है, किन्तु दुल्हन तरस रही है।

बारात रवानगी के समय दूल्हे को माता-पिता और बुजुर्ग आशीर्वाद देते हैं, तब महिलाएँ गाती है-

वो माता पड़स बेटो थारो ऊबो वो,
म्हारी राय रूकमणी पर फूक वो।
वो माता पड़स बेटो थारो ऊबो वो,
म्हारी राय रूकमणी पर फूक वो।

हे दूल्हे की माँ! तेरा लाड़ला तेरे सम्मुख आशीर्वाद के लिए खड़ा है। तुम आशीर्वाद दो।

बना रे थारा मैला ऊपर,
बोले कोयल मोर रे बना रे।
थारा पिताजी बुलावे,
बेगा आओ रे हरियाली बना।
बना रे थारा मैला ऊपर,
बोले कोयल मोर रे बना रे।
बना रे थारा काकाजी बुलावे,
बेगा आओ रे हरियाली बना।

हे बना! तेरे महल की छत पर कोयल, मोर बोल रहे है। प्रसन्नता के साथ पिताजी, माँ, काकी बुला रही हैं।

सवी चाल्या न, घर पार कुण का भरोसे
ताल्णा देवो कूची साथ लो वी बना जी आ।

सभी बारात जा रहे हैं, घर किसके भरोसे रहेगा, अर्थात् ताला लगा कर चाबी अपने पास रख लो।

बारात निकासी के गीत- बारात घर से पैदल, बैलगाड़ी या परिवहन से रवाना होती है। महिलाएँ रास्ते भर गीत गाती है-

धरती ऊपर फरसी रे बना।
धीरे-धीरे चलना धरती ऊपर फरसी रे बना धीरे-धीरे चलना ।
पिता बुलाव जरा बोलना रे बना।
धीरे से बोलना ससरो बुलाव जरा जोर से बोलना रे बना।
बना कड़क सी बोलना धरती ऊपर फरसी रे बना।।

महिलाएँ दूल्हे को शिक्षा दे रही हैं कि परिवार एवं ससुराल वालों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए? बारात वधू के गाँव पहुँचती है, तब महिलाएँ गाती हैं-

खोल दो किवाड़ मेरा बना आया वो।
खोल दो किवाड़ तेरी झाझम पे मेरा बना आया वो।
बनी खोल दो किवाड़, डोर-डोर ढीली छोड़ वो।
हरिया बनी तेरी पतंग मेरी डोर वो।
खोल दो किवाड़ वो तारा मोड़िया प मोर नाचे वो।
हरिया बनी तेरी पतंग मेरी डोर वो।

तुम दरवाजा खोल दो, मेरा दूल्हा तुम्हारे घर आया है। हे दुल्हन! तू पतंग के रूप में दूल्हा रूपी डोर से बंध गयी है।

समस्त जनजातियों में भील जाति की अपनी एक अलग पहचान है। इनके रीति-रिवाज, उत्सव एवं अन्य कार्यक्रम लोकगीतों के साथ आरंभ होते हैं।

बारेला विवाह

प्रो. (श्रीमती) वीणा बरडे

पश्चिम निमाड़ की बारेला जनजाति दो भागों में विभक्त हैं। एक सेंधवा, निवाली, पानसेमल और दूसरा खरगोन क्षेत्र। बारेला सामान्यत: वर्ण संकर माने जाते हैं। सन् 1931 की जनगणना में यह टिप्पणी की गई है। यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि बारेला निमाड़ तक ही सीमित हैं, जिनमें से तीन चौथाई व्यक्ति बारेला सेंधवा में रहते हैं।

भीलों से अधिक तथा भिलालों से अपेक्षाकृत कम प्रगतिशील स्वयं को राजपूत कहते हैं। समान गोत्रों में विवाह निषेध हैं। भीलों की भांति इनके गोत्रों का नामकरण वृक्षों, पशुओं एवं पक्षियों पर आधारित हैं। गोत्रों से सम्बन्धित पशु-पक्षी इनके लिए पुनीत हैं। पूर्ण प्रयास के साथ ये इनका संरक्षण भी करते है। इनके धार्मिक, सामाजिक रीति-रिवाजों में हिन्दू संस्कृति और सभ्यता के चिन्ह दिखाई देते हैं। भिलाला एवं बारेला में विशेष अंतर नहीं होने पर भी दोनों में वैवाहिक सम्बन्ध नहीं होते। प्रेम विवाह के प्रति बारेलाओं की रूचि हमेशा प्रशंसित रही है। होली के समय भगोरिया त्योहार में युवक-युवतियाँ अपना जीवन साथी चुनते हैं। अपहरण विवाह भी इनमें प्रचलित है। कहीं-कहीं घरजमाई की प्रथा भी देखने को मिलती हैं। सामान्यत: वैवाहिक सम्बन्ध परिवार, माता-पिता द्वारा निश्चित किया जाता है। विधवा-विवाह, विवाह-विच्छेद एवं बहुपत्नी प्रथा का प्रचलन है। वधू मूल्य को विवाह का महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता हैं। हिन्दू देवी-देवताओं के प्रति इनकी आदर-श्रद्धा है। तीर्थयात्रा को विशेष महत्त्व देते हैं। अन्य जनजातियों के समान अंधविश्वास, जादू-टोना, बड़वा-भोपा को मानते हैं।

भीलों की भाँति ये कानून प्रिय और स्वतंत्रता इनकी नस-नस में समायी है। अपमानित बारेला युद्ध में शेर की भाँति भयावह हो जाता है। बारेली इनकी बोली है। पश्चिम निमाड़ की बारेला जनजाति में विवाह की रस्म तीन प्रकार की पायी जाती है। बारेला जनजाति में विवाह के गीतों को दो भागों में विभाजित कर देखा जा सकता हैं- वर एवं वधू पक्ष।

कन्या मूल्य का प्रचलन है। वर्तमान में पानसेमल क्षेत्र में ग्यारह हजार और निवाली सेंधवा में चालीस हजार रूपये तय है, किन्तु वर की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर तय करते हैं। कन्या मूल्य की पेशगी देते समय महिलाएँ गाती हैं –

फलाणु कापतु जाय, पयहा आपतु जाय,
खोजी तोड्यू रे फलाणु हिजडू खोजी पोड्यू रे।

कन्या मूल्य देते समय व्यक्ति कांप रहा है। वह डरपोक है। गीत में गाली का प्रयोग किया गया है।

दूल्हे की बारात जैसी ही बारेला जाति में वधू की बारात जाती है, जिसमें परिवार एवं गाँव के लगभग सभी लोग सम्मिलित होते हैं। वधू पक्ष की महिलाएँ वर पक्ष के घर वधू को पहुँचाने (रखने) जाती हैं, तब महिलाएँ गाती हैं –

चाली वो चाली ने म्हारा पगुलाय
दुखाय गोरी गोया सेंधवा कोतर क दूर।

पैदल चलते-चलते पांव में दर्द होने लगा है, लेकिन दूल्हे का गाँव अथवा घर अभी तक नहीं आया है।

जब दुल्हन-दूल्हे के घर पहुँच जाती हैं, तब महिलाएँ गाती हैं –

म्हारी बेनी आवी लागी आयी लागी ओ फलाणी
राधा हिजड घोरे मा सी निकल वो।

हमारी बहन (दुल्हन) आपके यहाँ आ गयी हैं। हे राधा! तू घर से बाहर निकल।

खिड़की उगाड़ी बावे वा फलाणी
फलाणी राण्डे आवे हैं, चुसक्या जान
खिड़की उगाड़ी बोवे वा फलाणी।

हे फलाणी! खिड़की खोल कर देख, तुम्हारे घर पर वधू और वधू की माँ प्रसन्नता के साथ हँसती हुई आयी हैं। तू घर में घुसी हैं, खिड़की खोलकर देख।

वर एवं वधू को बाने के रूप में दैजा दिया जाता है। व्यक्ति या रिश्तेदार अपनी हैसियत के रूप में देता है-

रामू घर घर तू जा मुरखायतु जाय,
रामू बायर बाणे मेलतू
ते पोड्या लाडू लावतू।

रामू नामक व्यक्ति तू घर जा रहा है, तू अपनी पत्नि से पैसे माँगने जा रहा हैं। क्या वह तुझे देगी? तू हँसते हुए जा रहा है।

बेनी कोसी गुताख्यान फूला देखाय।
पूरयों कोसो खरगुण ने गंगी देखाय।
बेनी कोसी कमल फूल देखाय।
पूरयो कौसो सेंधवा ने गंगी देखाय।

महिलाएँ दूल्हे पर व्यंग्य करती हुई गाती हैं कि दुल्हन गुलाब एवं कमल के फूल समान दिखायी दे रही हैं, जबकि दूल्हा बहुत गंदा दिखाई दे रहा है।

निव्ही छापा गाड़ली, काव्हा पर्दा गाड़ली।
खरगुण बाटे जादू मा बेना लेखारी।
निव्ही छापा गाड़ली, काव्हा पर्दा गाड़ली।

हे दुल्हन! तुम्हारी गाड़ी में हरे और काले रंग के सुन्दर परदे लगे हैं। हे पढ़ी लिखी दुल्हन! खरगोन के रास्ते पर मत जाना। विवाह में महिलाएँ गाली के गीत (निवाली) गाती हैं, जिसमें हास-परिहास करती हैं। वे वधू को विचित्र शिक्षा देती हैं-

सासु जी जुले तो चीमटो बोताड़ जी,
सुण वो मारी सुमन बेनी।
ससरो जुले तो लाकड़ो बोताड़ जी सुण वो मारी बेना,
नणद जुले तो हाथ बोताड़ जी सुण वो मारी बोना।

हे दुल्हन! तू सीधी-सादी है। ससुराल वालों का स्वभाव झगड़ालू हैं। हिम्मत मत हारना। सास-ससुर, नणद से डरना मत।

बाबो भी ऐखलो ने माड़ी भी ऐखली,
बाट्ये लागी आवती रोयाजी मारी बेना।
रास्तो भी देखलो ने सोयड़क भी देख ली,
बाट्ये लागी आवती रोयाजी वो मारी बेना।

हे दुल्हन! तुम्हारे माता-पिता घर में अकेले हैं, तुम्हे कोई परेशानी हो तो आ जाना रास्ता देखा हुआ है।

गोण्डी विवाह संस्कार

डॉ. शरीफ मोहम्मद

गोंड एक आदिम जाति है, जिसकी आदिम परम्पराएँ, रीति-रिवाज, मान्यताएँ, अनुष्ठान एवं संस्कार वर्तमान में भी पुरानी मान्यताओं के साथ प्रचलित हैं। मध्यप्रदेश के साथ-साथ भारत के अन्य अंचलों में गोंड जनजाति अन्य जनजातियों की अपेक्षा सर्वाधिक मात्रा में निवास करती है। गोंड सबसे बड़ा आदिवासी समुदाय है। गोंड सबसे अधिक प्रभावशाली एवं जागरूक जनजाति है। ये जनजाति आदिम युग से प्रकृति प्रेमी रही है। पहाड़ और नदी-नालों के तट पर आदर्श जीवन व्यतीत करते हैं। धरती की खुशबू इनके शांति प्रिय जीवन को महकाती है। प्रकृति के निकट रहने के कारण इनका सम्पूर्ण जीवन प्राकृतिक साधनों पर निर्भर रहता है। गोंड जनजाति की अपनी अलग संस्कृति है, जो अपने आपमें सम्पूर्ण एवं परिपूर्ण है। इनकी आदिम संस्कृति की एक पहचान और विशेषता है। इनके जीवन की सीमित आवश्यकताएँ होती हैं। इन्होंने अपनी कला, संस्कृति को संजोया, संवारा और समृद्ध किया है। गोंड अत्यंत ईमानदार, परिश्रमी एवं कलाप्रेमी है। गोंड का स्वभाव खुले वातावरण के समान उन्मुक्त एवं सहनशील है। पेज-भाजी गोंडों का प्रमुख भोजन और मदिरा प्रमुख पेय पदार्थ है। मदिरा गोंड जीवन का अभिन्न अंग है, गोंडों के प्रत्येक कार्य में मदिरा का स्थान प्रथम है। कहा जाता है कि मेहमान नवाजी में एक बार भोजन प्राप्त न हो लेकिन मदिरापान हो गया तो सब हो गया। गोंडों को अपने देवी-देवताओं पर अटूट और गहरा विश्वास है। उन्हें प्रसन्न करने के लिए भी पूजा-पाठ के समय मदिरा अर्पित की जाती है। देवी-देवताओं को मदिरा चढ़ाना और मेहमानों को मदिरा परोसना गोंडों का स्वाभिमान है। नाचना-गाना और मदिरा का सेवन करना इनका पारम्परिक गुण है। यह कहा जाए कि नृत्य-संगीत गोंड जाति को प्रकृति की देन है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। वास्तव में नाचना-गाना और बजाना इन्होंने प्रकृति से सीखा है। गोंडों के जन्म, विवाह, मरण तथा कोई भी पर्व-उत्सव, अनुष्ठान बिना नृत्य-संगीत के अधूरा है। गोंडों के विवाह-संस्कार में तो आदिवासी संगीत की धूम रहती है। गोंडों में विवाह और नगाड़े एक-दूसरे के पूरक हैं।

गोंडों में विवाह अन्य जाति या समाज की भाँति ही किया जाता है। भाई अपनी बहन के लड़के-लड़की से अपने लड़के-लड़की के साथ विवाह करना अपना पहला हक मानता है। अर्थात् मामा-फूफा की संतानें आपस में विवाह कर लेते हैं। गोंडों की परम्परा में इसे 'दूध लौटाना' कहते हैं। गोंडों में विवाह के कई प्रकार हैं, यथा- लमसेना, हरदी सींचना, चुरिया पहनाना, पठौनी विवाह, चढ़ विवाह और भगाकर विवाह।

लमसेना

लमसेना या लमसना एक कठिन जीवन संघर्ष है। इसमें लड़के को अपनी जीवन संगनी प्राप्त करने के लिये लड़की के घर में कठिन शारीरिक श्रम करना पड़ता है। लमसेना एक लड़का होता है जो विवाह के पूर्व ससुराल में रहता है। लमसेना की अवधि तीन वर्ष की होती है। इन तीन वर्षों में लमसेना को घर-गृहस्थी का सम्पूर्ण कार्य करना अनिवार्य होता है। खेत-खलिहान, जंगल-पहाड़, सास-ससुर की सेवा आदि सभी कार्य करना लमसेना के कर्त्तव्य में आता है। तीन वर्ष के कार्यकाल में सास-ससुर की नजरों में खरा उतरने पर ससुर स्वयं अपने खर्च से अपनी लड़की के साथ उसका विवाह कर देता है। जमीन-जायदाद आदि देकर घर बनवा देता है। लमसेना उसी गाँव का निवासी होकर अपनी पत्नी के साथ जिन्दगी बसर करता है। इसे लमसेना जीतना भी कहते हैं।

हरदी सींचना

हरदी कहने में बड़ी सामान्य चीज है, किन्तु गोंड संस्कृति में हरदी का बहुत ही ज्यादा महत्त्व है। दो गाँव के युवक और युवती जीवन साथी बनने के लिये राजी हो जाते हैं। यह प्रेम-प्रसंग गोपनीय रूप से कई दिनों से चलता रहता है। बात गाँव में फैल कर लड़का-लड़की के माता-पिता तक पहुँचती है, किन्तु माता-पिता इनकी शादी के लिये राजी नहीं होते हैं। ऐसी स्थिति में लड़का-लड़की ठान लेते हैं कि शादी करना ही है। अब वे किसी मौके व दिन की तलाश में रहते हैं। इस कार्य में उनके सखा व सखी मदद करते हैं। अब लड़का और लड़की विवाह के हकदार हो जाते हैं। इस स्थिति में माता-पिता भी विवाह करने के लिये मजबूर हो जाते हैं। तब रातोरात मंडप गाड़कर नगाड़े और नाच-गाने के साथ भांवरे लिए जाते हैं और लड़का-लड़की जीवन साथी बन जाते हैं।

चुरिया पहनाना

इसे विधवा विवाह भी कहते हैं। जब किसी परिवार में कोई औरत विधवा हो जाती है तो उसे देवर के साथ पत्नी के रूप में स्वीकार किये जाने की परम्परा है। गाँव के चार पंच इकट्ठा कर उन्हें मान-सम्मान प्रदान किया जाता है और पंचों के समक्ष विधवा स्त्री को देवर के नाम से चूड़ियाँ पहना दी जाती हैं। इसी तरह पूरा समाज देवर की पत्नी के रूप से मान्यता प्रदान करता है।

पठौनी विवाह

गोंड जाति में पठौनी विवाह एक निराली परम्परा है। यह परम्परा अन्य जातियों से हट के है। विवाह पूरी तरह विधि-विधान के साथ होता है। विवाह के समस्त सामाजिक रस्मोरिवाज पूरे किये जाते हैं। अन्तर केवल इतना है कि लड़की की बारात लड़के के घर जाती है। लड़के के मण्डप के नीचे दोनों की भांवरे पड़ती है। विवाह के समस्त क्रिया- कलाप सम्पन्न होने के बाद लड़की दूल्हे को विदा करवाकर अपने घर लाती है। घर पहुँचकर लड़के के संगी-साथी अपार खुशी मनाते हैं। रात भर नगाड़ों में कहरवा, बिरहा और करमा आदि नृत्य होता है। बड़े बुजुर्गों में दारू का दौर चलता है। सभी शौकीन दारू में मस्त हो जाते हैं।

चढ़ विवाह

गोंडों में चढ़ विवाह सामान्य विवाह है। बेटी पुछौनी के साथ चढ़ विवाह की शुरुआत होती है। पुच खर्ची के साथ रिश्ता तय किया जाता है। बरौली (सगाई) होती है। दूल्हे को छोड़कर बाकी लोग सगाई-बारात में लड़की के घर जाते हैं। मांगर माटी होती है। मढ़वा छाया जाता है। दूल्हे की बारात जाती है। तात्पर्य यह है कि विवाह की समस्त रस्में पूरी कर सामाजिक रीतियों के अनुसार लड़का-लड़की को विवाह के पवित्र बंधन में बांधा जाता है। विवाह वाले घर में विवाह के पहले दिन से ही नगाड़े, मांदर, टिमकी, सींग बाजा (गुदुम) मोहरी आदि लोक वाद्य वातावरण को सुखमय बनाते हैं। इन्हें बजाने का कार्य ढुलिया करते हैं। विवाह वाला घर नृत्य-संगीत से गूंजता रहता है।

भगाकर विवाह

इस विवाह का सिलसिला कई दिनों से चलता है। लड़के-

लड़की राजी खुशी से मिलते-जुलते रहते हैं। विशेषत: लड़का-लड़की गोपनीय ढंग से नदी-नालों, खेत-खलिहान, हाट-बाजार, दादर-पतेरा आदि में अकेले मिलते रहते हैं, किन्तु किसी भी परिस्थिति में इनका विवाह से पूर्व शारीरिक सम्बन्ध नहीं होता है। यह विवाह केवल लड़का-लड़की की राजी खुशी से होता है। जब लड़का-लड़की पूरी तरह से प्रेम-प्रसंग में आबद्ध हो जाते हैं, तब लड़की के भाग जाने की तिथि तय होती है। इसमें लड़का-लड़की के दोस्त या कभी-कभी भाई-बहन भी भाग जाने में मदद करते हैं। निश्चित की गई तिथि को लड़की अपने घर से भागकर लड़के के घर की उरिया के नीचे रात्रि में जाकर बैठ जाती है। लड़का एक लोटा पानी भरकर जहाँ लड़की बैठती है, उसी उरिया के ऊपर ठाठ में डालता है जो लड़की के सिर पर गिरता है। लड़के की माँ, लड़की को घर के अंदर ले जाती है। कोटवार, मुकद्म, पटेल और पंचों को आमंत्रित किया जाता है। बात पंचपरमेश्वर सुनते हैं। माता-पिता, रिश्तेदार और पंच सहमत होते हैं। उसी रात गाँव के नवयुवक आनन-फानन में मढ़वा गड़ाते हैं, विवाह की रस्म पूरी की जाती है और फेरे पड़ जाते है। बाजे-गाजे के साथ घर और गाँव में खुशियाँ मनाई जाती हैं और पंच भोज का आयोजन होता है। इस तरह भगाकर विवाह सम्पन्न होता है।

चढ़ विवाह के रीति-रिवाज

गोंड जनजाति में चढ़ विवाह के अनेक रीति-रिवाज हैं। गोंड विवाह को बिहाव कहते हैं। चढ़ विवाह की सिलसिलेवार रस्में निम्नानुसार है। इन रस्मों का निर्वाह पूर्ण सामाजिक प्रथाओं के अनुसार होता है।

बेटी पुछौनी

सर्वप्रथम विवाह योग्य बेटी का पता कर लड़के का पिता लड़की के घर जाता है। साथ में दो-चार खास रिश्तेदार भी जाते हैं। दारू, खाना-पीना होता है। खाने आदि से फुर्सत होकर दोनों पक्ष के लोग बैठते हैं। रिश्ते सम्बन्धी बातचीत खुलकर होती है। लड़की के माता-पिता राजी होने के बाद रिश्ते सम्बन्धी बात तय होती है। इस समय गाँव और पास-पड़ोस के लोग भी मौजूद रहते हैं। बात पक्की होने के बाद फिर दारू-पानी होता है। जब लड़के का बाप घर वापस आने लगता है, तब याद दिलाता है कि फलां दिन और तिथि को सुपारी फोड़ने आयेंगे। इधर लड़की का बाप भी अपने सगे-सम्बन्धियों, परिवारजनों और गाँव के सयानों को लड़के के बाप के द्वारा निश्चित की गई सुपारी फोड़ने की तिथि और दिन अवगत कराता है। गाँव के कोटवार को विशेष रूप से सुपारी फोड़ने का बुलौवा देता है।

सुपारी फोड़ना

सुपारी फोड़ने के लिये निश्चित की गई तारीख और दिन को लड़के का बाप दो-चार परिवारजन और चार-पाँच गाँव के सयानों को लेकर लड़की के घर जाता है। साथ में कुदई या चावल 5-10 कुड़े, एक कुड़ा उरदा दाल, एक या दो लीटर पीची (मीठा) तेल, सात सैंघी सुपारी सरौंता ले जाते हैं। ये सब नेग में लगते हैं। इन सब चीजों के अतिरिक्त दो-चार बोतल दारू भी ले जाते हैं। लड़की के घर पहुँचने पर मेहमानों का आत्मीय स्वागत होता है। तत्पश्चात् लड़की के परिवारजनों और गाँव के सयानों के सामने सुपारी फोड़ने का नेग चालू होता है। एक-एक सुपारी लड़के-लड़की के पिता लेते है। दोनों सुपारी में थोड़ी-थोड़ी दारू छुआई जाती है और अपने देवी-देवताओं को सुमरकर सरौता से एक-एक कर दोनों सुपारी के दो टुकड़े किये जाते हैं। मान्यता यह है कि प्रत्येक सुपारी के दो टुकड़े एक ही झटके में होना चाहिये। ऐसा होना शुभ कार्य का प्रतीक माना जाता है। इसके बाद दारू-पानी और खाना होता है। तत्पश्चात् मेहमान और मेजवान सब अपने-अपने घरों को प्रस्थान करते हैं।

टीवा-ठौंका बाँधना

टीवा-ठौंका बांधने का अर्थ है विवाह का कार्यक्रम तय करना। टीवा-ठौंका बांधने के लिये लड़के का बाप एक बार फिर लड़की के घर जाता है। साथ में गाँव के दो-चार सयाने जाते हैं। दोनों ओर के सयाने बैठते हैं। सर्वप्रथम दारू के छांका चलते हैं। फिर सलाह-मशविरा होता है। विवाह का कार्यक्रम तय किया जाता है। जैसे-शुक्रवार को मड़वा, शनिचर को मायना, हल्दी और इतवार को बारात आदि। विवाह सम्बन्धी जो भी नेग होते हैं, उन्हें लड़की की तरफ के सयाने उसी वक्त लड़के के पिता से ले लेते हैं। जैसे-सवा पाँच रूपये मड़वा गड़ाई, सवा पाँच रूपये खाम बनवाई, सवा पाँच रूपये बैगा या ओझा का नेग, सवा पाँच रूपये पानी भराई, सवा पाँच रूपये बलगी छिकाई, सवा पाँच

रूपये कोटवार का नेग, सवा पाँच रूपये मड़वा भराई, सवा पाँच रूपये पैर धुलाई इत्यादि। बाकी बचे नेग दहेज के समय लिये जाते हैं। टीवा-ठौंका बँधने और नेग की राशि ले लेने के बाद उसी दिन से शादी की तैयारी शुरू हो जाती है।

पेज पिलाने का नेग

टीका-ठौंका के दूसरे दिन से पेज पिलाने का नेग शुरू हो जाता है। यह दोनों पक्षों के लिये महत्त्वपूर्ण नेग होता हैं। पेज पिलाने का दस्तूर दोनों पक्षों के गाँव व परिवार में सम्पन्न होता है। पिलाने के नेग में पेज के साथ रोटी, पूड़ी, चीला और बरा आदि घर और गाँव के कुछ खास लोगों को खिलाये जाते हैं। पेज पिलाने के नेग के समय अपने-अपने गाँव-घर में दूल्हे के दोस्त और दुल्हन की सहेलियाँ साथ में रहती हैं। यह नेग लगभग तीन दिनों तक हैसियत के अनुसार चलता है। शादी का कार्य यहीं से शुरू हो जाता है।

लगुन

विवाह की तिथि निश्चित होने के पूर्व ही लगुन भेज दी जाती है। गोंडों में लगुन विचार करने का कार्य बैगा (दोषी) या गुनियां द्वारा किया जाता है।

हल्दी कुचरना

हल्दी कुचरना, परा बैठाना और मांगरमाटी लाने के लिये कोटवार द्वारा गाँव में बुलौवा दिया जाता है। हल्दी, परा और मांगरमाटी सम्बन्धी कार्यों में प्रमुख योगदान बैगा अर्थात् दोषी का होता है। दोषी के साथ सुवासा और सुवासिन की भागीदारी भी दरबार की होती है। बैगा (दोषी), सुवासा और सुवासिन का कार्य शादी के शुरू से अंत तक रहता है। ये तीनों शादी के महत्त्वपूर्ण अंग होते हैं।

परा बैठाना

गोंडों के विवाह में परा बैठाने का अर्थ होता है, सुवासा और सुवासिन का चुनाव करना। सुवासा और सुवासिन वास्तव में दूल्हा या दुल्हन के बहन-बहनोई, चाचा-चाची और फूफा-फूफी में से होते हैं। इनमें से किसी एक जोड़े का चुनाव बैगा (दोषी) द्वारा विधिवत् किया जाता है। इसकी एक प्रक्रिया होती है। इसके लिये दोषी द्वारा 'परा' बैठाया जाता है। परा बैठाने का तरीका यह है कि परा बैठाते समय सार (गौशाला) के अंदर थोड़ी- सी जगह गोबर से लीप कर आटे से चौक पूरा जाता है। चौक में एक पायली गेहूँ या चावल, एक नारियल रखा जाता है। एक लोटा पानी भरकर रखा जाता है। दीया जलाकर दारू छिटक दी जाती है। फिर दोषी (बैगा) बड़ा देव, देवी-देवताओं को सुमरिन करता है। इसके बाद दोषी भरे हुए लोटे के पानी में दो-दो जोड़ा धान के बीज छोड़ता है। जोड़ा बीजा छोड़ने के साथ ही दोषी बहन, चाची या फूफी में से किसी एक का नाम लेता है। धान के जोड़ा बीज छोड़ने और नाम लेने की अवधि में यदि पानी में जोड़ा बीज एक दूसरे से चिपक जाते हैं तो यह माना जाता है कि नाम ली गई बाई सुवासिन बन गई और यदि जोड़ा बीज पानी में अलग-अलग हो जाते हैं, तो सुवासिन न बनने का संकेत होता है। इस स्थिति में दोषी द्वारा पुनः यही क्रिया दोहराई जाती है। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को देखने के लिये गाँव के सयाने, पंच एवं आम लोग उपस्थित रहते हैं। यह अत्यंत जिज्ञासु एवं कौतुहलपूर्ण क्रिया होता है।

मांगरमाटी

मांगरमाटी लाने के लिये दोषी (बैगा) सुवासा-सुवासिन और गाँव की किशोरवय की लड़कियाँ जाती हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जो बाई सुवासिन चुनी जाती है, उसका पति स्वमेव सुवासा बन जाता है। मांगरमाटी लाने के लिये सुवासिन सिर पर जलता हुआ कलश रखती है और लड़कियों के साथ गाँव के बाहर जाती है। लड़कियाँ विवाह के गीत गाती चलती हैं। दोषी और सुवासा अपने साथ पूजा की सामग्री यथा-कंडा, सात जोड़ी चीला, नारियल, अगरबत्ती, होम लगाने हेतु शुद्ध घी, दारू आदि होती है। सब्बल से जमीन खोदते है। खोदी गई जमीन की पहली ढेली सुवासिन के आँचल में रखी जाती है। उसके बाद लड़कियाँ माटी को टोकनी या अपनी साड़ी के छोर में रखती हैं, और घर ले आती हैं। लड़कियाँ जाते-आते समय गारी, दादरा आदि गीत गाती हैं। इस प्रकार मांगरमाटी का दस्तूर सम्पन्न होता है।

मड़वा काटना

मड़वा काटने और खाम बनाने के लिये दोषी (बैगा) अपने साथ कुछ लड़कों को लेकर सायं लगभग तीन या चार बजे

घर से जंगल की ओर चले जाते हैं। साथ में पूजा की सामग्री यथा- कोरे सूत, पांच जोड़ी चीला, दो नारियल, अगरबत्ती, एक बोतल दारू, लोटे में पानी, कंडे में आग आदि रखते हैं। मड़वा छाने के लिये जंगल के कोई भी झाड़ की उगालें काटते हैं, किन्तु खाम केवल साल्हें झाड़ की डगाल से ही बनाया जाता है। इसलिये दोषी साल्हें झाड़ की ही पूजा करता है। होम-धूप, नारियल, अगरबत्ती, दारू आदि चढ़ाकर विधि-पूर्वक पूजा की जाती है। तत्पश्चात् डगालें काटकर घर ले आते हैं। घर में साल्हें झाड़ की डगाल का खाम बनाकर आँगन में गाड़ते हैं और बाकी डगालों से मड़वा छा दिया जाता है। तात्पर्य यह है कि सूरज ढलते-ढलते मड़वा और खाम गाड़ दिये जाते हैं।

हरदी कुचराई

गोंड जाति के विवाह संस्कार में हरदी कुचराई एक महत्त्वपूर्ण रस्म है। यह काम सुवासिन की अगुवाई में गाँव की सयानी औरतों, लड़कियों और दुल्हन के घर में उसकी सहेलियों के द्वारा सम्पन्न होता है। अर्थात् सयानी औरतें, लड़कियों एवं सहेलियों के द्वारा हरदी कुचरने का काम होता है। हल्दी कुचरने के पूर्व एक दस्तूर और होता है यथा-दो कलश में कोदों या धान भरा जाता है। कलश के ऊपर बड़ा दीया रखकर, तेल डालकर बाती जलाई जाती है। प्रत्येक कलश में गोबर की पतली लाईन बनाई जाती है। छापी गई इस लाईन में घुंघची दाना चिपकाये जाते हैं। इससे कलश सुन्दर लगने लगता है, क्योंकि घुंघची दाना में लाल और काला रंग होता है। इसी समय दूल्हे को नहलाकर तेल और हल्दी चढ़ाई जाती है।

खाम गड़ाने का काम बैगा और सुवासा करते हैं। सुवासा खाम गड़ाने के लिये गड्ढा करता है। गड्ढे में एक हल्दी की गाँठ, एक सेंघी सुपारी, पाँच या दस पैसा रखकर थोड़ी-सी दारू बैगा द्वारा छुपाई जाती है। इसके बाद बैगा देवी-देवताओं को सुमरता है। इसके साथ ही खाम को गाड़ दिया जाता है। इसी दिन पूरे गाँव को भोजन कराया जाता है।

मायना

दूसरे दिन भी दूल्हे को तेल, हल्दी चढ़ाई जाती है। मायना के दिन हरे मड़वा के नीचे खाम के पास चूल्हा बनाकर पूड़ी, साग, गोल आकार का मूठा, ठठरा आदि बनाये जाते हैं। खाम की पूजा की जाती है। इस सम्पूर्ण अवसर पर केवल दूल्हे के परिवार के लोग ही रहते हैं, क्योंकि जो पकवान मड़वा के नीचे बनाये जाते हैं, उन्हें खाने की मान्यता केवल परिवार के लोगों की ही होती है। इस दिन बड़ी खुशी मनाई जाती है और खूब नाच-गाना होता है। नाच-गाना रात भर चलता है। इसमें गाँव के लड़के-लड़कियाँ भी उत्साह के साथ भाग लेते हैं।

बारात

मायना के बाद तीसरे दिन बारात जाने की तैयारी होती है। सुबह से गाँव के कोटवार द्वारा गाँव में बारात का बुलौवा दिया जाता है। कोटवार गाँव के हर चौराहे, तिराहे या दोराहे पर खड़े होकर हांक लगाता है और कहता है कि फलां के घर से बारात जाने का बुलौवा है हो भाई। गाँव से 25-30 से लेकर 40-50 बाराती हो ही जाते हैं। लड़की वालों की परिस्थिति को देखते हुये कम या ज्यादा हो जाते हैं। बारातियों को घर से खाना खिलाकर ले जाते हैं तथा साथ में एक जून (समय) के भोजन की पूरी कच्ची सामग्री भी ले जाई जाती है।

बारात प्रस्थान करने के पहले दूल्हे को नहला-धुलाकर पोशाक पहनाई जाती है। पोशाक पहनाने का काम दोषी और सुवासा करते हैं। दूल्हे की पोषाक बड़ी आकर्षक होती है। दूल्हे की पोशाक और श्रृँगार पूर्ण रूप से परम्परागत होते हैं। हल्दी से रंगी हुई जामा-धोती जिसे पियरी धोती कहते हैं। सफेद झंगा, कमर कसना, सफेद-पीले रंग का फेंटा (साफा), फेंटा पर बांस की नेर से बनी मौर, गले में सुतिया, हमेल, आँख में काजल। दूल्हे का श्रृँगार सुवासा करता है, जिसे नेग के रूप में नगद राशि, जेवर या कोई बड़ा उपहार मिलता है। बगल में कटार और हाथ में सरौंता होता है। दूल्हा हाथ में बाँस का बिजना भी पकड़ता है। पूरा श्रृँगार करने के बाद दूल्हा अपनी कुलदेवी की पूजा करता है। घर से बाहर फाटक में थोड़ा नेग होता है। दूल्हे की माँ थाली में बताशा और लोटे में पानी रखकर खिलाती-पिलाती है। दीया, राई और नमक से नजर उतारती है। इसी समय लड़कियाँ गारी गीत गाने लगती हैं। यह नेग पड़ोस के 2-3 घरों में भी होता है। इसके साथ ही सुवासा दूल्हे को गोद में उठाकर घोड़े पर बिठाता है। बारात नगाड़ों के टंकारों के साथ प्रस्थान करती है। बारात में

बूढ़े, बच्चे, लड़कियाँ, लड़के, औरत, मर्द आदि सभी वर्ग के लोग रहते हैं। बारात पैदल ही रवाना होती है। औरतें रास्ते भर बिरहा, कहरवा, गारी आदि गीत गाती चलती हैं।

बारात दुल्ही के गाँव पहुँचकर गाँव के गिंवड़े या खिरखाडांड़ में डेरा डाल देती है। दुल्ही के घर खबर देने के लिये एक व्यक्ति हाथ में झाड़ की डगाल लेकर जाता है, जिसे वह दुल्ही के मड़वा पर डालता है। इस व्यक्ति को 'मिष्टया' कहते हैं। मिष्टया की आवभगत होती है। सूचना मिलने के बाद घर-गाँव के लोग घड़ों में पानी लेकर आते हैं और सभी बारातियों को पानी पिलाते हैं। इसी बीच बारात लेने की तैयारी होती है, जिसे 'अगवानी' कहते हैं। अगवानी में लड़की वालों की तरफ से सुपारी, पान, बीड़ी, तम्बाखू और दारू लाई जाती है। जो जिस लायक होता है उसी के अनुसार स्वागत किया जाता है। बारात को सम्मान के साथ जनवासे में पहुँचाया जाता है। आतिशबाजी चलाई जाती है। जनवासा जाते समय दोनों तरफ के सुवासिन कलसा जलाकर सिर पर रखकर झुण्ड के आगे-आगे चलती हैं। इस समय औरतें गारी गाती हैं। बारात जनवासे पहुँचती है, तब दोनों समधी सुपारी छिटक कर और सुपारी खिलाकर एक दूसरे के गले मिलते हैं, भेंट-भलाई करते हैं। गाँव वाले और बाराती जन भेंट-भलाई करते हैं। नगाड़े बजते हैं और उत्साही जन नाचना-गाना शुरू कर देते हैं। इसी समय दोनों सुवासिन एक दूसरे के कलश में सवा रूपया डालकर भेंट भलाई करते हैं। कोटवार अगवानी (आतिशबाजी) चलवाता है। बारात शादी वाले घर के लिये रवाना होती है। मड़वा (मण्डप) के पास पहुँचकर दूल्हा मड़वा मारता है। दुल्ही की माँ दूल्हा को बताशा खिलाकर मुँह मीठा करती है। पानी से कुल्ला कराती है। दूल्हा अड़ जाता है, बताशा नहीं खाता है, इस समय लड़कियाँ गारी गाती हैं। हँसी-मजाक करती हैं। तब दुल्हन का छोटा भाई एक लोटे में पानी रखकर मड़वा के ऊपर बैठा रहता है। जैसे ही दूल्हा मड़वा पर बिजना फेंकता है, दुल्हन का छोटा भाई लोटे के पानी को दूल्हे के ऊपर गिरा देता है, तब दूल्हा उस लड़के को सवा रूपया देता है। यह नेग करने के बाद दूल्हा और बाराती जनवासे में चले जाते हैं। सुवासा हर पल दूल्हे के साथ रहता है।

जनवासे में पहुँचते ही गाँव के लड़के गुंड में पानी लेकर पहुँचते हैं। बारातियों के पाँव धुलाते हैं और नगाड़ों की तान पर नाचते हैं। तब दूल्हे का पिता लड़कों को नेग स्वरूप नगद राशि देता है, लड़के चले जाते हैं। अब दुल्ही की माँ दूल्हे को रोटी खिलाने आती है। साथ में कुछ लड़कियाँ मर्दों के वेश में आती हैं, इन्हें बाबा कहते हैं। सुवासिन कलश रखकर आगे-आगे आती हैं। पीछे लड़कों के भेष में जो लड़कियाँ रहती हैं, उनके हाथों में मूसर, बेलन, टेढ़ी लकड़ी, टोकनी में राख आदि रहती है। दूल्हा जब रोटी खाता है तो लड़कों के भेष में ये लड़कियाँ बारातियों की छेड़-छाड़ करती हैं, तब बाराती इनका नेग चुकाते हैं। नेग लेने के बाद ये लड़कियाँ खूब नाचती हैं, गारी गाती हैं और हँसी-मजाक करती हैं। दूल्हे के तरफ से भी दुल्ही को रोटी खिलाने के लिये जाते हैं। दूल्हे की माँ साथ में दो-चार लड़कियों को लेकर रोटी खिलाने के लिये दुल्ही के घर जाती है। खबर लगते ही दुल्ही की सहेलियाँ दुल्ही को छिपा देती हैं। दूल्हे की माँ ढूँढती है। जब नहीं मिलती तो नेग स्वरूप दूल्हे की माँ सवा रूपया देती है। अब सहेलियाँ दूल्ही को चौका (पटा) में बैठा देती हैं। परन्तु दूल्ही भी रोटी नहीं खाती, तब सास बिछिया, खुटिया या मुंदरी देती है।

चढ़ाव का सामान सौंपना

चढ़ाव का समान दूल्हे का बाप हरे मड़वा के नीचे चार पंचों के सामने रखता है। सामान देखने के लिये दोनों पक्ष के लोग उपस्थित रहते हैं। सबकी उत्सुकता रहती है कि लड़की के लिये क्या सामान आया है। लड़के (दूल्हा) का पिता एक-एक करके सामान (जेवरात) सामने रखता है, यथा-पायल, बिंदिया, खुटिया, कर्णफूल, ढारें, करधन, बखौरा, टोरड़, बहुंटा, (कई लोग सामर्थ्य के अनुसार ले जाते हैं) लाखें, चुरिया, ककई, टिकली, बूंदा, काजल, फुंदरा आदि। सारे जेवरात सामान को टोकनी में रखकर दुल्ही के हाथ में दिया जाता है। सामान, जेवरात लेकर दुल्ही अंदर चली जाती है, इसके बाद सुवासिन और सहेलियाँ दुल्ही को नहलाकर उसका श्रृँगार करती है। इसी समय हरे मड़वा के नीचे पंच लोग दोनों समधियों से दो बोतल दारू की माँग करते हैं। पंच दारू पीते हैं और दोषी (बैगा) भांवर की तैयारी करता है।

भांवर

भांवर विवाह रीति क्षणों का महत्त्वपूर्ण अंग है। भांवर ही वह सबूत है जो दो अनजानी आत्माओं को जीवन भर के लिये जीवन साथी के बंधन में बाँध देती है। भांवर की गांठ जिंदगी की

गांठ होती है। सुवासा-सुवासिन चौका से दो कलश मड़वा के नीचे लाकर खाम के पास रख देते हैं। नगाड़ा बाजगिरों को भांवर बाजा बजाने के लिये कहा जाता है। बैगा दूल्हा-दुल्ही के गांठ जोड़कर मंत्र पढ़ता है। सुवासिन लोटे में पानी लेकर आगे-आगे सींचते चलती है। पीछे-पीछे दूल्हा-दुल्ही चलते हैं। डिहरी के पास आकर सुवासिन ठहर जाती है, क्योंकि पूरी शादी भर काम करती है, अत: उसका नेग-दस्तूर चाहिये। तब दूल्हे का बाप एक धुतिया और कुछ नगद राशि सुवासिन के मूड़ में रखता है। सुवासिन खुश हो जाती है और पानी सींचते हुये दूल्हा-दुल्ही को मड़वा के नीचे बैठाती है। अब भांवर होती है। खाम के दाहिने ओर से पाँच या सात भांवर फिराते हैं। भांवर में दूल्हा आगे और दुल्हन पीछे रहती है। भांवर लड़की के माता-पिता नहीं देखते कहीं आड़ में चले जाते हैं।

पाँव पखराई

इसे मुँहजोना या पाँव पूजना भी कहते हैं। पाँव पखराई में पहले लड़की के माता-पिता, भाई-बंद, नाते-रिश्तेदार पाँव पूजते हैं। बाद में परिवार के अन्य लोग, गाँव-बस्ती वाले और अन्य न्योताहर पाँव पूजते हैं। दुल्ही की माँ, बहन, चाची, फुआ वगैरह मूँगफली, बताशा, चिल्हर पैसा, छुईमाटी-महुवा मिलाकर दूल्हा-दुल्ही के ऊपर से (न्योछावर कर) फेंकते हैं। इसके बाद खाम के चक्कर लगाकर दूल्हा-दुल्ही दौड़कर घर के अंदर जाते हैं, लेकिन डेहरी में दुल्ही की बहन रोक लेती है, तब दूल्हा उसे सवा रूपया नेग देता है।

घर-परिवार, गाँव और नाते-रिश्तेदारों से उपहार में जो सामान, नगद राशि, कपड़ा, बर्तन आदि मिलते हैं, उन्हें दुल्ही का बाप चार पंचों के सामने लड़के के पिता (समधी) को सौंप देता है। दूल्हे का पंच नेग के लिये अपनी खुशी से कुछ राशि गाँव के मुखिया को देता है। दहेज में जो भी मिलता है, वह लड़के-लड़की की गृहस्थी के नाम से मिलता है। दहेज सौंपने के बाद हरे मड़वा के नीचे बारातियों और दूल्हे को भोजन कराया जाता है। यहाँ भी दूल्हा नहीं खाता है, तब सास दूल्हे को नेग के रूप में घड़ी, छल्ला आदि देकर कहती है- 'खा ले बेटा'। भोजन के समय लड़कियाँ गारी गीत गाती हैं। भोजन के बाद मड़वा के नीचे हरदवानी की रस्म की जाती है।

हरदवानी

भोजन के बाद हरे मड़वा के नीचे बड़ी ही सुंदर आदिम संस्कृति की प्रतीक हरदवानी रस्म की जाती है। इस रस्म में दोनों तरफ समधी-समधन के गले में एक पोटली बाँधी जाती है। इस पोटली में हल्दी की 5 या 7 गांठें, कुछ सिक्के, सुपारी सेंघी, घुंघची के दाने आदि बाँधे जाते हैं। इस तरह चार पोटली बनाई जाती है। पोटली गले में बाँधने के बाद समधी-समधी, समधन-समधन एक दूसरे को गुलाल लगाते हैं और सुपारी खिलाते हैं। फिर भेंट-भलाई करते हैं। शादी के दौरान की यह आखिरी भेंट-भलाई होती है। इसके बाद विदाई की तैयारी की जाती है।

विदाई

विदाई किसी भी बेटी के लिये बड़ा ही मार्मिक क्षण होता है। इन क्षणों में प्राय: आँखें नम और चेहरे मायूस रहते हैं। विदा के समय गाँव, घर के सभी लड़के-लड़कियाँ, दुल्ही की सहेलियाँ, सयाने आदि मड़वा के नीचे व आसपास उपस्थित रहते हैं। दुल्ही को सुवासा गोद में उठाकर घर से बाहर लाकर मड़वा के नीचे खड़ा कर देता है। यहाँ पर दुल्ही अपने माता-पिता, चाचा-चाची, मामा-मामी, भाई -बहिन, सहेलियों आदि को सुपारी खिलाती है। सभी रो-रो कर दुल्ही को एक-एक रूपया, आठ आना आदि देकर पाँव छूते हैं। चूमते हैं, गले से लगाते हैं। दुल्ही रोते हुए सबको राम-राम कहती है। दूल्हा भी दुल्ही के माता-पिता, सभी रिश्तेदार, गाँव के सयाने व गाँव के लोगों को सुपारी खिलाता है। दूल्हे को भी सभी रूपया, आठ आना देकर भेंट-भलाई करते हैं, राम-राम कहते हैं। दुल्ही का भाई घोड़े की लगाम पकड़ लेता है, तब दूल्हा द्वारा सुपारी देने की प्रथा हैं, कहते हैं कि इससे वंशवृद्धि होती है। वधू को लेकर बारात घर लौटती है। सबसे पहले दूल्हे की बहन लौटती बारात का स्वागत करती है।

बाराती विदा लेकर वापस गाँव आते हैं। बारात पैदल ही आती है। रास्ते भर महिलायें लोकगीत गाती चलती हैं, जिससे खुशी झलकती है और रास्ते की थकान भी महसूस नहीं होती है। नगाड़े रास्ते भर टिकोरा देते चलते हैं। बारात अपने गाँव पहुँचकर गाँव के गिंवड़े या खिरखाडांड़ में रूक कर पड़ाव डालती है। सूचना मिलने पर घर से लड़कियों का झुंड सिर पर कलश रखकर दूल्हा-दुल्हन को लेने विवाह के गीत गाते हुए आती हैं।

इनके साथ पूरी बारात घर आती है। फाटक पर पहुँचकर दूल्हा की माँ दूल्हा-दुल्ही के सिर से मसूर और रेही (दही की मथनी) घुमाकर फेंकती है। बताशा खिलाकर मुँह मीठा करती है। फाटक से डेहरी तक चादर आदि बिछाया जाता है। दूल्हे-दुल्ही उसी चादर पर पैर रखकर घर में प्रवेश करते हैं। इसके बाद कोटवार गाँव में दहेज का बुलावा देता है। यहाँ पर भी सुवासिन दूल्हे-दुल्हन की गांठ जोड़ कर पानी सींचते हुए दूल्हा-दुल्हन को मड़वा के नीचे लाकर बैठाती है। घर, गाँव के लोग, नाते-रिश्तेदार, सखा-सहेली आदि जिससे जो बनता है, दूल्हा-दुल्हन को देते हैं। बड़े-बूढ़े आशीर्वाद देते हैं। इसी समय मड़वा के नीचे दूल्हा-दुल्ही के कंकन छोड़े जाते हैं। दूल्हा का कंकन दुल्ही और दुल्ही का कंकन दूल्हा छोड़ता है। इसके बाद दूल्हा-दुल्ही को नहलाने के लिये नदी या तालाब पर ले जाते हैं। यहाँ पर लोटा खेला जाता है। सुवासा लोटा को पानी में डाल देता है। दुल्हा और दूल्ही पानी में लोटा ढूँढते हैं। ऐसी मान्यता है कि जो लोटा ढूँढ लेता है, वह जीवन भर न ढूँढ पाने वाले पर भारी रहता है।

बच्चुन का नेग

बच्चुन का अर्थ सुखमादी होता है। अर्थात् सुखमय जीवन व्यतीत होना। लोटा ढूँढने के बाद दूल्हा-दुल्ही नहाकर धार की पूजा करते हैं और सभी घर वापस आ जाते हैं। घर आकर बच्चुन (सुखमादी) का नेग होता है। गाँव के लोग हर घर से एक-एक बोतल दारू, दो पायली चावल, दाल, नमक-मिर्च, हल्दी-तेल, बीड़ी, तमाखू आदि लाते हैं। दूल्हे का पिता चार-पाँच बोतल दारू देता है। पूरे गाँव के लिये खाना बनता है, जिसे भोज कहते हैं। खूब खाना, पीना होता है। सभी लोग दूल्हा और उसके पिता को बधाई देते हुए अपने-अपने घर चले जाते हैं।

डेहरी रौंदाने का नेग

विवाह सम्पन्न होने के आठ दिन बाद लड़के का पिता दूल्हा-दुल्ही और गाँव के दो-चार सयानों को लेकर लड़की के घर जाते हैं। साथ में एक-दो बोतल दारू, चावल, दाल आदि ले जाते हैं। वहाँ इनकी आवभगत होती है। होम-धूप, पूजा आदि करके सुवासा लड़का-लड़की को घर की डेहरी में तीन बार अंदर-बाहर करता है। इस नेग के सम्पन्न होने के बाद से ही लड़का-लड़की का ससुराल-मायका में आना-जाना चालू हो जाता है। डेहरी का नेग होने के बाद दोनों तरफ के मड़वा को उजाड़ दिया जाता है। इस तरह गोंड जनजाति में विवाह संस्कार के रीति-रिवाज सम्पन्न होते हैं।

गोण्ड विवाह परम्पराएँ एवं लोकाचार

डॉ. प्रभा पहारिया

विवेक से वैभव होता है। वैभव से संस्कृति पनपती है। विवेक, वैभव, संस्कृति, अनुशासन ऐसी कोई भी मनोवृत्ति धन से नहीं खरीदी जा सकती। ये मनोवृत्तियाँ पूर्वजों के संस्कार से आती हैं। कई विदेशों में धन है, पर संस्कृति नहीं। दो-तीन सौ वर्षों में धनवान हो गये पर संस्कृति नहीं आ पाई। गोंड जनजाति के लोगों में धन नहीं है पर संस्कृति अभी भी है। रानी दुर्गावती की पराजय के बाद से 400 वर्षों में संस्कृति नहीं बिगड़ पाई। गोंडों ने आज भी उसे संजोकर रखा है।

गोड मूलत: तेलगू द्रविड भाषा का शब्द है जो कोण्ड का अपभ्रंश है, तेलगू भाषा में कोण्ड शब्द का अर्थ 'पेड़-पौधों से आच्छादित पर्वत' है, अर्थात् गोंड पर्वतों में निवास करने वाली जनजाति है। गोंड भारत की जनसंख्या की दृष्टि से सबसे बड़ी और समृद्ध जनजाति है। प्राचीनकाल में गोंड साम्राज्य छिंदवाड़ा, मण्डला, चांदा, आदिलाबाद, वारंगल और मध्य प्रांत तक फैला हुआ था। छिंदवाड़ा का देवगढ़ राजवंश वारगल का खेरला राजवंश, मण्डला का दुर्गावती राजवंश समृद्ध राज्य थे। वर्तमान में गोंड जनजाति मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ में फैली हुई है।

गोंड शब्द का वर्णन चन्दकवि के 'पृथ्वीराज रासो' में मिलता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी गोंड शब्द का प्रयोग किया है-

गोंड गंवार नृपाल महि, जगन महामहिपाल।
साम ने दान न भेद कछु केवल दण्ड कराल।।

उपजातियाँ

गोंडों के सर्वाधिक प्रचलित गोत्र मरकाम, नेताम और रेकाम है, जो अनेक उपविभागों में बँटी हुई है।

1. राजगोंड – यह एक पदवी है जो व्यवहारिक रूप से गोंडों की भूस्वामी उपशाखा के लिए जानी जाती है।
2. कोटिल्य गोंड – गोंड की यह उपजाति हिन्दू समुदायों के समान जीवन व्यतीत करती है।
3. रघुवाल गोंड – मध्यप्रदेश के छिंदवाड़ा जिले के कृषक रघुवाल गोंड कहलाते हैं।
4. पांडल गोंड– राजगोंड के पुरोहित पांडल गोंड कहलाते हैं।
5. ओजयाल गोंड – गोंडों की यह उपजाति वृहत्तर गोंडों का गुणगान करती है।
6. धोली गोंड – धोली गोंड वैवाहिक अवसरों पर ढोल बजाने का काम करते हैं।
7. थारेयाल गोंड – ये टोकरी बनाते हैं एवं जड़ी–बूटी एकत्र करते हैं।
8. मारिया गोंड – छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र के निवासी मारिया गोंड कहलाते हैं।
9. मुरिया गोंड – ये घोटुल (युवा ग्रहों) का निर्माण करते हैं।
10. राम नवासी गोंड– गोंडों की यह उपजाति अभी भी पिछड़ी हुई अवस्था में है।

गोंड समाज में नारी की स्थिति

गोंड समाज में नारी न पुरुष पर आश्रित रहती है और न पुरुष पर वजन होती है। नारी परिश्रम करती है, उसका तिरस्कार नहीं होता। पुरुष के बराबरी के पद पर मानी जाती है। घर–गृहस्थी का सब काम करती है। पुरुष के लिए खेत में भोजन तथा पीने का पानी ले जाती है। नारी ही शिशु का पालन करती है। नित्य के कार्य हैं– कुठिया से धान, कोंदो, मक्का, गेहूँ आदि खड़ा अन्न निकाल कर, दलकर, कूटकर, पीसकर अन्न को तैयार करना और फिर भोजन बनाना। फसल के दिनों में साप्ताहिक बाजार या वार्षिक मड़ई के अवसर पर नारी पति के साथ जाती है। आनन्द में शामिल होती है।

लाल धैला के पानी ला कौआ जुठारे।
नगनाचन डॉको ला डंडा सुधारे।।

गोंड नारियों में भी संतान की प्रबल इच्छा रहती है। गोंड नारी अपने मासिक धर्म के समय किसी के भी सामने नहीं आती। मुहावरा है कि 'मूड मेली है।' गोंडों में बहू और जेठ (उत्तरप्रदेश के भयोह) का बहुत परहेज मानते है। गर्भावस्था में गर्भिणी को चावल का पेस्ट और उड़द की दाल दी जाती है। सन्तानोत्पत्ति के बाद कुदई देना आवश्यक है, क्योंकि कुदई गरम मानी जाती है। नारी सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है। कन्या का जन्म पुत्र की तरह ही उल्लासपूर्ण माना जाता है। पुत्र और पुत्री का समान रूप से पालन होता है।

गोंड पुरुष के लिए पत्नी अत्यन्त आवश्यक है। नारी पर पुरुष अत्याचार नहीं कर सकता है। नारी को अधिकार है कि बिरादरी के पंचों के सामने अपने पति की शिकायत कर सके। पति को नारी से घर–गृहस्थी के सब कामों में बहुत सहायता मिलती है। यह सहायता ही गोंड युवक के 'लमसिनाई' करने का और मुसीबतें झेलने का रहस्य है। इन मुसीबतों के चलते इनमें एक लोकोक्ति प्रचलित है–

गरीब की लुगाई, गांव भर की भोजाई।
जबर की लुगाई, गांव भर की काकी।।

अर्थात् गरीब की लुगाई से समूचा गाँव मसखरी करता है। और जबर की लुगाई को समूचा गाँव भय और श्रद्धा से देखता है। अपने सीधेपन के कारण गोंड लोग बहुत लूटे जाते है। लूट–खसोट का अच्छा वर्णन इस लोकगीत में है–

गांव में लूटै गांव गोंटिया, फरका में कोटवार।
बारी में पटवारी लूटै, जंगल में जमादार।।

वर्तमान समय में इन आदिवासियों के रहन –सहन, खान–पान में काफी परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। पहले इनके खान–पान में चावल का बना हुआ पतला पेय प्रमुख खाद्य पदार्थ होता था, परन्तु अब ये लोग भी शहरी सभ्यता के सम्पर्क में आकर शहर के लोगों की तरह अपना खानपान, रहन–सहन बना चुके हैं। महिलाएँ अब कृषि कार्य की जगह मौसमी फल–सब्जी बेचने का काम करती हैं। झूम खेती की जगह अब ये लोग स्थानांतरित खेती करते हैं। प्रकृति के हर स्थान जैसे नदी, टोरिया, पहाड़, झाड़–पेड़ नाला आदि में देवधामी की कल्पना करते हैं। गोंड लोग बहुदेवतावादी हैं। इनमें देवी–देवता अनेक हैं। इसमें बड़ा देव प्रमुख हैं। भैंसासुर, इल्हादेव, भैरोदेव, मरई माता, रातमाई, पृथ्वीमाता, शीतलामाता, खेरमाई, गंगाइन माई आदि प्रमुख देवी–देवता है।

घोटुल

गोंड जनजाति में युवाओं के प्रशिक्षण कि लिए घोटुल अर्थात् युवागृह की व्यवस्था है। चांदा और बस्तर में घोटुल का सर्वाधिक प्रचलन है। घोटुल गाँव के एक किनारे पर बना हुआ एक बड़ा घर या कमरा होता है। इसमें गाँव के सभी युवक 'चैलिक' और लड़की को 'मोटियारी' कहा जाता है। घोटुल में युवा इच्छा का मार्गदर्शन प्राप्त करते है और अपना जीवन साथी चुनते हैं। वे यहाँ पर रातभर नाचते गाते हैं। मुरिया घोटुल में यौन सम्बन्धों की छूट रहती है, जबकि अन्य घोटुल में इसकी मनाही है।

वैवाहिक परम्परायें

विवाह की रीति-देशकाल आर्थिक स्थिति पर निर्भर रहती है। विवाह के बजट में मुख्य खर्चों के मुद्दे- दारू, हरदी, बाजा, कुदई और बीड़ी है। गोंडी विवाह में दहेज का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। इस सम्बन्ध में लोकोक्ति प्रसिद्ध है-

कुटकी को पेज रांधे, माहुल को दोना।
गोंडी गोंडा व्याह हो गया, लेना न देना।

गोंडों में विवाह के जितने भी प्रकार हैं, सभी में समाज की स्वीकृति होती है। सब विवाहों में उत्पन्न संतान जायज संतान मानी जाती है। विवाह के कुछ प्रकार निम्नवत है -

लमसेना विवाह - लमसेना उस युवक को कहते हैं जो विवाह के लिये अपने ससुर की खेती में एक निश्चित समय तक के लिये मजदूरी करता है। सेवा की अवधि पूरी होने पर ससुर अपने खर्च से अपनी पुत्री का विवाह लमसेना के साथ कर देता है। लमसेना का विवाह हो जाने पर ससुर लमसेना दामाद के लिए एक कुड़ा कोदो बो देता है, जिसकी फसल दामाद की निजी संपत्ति होती है। इस फसल को बुवारा का अन्न कहते हैं।

सामूहिक विवाह - गोंडों में सामूहिक विवाह भी होते हैं। कहीं विवाह आयोजन हुआ तो कई जोड़े वहाँ इकट्ठा होकर अपना परस्पर विवाह भी कर डालते हैं। एक ही विवाह मण्डप में कई जोड़ों के विवाह को अनुचित नहीं माना जाता। जब तक हाडा में हरदी नहीं लग जाती, तब तक कौमार्य कायम रहता है।

सेवारी नेंगाना - सेंवारी नेंगाना शब्द का मूलरूप 'स्वयंवर का नेग करना' यह ही हो सकता है। इसमें वधू एक लोटा पानी में पिसी हल्दी घोलकर पुरुष के ऊपर उड़ेल देती है और उस पुरुष के पीछे बैठ जाती है। सेंवारी नेंगाना की विधि पूरी हो गई।

आंटो-सांटो विवाह - इसमें दो कुटुम्बों में लड़के और लड़कियाँ हैं, तब दोनों में विवाह सम्बन्ध स्थिर हो गये हैं। एक-दूसरे को लड़के व लड़कियाँ देकर विवाह करते हैं।

चढ़ विवाह - जिस प्रकार के विवाह में कन्या की बारात वर के घर में जाती है और वर के घर में ही विवाह की सब विधियाँ पूरी होती है, वह विवाह भी समाज द्वारा मान्य होता है। बिहार की 'हो' जनजाति में आनादेर विवाह भी प्रचलित है, इसमें कन्या अपने पति के घर जबरदस्ती चली जाती है, वहाँ उसका बहुत अनादर होता है।

बहुपत्नी प्रथा - गोंडों की बहुपत्नी प्रथा धनवानों तक सीमित है। अनेक पत्नियाँ होने से खेती के काम में मजदूरी भी बच जाती है। भोजन-वस्त्र में काम चल जाता है। विवाह के अवसर पर गोंडी लोकगीतों में समधिन के स्वागत में जो गीत मण्डला व ब्रम्हनी क्षेत्र में गाये जाते हैं, वो निम्न हैं-

टूटी मड़इया में कभू नहीं आयेते, हमारी राम राम लो
पलंग नहीं बिछाये ते कभू नहीं आये ते हमारी राम राम लो।
टूटी मड़इया में खाना पकाओ, कभू नहिं खाये ते,
टूटी मड़इया में बिरिया लगाओं कभू नहिं चाबेते।
टूटी मड़इया में सिजिया बिछाओ कभू नहीं सोये ते।
टूटी मड़इया में कभू नहिं आये ते हमारी राम राम जो।

ब्याह में गारी

मंडला जिले में भड़ौनी गीतों में बीच-बीच में करमा या ददरिया के बोल ठूसे जाते हैं। कुछ गीतों के बोल निम्न हैं-

गोरी के अंगना में एक पेड़ नीम का,
गोरी जात है पठौनी गिनत रहब दिन।
तोर मोर बोली जगत जानी,
टचरा में झुकाये जे आमा चानो।
पान रे खा के फुरक डारे,
बदनामी ला करके बिसर डारे।

चले आबे अलबेला परत झुलकी,
चना की भाजी टोरे ला फुरकी।
सास गइन है हंटरी, ससुर गईस खेत है,
सूनाघर में चिरैया भराये लये पेट।
महतारी के गुन ला सीखे बिटिया,
हाथ जोर के बुलावे, आपन कुरिया।

यह भड़ौनी नैनपुर क्षेत्र से प्राप्त हुई-

ए नवा रंगीलो, विजना ले दे।
ले दे हवलदार, विजना ले दे।
उसकी जोरू को मारो, हवलदार विजना ले दे।
ए नवा रंगीलो विजना दे दे।

भूतप्रेत की परम्परा - गोंडों में भूत-प्रेत मनाने की प्रथा है। गोंड जाति में पुनर्जन्म मानते हैं। ऐसी मान्यता है कि मृतक अपने ही कुटुम्ब में जन्म लेता है। अच्छे पुरुष देवत्व प्राप्त कर लेते हैं, तथा खराब पुरुष और पापी स्त्रियाँ भूत-प्रेत और चुड़ेल होते हैं उनसे आत्मरक्षा करनी पड़ती है। शेक्सपीयर के प्रसिद्ध 'हेमलेट' की कथा भूत-प्रेत पर आधारित है।

माहुलिया- माहुलिया छोटी लड़कियों का खेल हैं वर्षा के अन्त में खेला जाता है। खेलने वाली लड़कियाँ 7-8 वर्ष से लेकर 13-14 वर्ष तक की होती है। माहुलिया का डाल लेकर बालक आगे चलता है और सब लड़कियाँ उसके पीछे चलती हैं। वे किसी जलाशय में जाकर उस डाल को सिराती है। लड़कियाँ जो गीत गाती है उसके बोल है-

माहुलिया को दोई दोई कान, छिटक गोरी माहुलिया।।

इस खेल का उद्देश्य यह है कि कंटकमय जीवन को कुसुममय बनाना ही मनुष्य के जीवन की सफलता है। इस छोटे से खेल में मानव जीवन का बहुत ऊँचा रहस्य छिपा हुआ है।

मनोरंजन - सभी आदिवासियों में मनोरंजन के तरीके-संगीत, नृत्य, होड़ाहोड़ी, मसखरी इत्यादि होते हैं। सामूहिक आमोद-प्रमोद में करमा नृत्य प्रधान है,संगीत का नाम भी करमा है। करमा नृत्य में दो बातें ध्यान में रखनी पड़ती है एक तो तुकबंदी करके विपक्षी को तुरंत जवाब देना, दूसरा नृत्य की पद चपलता। युधिष्ठिर और द्रोपदी की तरह औरतें भी हार-जीत की संपत्ति मानी जाती थी। केवल पुरुषों का भी नृत्य होता है, जिसको सैला कहते है। सैला नृत्य में नृत्य कम कवायद अधिक रहती है। केवल स्त्रियों का भी एक नृत्य होता है जिसे 'रीना' कहते हैं।

मण्डला के इन गोंडों का बाजा भी अलग तरह का होता है। इनका प्राचीन बाजा भैंसा का सींग है, सींग केवल फूँक से बजता है, सबसे अधिक प्रचलित बाजा मांदर है।

करमा

1. *ओ हो राम रे*
   दार रांध्यों भात रांध्यो ऊपर घिव ढरकायो,
   खात खनी सुरता आवै, आपन जोड़ी रे,
   भजावन पी हा रे।

2. *कांधे खुमरी टांगे रावन, जेसी गीत गावे*
   उहां लेके करमा गवात्यों, कंहू काम न करातो रे।
   भजावन पी हा रे।।

झूमर

झूल के मजा जा कही पावे। आमा के चानी, झूल के मजा ला कहां पावे।
तन्ता तत्ता नागर जोते, तात कलेवा खाव।
तरिया (तलईया) के तीर में ठाड़े नौनी,
आपन मन मुसकाये आमा के चानी।
बड़ें बिहिनिया बेला लेके, नागर जोतन जाए,
नरवा के तीर मा ठाढ़े बावू,
केला गोहरायेगा आमा के चानी।

कोरकू विवाह : परंपरा और अनुष्ठान

डॉ. धर्मेन्द्र पारे

संसार की समस्त जातियों में तीन संस्कार जन्म, मरण और वरण संस्कार अवश्य होते हैं। विवाह मनुष्य की जननिक आवश्यकताओं के अलावा समुदाय में एक व्यवस्था और अनुशासन के लिए भी आवश्यक है। विवाह का इतिहास कितना पुराना है, यह कह पाना मुश्किल है, किन्तु मनुष्य जाति के इतिहास की प्रारंभिक अवस्था से ही यह प्रचलन में आ गया होगा। समस्त प्राणियों में नर और मादा को एक दूसरे के साथ में रहने की नैसर्गिक भावना होती है। यौनिक रूप से मनुष्य में यह सातत्य सर्वाधिक है। यह तो स्पष्ट है ही कि परिवार-प्रथा मनुष्य में पहले आयी, उसके बाद विवाह-प्रथा का जन्म हुआ। कहा जाता है कि भारत में विवाह-प्रथा का प्रचलन महाभारत में वर्णित श्वेतकेतु द्वारा हुआ है। इस कथा से ही एक बात और स्पष्ट होती है कि श्वेतकेतु के माता-पिता बिना विवाह किये ही परिवार बनाकर साथ रह रहे थे। मनुष्य आदिम अवस्था से ही यौनाचार में संलग्न था। मनुष्य की संतान को आत्मनिर्भर होने में समय लगता है, इसके लिए आवश्यक था कि एक अनुशासन की व्यवस्था बने। विवाह व्यवस्था इसी आवश्यकता की पूर्ति बनी। मनुष्य जाति में अबाध और स्वच्छंद यौनाचार का कहीं प्रमाण नहीं मिलता। हाँ, बहुगमन के अपवाद अवश्य मिलते हैं। आदिम जातियों में भी विवाह का कठोर अनुशासन प्रारंभ से रहा है। जनजातियों और हिन्दू समाज में अन्तर्विवाह की प्रथा रही है। अर्थात् अपनी जाति या समुदाय में ही विवाह। इसका उल्लंघन वर्जित रहा है। जनजातियों में अलग-अलग टोटेम या गोत्र में विवाह की प्रथा है। कोरकू जनजाति में भी सगोत्री विवाह वर्जित हैं।

वैवाहिक सम्बन्धों का इतिहास

कोरकू जनजाति की वैवाहिक परंपराओं ने अध्येयताओं का ध्यान अपनी ओर पहले से आकृष्ट कर लिया था, जिसमें वर्तमान

पिपलोद और पूर्व के सजनी गाँव के चौहान लोगों का गवलीगढ़ के कोरकू मुखिया परिवार से अन्तर्जातीय विवाह का विवरण मिलता है। इसी जगह आगे भी गवलीगढ़ और महादेव पहाड़ी अर्थात् पचमढ़ी के कोरकुओं के अन्तर्जातीय विवाह की बात बताई गई है। कोरकुओं की उपजाति 'मवासी' भी स्वयं को धार के पवार राजाओं का वंशज बताती है। कोरकू जनजाति की वैवाहिक रस्मों पर विस्तार से सर्वप्रथम रायबहादुर हीरालाल और आर.बी. रसेल ने सन् 1916 में प्रकाश डाला था। कोरकुओं की प्राचीन वैवाहिक परंपराओं में भी अब परिवर्तन आ रहा है। कोरकुओं में अब अपवाद स्वरूप ही विजातीय विवाह सम्बन्ध होते हैं। यदि कोरकू जनजाति के युवक या युवती ने विजातीय व्यक्ति से सम्बन्ध बना लिये तो लड़की के लिए सबसे सख्त सजा यह होती है कि वह हमेशा के लिए जाति से बहिष्कृत हो जाती है और कोरकू लड़के को उस युवती से सम्बन्ध विच्छेद करने पर 'चोखरा या सारनी' अर्थात् पवित्र होने के अनुष्ठान के द्वारा वापस जाति में मिला लिया जाता है।

धर्मशास्त्रों के अनुसार लड़कियों की पाँच अवस्थाओं में गणना की जाती है- प्रथम 'नग्निका' अर्थात् नग्नावस्था, द्वितीय को 'गौरी' अर्थात् आठ साल की लड़की, तृतीय को 'रोहिणी' अर्थात् नौ साल की लड़की, चतुर्थ को 'कन्या' अर्थात् दस साल की लड़की और पंचम को 'रजस्वला' अर्थात् दस साल से अधिक को लड़की कहा गया है। कोरकू जनजाति में बाल विवाह की प्रथा नहीं है। प्राय: लड़की के रजस्वला होने के पश्चात् ही लगभग सोलह-अठारह वर्ष की आयु तथा लड़के की अठारह-बीस वर्ष की आयु में विवाह किया जाता है।

रिश्ता तय होने की प्रक्रिया

वधू शब्द का अर्थ होता है, जिसे वहन करके लाया गया हो। प्राय: कोरकू जनजाति के एक परिवार का विस्तार होते -होते वह एक छोटा-सा 'ढाना' बन जाता है। सीधी-सी बात है कि एक कुल-गोत्र के लोग एक गाँव में ज्यादा होते हैं। सगोत्री विवाह नहीं होने के कारण वधू दूसरे गाँव से ही आती है। इस अर्थ में वधू शब्द अपनी सार्थकता साबित करता है। कोरकू जनजाति में वधू मूल्य की प्रथा अर्थात् वर के परिवार की ओर से वधू के परिवार को दहेज दिया जाता है। कोरकू भाषा में इसे 'गोनम' कहा जाता है। जब किसी परिवार में लड़का विवाह योग्य हो जाता है तो उसके परिजन अपने रिश्तेदारों में से दो व्यक्तियों को वधू ढूँढने के लिए नियुक्त करते हैं। मध्यस्थता और वधू खोजने के इस कार्य को 'चिथोड्या बैठाना' कहा जाता है। वधू खोजने की यह क्रिया 'बालि-ढूँढना' कहलाता है। 'चिथोड्या बैठाने' की यह रीति लगता है ऋग्वेद के पश्चात् की वैदिक व्यवस्था से आयी है। वहाँ 'दिधिषु' नाम के प्रतिनिधि द्वारा विवाह के सम्बन्ध तय होते थे। मध्य और उत्तर भारत में पिछले दशक तक जिस प्रकार वर पक्ष की 'अकड़' सामने आती थी, लगभग कुछ वैसी ही स्थिति कोरकू जनजाति में वधू पक्ष की होती है। 'चिथोड्या' में जिस व्यक्ति को नियुक्त किया जाता है, वह वर के पिता की ओर से लड़की के पिता से रिश्ता तय करने के लिए अनुरोध करता है। लड़की का पिता प्राय: प्रथम बार में तो इंकार ही करता है। कई बार की मान मनौवल के बाद बात जमती है। जब लड़की के पिता की ओर से सहमति प्राप्त हो जाती है, तब लड़के के पिता और रिश्तेदार रिश्ता तय करने वहाँ पहुँचकर 'गोनम' अर्थात् वधू मूल्य तय करते हैं, जिसमें बैल, अनाज और नगद राशि की बात होती है। यह सारी सामग्री व्यक्ति की हैसियत के अनुसार ही तय होती है। विवाह के पूर्व इस राशि को दिया जाता है। कुछ राशि या सामग्री विवाह के बाद भी दी जा सकती है, किन्तु यह राशि न चुकाने पर लड़की का पिता लड़की को वापस भी ले जा सकता है। विवाह के निम्न प्रकार हैं-

गोनम विवाह - गोनम अर्थात् वधू मूल्य। चिथोड्या कहे जाने वाले मध्यस्थ और अभिभावकों की सहमति से तय विवाह गोनम विवाह कहलाता है। कोरकू जनजाति में सर्वाधिक विवाह इसी प्रकार होते हैं।

लमसेना विवाह - लमसेना विवाह में लड़के को लड़की के घर आकर पहले ससुर की सेवा करना होती है। लमसेना उस लड़के को कहा जाता है जो ससुर के घर आकर रहता है। ऐसा युवा प्राय: गरीब होते हैं जो गोनम अर्थात् वधू मूल्य देने की स्थिति में नहीं होते हैं। दूसरी स्थिति में यदि लड़की का कोई भाई नहीं है तो भी कोरकू जाति में लमसेना खोजा जाता है। लमसेना बनकर लड़की के घर आये युवा को पहले कठोर श्रम कर यह सिद्ध करना होता है कि वह सुयोग्य वर है। इस प्रथा में लगभग एक वर्ष तक लड़के को खेती-किसानी के सारे काम ससुराल में

रहकर करना होता है। कई बार लड़की पक्ष की महिलाएँ लमसेना की परीक्षा लेने के लिए उसे कठिनाई वाले कार्य सौंपती है, जैसे इमली या बबूल की गीली लकड़ी को फाड़ना। इस दौरान लड़के और लड़की के बीच में कोई दाम्पत्य रिश्ते नहीं होते। वर्ष भर बाद सामाजिक उपस्थिति में दोनों का विधिवत विवाह कर दिया जाता है।

पलायन विवाह – कोरकू जनजाति में लड़के-लड़की यदि स्वेच्छा से एक दूसरे को पसंद कर लें और परिवार वाले सहमत न हो तो वे किसी हाट-बाजार या मेले से भाग जाते हैं। भागकर किसी रिश्तेदार के यहाँ छुप जाते हैं। अभिभावकों द्वारा खोजने पर कुछ वाद-विवाद और झगड़े के पश्चात् सामाजिक मध्यस्थता से यह विवाह सम्पन्न हो जाता है। ऐसे विवाहों में यदि लड़की का पूर्व में कहीं रिश्ता हो चुका है तो वधू मूल्य बहुत अधिक चुकाना पड़ता है। कोरकू जाति में विवाह की यह पद्धति आम है।

घर घुस्सी विवाह – यदि कोई लड़का किसी लड़की से प्रणय सम्बन्ध के दौरान यौनाचार कर लेता है और फिर शादी से इंकार करता है तो कभी-कभी कोई लड़की साहस दिखाते हुए उस लड़के के घर पहुँच जाती है और बलात वहाँ रहने लगती है। ऐसे विवाह बहुत ही कम देखने-सुनने में आते हैं।

पाटो ब्याव – पाटो ब्याव किसी विवाहित स्त्री के पुनर्विवाह को कहा जाता है। यदि स्त्री विधवा हो गई है और वह किसी अन्य पुरुष से विवाह करती है अथवा पति के रहते हुए वह किसी के साथ भाग जाती है। ऐसी स्थिति में नवीन पति पूर्व पति को वधू मूल्य चुकाता है। पति की मृत्यु हो जाने की स्थिति में कई बार स्त्री का उसके देवर से विवाह कर दिया जाता है। इस तरह के सभी विवाह पाटो ब्याव कहलाते हैं।

आटो-साटो ब्याव – इस प्रकार के विवाह में दो परिवार आपस में अपने लड़के-लड़कियों का विवाह कर लेते हैं। इसमें गोनम अर्थात् वधू मूल्य का आदान-प्रदान नहीं होता। केवल जाति और रिश्ते के लोगों को भोज दिया जाता है।

विवाह के इन प्रकारों के अलावा अब कोरकू जनजाति में कहीं-कहीं हिन्दुओं की पारंपरिक पद्धति से भी विवाह होने लगे हैं। इस प्रकार के विवाह में वधू मूल्य नहीं दिया जाता। इसके विपरीत लड़की को दहेज दिया जाने लगा है। यह सब तेजी से बदलते आर्थिक परिदृश्य और अन्य जातियों के संपर्क में आने के कारण हो रहा है।

विवाह अनुष्ठान– कोरकू जाति में विवाह के लिए अलग-अलग अंचलों में अलग-अलग दिन शुभ माने गये हैं। यदि लड़के के घर मंगलवार को मण्डप होगा, तो लड़की के घर बुधवार के दिन। सगाई के पश्चात् वर पक्ष द्वारा विवाह के पूर्व वधू पक्ष को निर्धारित की गई सामग्री पहुँचा दी जाती है। यह कार्य प्रायः लड़के के बड़े भाई या बहनोई द्वारा किया जाता है। लड़की को दी जाने वाली दहेज सामग्री सूर्यास्त के पूर्व पहुँचाना ठीक समझा जाता है। रात्रि में इसे अशुभ माना जाता है। कुछ ग्रामों में विवाह में 'खल मिट्टी' लाने की प्रथा भी देखी गई है। इस दिन गाँव के खेड़े पर स्थित देवताओं की भी पूजा की जाती है। इसी मिट्टी से चूल्हे बनाये जाते हैं, जिन पर विवाह का भोजन पकाया जाता है। इसके बाद गाँव के बीचोंबीच बने 'मुठवा देव' का पूजन किया जाता है। मण्डप के दिन कुछ रिश्तेदार जंगल में जाते हैं और वहाँ से पवित्र समझी जाने वाली 'सालई' वृक्ष तथा हरे-हरे बाँस को काटकर लाया जाता है। सालई वृक्ष न होने पर महुआ के वृक्ष को भी उपयोग में लिया जाता है। इन लकड़ियों को पीले चावल से पूजा जाता है। एक लकड़ी को मण्डप के बीचोंबीच गाड़ा जाता है। इस लकड़ी पर हल्दी का लेप लगाया जाता है। इस मण्डप में पाँच कुँवारी कन्याओं द्वारा चौक पूरे जाते हैं। इन चौक को 'मांदरा' कहा जाता है। मंडप के लिए खोदे जाने वाले गड्ढों में सुपारी-गुड़-पैसे इत्यादि डाले जाते हैं। मंडप में बाँस से लटकाकर एक झोली बाँधी जाती है। इस झोली में मिट्टी या कपड़े के दो पुतले रखे जाते हैं। इन पुतलों को विवाह पश्चात् वर-वधू आकर उतारते हैं। मण्डप बनने के बाद भोजन होता है। सायंकाल में 'दूल्हा बैठाने' की रस्म होती है। लकड़ी के एक पटे पर दूल्हे को बैठाया जाता है, फिर महिलाएँ गीत गाते हुए उसको हल्दी उबटन लगाती है। इसी दिन उसे कटार दे दी जाती है। दूल्हे की सहायता के लिए उससे कुछ कम उम्र के एक लड़के को नियुक्त किया जाता है, इसे 'गोमना' कहा जाता है। इसी प्रकार वधू की सहायता करने वाली लड़की 'गोमनी' कहलाती है। दूल्हा बारातियों के साथ बैलगाड़ियों से प्रस्थान

करता है। कोरकू जाति में स्त्रियाँ भी बारात में शामिल होती हैं। बारात लड़की के गाँव में रात्रि में पहुँचकर गाँव के बाहर कहीं रुक जाती है। 'चिथोड्या' बारात आगमन की सूचना पहुँचाते हैं। वधू पक्ष द्वारा वर पक्ष की किसी प्रकार से अगवानी नहीं की जाती। इस बीच दोनों पक्षों की ओर से गदली नृत्य किया जाता है। जब दूल्हा मण्डप में पहुँचता है, तब वधू पक्ष की ओर से उस पर पानी फेंका जाता है। इसके पश्चात् वधू पक्ष की महिलाएँ वर को भोजन कराने पहुँचती है। इस समय वर को छुपा लिया जाता है और कुछ हास-परिहास होता है। ऐसा ही वधू को भोजन कराते समय भी होता है। इसके बाद वर और वधू को रिश्तेदारों द्वारा गोद में या पीठ पर बैठाकर मण्डप में लाया जाता है। यहाँ मंडप की सात बार परिक्रमा करवाई जाती है। उपस्थित सामाजिक जन उन पर पीले चावल फेंकते जाते हैं। अगले दिन बारात विदा हो जाती है। घर पहुँचकर वर और वधू द्वारा गृह-देवता तथा मुठवा देव की पूजा की जाती है। इस दिन एक 'पाई' लेकर उसमें वर और वधू द्वारा अनाज भरा जाता है। इसे 'सीक' तक भरा जाता है। अनाज के बच जाने को शुभ समझा जाता है कि वधू के आने से घर में बरकत होगी। इसी दिन पूरे कुटुम्ब को भोजन कराकर विदा किया जाता है। अगले दिन दूल्हा और दुल्हन दोनों बाजार करने जाते हैं और फिर भोजन बनाकर परिवार को खिलाते हैं। इसी दिन से वे दाम्पत्य जीवन प्रारंभ करते हैं।

बैगा जनजाति में वैवाहिक संस्कार

डॉ.विजय चौरसिया

बैगा समाज में विवाह एक पवित्र बंधन माना जाता है। एक ही गोत्र में विवाह वर्जित है। एक गोत्र के लड़का-लड़की भाई-बहन होते हैं। परंतु मामा-बुआ के लड़का-लड़की में विवाह हो सकता है। पहला रिश्ता यहीं से शुरु होता है। इस जनजाति में कन्या या स्त्री को वर चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता दी जाती है। कन्या की इच्छा का सभी आदर करते हैं। इस जनजाति के लोग सोलह-सत्रह साल की लड़की को वयस्क मानते हैं। कन्या वर का चुनाव स्वयं करती है। विवाह से पूर्व कन्या की इच्छा से यौन सम्बन्ध जायज है। बैगा युवक-युवतियाँ इस मामले में परम सहिष्णु और उदार हैं। युवक-युवतियों को यौन-सम्बन्ध करने की सामाजिक स्वीकृति है। यौन सम्बन्ध कायम होने का मतलब है कि वे एक दूसरे के जीवन-साथी हो गये।

बैगा समुदाय का सामाजिक नियंत्रण इतना कसा हुआ है कि लड़का-लड़की अपने समाज से बाहर यौन सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकते। बैगा युवतियाँ सामूहिक नृत्यों में अपने जीवन साथी का चुनाव कर लेती हैं। हाट- बजारों में वे एक दूसरे को अच्छी तरह परख लेते हैं। बैगा समाज में छः विवाह पद्धति प्रचलित हैं। जिनमें चढ़ विवाह या मँगनी विवाह, प्रेम विवाह या ले भगा-ले भगी, उठवा विवाह, पैठुल विवाह, लमसेना विवाह, उधारिया विवाह प्रमुख हैं।

चढ़ विवाह- इस प्रथा में लड़के का पिता गाँव के कुछ सयाने व्यक्तियों को लेकर लड़की वालों के यहाँ पहुँचता है और घर से जाते समय दो बोतल महुआ की शराब जिसे यहाँ मद्य कहते हैं- ले जाते हैं। इसे रस्सी के सहारे कांधे पर लटका लेते हैं। परिवार के सदस्यों के साथ वर भी रहता है। वर पक्ष के सभी सदस्य वधू पक्ष वालों के घर पहुँचते हैं। आपस में मेल-मिलाप होता है। उसके बाद वर पक्ष के लोग आँगन में बैठ जाते हैं। वर पक्ष के पास शराब की दो बोतल देखकर वधू पक्ष के लोग समझ जाते हैं कि ये लोग शादी

का रिश्ता लेकर आये हैं, थोड़ी ही देर में गाँव के कुछ सयाने और नाते-रिश्तेदार एकत्र हो जाते हैं। वर का पिता कहता है- हमें प्यास लगी है, वधू पक्ष के लोग समझ जाते हैं कि ये लोग मँगनी करने आये हैं। यह कहकर वर पक्ष के लोग दो बोतल शराब सबके सामने रखते है। गाँव के सयाने या कन्या का पिता कहता है- पहले लड़की से पूछ लो, वर का पिता परिवार की महिलाओं के साथ कन्या से पूछता है। यदि कन्या 'मैं कुछ नहीं जानती मद्य पियो' कहती है तो इसका अर्थ है- लड़की की स्वीकृति नहीं है। ऐसी दशा में लड़के वाले तुरंत लौट जाते हैं। यदि लड़की कहती है 'मेरे से क्या पूछते हो मद्य पियो' का अर्थ है लड़की राजी है। तब वर का पिता प्रसन्न मुद्रा में बाहर निकलता है और दो बोतल शराब और निकालता है और दोनों परिवार के लोग मिलकर उस शराब को पीते हैं। इसे मँगनी की दारू कहते हैं। इसी समय सगाई की तिथि निश्चित की जाती है। तब कन्या का पिता कहता है कि पंदरवाही मंगलवार के दिन सगाई या टीवा खांदा लेकर आ जाओ। इसके बाद कन्या पक्ष के लोग वर पक्ष के लोगों को भोजन करवाते हैं। भोजन करने के बाद वर पक्ष के लोग अपने घर चले जाते हैं।

पन्द्रहवें दिन मंगलवार को वर पक्ष के परिवार के दस-बीस लोग वर के साथ कन्या पक्ष वालों के यहाँ सगाई करने पहुँचते हैं। वे अपने साथ दो टीन शराब लेकर आते हैं। कन्या पक्ष के दरवाजे पर वर पक्ष के लोग प्रसन्नता से बिलमा गीत गाते हैं और नाचते हैं। नृत्य के बाद दोनों परिवार के लोग आँगन में बैठ जाते हैं। वर पक्ष के लोग सभी को शराब पिलाते हैं। इस शराब को स्वीकार करते ही गाँव का मुकद्दम विवाह का जिम्मेदार व्यक्ति बन जाता है। वह उस गाँव की लड़की को अपनी लड़की मानता है। इसके बाद आठ बोतल शराब पंचों को वितरित की जाती है। उक्त शराब पीते ही कन्या पंचों की धर्म बेटी बन जाती है। इस शराब के दस्तूर को पंच बारात दारू कहते हैं। इस रस्म के बाद वर और कन्या के माता-पिता और कुछ सयाने घर के अंदर प्रवेश करते हैं। वर और कन्या की माँ आमने-सामने उत्तर-दक्षिण की दिशा में पैर पसारकर बैठ जाती हैं। वर और कन्या चरण स्पर्श कर आशीर्वाद पाते हैं। इसके बाद पुनः आठ बोतल शराब निकाली जाती है। दो बोतल शराब पी लेने के बाद सगाई पक्की समझी जाती है। परिवार की महिला-पुरुष सभी शराब पीते हैं। इसी समय चार बोतल शराब वर पक्ष के लोग कन्या के पिता को देते हैं। इसे तरपनी मद्य कहते हैं। कन्या का पिता इस शराब को ले जाकर घर के देवालय में देवताओं का तर्पण करता है। बची शराब कन्या पक्ष के लोग पीते हैं। तब कन्या पक्ष के लोगों की ओर से शादी की तिथि निश्चित की जाती है। कन्या पक्ष के लोग सभी को भोजन कराते हैं। भोजन के बाद गाँव के युवक-युवतियाँ करमा नृत्य करके प्रसन्नता प्रकट करते हैं। टीवा खांदा या सगाई में वर पक्ष के लोग कन्या को एक साड़ी भेंट करते हैं।

कुदई जगौनी की रस्म सोमवार को की जाती है। सोमवार की सुबह सबसे पहले सुवासा, सुवासिन, टेढ़ा, दोशी का चयन होता है। कहीं-कहीं टेढ़ा का कार्य सुवासा करता है या अलग-अलग भी इस कार्य को निभाते हैं। सुवासा या टेढ़ा का दायित्व बहनोई निभाता है। टेढ़ा विवाह खर्च का पूर्ण जिम्मेदार समझा जाता है। भोजन उसी के निर्देशन में बनता है। इसके लिये वह दो-तीन सहायकों को चुन लेता है। टेढ़ा न्यौता देता है। यदि खाने में कोई गड़बड़ी हो तो उसकी जिम्मेदारी टेढ़ा की होती है।

टेढ़ा एक बोतल मद्य के साथ बाजे को टीका करता है। वह विवाह के लिये बाजा वालों को आमंत्रित करता है। बाजा वाले बैगा या ढुलिया होते हैं। नगाड़ा जोड़ा और टिमकी बजाने वाले टेढ़ा के साथ विवाह वाले घर आते हैं। कन्या की माँ बाजा वालों के पाँव पखारती है। बाजा वाले एक कोने में बाजा लगााकर बैठ जाते हैं। बाजा बजाने वालों को लड़की की माँ एक पायली कुदई, दाल एवं पैसा देती है। वह हल्दी से बाजों का टीका करती है। वर और वधू के पिता बाजा बजाने वालों को एक बोतल शराब देते हैं। शराब पीने के बाद नगाड़े घनघना उठते हैं। गाँव वाले धीरे-धीरे विवाह वाले घर में एकत्र होने लगते हैं। गाँव तथा नातेदारों के एकत्र होने के बाद भोजन की व्यवस्था की जाती है। आठ बोतल शराब सबसे पहले पंचों को वर-वधू के नाम पर पिलाई जाती है। इसे कुदई जगौनी दारु कहते हैं। वधू तथा परिवार की महिलाएँ तालाब या कुआँ के पास से मिट्टी लाती हैं। मिट्टी को कलश में भरते हैं। कलश को सुवासनी सिर पर रख कर लाती है। कलश के आते ही सभी लोग भोजन करते हैं और अपने-अपने घर चले जाते हैं।

इसके बाद कलश की स्थापना घर में की जाती है। जिसे करस कौआ कहते हैं। लड़के के यहाँ घर के दाहिने ओर और लड़की के यहाँ घर के बायीं ओर करस कौआ की स्थापना होती

है। सुवासिनी कलश में पैसा और कोदों डालती हैं। कलश के ऊपर जगनी के तेल का दीया जलाकर रखा जाता है। करस कौआ के सामने पूर्व की ओर वर तथा पश्चिम की ओर वधू मुँह करके बैठती है। यहाँ लड़का और लड़की दूल्हा-दुल्हन बन जाते हैं।

इसके बाद मंगलवार की सुबह मांगर माटी की प्रथा निभाई जाती है। इसे माटी खनौनी कहते हैं। माटी खनौनी में वर-वधू सुवासिनी और परिवार की अन्य महिलाएँ मांगरमाटी की मिट्टी लेने जाती हैं। वर या वधू के शरीर पर माडिया या चावल का आटा लगा देते हैं। वर-वधू पिछौरा ओढ़े रहते हैं। माटी खनौनी में जाते समय दो बोतल शराब, दस-बारह रोटियाँ, दाल-भात तथा मूसल को महलोन पत्तों में लपेटकर ले जाते हैं।

जंगल या बाड़ी में पहुँचने के बाद सभी लोग दीमक के बमीठे को ढूँढते हैं। सुवासिन बमीठे के पास की जगह को गोबर से लीपकर उसके ऊपर चौक पूरती है। गुनिया सरई की रार से होम धूप देता है। कुछ मांगलिक मंत्रों का उच्चारण करता है। वर या वधू की माँ बमीठे के समीप दक्षिण दिशा में पैर पसारकर बैठ जाती हैं। माँ की गोद में वर या वधू पूर्व की दिशा में पैर पसारकर बैठते हैं। महिलाएँ माटी खनौनी के गीत गाती हैं। गुनिया बमीठे में दारू तरपते हैं, शेष दारु पी जाते हैं। फिर वर या वधू की माँ, सुवासा-सुवासिन तथा परिवार की एक अन्य महिला मूसल पकड़कर बमीठे पर वार करती है।

गुनिया सभी महिलाओं की साड़ी के पल्लों में एक-एक पस मिट्टी डालता है। वर व वधू को छोड़कर सभी लोग रोटी खाते हैं। वहाँ से वर को पीठ पर बैठाकर घर लाते हैं। इसे पिठघौनी कहते हैं। मिट्टी घर लाकर दो ढेरों में रख दी जाती है। नगाड़ा बज उठता है। तब वर व वधू को सुवासिन व अन्य रिश्तेदार अपने कंधों पर बैठाकर खूब नाचते हैं।

माटी खनौनी का दस्तूर होते ही दोशी, गुनिया, सुवासा और गाँव के संगी-साथी मंडप की लकड़ी लेने जंगल जाते हैं। वर-वधू एक दूसरे की ओर पीठ करके एक कमरे में बैठ जाते हैं। सुवासिन वर-वधू को चिकसा 'बेसन हल्दी और तेल का लेप' लगाती है। वर - वधू दोनों को सफेद वस्त्र पहनाये जाते हैं। सुवासिन कलश रखने के लिये जमीन पर गाय के गोबर से लीपकर बीचोंबीच थोड़े से चावल और कोदों रखकर चौक पूरती हैं। कोदों के ऊपर घी का दीपक जलाते हैं। वर-वधू कलश में चावल के दाने डालते हैं। फिर दोशी एक ओर चौक हल्दी और आटा से पूरता है। इस चौक में शराब का तर्पण करते हैं। चौक में वर-वधू एक-एक चीला 'माडिया के आटा और गुड़ को मिलाकर रमतिला के तेल से बनी पतली पुड़ी' रखते हैं। जंगल जाने वाले सबसे पहले सजन की डगाल काटते हैं। सजन तथा चार के वृक्ष की डगाल से मण्डप बनाते हैं। गुनिया चार के वृक्ष के नीचे बैठकर मंत्रोच्चार करता है। पूजा के समय वह 'हे वनस्पति! तौही हस सुमरों'। इस मंत्र के बाद दोशी पेड़ की दो डगाल काटता है। इसके बाद सरई या साल वृक्ष के दो खंबे काटे जाते हैं। फिर सरई की डगाल काटते हैं। लकड़ियों को काटने के बाद वहीं पर सब लोग दाल-भात का भोजन करते हैं और लकड़ियों को लेकर घर आते हैं। सुवासिन आँगन में सबके पैर धुलवाती है। सभी युवक मंडप की लकड़ियों को कंधों पर रखकर नाचते-गाते हैं। नगाड़ा, टिमकी, डफला बजता रहता है। सबसे पहले आँगन में साल का खंभा गाड़ते हैं। बाद में सजन, सरई, बेल के दो पत्ते, आम की दो डगाल और बाँस की दो शाखाएँ मिट्टी के पास रख देते हैं। इन लकड़ियों को गुनिया होम-धूप देता है। दोशी के कहने पर कुछ व्यक्ति सजन की चारों लकड़ियों के कोने छीलते है। कुछ लोग गड्ढा खोदने में सहयोग करते हैं। गड्ढे में पाँच पैसे डालकर सजन को गाड़ देते हैं।

परिवार के लोग मड़वा गड़ौनी का नेग दो बोतल शराब मण्डप गाड़ने वाले को देते हैं। फिर आठ बोतल शराब वर के नाम से और आठ बोतल शराब वधू के नाम से मँगाकर पंच लोग पीते हैं। मण्डप गाड़ते समय सुवासिन और अन्य युवतियाँ करस कौआ के बाहरी भाग को गोबर की पतली लाइनों और ककड़ी के बीज खोंस कर सजाती हैं। सजन कलात्मक ढंग से और सादा भी बनाया जाता है। सजन को हल्दी और चूने से पोत दिया जाता है। उस पर काजल की आड़ी तिरछी रेखाएँ खींच दी जाती हैं। मण्डप के चारों कोने में चार खंभे गाड़ दिये जाते हैं। आम के पत्ते और सरई की डगालों से मण्डप का आच्छादन किया जाता है। मण्डप छा जाने के बाद वर व वधू को स्नान करवाकर मण्डप के नीचे माँ की गोद में बैठाया जाता है। सुवासिन, नाती या वर की साली वर को हल्दी लगाती है। इसी प्रकार वधू को सुवासिन एवं परिवार के अन्य सदस्य हल्दी लगाते हैं। सुवासिन हल्दी लगाने का नेग एक बोतल शराब लेती है।

वर–वधू के माता–पिता अपने बच्चों को आशीर्वाद देते हैं, और कहते हैं –

सोनन दांत खोंटो
कोरा में टूरा
सार में लक्ष्मी
कोठी में अन्न
गांठ में पैसा
लाख बरस जियो

नातेदार या सुवासिन एक लोटे में पानी लेकर वर की छोटी अंगुली पकड़कर पानी की धार छोड़ती हुई दरवाजे से मण्डप के चारों ओर एक भांवर फिराती है। इसे क्वांरी भाँवर या तेल चढ़ौनी कहते हैं। अब वर को सजन या मगरोहन के सामने मचिया पर बैठाते हैं। नातेदार और अन्य युवतियाँ वर को हल्दी तेल लगाती हैं। हल्दी तेल के बाद युवतियाँ मचिया पकड़कर दूल्हा–दुल्हन को झुलाती हुई मण्डप का एक चक्कर लगाकर घर में प्रवेश कर जाती हैं। दूल्हा–दुल्हन को घर के अंदर उसी मचिया पर बैठाकर, एक बार फिर हल्दी तेल लगाया जाता है। नगाड़े और टिमकी बजते रहते हैं। भोजन के बाद बारात की तैयारी शुरु हो जाती है।

मंगलवार को बारात की तैयारी हो जाती है। बारात की तैयारी में एक टीन मद्य पी जाती है। वर की कमर में हल्दी से रंगा हुआ लहंगा, सफेद कमीज, कमीज के ऊपर काली जाकेट और सिर पर चाकनुमा पगड़ी और पिछौरा। यही दूल्हे राजा की पोशाक होती है। लोगों की देखा–देखी आजकल दूल्हे राजा को मुकुट भी पहनाने लगे हैं। भोजन के बाद बारात रवाना होती है। भाई–बहिन द्वार पर वर का रास्ता रोककर नेग माँगते हैं। सवा रुपया या सवा पाँच रुपयों का नेग भाई अपनी बहिन को देता है। दूल्हा घोड़े पर या अपने मित्रों की पीठ पर बारी – बारी से बैठकर ले जाया जाता है। बाराती पैदल चलते हैं। उनके पैरों में जूते नहीं होते। दूल्हा भी नंगे पैर होता है। बारात के साथ एक समय का भोजन, दस बोतल मद्य और सुवासिन करस कौआ सिर पर रखकर चलती है।

पहले बारात ग्राम की सीमा में आकर अमराइयों में ठहरती है। यहाँ पर दो भोजन बनाने वाले आ जाते हैं। जो लड़के वालों की तरफ से लड़की वालों के यहाँ बारात रवाना होने से पूर्व पहुँच जाते हैं। जो कन्या पक्ष की हर खबर बारातियों को देते रहते हैं। अमराइयों में बाराती भोजन और विश्राम करते हैं। कुछ देर बाद गाँव का मुकद्दम, दीवान, समरथ या कोटवार बारात की अगवानी करने आते हैं। बाराती नाचते–गाते हैं। मुकद्दम दूल्हे को उठाकर अपने या दूसरे के घर ले जाता है। यहीं जनवासा होता है। यहाँ पर भी बाराती और घराती नाचते–गाते हैं। बारात आ जाने पर वर पक्ष वाले वधू पक्ष वालों के घर के सामने मैदान में परघौनी करते हैं। परघौंनी के पूर्व वर–वधू कम से कम पाँच घरों में जाकर भिक्षा माँगते हैं। दुल्हन की सहेलियाँ दुल्हन को घेरे रहती हैं। इधर दूल्हे के साथी भी उसे घेरे रहते हैं। अब दूल्हा बारातियों के साथ मैदान में खड़ा हो जाता है। दूसरी दिशा में दुल्हन और उसकी सहेलियाँ खड़ी रहती हैं। नगाड़ा बजता रहता है। दूल्हा के साथी ददरिया गाते हैं। दुल्हन की सहेलियाँ उस ददरिया का जवाब देती हैं। इसी बीच मैदान में हाथी का खेल होता है। हाथी तीन खाटों से लड़के वाले बनाते हैं। एक खाट बिछा दी जाती है। उस खाट के ऊपर तिकोने में दो खाटें खड़ी की जाती हैं। खाटों को कंबल से ढँक दिया जाता है। टोकनी से सिर, सूपों से कान,घास से सूंड और पूँछ बनाकर हाथी तैयार करते हैं। खाट के नीचे लम्बी लकड़ियाँ बाँध देते हैं। लड़के पक्ष के लोग हाथी को उठाते हैं। हाथी पर लड़की पक्ष के लोगों को बैठाकर मैदान में एक चक्कर लगाया जाता है। बीच रास्ते में दुल्हन हाथी की सूंड पकड़कर रास्ता रोकती है। हाथी पर बैठने वाला नेग में कुछ पैसे दुल्हन को देता है। हाथी पर बैठने वाला हाथी पर मचलता है, हाथ– पैर फेंकता है। तरह –तरह के स्वांग करता है। कुछ लोग मजाक करते हैं। नगाड़ा–टिमकी बजते रहते हैं, महिलाएँ गीत गाती रहती हैं। हाथी पर समधियों को भी बैठाया जाता है।

इस कार्यक्रम के बाद मैदान में आमने–सामने खड़े दूल्हा–दुल्हन अँगूठी की रस्म के लिए तैयार रहते हैं। दूल्हा–दुल्हन की ओर तेज गति से दौड़ता है। यह देखकर दुल्हन पीछे की ओर भागती है। लेकिन उसकी सहेलियाँ उसको पकड़ लेती हैं। तब तक दूल्हा –दुल्हन के पास पहुँच जाता है और दुल्हन का हाथ पकड़कर जबरन उसकी अँगुली में अँगूठी पहनाने की कोशिश करता है। दुल्हन की मुट्ठी बँधी रहती है और उसके हाथ में तेल लगा रहता है। मुट्ठी खोलने में दूल्हे को जोर आजमाइश करना पड़ता है। अंततः अँगूठी पहना दी जाती है, दूल्हे की जीत हो जाती है। दूल्हा–दुल्हन को एक पिछौरा से ढंक देते हैं। इसी समय पाँच

घरों से माँगा गया अनाज सभी महिलाएँ मुट्ठी में भर-भरकर दूल्हा-दुल्हन पर फेंकती हैं। इसके बाद घर की दहलीज पर लड़की की माँ और घर की सयानिन दूल्हा-दुल्हन के पैर धोती हैं। झिर्रा घास और मूसल घुमाकर दोनों की परछौनी की जाती है। युवतियाँ चोरी से लाया गया भात पकड़ने वाली युवतियों के मुँह में ठूंसती हैं। महिलाएँ मुँह छिपाती हैं और उस भात को थूँक देती हैं। इसे जूठा भात कहते हैं।

अगुवानी के बाद दूल्हा-दुल्हन को घर ले जाया जाता है। भोजन करने के बाद दोनों को बैठाकर गांठ जोड़ते हैं, जिसे गांठ जुड़ोनी कहते हैं। रात्रि के समय मण्डप में दूल्हा-दुल्हन को सजन या मगरोही के पाँच फेरे दिलवाए जाते हैं, जिसे बड़ी भाँवर कहते हैं। बड़ी भाँवर के बाद गाँव के स्त्री-पुरुष टेढ़ा के आमंत्रण पर एकत्र होते हैं। मुकद्दम और उसकी पत्नी को एक बोतल मद्य दी जाती है। सबसे पहले मुकद्दम दूल्हा-दुल्हन को हल्दी लगाकर टीका करता है और अपनी ओर से लड़की को रुपया-पैसा और अनाज देता है। बाद में नाते-रिश्तेदार और गाँव के लोग दूल्हा और दुल्हन को अलग-अलग पैसा देते हैं। लड़की के पिता की ओर से गाय-बछिया का दान लड़की को दिया जाता है। इसे बधौनी कहते हैं। माता-पिता की ओर से एक थाली और एक लोटा दहेज में दिया जाता है। इस स्थान पर लड़के वालों की ओर से लड़की के माता-पिता को एक-एक धोती ओढ़ाई जाती है। बधौनी के समय सुवासा-सुवासिन, दोशी, टेढ़ा तथा नगाड़ा और टिमकी वादकों को भी नेग दिया जाता है। बधौनी प्रारंभ होते ही युवक-युवतियाँ अलग-अलग दल बनाकर लोक नृत्य करते हैं। बधौनी के बाद फिर से बड़ी भाँवर होती है। फिर सबका भोजन होता है। मद्य पीते हैं और रात भर नृत्य-गान चलता रहता है।

बैगाओं में बेटी की विदाई का क्षण बड़ा मार्मिक होता है। विदाई के पहले घर की सयानिन और बाद में सहेलियाँ लड़की से मिलाप करती हैं। विदाई गीत गाती हैं। विदाई के समय वधू की माँ वधू को एक कपड़ा ओढ़ाती है। टेढ़ा लड़की को गोद में उठाता है और बारात के आगे-आगे चलता है। गाँव के बाहर तक गाँव के सभी लोग बारात को छोड़ने आते हैं। समधियों से मिल-जुलकर बारात गाँव से विदा होती है।

वापस आई बारात गाँव में मुकद्दम के घर में ठहरती है। रात भर मुकद्दम के घर में ही नाच-गाना होता है। नेग में मुकद्दम को एक रुपया दिया जाता है। मुकद्दम सबको खाना खिलाता है। दूसरे दिन टेढ़ा वर-वधू को लेकर वर के घर जाता है। वर के घर पर पुरानी गांठ छोड़ देते हैं और नए कपड़े से नई गांठ बाँधते हैं। वर के मण्डप में वर-वधू की पांव पखराई की जाती है। बकरा काटा जाता है। सभी महिला-पुरुष छककर मद्य पीते हैं। उसके बाद रात में भोजन का दौर शुरु होता है, जो देर रात तक चलता रहता है।

बारात आने के बाद दूल्हा की माँ मण्डप के नीचे बड़ी भाँवर फिराती है। वह कलश लेकर आगे चलती है। पीछे-पीछे वर-वधू तीन भाँवर फिरते हैं। भाँवर के बाद वर-वधू को घर के भीतर ले जाया जाता है। वर की बहनें द्वार रोकती हैं! तब वर उनको नेग में कुछ रुपया-पैसा देता है। घर के भीतर गांठ छोड़ी जाती है। गांठ छोड़ते समय टेढ़ा के सामने दूध-भात की रस्म निभाई जाती है। यहाँ टेढ़ा भात खिलाने में वर-वधू को छकाता है और बदले में नेग लेता है।

बड़ी भाँवर होने के बाद वर के घर में बधौनी होती है। बधौनी के बाद तीन भाँवर की जाती हैं। वर-वधू पटा पर खड़े हो जाते हैं। इस समय वर मण्डप उजराई करता है। मण्डप उजराई के बाद स्वासा और साले खजरी का नेग माँगते हैं। इसके बाद तीर-कमान से मुर्गियों का शिकार कर उसे बनाते हैं। इस दिन वर-वधू दोनों मिलकर खाना बनाते हैं, जिसे सभी लोग खाते हैं। वर की बुआ लौवा-चटवा लेकर नाचती है। दूसरे दिन वर-वधू स्नान करने नदी जाते हैं। नदी में दाल-चावल के दाने फेंकते हैं। नहाने से पहले वर और वधू एक दूसरे की चोटी को खोलते हैं। इसके बाद दोनों स्नान करके घर को लौट आते हैं। इस जनजाति में बाल विवाह की प्रथा बिलकुल नहीं है।

ले भगा-ले भगी या चोर विवाह

बैगाओं में प्रेम विवाह का प्रचलन सबसे अधिक है। जिसे ये लोग ले भगा ले-भगी या चोर विवाह कहते हैं। इसमें लड़का-लड़की अपनी राजी-बाजी से भाग जाते हैं। इसके बाद अपने किसी मित्र के हाथ अपने घर खबर भेज देते हैं कि हम लोग अमुक समय पर अमुक जगह पर मिलेंगे। लड़का-लड़की के माता-पिता उस स्थान पर पहुँच जाते हैं और उन्हें मनाकर अपने घर ले आते हैं। फिर नियमानुसार निश्चित तिथि पर विवाह की रस्म

पूरी की जाती है या लड़का-लड़की भागकर अपने मामा, रिश्तेदार या मुकद्दम के घर पहुँचते हैं। लड़का-लड़की हाट-बाजार में मिलते हैं और प्रेम सूत्र में बँध जाते हैं। इनके वैवाहिक कार्य में समरथ, मुकद्दम, कोटवार एवं दीवान की भूमिका प्रमुख रहती है।

उठवा विवाह

बैगा समाज में उठवा विवाह का प्रचलन अधिक है। इसमें शादी का पूरा खर्च लड़के वाला उठाता है। इसमें लड़की के पिता, रिश्तेदार, मित्र आदि परिवार के लोग लड़के वालों के यहाँ पहुँच जाते हैं। दोनों पक्षों की ओर से सगाई की तिथि निश्चित कर ली जाती है। इसके बाद विवाह की तिथि तय की जाती है तथा विवाह की सभी रस्म चढ़ विवाह के समान सम्पन्न की जाती हैं।

पैठुल विवाह

पैठुल विवाह में कुँवारी लड़की अपनी इच्छा से लड़के के घर में रात्रि के समय चुपचाप घुस जाती है। वह घर के पिछवाड़े से घुसती है और लड़के के ऊपर हल्दी-चावल छिड़क देती है। हल्दी चावल छींटने का मतलब लड़की ने लड़के को चुन लिया। लड़के का पिता मुकद्दम, समरथ, दीवान आदि को बुलाकर इस बात की जानकारी देता है कि अमुक लड़की हमारे घर पैठुल हो गई है। गाँव के अन्य लोगों को भी रात्रि में ही बुलाया जाता है। लड़की को बुलाकर उसकी इच्छा पूछते है। लड़की के जेवरों की जाँच की जाती है कि वह कितने जेवर पहनकर आई है। फिर उसके बाद घर के आँगन में मण्डप गड़ाया जाता है और तुरंत भाँवर कर दी जाती है। बाद में लड़की के घर में खबर भेजी जाती है कि उनकी लड़की हमारे घर पैठुल हो गई है। तब लड़की का पिता अपने रिश्तेदारों के साथ लड़के वालों के घर पहुँचता है। वहाँ पर पुनः विवाह की तिथि निश्चित की जाती है। इस विवाह में लड़की वाले लड़के वालों से तीन-चार हजार रुपया खर्च वसूलता है। यदि लड़के का पिता खर्च नहीं देता, तब लड़के को अपने ससुराल के घर तीन साल तक लमसेना रहना पड़ता है। यदि लड़के वाला पैसा दे देता है, तो विवाह बड़ी धूम-धाम से हो जाता है।

लमसेना विवाह

यदि किसी लड़के का पिता अपने लड़के का विवाह करने में असमर्थ है। तब पिता की मर्जी से लड़का-लड़की के पिता के यहाँ सेवा करने के लिए रह जाता है। ऐसे लड़के को लमसेना या घर दामाद कहते हैं। लमसेना को सेवा में अपने ससुर का कृषि कार्य, जंगल से लकड़ी काटना एवं मेहनत-मजदूरी करनी पड़ती है। लमसेना रहने की अवधि तीन से सात वर्ष तक रहती है। लड़का पूर्ण निष्ठा से सेवा करता है, तो लड़की का पिता एक वर्ष में भी शादी कर सकता है। तीन या सात साल पूरे होने पर लड़की और लड़का अपना स्वतंत्र घर बसा सकते हैं।

उधारिया विवाह

इस विवाह में लड़का-लड़की अपनी मर्जी से किसी दूर के रिश्तेदार की मदद से विवाह कर लेते हैं। विवाह में दोनों पक्षों के माता-पिता की स्वीकृति नहीं होती। विवाहित लड़की अपने पति को छोड़कर किसी दूसरे के यहाँ घुस जाती है। गाँव के पंच एकत्रित होते हैं। पंच लोग लड़की की जाँच कर जेवर आदि हस्तगत करते हैं। इस तरह से घुसी लड़की पर भावी देवर एक लोटा गरम पानी डाल देता है। इसका मतलब लड़की पवित्र हो गई। दूसरे दिन पंचों को मद्य पिलाई जाती है। पहला पति दूसरे पति से हर्जाना वसूल करता है, जिसे दावा कहते हैं। दावा वर्तमान में 2000 रुपया तथा गाय, बैल भी होता है। इसका निर्णय मुकद्दम करता है। दावा चुकाने के बाद दोनों पक्षों में मिलौकी होती है। मुकद्दम प्रतीक रूप में घर के खपरों पर एक-एक रूपया, घास और कच्चा धागा रखकर पंचों के सामने खपरों को तोड़ देता है। इसका अर्थ पुराने सम्बन्धों का टूटना है। इन रूपयों से मद्य पी जाती है। नवविवाहिता पूर्व पति और वर्तमान पति तथा पंचों को भोजन कराती है। भोजन करने के बाद पूर्व पति अपने घर चला जाता है।

बैगा समाज में बहुपत्नी रखने का भी रिवाज है। लड़की अपनी मर्जी से दूसरा विवाह कर सकती है। विधवा विवाह में घर के देवर का अधिकार प्रथम होता है, लेकिन अगर विधवा किसी दूसरे के नाम की चूड़ी पहनना चाहे, तो पहन सकती है। यदि दूसरा विवाह नहीं भी करती है, परित्यक्ता गर्भवती है, तो शिशु पर उसके पूर्व पति का हक होता है। बैगाओं में कन्या हरण की प्रथा आदिम है।